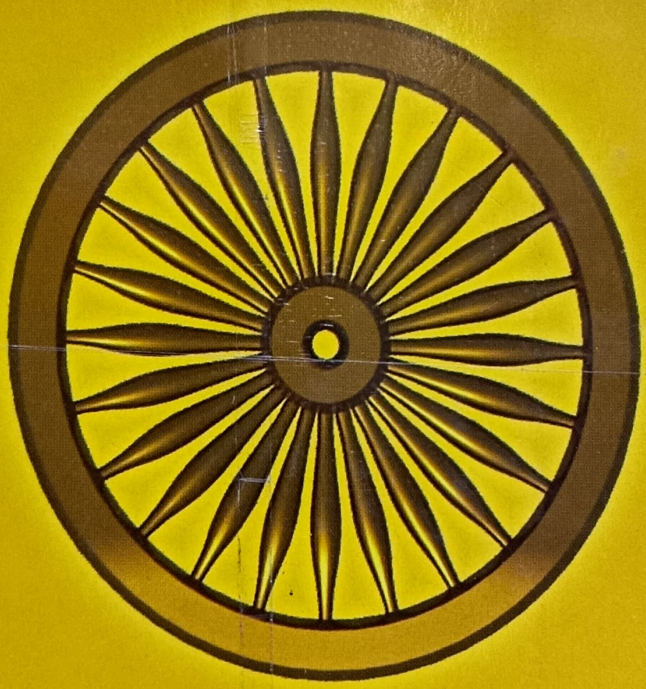
पालि-ग्रन्थमाला-14

सुत्तपिटके खुद्दकनिकाये

अपदानपालि-II

थेरापदानपालि (21-42 वग्गो)

(संस्कृतच्छाया-हिन्दी-अनुवादसहिता)





पालि-अध्ययन-केन्द्रम्

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

Accredited by 'NAAC' with 'A' Grade

(केन्द्रीय-मानव-संसाधन-विकास-मन्त्रालयाधीनम्)

लखनऊ-परिसरः

ग्रंथ के सन्दर्भ में

अपदान (संस्कृत, अवदान) का तात्पर्य कथा, कहानी अथवा असाधारण या अद्‌भुत कार्य है। ये कथाएँ कर्म प्राबल्य की सिद्धि को दृष्टि में रखते हुए लिखी गई हैं। अवदान-कथाओं का सबसे प्राचीन संग्रह अवदान-शतक है। इसका चीनी अनुवाद सम्भवत: बीसवीं शताब्दी में हुआ था। प्रत्येक कथा में शुभाशुभ कर्मों के फल का वर्णन मिलता है। अपदान मूलत: पालि व स्थविरवादी ग्रन्थ है। इन कथाओं में बुद्ध-पूजा का उल्लेख मिलता है।

थेर तथा थेरी गाथाओं के रूप में अपदान का प्रणयन हुआ, ऐसा प्रतीत होता है। अपदान दो भागों में है, थेर-अपदान और थेरी-अपदान। इनमें क्रमश: भिक्षु तथा भिक्षुणियों के पूर्वजन्म की कथाओं का वर्णन है। इसे थेर और थेरी कथाओं का पूरक भी कहा जा सकता है। अपदान निश्चित रूप से अशोक कालीन रचना है। कारण यह है कि इसमें कथावत्थु का निर्देश हुआ है। यह तृतीय संगीति के काल में लिखी गई थी।

थेर-अपदान में 55 वर्ग हैं- जिनमें से प्रत्येक में 10 अपदानों का समावेश है, जबकि 34 वें में केवल 7 अपदान हैं। थेरी-अपदान 4 वर्गों में विभक्त है, प्रत्येक में 10 अपदानों का वर्णन है। थेरापदान में 547 भिक्षुओं तथा थेरी-अपदान में 40 भिक्षुणियों के पूर्वजन्म के सत्कृत्यों की वर्णना हुई है। ये सभी बुद्ध की शिष्य-शिष्याएँ थीं। इस कहानी के भी दो भाग हैं- अतीत जन्म-सम्बन्धी और वर्तमान जन्म-सम्बन्धी। इसमें लोक-धर्म के रूप में बौद्धधर्म का चित्रण मिलता है। यथा- दान, चैत्य-स्तूप आदि के रूप में। इसी के आधार पर संस्कृत-साहित्य का अवदान-साहित्य विकसित हुआ है। अपदान में चीन का 'चीन-रट्ठ' (चीन राष्ट्र) के रूप में उल्लेख प्राप्त है।

अपदान के दो परिच्छेद हैं- बुद्धापदान और प्रत्येक बुद्धापदान। बुद्धापदान में भगवान् ने अपने पूर्वकर्म (पुब्बकम्म-पिलोति) का वर्णन किया है और अपने वर्तमान जन्म में प्राप्त समस्त दु:खों के रूप में पूर्वकृत दुष्कृत्यों को कारण बताया है। कहा गया है कि एक बार भगवान् बुद्ध अपने महान् भिक्षु-संघ के साथ अनन्त सरोवर पर गए जहाँ बैठकर लोकनायक ने अपने पूर्वकर्मों का उद्‌घाटन किया और भिक्षुओं को कहा कि जो-जो कर्म मैंने पूर्वजन्म में किए, उन्हें सुनो कि किस प्रकार यह कर्म-गुदड़ी मेरे बुद्धत्त्व प्राप्ति के उपरान्त भी अपने विपाक दिखा रही है- "अनोतत्तसरासन्ने रमणीयं सिततले। महता भिक्खुसंघेन परेतो लोकनायको। आसीनो व्याकरी तत्थ पुब्बकम्मानि अत्तनो। सुणाथ भिक्खवो मह्यं यं कम्मं पकतं मया। पिलोतिकस्स कम्मस्स बुद्धत्ते पि विपच्चती'ति। पच्चेक बुद्धापदान में 'देवग्गविसाणसुत्त' के समान बुद्धवाणी के एकान्त जीवन सम्बन्धी उदात्त गाथाएँ हैं। थेर-थेरी गाथाओं की अपनी अट्ठकथा ('परमत्थदीपनी') में आचार्य धम्मपाल स्थविर-स्थविरिणियों की जो जीवनियाँ दी हैं, वहाँ स्थान-स्थान पर 'तेन वुत्तं अपदाने' कहकर अपनी अट्ठकथा के आधार के रूप में अपदान को स्वीकारा है। इससे भी अपदान का महत्त्व सिद्ध है।

ISBN : 978-81-937946-2-3
Price : 500.00

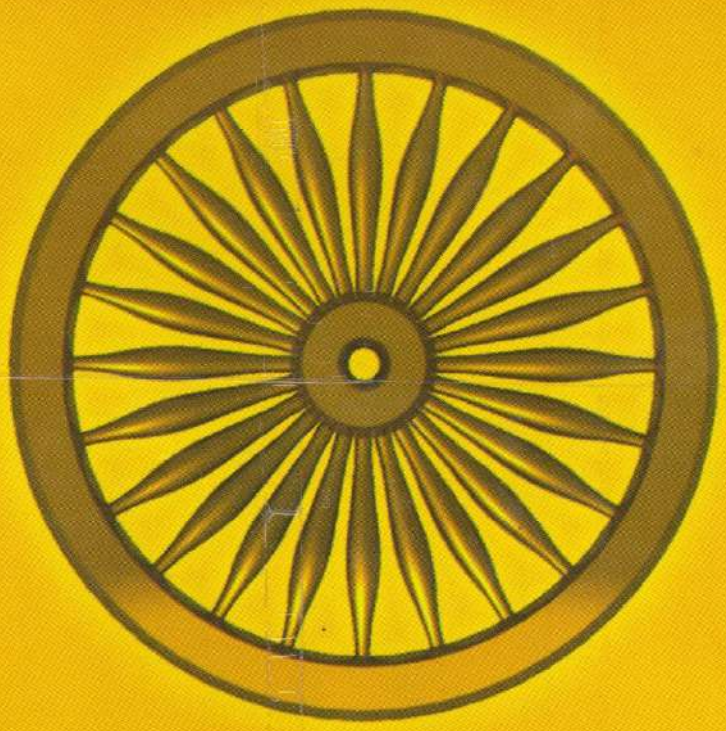
पालि-ग्रन्थमाला-14

सुत्तपिटके खुद्दकनिकाये

अपदानपालि-II

थेरापदानपालि (21-42 वग्गो)

(संस्कृतच्छाया-हिन्दी-अनुवादसहिता)





पालि-अध्ययन-केन्द्रम्

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

Accredited by 'NAAC' with 'A' Grade

(केन्द्रीय-मानव-संसाधन-विकास-मन्त्रालयाधीनम्)

लखनऊ-परिसरः

पालि-ग्रन्थमाला-14

सुत्तपिटके खुद्दकनिकाये

अपदानपालि-II

(थेरापदानपालि-21-42 वग्गो)

(संस्कृतच्छाया-हिन्दी-अनुवादसहिता)

संरक्षकः

प्रो. परमेश्वरनारायणशास्त्री, कुलपतिः

संस्कृतच्छायाकारः सम्पादकश्च

डॉ. मोहनमिश्रः

हिन्दी अनुवादिका

डॉ. प्रियंका

पालि-अध्ययन-केन्द्रम्

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानित-विश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा 'ए' श्रेण्यां प्रत्यायितः

(केन्द्रीय-मानव-संसाधन-विकास-मन्त्रालयाधीनम्)

लखनऊ-परिसरः, विशालखण्डः-4, गोमतीनगरम्, लखनऊ (उ. प्र.)

Pāli-Granthamālā-14

Suttapitake Khuddakanikāye

APADĀNAPĀLI- II

(THERĀPADĀNAPĀLI- 21-42 VAGGO)

(With Sanskritacchāyā & Hindi Translation)

Patron

Prof. Parameshwara Narayana Shastry

Vice-Chancellor

Sanskritacchāyākāra & Editor

Dr. Mohan Mishra

Hindi Translator

Dr. Priyanka



Pali Study Centre

Rashtriya Sanskrit Sansthan, Deemed University

Accredited by NAAC with 'A' Grade

(Under M/O Human Resource Development, Govt. of India)

Lucknow Campus, Gomti Nagar, Lucknow- 226010 (U. P.)

पालि-ग्रन्थमाला-14

सुत्तपिटके खुद्दकनिकाये

अपदानपालि-II (थेरापदानपालि-21-42 वग्गो)

(संस्कृतच्छाया-हिन्दी-अनुवादसहिता)

संस्कृतच्छायाकारः सम्पादकश्च - **डॉ. मोहनमिश्रः**

हिन्दी अनुवादिका - **डॉ. प्रियंका**

प्रकाशक : प्रो. विजय कुमार जैन

© प्राचार्य, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय)

लखनऊ परिसर, विशाल खण्ड-4, गोमती नगर,
लखनऊ-226010 (उ.प्र.)
दूरभाष : 0522-2393748, फैक्स : 0522-2302993
E-mail : rksklucknow@yahoo.com

ग्रन्थमाला सम्पादक : प्रो. विजय कुमार जैन
डॉ. गुरुचरण सिंह नेगी

प्राप्ति स्थान :
1. प्राचार्य, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय)
लखनऊ परिसर, विशाल खण्ड-4, गोमतीनगर, लखनऊ-226010
दूरभाष : 0522-2393748 E-mail:rksklucknow@yahoo.com
2. दिल्ली मुख्यालय, बिक्री विभाग
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय)
56-57 इंस्टीट्यूशनल एरिया, जनकपुरी, नई दिल्ली-110058
फोन- 28523949

ISBN :

मूल्य : Rs. 500.00

प्रथम संस्करण : 2019

मुद्रक : गणपति प्रिंटर्स, कानपुर रोड, लखनऊ

Pāli-Granthamālā-14

Suttapitake Khuddakanikāye

APADĀNAPĀLI- II (THERĀPADĀNAPĀLI- 21-42 VAGGO)

(With Sanskritacchāyā & Hindi Translation)

Sanskritacchāyākāra & Editor : Dr. Mohan Mishra

Hindi Translator : Dr. Priyanka

Publisher : Prof. Vijay Kumar Jain

© Principal

Rashtriya Sanskrit Sansthan,
Deemed University
(Under M/O Human Resource Development, Govt. of India)
Lucknow Campus, Gomti Nagar, Lucknow- 226010 (U.P.)
E-mail : rsklucknow@yahoo.com

General Editor : Prof. Vijay Kumar Jain
Dr. Gurucharan Singh Negi

Book available at : :

1. Principal, Rashtriya Sanskrit Sansthan, Deemed University
(Under M/O Human Resource Development, Govt. of India)
Lucknow Campus, Gomti Nagar, Lucknow- 226010 (U.P.)
E-mail : rsklucknow@yahoo.com
2. Delhi (H.Q.), The Sales Incharge
Rashtriya Sanskrit Sansthan, Deemed University
(Under M/O Human Resource Development, Govt. of India)
56-57, Institutional Area, Janakpuri, New Delhi-110058

ISBN :

Price : Rs. 500.00

First Edition : 2019

Printer : Ganpati Printers, Kanpur Road, Lucknow

प्रो. पी.एन्. शास्त्री
कुलपति
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
मानित विश्वविद्यालय
(मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन)
('ए' ग्रेड के साथ राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं
प्रत्यायन परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त)

Prof. P.N. Shastry
Vice-Chancellor
RASHTRIYA SANSKRIT SANSTHAN
Deemed to be University
(Under MHRD, Govt. of India)
(Accredited by NAAC with 'A' Grade)

पुरोवाक्

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय) संस्कृत के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ पालि एवं प्राकृत भाषाओं के विकास के लिए भी कृतसंकल्प है। ये दोनों मध्यकालीन आर्यभाषाएँ हैं। पालि में भगवान् बुद्ध के प्रामाणिक वचन सुरक्षित हैं। भारतवर्ष में जिस प्रकार संस्कृत को धार्मिक भाषा के रूप में सम्मान प्राप्त है, ठीक वैसा ही सम्मान पालि को भी श्रीलङ्का, म्याँमार, थाईलैण्ड, कम्बोडिया, लाओस आदि देशों में प्राप्त है। यह पालि भाषा केवल धार्मिक दृष्टि से नहीं, अपितु ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी से ईस्वी पाँचवीं शताब्दी तक के भारतीय राजनीति, अर्थनीति, सामाजिक व्यवस्था, भौगोलिक स्थिति आदि विषयों को जानने के लिए भी इस भाषा में निबद्ध वाङ्मय सर्वोत्तम आंकड़े उपलब्ध कराता है। इसलिए यह भाषा शोध की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वहीं प्राकृत भाषा में जैन धर्म का वाङ्मय निबद्ध है, तथा संस्कृत नाटकों के साथ मध्यकालीन विपुल ग्रन्थ-भण्डार भी है। भारत के आधुनिक भाषाओं के विकास-क्रम को समझने तथा भारतीय संस्कृति की श्रमण-परम्परा को सम्यग् रूप से जानने का भी यह एक प्रामाणिक एवं प्राचीन स्रोत है।

सन् 2009 से भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मन्त्रालय द्वारा प्राप्त आर्थिक अनुदान से राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली ने पालि-प्राकृत भाषा एवं साहित्य के संरक्षण-संवर्धन के लिए दिल्ली, जयपुर और लखनऊ में पालि/प्राकृत अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की है। लखनऊ-परिसरस्थ पालि-अध्ययन केन्द्र में पालि-तिपिटक (त्रिपिटक) की संस्कृतच्छाया तथा हिन्दी-अनुवाद कार्य चल रहा है। अब तक त्रिपिटक के 16 ग्रन्थों का 12 भागों में प्रकाशन हो चुका है, जिसे पालि, प्राकृत एवं संस्कृत के मूर्धन्य विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से सराहना की है। पालि मूल का संस्कृतच्छाया और हिन्दी-अनुवाद सहित उपलब्धता से जहाँ अर्थबोध में सुविधा होती है, वहींसंस्कृतज्ञ एवं हिन्दी भाषी विद्वानों के लिए भी यह सुग्राह्य हो सकेगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ अपदानपालि-2 (थेरापदानपालि 21 - 42 वग्गो) सुत्तपिटक के खुद्दकनिकाय का तेरहवाँ ग्रन्थ है। अपदान का अर्थ जीवन-चरित्र, असाधारण एवं अद्भुत कार्य है। अपदान कथाओं का प्रणयन कर्मप्राबल्य की सिद्धि को ध्यान में रखकर किय गया प्रतीत होता है। ग्रन्थागत जीवन-चरितों का मुख्य लक्ष्य साधकों को धर्माभिमुख करना है। इसकी भाषा अत्यन्त सरल व सुबोध है तथा वर्णनशैली भी रोचक एवं हृदयग्राही है। पद्यात्मक होते हुए भी यह अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा अधिक बोध्य है।

मैं प्रकृत ग्रन्थ के अध्येता/अध्येत्री लेखक/लेखिकाओं को साधुवाद देते हुए सभी सहयोगियों एवं सम्पादकों का अभिनन्दन करता हूँ।

प्र॰ ना॰ शास्त्री

(प्रो. पी. एन. शास्त्री)
कुलपति

56-57, Institutional Area, Janakpuri, New Delhi-110058 Ph.: (O) 28523949 (Fax) 28521948
EPABX : 28524993, 28521994, 28524995 E.Mail : rskspvc@yahoo.com

सम्पादकीय

* त्रिपिटक भगवान् बुद्ध की वाणी का सबसे प्रामाणिक संग्रह माना जाता है।

* भगवान् बुद्ध ने अपने उपदेश सकायनिरुत्तिया अर्थात् अपनी भाषा में संकलित करने का निर्देश दिया था। पालि को पहले मागधी भी कहा जाता था। परम्परा में इसे मूलभाषा भी माना गया है। **'सा मागधी मूलभासा नरा यायादिकप्पिका।'** त्रिपिटक एवं पालि साहित्य का विशेष महत्त्व इसलिए भी है कि इसकी प्रामाणिकता दर्पण के समान प्रतिबिम्बित होती है। भगवान बुद्ध के शिष्य उनके समय ही बुद्धवचन श्रुति परम्परा से धारण करते जाते थे, परिनिर्वाण के तुरन्त बाद उनका सङ्गायन-संग्रह कर लिया गया। तीसरी सङ्गीति में त्रिपिटक का अन्तिम रूप भी निर्धारित हो गया जो अब तक प्रचलित है। इसी बीच बुद्धवचनों को चारों ओर प्रचारित व प्रसारित किया गया, जिसके कारण कई बुद्धवचन शिलालेख के रूप में प्राप्त होते हैं तथा त्रिपिटक श्रीलङ्का में पत्थरों में उत्कीर्ण करा दिया गया। आज जो त्रिपिटक का संस्करण प्राप्त होता है, वह 1956 ई. के बर्मा (म्याँमार) छट्ठसङ्गायन के आधार पर है। त्रिपिटक श्रीलङ्का में सिंहली, थाईलैण्ड में थाई तथा बर्मा में बर्मी लिपि में उपलब्ध होता है। पी.टी.एस. का रोमन संस्करण भी महत्त्वपूर्ण है। 1960 ई. में नालन्दा से जो देवनागरी संस्करण प्रकाशित हुआ था, उसका द्वितीय संस्करण भी अब उपलब्ध हो रहा है। इगतपुरी से सम्पूर्ण त्रिपिटक देवनागरी में अट्ठकथा एवं टीकाओं सहित छपा है, जो रोमन एवं देवनागरी में इण्टरनेट पर लगभग 200 भागों में उपलब्ध है। यह पालि साहित्य के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है। इसे बहुत ही आसानी से डाउनलोड भी किया जा सकता है। पालि साहित्य के हिन्दी अनुवाद का कार्य भिक्षु जगदीश कश्यप, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, भदन्त आनन्द कौशल्यायन तथा धर्मरक्षित जी ने सन् 1960 से 1980 के बीच किया। उसके बाद छिटपुट ग्रन्थों का ही हिन्दी अनुवाद हुआ है।

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली के तत्कालीन कुलपति प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी जी की संकल्पना थी कि सम्पूर्ण त्रिपिटक एवं महत्त्वपूर्ण पालि ग्रन्थ संस्कृतच्छाया एवं हिन्दी -अनुवाद के

साथ पालि परियोजना में प्रकाशित हों। उसी का परिणाम है कि सन् 2012 में 8 ग्रन्थ पाँच भागों में खुद्दकपाठपालि, उदानपालि, इतिवुत्तकपालि, सुत्तनिपातपालि, विमानवत्थुपालि एवं पेतवत्थुपालि, थेरगाथापालि एवं थेरीगाथापालि, संयुत्तनिकायपालि (1. सगाथवग्गो), सन् 2016 में दो ग्रन्थ संयुत्तनिकायपालि (2. निदानवग्गो) एवं संयुत्तनिकायपालि (3. खन्धवग्गो) प्रकाशित हो चुके हैं। सन् 2018 में संयुत्तनिकायपालि (4. सळायतनवग्गो), संयुत्तनिकायपालि (5. महावग्गो), अपदानपालि-I (थेरापदानपालि-1-20 वग्गो), बुद्धवंसपालि, थूपवंस, पालि-सल्लाप-सहस्सकं एवं पाइअ-सद्द-कोशो (प्राकृत डिक्शनरी) प्रकाशित हो चुके हैं।

वर्तमान में अपदानपालि-II (थेरापदानपालि-21-42 वग्गो) तथा अभिधम्मपिटकस्थ धातुकथापालि प्रकाशित हो रहे हैं। वर्तमान में इसका पूरा श्रेय वर्तमान कुलपति प्रो. पी.एन. शास्त्री जी को है। अध्येताओं को जे. आर. एफ./ एस. आर. एफ. से पी. डी. एफ. का अवसर प्रदान किया। आपकी इच्छा है कि संस्था के शास्त्री एवं आचार्य पाठ्यक्रमों में भी पालि की पढ़ाई हो। आपने इस योजना को न केवल अनवरत रखा बल्कि उसको और मजबूती देते हुए आगे बढ़ाया। पालि जगत सदैव संस्थान एवं आपके अधिकारियों की उदारता का आभारी रहेगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ अपदानपालि-II (थेरापदानपालि-21-42 वग्गो) की संस्कृतच्छाया डॉ. मोहन मिश्र एवं हिन्दी अनुवाद का कार्य डॉ. प्रियंका ने परिश्रमपूर्वक किया है दोनों अध्येता साधुवाद के पात्र हैं। प्रो. जानकी प्रसाद द्विवेदी (वाराणसी) एवं प्रो. रामनक्षत्र प्रसाद (नालन्दा) आदि ने कार्यशाला में अपने वैदुष्यपूर्ण सक्रिय सहयोग से ज्ञानयज्ञ की पूर्ति की है। पालि अध्ययन केन्द्र के प्रभारी डॉ. गुरुचरण सिंह नेगी के प्रयास से पालि अध्ययन केन्द्र की प्रगति सराहनीय है। यह संस्करण छात्रों एवं शोधकर्ताओं के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ तो हम लोगों का परिश्रम सफल माना जाएगा।

- प्रो. विजय कुमार जैन
डॉ. गुरुचरण सिंह नेगी

ग्रन्थ के सन्दर्भ में

अपदान (संस्कृत, अवदान) का तात्पर्य कथा, कहानी अथवा असाधारण या अद्भुत कार्य है। ये कथाएँ कर्म प्राबल्य की सिद्धि को दृष्टि में रखते हुए लिखी गई हैं। अवदान-कथाओं का सबसे प्राचीन संग्रह अवदान-शतक है। इसका चीनी अनुवाद सम्भवत: तीसरी शताब्दी में हुआ था। प्रत्येक कथा में शुभाशुभ कर्मों के फल का वर्णन मिलता है। अपदान मूलत: पालि व हीनयानी ग्रन्थ है। इन कथाओं में बुद्ध-पूजा का उल्लेख मिलता है।

थेर तथा थेरी गाथाओं के रूप में अपदान का प्रणयन हुआ, ऐसा प्रतीत होता है। अपदान दो भागों में है, थेर-अपदान और थेरी-अपदान। इनमें क्रमश: भिक्षु तथा भिक्षुणियों के पूर्वजन्म की कथाओं का वर्णन है। इसे थेर और थेरी कथाओं का पूरक भी कहा जा सकता है। अपदान निश्चित रूप से अशोक कालीन रचना है। कारण यह है कि इसमें कथावत्थु का निर्देश हुआ है। यह तृतीय संगीति के काल में लिखी गई थी।

थेर-अपदान में 55 वर्ग हैं- जिनमें से प्रत्येक में 10 अपदानों का समावेश है। थेरी-अपदान 4 वर्गों में विभक्त है, प्रत्येक में 10 अपदानों का वर्णन है। थेरापदान में 547 भिक्षुओं तथा थेरी-अपदान में 40 भिक्षुणियों के पूर्वजन्म के सत्कृत्यों की वर्णना हुई है। ये सभी बुद्ध की शिष्य-शिष्याएँ थीं। इस कहानी के भी दो भाग हैं- अतीत जन्म-सम्बन्धी और वर्तमान जन्म-सम्बन्धी। इसमें लोक-धर्म के रूप में बौद्धधर्म का चित्रण मिलता है। यथा- दान, चैत्य-स्तूप आदि के रूप में। इसी के आधार पर संस्कृत-साहित्य का अवदान-साहित्य विकसित हुआ है। अपदान में चीन का 'चीन-रट्ठ' (चीन राष्ट्र) के रूप में उल्लेख प्राप्त है।

अपदान के दो परिच्छेद हैं- बुद्धापदान और प्रत्येक बुद्धापदान। बुद्धापदान में भगवान् ने अपने पूर्वकर्म (पुब्बकम्म-पिलोति) का वर्णन किया है और अपने वर्तमान जन्म में प्राप्त समस्त दु:खों के रूप में पूर्वकृत दुष्कृत्यों को कारण बताया है। कहा गया है कि एक बार भगवान् बुद्ध अपने महान् भिक्षु-संघ के साथ अनन्त सरोवर पर गए जहाँ बैठकर लोकनायक ने अपने पूर्वकर्मों का उद्घाटन किया और भिक्षुओं को कहा कि जो-जो कर्म मैंने पूर्वजन्म में किए, उन्हें सुनो कि किस प्रकार यह कर्म-गुदड़ी मेरे बुद्धत्त्व प्राप्ति के उपरान्त भी अपने विपाक दिखा रही है- ''अनोतत्तसरासन्ने रमणीयं सिततले। महता भिक्खुसंघेन परेतो लोकनायको। आसीनो व्याकरी तत्थ पुब्बकम्मानि अत्तनो। सुणाथ भिक्खवो मह्यं यं कम्मं पकतं मया। पिलोतिकस्स कम्मस्स बुद्धत्ते पि विपच्चती'ति। पच्चेक बुद्धापदान में 'देवग्गविसाणसुत्त' के समान बुद्धवाणी के एकान्त जीवन सम्बन्धी उदात्त गाथाएँ हैं। थेर-थेरी गाथाओं की अपनी अट्ठकथा ('परमत्थदीपनी') में आचार्य धम्मपाल स्थविर-स्थविरिणियों की जो जीवनियां दी हैं वहां स्थान-स्थान पर 'तेन वुत्तं अपदाने' कहकर अपनी अट्ठकथा के आधार के रूप में अपदान को स्वीकारा है। इससे भी अपदान का महत्त्व सिद्ध है।

डॉ. मोहन मिश्र

अपदानपाळि-II

विषयानुक्रमणिका

विसयक्कमो

थेरापदानपाळि (21-42)

21. कणिकारपुप्फियवग्गो 1-11

1. कणिकारपुप्फियत्थेरअपदानं 1
2. मिनेलपुप्फियत्थेरअपदानं 2
3. किङ्कणिपुप्फियत्थेरअपदानं 3
4. तरणियत्थेरअपदानं 4-5
5. निग्गुण्डिपुप्फियत्थेरअपदानं 5
6. उदकदायकत्थेरअपदानं 6
7. सललमालियत्थेरअपदानं 7
8. कोरण्डपुप्फियत्थेरअपदानं 8
9. आधारदायकत्थेरअपदानं 9
10. पापनिवारियत्थेरअपदानं 10-11

22. हत्थिवग्गो 12-23

1. हत्थिदायकत्थेरअपदानं 12
2. पानधिदायकत्थेरअपदानं 13
3. सच्चसञ्ञकत्थेरअपदानं 14-15
4. एकसञ्ञकत्थेरअपदानं 15-16
5. रंसिसञ्ञकत्थेरअपदानं 16-17
6. सन्धितत्थेरअपदानं 17-18
7. तालवण्टदायकत्थेरअपदानं 18-19
8. अक्कन्तसञ्ञनकत्थेरअपदानं 19-20
9. सप्पिदायकत्थेरअपदानं 21-22
10. पापनिवारियत्थेरअपदानं 22-23

23. आलम्बणदायकवग्गो 24-35

1. आलम्बणदायकत्थेरअपदानं 24-25
2. अजिनदायकत्थेरअपदानं 25-26
3. द्वेरतनियत्थेरअपदानं 26-28
4. आरक्खदायकत्थेरअपदानं 28-29
5. अब्याधिकत्थेरअपदानं 29-30
6. अङ्कोलपुप्फियत्थेरअपदानं 30-31
7. सोवण्णवटंसकियत्थेरअपदानं 31-32
8. मिञ्जवटंसकियत्थेरअपदानं 32-33
9. सुकतावेळियत्थेरअपदानं 33-34
10. एकवन्दनियत्थेरअपदानं 34-35

24. उदकासनवग्गो 36-44

1. उदकासनदायकत्थेरअपदानं 36
2. भाजनपालकत्थेरअपदानं 37
3. सालपुप्फियत्थेरअपदानं 38
4. किलञ्जदायकत्थेरअपदानं 39
5. वेदिकारकत्थेरअपदानं 40
6. वण्णकारत्थेरअपदानं 41
7. पियालपुप्फियत्थेरअपदानं 42
8. अम्बयागदायकत्थेरअपदानं 42-43
9. जगतिकारकत्थेरअपदानं 43
10. वासिदायकत्थेरअपदानं 44

25. तुवरदायकवग्गो 45-53

1. तुवरदायकत्थेरअपदानं 45
2. नागकेसरियत्थेरअपदानं 46
3. नळिनकेसरियत्थेरअपदानं 47
4. विरवपुप्फियत्थेरअपदानं 48
5. कुटिधूपकत्थेरअपदानं 48-49
6. पत्तदायकत्थेरअपदानं 49
7. धातुपूजकत्थेरअपदानं 50
8. सत्तलिपुप्फपूजकत्थेरअपदानं 50-51
9. बिम्बिजालियत्थेरअपदानं 51-52
10. उद्दालकदायकत्थेरअपदानं 52-53

26. थोमकवग्गो 54-63

1. थोमकत्थेरअपदानं 54
2. एकासनदायकत्थेरअपदानं 55

3. चितकपूजकत्थेरअपदानं 56
4. तिचम्पकपुप्फियत्थेरअपदानं 57
5. सत्तपाटलियत्थेरअपदानं 58
6. उपाहनदायकत्थेरअपदान 58–59
7. मञ्जरिपूजकत्थेरअपदानं 59–60
8. पण्णदायकत्थेरअपदानं 60–61
9. कुटिदायकत्थेरअपदानं 61–62
10. अग्गपुप्फियत्थेरअपदानं 62–63

27. पदुमुक्खिपवग्गो 64–72

1. आकासुक्खिपियत्थेरअपदानं 64
2. तेलमक्खियत्थेरअपदानं 65
3. अङ्गचन्दियत्थेरअपदानं 66
4. पदीपदायकत्थेरअपदानं 66–67
5. बिळालिदायकत्थेरअपदानं 67–68
6. मच्छदायकत्थेरअपदानं 68–69
7. जवहंसकत्थेरअपदानं 69
8. सळलपुप्फियत्थेरअपदानं 70
9. उपागतासयत्थेरअपदानं 70–71
10. तरणियत्थेरअपदानं 71–72

28. सुवण्णबिब्बोहनवग्गो 73–81

1. सुवण्णबिब्बोहनियत्थेरअपदानं 73
2. तिलमुट्ठिदायकत्थेरअपदानं 74
3. चङ्कोटकियत्थेरअपदानं 75
4. अब्भञ्जनदायकत्थेरअपदानं 76
5. एकञ्जलिकत्थेरअपदानं 77
6. पोत्थकदायकत्थेरअपदानं 78
7. चितकपूजकत्थेरअपदानं 78–79
8. आलुवदायकत्थेरअपदानं 79–80
9. एकपुण्डरीकत्थेरअपदानं 80
10. तरणीयत्थेरअपदानं 80–81

29. पण्णदायकवग्गो 82–91

1. पण्णदायकत्थेरअपदानं 82
2. फलदायकत्थेरअपदानं 83–84
3. पच्चुग्गमनियत्थेरअपदानं 84–85
4. एकपुप्फियत्थेरअपदानं 85
5. मघवपुप्फियत्थेरअपदानं 86
6. उपट्ठाकदायकत्थेरअपदानं 86–87
7. अपदानियत्थेरअपदानं 88
8. सत्ताहपब्बजितत्थेरअपदानं 88–89
9. बुद्धुपट्ठायिकत्थेरअपदानं 89–90
10. पुब्बङ्गमियत्थेरअपदानं 90–91

30. चितकपूजकवग्गो 92–101

1. चितकपूजकत्थेरअपदानं 92
2. पुप्फधारकत्थेरअपदानं 93
3. छत्रदायकत्थेरअपदानं 94–95
4. सद्दसञ्ञकत्थेरअपदानं 95
5. गोसीसनिक्खेपकत्थेरअपदानं 96–97
6. पादपूजकत्थेरअपदानं 97
7. देसकित्तकत्थेरअपदानं 98
8. सरणगमनियत्थेरअपदानं 99
9. अम्बपिण्डियत्थेरअपदानं 99–100
10. अनुसंसावकत्थेरअपदानं 100–101

31. पदुमकेसरवग्गो 102–112

1. पदुमकेसरियत्थेरअपदानं 102
2. सब्बगन्धियत्थेरअपदानं 103
3. परमन्नदायकत्थेरअपदानं 103–104
4. धम्मसञ्ञकत्थेरअपदान 104–105
5. फलदायकत्थेरअपदान 106
6. सम्पसादकत्थेरअपदानं 106–108
7. आरामदायकत्थेरअपदानं 108–109
8. अनुलेपदायकत्थेरअपदानं 109–110
9. बुद्धसञ्ञकत्थेरअपदानं 110–111
10. पब्भारदायकत्थेरअपदानं 111–112

32. आरक्खदायकवग्गो 113–124

1. आरक्खदायकत्थेरअपदानं 113
2. भोजनदायकत्थेरअपदानं 113–114
3. गतसञ्ञयकत्थेरअपदानं 115
4. सत्तपदुमियत्थेरअपदान 115–116

5. पुप्फासनदायकत्थेरअपदानं 117-118
6. आसनसन्थविकत्थेरअपदान 118-119
7. सद्दसञ्ञकत्थेरअपदानं 119-120
8. तिरंसियत्थेरअपदानं 120-122
9. कन्दलिपुप्फियत्थेरअपदानं 122-123
10. कुमुदमालियत्थेरअपदानं 123-124
33. उमापुप्फियवग्गो 125-146
1. उमापुप्फियत्थेरअपदानं 125-126
2. पुलिनपूजकत्थेरअपदानं 126-127
3. हासजनकत्थेरअपदानं 127-128
4. यञ्ञसामिकत्थेरअपदानं 128-130
5. निमित्तसञ्ञकत्थेरअपदानं 130-131
6. अन्नसंसावकत्थेरअपदानं 131-132
7. निग्गुण्डिपुप्फियत्थेरअपदानं 132-137
8. सुमनावेळियत्थेरअपदानं 137-139
9. पुप्फच्छत्तियत्थेरअपदानं 139-141
10. सपरिवारछत्तदायकत्थेरअपदानं 141-146
34. गन्धोदकवग्गो 147-175
1. गन्धधूपियत्थेरअपदानं 147-148
2. उदकपूजकत्थेरअपदानं 148-149
3. पुन्नागपुप्फियत्थेरअपदानं 149-150
4. एकदुस्सदायकत्थेरअपदानं 150-154
5. फुसितकम्पियत्थेरअपदानं 154-157
6. पभङ्करत्थेरअपदानं 157-161
7. तिणकुटिदायकत्थेरअपदानं 161-164
8. उत्तरेय्यदायकत्थेरअपदानं 164-168
9. धम्मसवनियत्थेरअपदानं 169-172
10. उक्खित्तपदुमियत्थेरअपदानं 172-175
35. एकपदुमियवग्गो 176-189
1. एकपदुमियत्थेरअपदानं 176-177
2. तीणुप्पलमालियत्थेरअपदानं 178-179
3. धजदायकत्थेरअपदानं 179-181
4. तिकिङ्कणिपूजकत्थेरअपदानं 181
5. नळागारिकत्थेरअपदानं 182-183
6. चम्पकपुप्फियत्थेरअपदानं 183-184
7. पदुमपूजकत्थेरअपदानं 184-185
8. तिणमुट्ठिदायकत्थेरअपदानं 185-187
9. तिन्दुकफलदायकत्थेरअपदानं 187-188
10. एकञ्जलियत्थेरअपदानं 188-189
36. सद्दसञ्ञकवग्गो 190-198
1. सद्दसञ्ञकत्थेरअपदानं 190
2. यवकलापियत्थेरअपदानं 191
3. किंसुकपूजकत्थेरअपदानं 192
4. सकोसककोरण्डदायकत्थेरअपदानं 192-193
5. दण्डदायकत्थेरअपदानं 193-194
6. अम्बयागुदायकत्थेरअपदानं 194
7. सुपुटकपूजकत्थेरअपदानं 195
8. मञ्चदायकत्थेरअपदानं 195-196
9. सरणगमनियत्थेरअपदानं 196-197
10. पिण्डपातिकत्थेरअपदानं 197-198
37. मन्दारवपुप्फियवग्गो 199-207
1. मन्दारवपुप्फियत्थेरअपदानं 199
2. कक्कारुपुप्फियत्थेरअपदानं 200
3. भिसमुळालदायकत्थेरअपदानं 200-201
4. केसरपुप्फियत्थेरअपदानं 201-202
5. अङ्कोलपुप्फियत्थेरअपदानं 202
6. कदम्बपुप्फियत्थेरअपदानं 203
7. उद्दालकपुप्फियत्थेरअपदानं 203-204
8. एकचम्पकपुप्फियत्थेरअपदानं 204-205
9. तिमिरपुप्फियत्थेरअपदानं 205
10. सळलपुप्फियत्थेरअपदानं 206-207
38. बोधिवन्दनवग्गो 208-218
1. बोधिवन्दकत्थेरअपदानं 208
2. पाटलिपुप्फियत्थेरअपदानं 209-210
3. तीणुप्पलमालियत्थेरअपदानं 210-212
4. पट्टिपुप्फियत्थेरअपदानं 212-213
5. सत्तपण्णियत्थेरअपदानं 213-214
6. गन्धमुट्ठियत्थेरअपदानं 214-215

7. चितकपूजकत्थेरअपदानं 215
8. सुमनतालवण्टियत्थेरअपदानं 216
9. सुमनदामियत्थेरअपदानं 216-217
10. कासुमारिफलदायकत्थेरअपदानं 217-218
39. अवटफलवग्गो 219-237
1. अवटफलदायकत्थेरअपदानं 219-220
2. लबुजदायकत्थेरअपदानं 220-221
3. उदुम्बरफलदायकत्थेरअपदानं 221-222
4. पिलक्खफलदायकत्थेरअपदानं 222-223
5. फारुसफलदायकत्थेरअपदानं 223
6. वल्लिफलदायकत्थेरअपदानं 224
7. कदलिफलदायकत्थेरअपदानं 225
8. पनसफलदायकत्थेरअपदानं 226
9. सोणकोटिवीसत्थेरअपदानं 227-229
10. पुब्बकम्मपिलोतिकबुद्धअपदानं 230-237
40. पिलिन्दवच्छवग्गो 238-341
1. पिलिन्दवच्छत्थेरअपदानं 238-279
2. सेलत्थेरअपदानं 279-298
3. सब्बकित्तिकत्थेरअपदानं 298-304
4. मधुदायकत्थेरअपदानं 304-308
5. पदुमकूटागारियत्थेरअपदानं 308-314
6. बाकुलत्थेरअपदानं 314-321
7. गिरिमानन्दत्थेरअपदानं 321-327
8. सळलमण्डपियत्थेरअपदानं 327-328
9. सब्बदायकत्थेरअपदानं 328-333
10. अजितत्थेरअपदानं 333-341
41. मेत्तेय्यवग्गो 342-416
1. तिस्समेत्तेय्यत्थेरअपदानं 342-346
2. पुण्णकत्थेरअपदानं 347-350
3. मेत्तगुत्थेरअपदानं 350-355
4. धोतकत्थेरअपदानं 355-361
5. उपसीवत्थेरअपदानं 361-373
6. नन्दकत्थेरअपदानं 373-377
7. हेमकत्थेरअपदानं 377-385
8. तोदेय्यत्थेरअपदानं 385-395
9. जतुकण्णित्थेरअपदानं 395-406
10. उदेनत्थेरअपदानं 406-416
42. भद्दालिवग्गो 417-454
1. भद्दालित्थेरअपदानं 417-423
2. एकछत्तियत्थेरअपदानं 423-432
3. तिणसूलकछादनियत्थेरअपदानं 432-437
4. मधुमंसदायकत्थेरअपदानं 437-439
5. नागपल्लवत्थेरअपदानं 439-440
6. एकदीपियत्थेरअपदानं 440-444
7. उच्छङ्गपुप्फियत्थेरअपदानं 444-445
8. यागुदायकत्थेरअपदानं 445-449
9. पत्थोदनदायकत्थेरअपदानं 449-451
10. मञ्चदायकत्थेरअपदानं 452-454
गाथानुक्रमणिका I-XXVIII

॥नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स॥

खुद्दकनिकाये
थेरापदानपाळि
(दुतियो भागो)
1. कणिकारपुप्फियत्थेरअपदानं

पालि- ''कणिकारं पुप्फितं दिस्वा, ओचिनित्वानहं तदा।
तिस्सस्स अभिरोपेसिं, ओघतिण्णस्स तादिनो॥1॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥2॥
''पञ्चत्तिंसे इतो कप्पे, अरुणपाणीति विस्सुतो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥3॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥4॥
इत्थं सुदं आयस्मा कणिकारपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

संस्कृत- ''कर्णिकारं पुष्पितं दृष्ट्वा, अवचित्याहं तदा।
तिष्याय अभ्यरोपयम्, ओघतीर्णाय तायिने॥1॥
''द्विनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2॥
''पञ्चत्रिंशे इतः कल्पे, अरुणपाणिरिति विश्रुतः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥3॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥4॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कर्णिकारपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- तब पुष्पित कणिकार को देखकर मैंने उसका संग्रह करके ओघतीर्ण (बाढ़ को पार किये हुए) तिष्य बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥1॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, उसी बुद्ध-पूजा का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥1॥

यहाँ से 35 वें कल्प में अरुणपाणि, इस नाम से विख्यात सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥1॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥4॥

इस प्रकार आयुष्मान् कणिकारपुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. मिनेलपुप्फियत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णो भगवा, सतरंसी पतापवा।
चङ्कमनं समारूळ्हो, मेत्तचित्तो सिखीसभो॥5॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, वन्दित्वा [थोमेत्वा (स्या॰)] ञाणमुत्तमं।
मिनेलपुप्फं पग्गय्ह, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥6॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥7॥
''एकूनतिंसकप्पम्हि, सुमेघघननामको।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥8॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥9॥
इत्थं सुदं आयस्मा मिनेलपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''सुवर्णवर्णो भगवान्, शतरश्मिः प्रतापवान्।
चङ्क्रमणं समारूढः, मित्रचित्तः शिखीशभः॥5॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, वन्दित्वा ज्ञानमुत्तमम्।
मिनेलपुष्पं प्रगृह्य, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥6॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूपुजम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥7॥
''एकोनत्रिंशकल्पे, सुमेघघननामकः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥8॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥9॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् मिनेलपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

सौ रश्मियों से युक्त प्रतापवान् मैत्री चित्त वाले स्वर्णवर्णी श्रेष्ठ शिखी भगवान् चङ्क्रमण (पथ) पर आरूढ़ हुए॥5॥

प्रसन्नचित्त और सौमनस्य पूर्वक मैंने ज्ञान में उत्तम भगवान् बुद्ध की वन्दना कर तथा **मिनेलपुष्प** को ग्रहण कर बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥6॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित कर पूजा की थी इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता यह बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है॥7॥

यहाँ से 29 वें कल्प में सुमेघघन नाम से विख्यात सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥8॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥9॥

इस प्रकार आयुष्मान् मिनेलपुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. किङ्कणिपुप्फियत्थेरअपदानं

''कञ्चनग्घियसङ्कासो, सब्बञ्ञू लोकनायको।
ओदकं दहमोग्गय्ह, सिनायि लोकनायको॥10॥
''पग्गय्ह किङ्कणिं [किङ्किणिं (सी॰)] पुप्फं, विपस्सिस्साभिरोपयिं।
उदग्गचित्तो सुमनो, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥11॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥12॥
''सत्तवीसतिकप्पम्हि, राजा भीमरथो अहु।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥13॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥14॥
इत्थं सुदं आयस्मा किङ्कणिपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''काञ्चनार्घीयसङ्काशः, सर्वज्ञो लोकनायकः।
ओदकं दह्रमवगाह्य, अस्नाल्लोकनायकः॥10॥
''प्रगृह्य किङ्किणिं पुष्पम्, विपश्यिनेऽभ्यरोपयम्।
उदग्रचित्तः सुमनाः, द्विपदिन्द्राय तायिने॥11॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥12॥
''सप्तविंशतितमेकल्पे, राजा भीमरथ अभूत्।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥13॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥14॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् किङ्किणिपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

काञ्चनार्घ्य के समान, सर्वज्ञ लोकनायक ने जल से परिपूर्ण तालाब में उतरकर स्नान किया॥10॥

किङ्किणि पुष्प को ग्रहण कर प्रसन्नचित्त और सौमनस्य पूर्वक मैंने द्विपदिन्द्र विपश्यी पर अभ्यर्पित किया॥11॥

91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है॥12॥

यहाँ से 27 वें कल्प में एक भीमरथ नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥13॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥14॥

इस प्रकार आयुष्मान् किङ्किणिपुष्पी स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

4. तरणीयत्थेरअपदानं

''अत्थदस्सी तु भगवा, द्विपदिन्दो नरासभो।
पुरक्खतो सावकेहि, गङ्गातीरमुपागमि॥15॥
''समतित्ति काकपेय्या, गङ्गा आसि दुरुत्तरा।
उत्तारयिं भिक्खुसङ्घं, बुद्धञ्च द्विपदुत्तमं॥16॥
''अट्ठारसे कप्पसते, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, तरणाय इदं फलं॥17॥
''तेरसेतो कप्पसते, पञ्च सब्बोभवा [सब्भोगवा (सी॰)] अहुं।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥18॥
''पच्छिमे च भवे अस्मिं, जातोहं ब्राह्मणे कुले।
सद्धिं तीहि सहायेहि, पब्बजिं सत्थु सासने॥19॥

''अर्थदर्शी तु भगवान्, द्विपदेन्द्रो नरर्षभः।
पुरस्कृतः श्रावकैः, गङ्गातीरमुपागमत्॥15॥
''समतृप्तिः काकपेया, गङ्गा आसीद् दुरुत्तरा।
उदतारयं भिक्षुसङ्घम्, बुद्धञ्च द्विपदोत्तमम्॥16॥
''अष्टादशे कल्पशते, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, तरणस्य इदं फलम्॥17॥
''त्रयोदश इतः कल्पशते, पञ्च सर्वभोगवान् अभूवन्।
सप्तरत्नसमापन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥18॥
''पश्चिमे च भवे अस्मिन्, जातोऽहं ब्राह्मणे कुले।
सार्द्धं त्रिभिः सहायैः, प्राव्रजं शास्तुः शासने॥19॥

श्रावकों से पुरस्कृत अर्थदर्शी, द्विपदिन्द्र, नरर्षभ भगवान् गंगा नदी के तट पर आए॥15॥

पूर्ण रूप से तृप्त काकपेया (कौवे के पीने अनुकूल) लबालब गंगा जिसे पार करना कठिन था, को भिक्षुसंघ और द्विपदोत्तम बुद्ध को मैंने पार कराया॥16॥

उस 18 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था उसी गंगा पार पहुँचाने का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥17॥

यहाँ से 13 सौ वें कल्प में समस्त भोगों से युक्त, सप्तरत्नसम्पन्न तथा महाबलशाली पाँच चक्रवर्ती राजा हुए॥18॥

अपने अन्तिम जन्म में मैं ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ और अपने तीन सहायकों के साथ शास्ता के शासन में प्रवज्या ग्रहण किया॥19॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥20॥

इत्थं सुदं आयस्मा तरणियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

5. निग्गुण्डिपुप्फियत्थेरअपदानं

''विपस्सिस्स भगवतो, आसिमारामिको अहं।

निग्गुण्डिपुप्फं पग्गय्ह, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥21॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥22॥

''पञ्चवीसे [पञ्चतिंसे (सी० स्या०)] इतो कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।

महापतापनामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥23॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥24॥

इत्थं सुदं आयस्मा निग्गुण्डिपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥21॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् तरणीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''विपश्यिनो भगवतः, आसमारामिको अहम्।

निर्गुण्डिपुष्पं प्रगृह्य, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥21॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥22॥

''पञ्चविंशतितमे कल्पे, एक आसम् जनाधिपः।

महाप्रतापनाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥23॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥24॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् निर्गुण्डिपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥20॥

इस प्रकार आयुष्मान् तरणीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं विपश्यी भगवान् के आराम में एक सेवक था, तब निर्गुण्डि पुष्प को ग्रहण कर मैंने बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥21॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्पपूजा की थी, उसी बुद्ध-पूजा का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥22॥

यहाँ से 25 वें कल्प में महाप्रताप नामक एक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥23॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥24॥

इस प्रकार आयुष्मान् निर्गुण्डि पुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

6. उदकदायकत्थेरअपदानं

''भुञ्जन्तं समणं दिस्वा, विप्पसन्नमनाविलं।
घटेनोदकमादाय, सिद्धत्थस्स अदासहं॥25॥
''निम्मलो होमहं अज्ज, विमलो खीणसंसयो।
भवे निब्बत्तमानम्हि, फलं निब्बत्तते मम [सुभं (सी॰)]॥26॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, उदकं यमदासहं [यं तदा अदं (सी॰), अददिं तदा (स्या॰)]।
दुग्गतिं नाभिजानामि, दकदानस्सिदं फलं॥27॥
''एकसट्ठिम्हितो कप्पे, एकोव विमलो अहु।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥28॥'
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥29॥
इत्थं सुदं आयस्मा उदकदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''भुञ्जन्तं श्रमणं दृष्ट्वा, विप्रसन्नमनाविलम्।
घटेनोदकमादाय, सिद्धार्थाय अदामहम्॥25॥
''निर्मलो भवाम्यहम् अद्य, विमलः क्षीणसंशयः।
भवे निर्वर्त्तमानस्य, फलं निर्वर्त्तते मम॥26॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, उदकं यमदामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, उदकदानस्येदं फलम्॥27॥
''एकषष्ट्याम् इतः कल्पे, एक एव विमलोऽभूत।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥28॥
''प्रतिसम्विदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥29॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उदकदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

अत्यधिक प्रसन्न एवं शुद्ध मन वाले श्रमण सिद्धार्थ को भोजन करता हुआ देखकर मैंने घड़े से जल लाकर प्रदान किया॥25॥

मैं आज निर्मल, स्वच्छ तथा सभी संशयों से मुक्त हो गया और भव के शान्त होने पर मेरे पुनर्जन्म में यह फलित हुआ॥26॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो उदक प्रदान किया था, उसी उदक-दान का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥27॥

यहाँ से 61 वें कल्प में विमल नाम से एक ही सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥28॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥29॥

इस प्रकार आयुष्मान् उदकदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

7. सललमालियत्थेरअपदानं

''कणिकारंव जोतन्तं, निसिन्नं पब्बतन्तरे।
ओभासेन्तं दिसा सब्बा, सिद्धत्थं नरसारथिं॥30॥
''धनुं अद्धेज्झं कत्वान, उसुं सन्नय्हहं तदा।
पुप्फं सवण्टं छेत्वान, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥31॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥32॥
''एकपञ्ञासितो कप्पे, एको आसिं जुतिन्धरो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥33॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥34॥
इत्थं सुदं आयस्मा सललमालियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''कर्णिकारमिव द्योतन्तम्, निषण्णं पर्वतान्तरे।
अवभासन्तं दिशः सर्वाः, सिद्धार्थं नरसारथिम्॥30॥
''धनुरदुरुज्झं कृत्वा, इषुं सन्नह्याहं तदा।
पुष्पं सवृन्तं छित्वा, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥31॥
''चतुर्णवतितः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥32॥
''एकपञ्चाशत् इतः कल्पे, एक आसं द्युतिन्धरः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥33॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥34॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सरलमालियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

पर्वत के मध्य स्थित कणिकार वृक्ष की भांति प्रकाशमान् चारों दिशाओं को प्रकाशित करते हुए नर सारथि सिद्धार्थ को... ॥30॥

मैंने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा कर तीर से शस्त्र बाँध कर डाली सहित पुष्प को भेद कर भगवान् बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥31॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो पुष्प अभिरोपित किया था, फलतः मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह बुद्ध पूजा का ही सुपरिणाम है॥32॥

यहाँ से 51 वें कल्प में जुतिन्धर (प्रकाशवान्) सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली एक चक्रवर्ती राजा हुआ॥33॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥34॥

इस प्रकार आयुष्मान् सललमालिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

8. कोरण्डपुप्फियत्थेरअपदानं

''अक्कन्तञ्च पदं दिस्वा, चक्कालङ्कारभूसितं।
पदेनानुपदं यन्तो, विपस्सिस्स महेसिनो॥35॥
''कोरण्डं पुप्फितं दिस्वा, समूलं पूजितं मया।
हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, अवन्दिं पदमुत्तमं॥36॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥37॥
''सत्तपञ्ञासकप्पम्हि, एको वीतमलो अहुं।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥38॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥39॥
इत्थं सुदं आयस्मा कोरण्डपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''आक्रान्तं च पदं दृष्ट्वा, चक्रालङ्कारभूषितम्।
पदेनानुपदं यातः, विपश्यिनः महर्षेः॥35॥
''कोरण्डं पुष्पितं दृष्ट्वा, समूलं पूजितं मया।
हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, अवन्दे पदमुत्तमम्॥36॥
''एकनवतितः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥37॥
''सप्तपञ्चाशत्तमे कल्पे, एको वीतमलोऽभूवम्।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥38॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥39॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कोरण्डपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

पैरों के पीछे-पीछे चलते हुए विपश्यी महर्षि के चक्रालङ्कारभूषित पैरों को देखकर स्थिर-॥35॥

पुष्पित कोरण्ड पुष्प को देखकर मैंने जड़ सहित पूजा की और अत्यधिक प्रसन्न चित्त से उस उत्तम पद की वन्दना की॥36॥

91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है॥37॥

57 वें कल्प में मल रहित सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती एक राजा हुआ॥38॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया। इस प्रकार आयुष्मान् कोरण्डपुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-॥39॥

9. आधारदायकत्थेरअपदानं

''आधारकं मया दिन्नं, सिखिनो लोकबन्धुनो।
धारेमि पथविं सब्बं, केवलं वसुधं इमं॥40॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
धारेमि अन्तिमं देहं, सम्मासम्बुद्धसासने॥41॥

''सत्तवीसे इतो कप्पे, अहेसुं चतुरो जना।
समन्तवरणा नाम, चक्कवत्ती महब्बला॥42॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥43॥

इत्थं सुदं आयस्मा आधारदायको [परियादानियो (क०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''आधारकं मया दत्तम्, शिखिने लोकबन्धुवे।
धारयामि पृथ्वीं सर्वाम्, केवलां वसुधाम् इमा॥40॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
धारयाम्यन्तिमं देहम्, सम्यक्सम्बुद्धशासने॥41॥

''सप्तविंशे इतः कल्पे, अभूवन् चतुरो जनाः।
समन्तवरणनामा, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥42॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥43॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् आधारदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

शिखी लोकबन्धु को मेरे द्वारा आधार प्रदान किया गया और मैं इस सम्पूर्ण वसुधा (पृथ्वी) को धारण करता हूँ॥40॥

इस संसार से मेरे क्लेश समूल नष्ट हो गये है और मैं सम्यक् सम्बुद्ध के शासन में अन्तिम देह धारण कर रहा हूँ॥41॥

यहाँ से 27 वें कल्प में समन्तवरण नाम से महाबलशाली चार (बार) चक्रवर्ती हुए॥42॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥43॥

इस प्रकार आयुष्मान् आधारदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

10. पापनिवारियत्थेरअपदानं

''तिस्सस्स तु भगवतो, देवदेवस्स तादिनो।
एकच्छत्तं मया दिन्नं, विप्पसन्नेन चेतसा॥44॥
''निवुतं होति मे पापं, कुसलस्सुपसम्पदा।
आकासे छत्तं धारेन्ति, पुब्बकम्मस्सिदं फलं॥45॥
''चरिमं वत्तते मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
धारेमि अन्तिमं देहं, सम्मासम्बुद्धसासने॥46॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं छत्तमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, छत्तदानस्सिदं फलं॥47॥
''द्वेसत्ततिम्हितो कप्पे, अट्ठासिंसु जनाधिपा।
महानिदाननामेन, राजानो चक्कवत्तिनो॥48॥

''तिष्याय तु भगवते, देवदेवाय तायिने।
एकच्छत्रं मया दत्तम्, विप्रसन्नेन चेतसा॥44॥
''निवृत्तं भवति मे पापम्, कुशलस्योपसम्पदा।
आकाशे छत्रं धारयन्ति, पूर्वकर्मण इदं फलम्॥45॥
''चरमं वर्त्तते मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
धारयाम्यन्तिमं देहम्, सम्यक्सम्बुद्धशासने॥46॥
''द्विनवतावितः कल्पे, यच्छत्रमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, छत्रदानस्येदं फलम्॥47॥
''द्विसप्ततितमे कल्पे, अष्टासन् जनाधिपाः।
महानिदाननाम्ना, राजानः चक्रवर्त्तिनः॥48॥

देवों के देव उन तिष्य भगवान् को अत्यधिक प्रसन्न मन से मेरे द्वारा एक छत्र प्रदान किया गया॥44॥

मेरे पाप कर्म नष्ट हो गये और मैंने कुशल (कर्मों) को ग्रहण किया है। आकाश में (देव) छत्र धारण करते हैं, यह मेरे पूर्व कर्म का फल है॥45॥

यह मेरा अन्तिम जन्म है और भव के सभी क्लेश समूल नष्ट हो गये हैं, अब मैं सम्यक्सम्बुद्ध के शासन में अन्तिम देह धारण करूँगा॥46॥

यहाँ से 92 वें कल्प में जो छत्र मैंने प्रदान किया था, उसके फल से मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह छत्र-दान का ही सुपरिणाम है॥47॥

यहाँ से 72 वें कल्प में महानिदान नाम वाला 88 (बार) चक्रवर्ती राजा हुआ॥48॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥49॥

इत्थं सुदं आयस्मा पापनिवारियो [वातातपनिवारियो (सी०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पापनिवारियत्थेरस्सापदानं दसमं।
कणिकारपुप्फियवग्गो एकवीसतिमो।

तस्सुद्दानं –

कणिकारो मिनेलञ्च, किङ्कणि तरणेन च।
निग्गुण्डिपुप्फी दकदो, सललो च कुरण्डको।
आधारको पापवारी, अट्ठतालीस गाथकाति॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥49॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पापनिवारियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

कर्णिकारः मिनेलश्च, किङ्किणिस्तरणेन च।
निर्गुण्डिपुष्पी उदकदः, सरलश्च कुरण्डकः।
आधारकः पापवारी, अष्टचत्वारिंशद् गाथका इति॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥49॥

इस प्रकार आयुष्मान् पापनिवारिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- कणिकार, मिनेल, किङ्किणि, तरण और निग्गुण्डि, उदक, सरल कुरण्ड आधारक, पापनिवारि इस प्रकार अड़तालिस गाथाएँ हैं।

22. हत्थिवग्गो

1. हत्थिदायकत्थेरअपदानं

पालि- ''सिद्धत्थस्स भगवतो, द्विपदिन्दस्स तादिनो।
नागसेट्ठो मया दिन्नो, ईसादन्तो उरूळ्हवा॥50॥
''उत्तमत्थं अनुभोमि, सन्तिपदमनुत्तरं।
नागदानं [अग्गदानं (सी॰ क॰)] मया दिन्नं, सब्बलोकहितेसिनो॥51॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं नाग [दान (सी॰ क॰)] मददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, नागदानस्सिदं फलं॥52॥
''अट्ठसत्ततिकप्पम्हि, सोळसासिंसु खत्तिया।
समन्तपासादिका नाम, चक्कवत्ती महब्बला॥53॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥54॥
इत्थं सुदं आयस्मा हत्थिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

संस्कृत- ''सिद्धार्थाय भगवते, द्विपदिन्द्राय तायिने।
नागश्रेष्ठो मया दत्तः, ईषदन्त उदूढवान्॥50॥
''उत्तमार्थम् अनुभवामि, शान्तिपदमनुत्तरम्।
नागदानं मया दत्तम्, सर्वलोकहितैषिणे॥51॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं नागम् अददां ततः।
दुर्गतिं नाभिजानामि, नागदानस्येदं फलम्॥52॥
''अष्टसप्ततिकेकल्पे, षोडशासन् क्षत्रियाः।
समन्तपासादिका नाम्ना, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥53॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥54॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् हस्तिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- उस द्विपदेन्द्र, सिद्धार्थ भगवान् को मेरे द्वारा हल की फाल के समान दातों वाला श्रेष्ठ हाथी प्रदान किया गया जिस पर वे आरुढ़ हो गये ॥50॥

सभी लोकों के हितैषी भगवान् को मेरे द्वारा नाग का दान किया गया, जिससे मैं श्रेष्ठ परमार्थ उत्तम शान्ति की अवस्था का अनुभव करता हूँ ॥51॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो नाग-दान किया था, जिससे मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह नाग-दान का ही सुपरिणाम है॥52॥

यहाँ से 78 वें कल्प में समन्तपासादिक नाम से 16 (बार) महाबलशाली चक्रवर्ती क्षत्रिय हुआ॥53॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥54॥

इस प्रकार आयुष्मान् हस्तिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. पानधिदायकत्थेरअपदानं

''आरञ्ञिकस्स इसिनो, चिररत्ततपस्सिनो [झायिनो, मेत्तचित्ततपस्सिनो (स्या॰)]।
बुद्धस्स [धम्मस्स (स्या॰ क॰)] भावितत्तस्स, अदासिं पानधिं अहं॥55॥
''तेन कम्मेन द्विपदिन्द, लोकजेट्ठ नरासभ।
दिब्बयानं [सब्बं यानं (सी॰)] अनुभोमि, पुब्बकम्मस्सिदं फलं॥56॥
''चतुन्नवुते इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पानधिस्स इदं फलं॥57॥
''सत्तसत्ततितो कप्पे, अट्ठ आसिंसु खत्तिया।
सुयाना नाम नामेन, चक्कवत्ती महब्बला॥58॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥59॥
इत्थं सुदं आयस्मा पानधिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पानधिदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''आरण्यकाय ऋषये, चिररक्ततपस्विने।
बुद्धाय भावितात्मने, अददां पानधिंम् अहम्॥55॥
''तेन कर्मणा द्विपदिन्द्र, लोकज्येष्ठ नरर्षभ।
दिव्ययानम् अनुभवामि, पूर्व कर्मण इदं फलम्॥56॥
''चतुर्णवतितमे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पानधेः इदं फलम्॥57॥
''सप्तसप्ततितमे कल्पे, अष्ट आसन् क्षत्रियाः।
सुयानानामानो नाम्ना, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥58॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥59॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पानधिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

वन में निवास करने वाले ऋषि, दीर्घ काल से तपस्या में लीन, संयत आत्मा वाले बुद्ध को मैंने पेय पदार्थ प्रदान किया॥55॥

उस कर्म से हे द्विपदेन्द्र, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ मैं दिव्ययान का अनुभव करता हूँ, यह पूर्व कर्म का ही सुपरिणाम है ॥56॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था यह उसी पेय-पदार्थ दान का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥57॥

77 वें कल्प में सुयान नाम वाले आठ महाबलशाली, चक्रवर्ती क्षत्रिय हुए॥58॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥59॥

इस प्रकार आयुष्मान् पानधिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. सच्चसञ्ञकत्थेरअपदानं

''वेस्सभू तम्हि समये, भिक्खुसङ्घपुरक्खतो।
देसेति अरियसच्चानि, निब्बापेन्तो महाजनं॥60॥
''परमकारुञ्ञपत्तोम्हि, समितिं अगमासहं।
सोहं निसिन्नको सन्तो, धम्ममस्सोसि सत्थुनो॥61॥
''तस्साहं धम्मं सुत्वान, देवलोकं अगच्छहं।
तिंसकप्पानि देवेसु, अवसिं तत्थहं पुरे॥62॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सच्चसञ्ञायिदं फलं॥63॥
''छब्बीसम्हि इतो कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।
एकफुसितनामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥64॥

''विश्वभुस्तस्मिन् समये, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतः।
देशयत्यार्यसत्यानि, निर्वापयन् महाजनम्॥60॥
''परमकारुण्यप्राप्तोऽस्मि, समितिम् अगममहम्।
सोऽहं निषण्णकः श्रान्तः, धर्मश्रौषं शास्त्रे॥61॥
''तस्याहं धर्मं श्रुत्वा, देवलोकम् अगच्छमहम्।
त्रिंशत्कल्पानि देवेषु, अवसं तत्राहं पुरे॥62॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, सत्यसंज्ञाया इदं फलम्॥63॥
''षड्विंशे इतः कल्पे, एक आसं जनाधिपः।
एकफुसितनाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥64॥

उस समय भिक्षुसंघ से पुरस्कृत विश्वभू ने महाजनों के निर्वाण के लिए आर्यसत्य का उपदेश दिया ॥60॥

परम करुणा को प्राप्त मैं समिति को गया और वहाँ शान्त बैठे हुए शास्ता के धर्म को सुना ॥61॥

उस धर्म को सुनकर मैं देवलोक को गया और 30 कल्पों तक वहाँ देवताओं के साथ वास किया ॥62॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो संज्ञा लाभ प्राप्त किया था, उसके फल से मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह सत्य संज्ञा का ही सुपरिणाम है॥63॥

यहाँ से 26 वें कल्प में एकफुसित नाम वाला एक महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥64॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥65॥

इत्थं सुदं आयस्मा पानधिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सच्चसञ्ञकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. एकसञ्ञकत्थेरअपदानं

''दुमग्गे पंसुकूलिकं [पंसुकूलकं (?)], लग्गं दिस्वान सत्थुनो।

अञ्जलिं पग्गहेत्वान, पंसुकूलं अवन्दहं॥66॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥67॥

''पञ्चवीसे इतो कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।

अमिताभोति नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥68॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥65॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सत्यसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''द्रुमाग्रे पांशुकुलकम्, लग्नं दृष्ट्वा शास्तुः।

अञ्जलिं प्रगृह्य, पांशुकुलम् अवन्देऽहम्॥66॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥67॥

''पञ्चविंशे इतः कल्पे, एक आसं जनाधिपः।

अमिताभ इति नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥68॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥65॥

इस प्रकार आयुष्मान् सत्यसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

वृक्षाग्र में लटके भगवान् के पांसुकूल को मैंने देखा और करबद्ध होकर उसकी वन्दना की ॥66॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो संज्ञा प्राप्त की थी, उसके फल से मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है ॥67॥

यहाँ से 25 वें कल्प में अमिताभ नाम से महाबलशाली, लोगों का एक चक्रवर्ती राजा हुआ ॥68॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥69॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकसञ्ञकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. रंसिसञ्ञकत्थेरअपदानं

''उदेन्तं सतरंसिंव, पीतरंसिंव [सितरंसिं व (सी॰ स्या॰)] भाणुमं।

ब्यग्घूसभंव पवरं, सुजातं पब्बतन्तरे॥70॥

''बुद्धस्स आनुभावो सो, जलते पब्बतन्तरे।

रंसे [रंस्या (?)] चित्तं पसादेत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥71॥

''अवसेसेसु कप्पेसु, कुसलं चरितं मया।

तेन चित्तप्पसादेन, बुद्धानुस्सतियापि च॥72॥

''तिंसकप्पसहस्सेतो, यं सञ्ञमलभिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥73॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥69॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''उदयन् शतरश्मिरिव, पीतरश्मिरिव भानुमान्।

व्याघ्रवृषभमिव प्रवरम्, सुजातं पर्वतान्तरे॥70॥

''बुद्धस्य आनुभावः सः, ज्वलति पर्वतान्तरे।

रंश्मेः चित्तं प्रसाद्य, कल्पं स्वर्गे मोदे अहम्॥71॥

''अवशेषेषु कल्पेषु, कुशलं चरितं मया।

तेन चित्तप्रसादेन, बुद्धानुस्मृत्यापि च॥72॥

''त्रिंशकल्पसहस्रे इतः, यां संज्ञामलभे तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥73॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥69॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पर्वत के मध्य उदित होते हुए शत-रश्मि एवं पीले रश्मि वाले भानु (सूर्य) की भाँति, प्रबलशाली श्रेष्ठ व्याघ्र के समान सुजात.. ॥70॥

बुद्ध के अनुभाव से वह पर्वत देदीप्यमान होता है, उस रश्मि में चित्त को प्रसादित कर कल्पों तक मैं स्वर्ग में प्रसन्न हुआ ॥71॥

अवशेष कल्पों में मैंने कुशलतापूर्वक जीवन व्यतीत किया। उस चित्त के प्रासाद से और बुद्ध की अनुस्मृति से.. ॥72॥

यहाँ से 30 वें कल्प में जो संज्ञा लाभ प्राप्त किया, फलतः मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह बुद्ध-संज्ञा का ही सुपरिणाम है ॥73॥

''सत्तपञ्ञासकप्पम्हि, एको आसिं जनाधिपो।
सुजातो नाम नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥74॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥75॥
इत्थं सुदं आयस्मा रंसिसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

रंसिसञ्ञकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. सन्धितत्थेरअपदानं

''अस्सत्थे हरितोभासे, संविरूळ्हम्हि पादपे।
एकं बुद्धगतं सञ्ञं, अलभिंहं [अलभिस्सं (सी०)] पतिस्सतो॥76॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
तस्सा सञ्ञाय वाहसा, पत्तो मे आसवक्खयो॥77॥

''सप्तपञ्चाशकल्पे, एक आसम् जनाधिपः।
सुजातनामा नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥74॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥75॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् रश्मिसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''अश्वत्थे हरिताभासे, संविरूढेऽस्मिन् पादपे।
एकं बुद्धगतं संज्ञाम्, अलभेऽहं प्रतिस्मृतः॥76॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
तस्या संज्ञया वाहसा, प्राप्तो मयास्रवक्षयः॥77॥

---

57 वें कल्प में सुजात नाम वाला महाबलशाली, चक्रवर्ती एक राजा हुआ ॥74॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥75॥

इस प्रकार आयुष्मान् रश्मिसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हरे-भरे एवं सघन अश्वत्थ वृक्ष के नीचे बैठे हुए मैंने विचारपूर्वक एकमात्र बुद्धसंज्ञा को प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त किया ॥76॥

यहाँ से इकत्तीसवें कल्प में मैंने जब यह बुद्ध-संज्ञा प्राप्त की थी, तब इस संज्ञा के ध्यान के कारण (बल पर) मैंने अपने चित्तविकारों का पूर्णतः क्षय प्राप्त कर लिया ॥77॥

''इतो तेरसकप्पम्हि, धनिट्ठो नाम खत्तियो।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥78॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥79॥

इत्थं सुदं आयस्मा सन्धितो [सण्ठितो (सी०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सन्धितत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. तालवण्टदायकत्थेरअपदानं

''तालवण्टं मया दिन्नं, तिस्सस्सादिच्चबन्धुनो।

गिम्हनिब्बापनत्थाय, परिळाहोपसन्तिया॥80॥

''सन्निब्बापेमि रागग्गिं, दोसग्गिञ्च तदुत्तरिं।

निब्बापेमि च मोहग्गिं, तालवण्टस्सिदं फलं॥81॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।

धारेमि अन्तिमं देहं, सम्मासम्बुद्धसासने॥82॥

''इतस्त्रयोदशकल्पे, धनिट्ठो नाम्नः क्षत्रियः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥78॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥79॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सन्धितस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''तालवृन्तं मया दत्तम्, तिष्यायादित्यबन्धवे।

ग्रीष्मनिर्वापणार्थाय, परिदाहोपशान्तये॥80॥

''सन्निर्वापयामि रागाग्निम्, द्वेषाग्निञ्च तदुत्तरम्।

निर्वापयामि च मोहाग्निम्, तालवृन्तस्येदं फलम्॥81॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृता।

धारयाम्यन्तिमं देहम्, सम्यक्सम्बुद्धशासने॥82॥

यहाँ से 13 वें कल्प में धनिट्ठ नाम से सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती क्षत्रिय हुआ ॥78॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥79॥

इस प्रकार आयुष्मान् सन्धित स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

आदित्य बन्धु तिष्य को ग्रीष्म को समाप्त करने के लिए और परिदाह की शान्ति हेतु मेरे द्वारा तालवृन्त (पंखा) दिया गया॥80॥

तालवृन्त (पंखा) दान का यह सुपरिणाम है कि मेरे सभी राग-अग्नि, द्वेष-अग्नि और सभी मोह-अग्नि समाप्त हो गये ॥81॥

इस भव-समूह के मेरे सभी क्लेश समाप्त हो गये हैं और सम्यक् सम्बुद्ध के शासन में अन्तिम देह धारण करता हूँ॥82॥

''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, तालवण्टस्सिदं फलं॥83॥

''तेसट्ठिम्हि इतो कप्पे, महानामसनामको।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥84॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥85॥

इत्थं सुदं आयस्मा तालवण्टदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तालवण्टदायकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. अक्कन्तसञ्ञकत्थेरअपदानं

''कुसाटकं गहेत्वान, उपज्झायस्सहं पुरे।

मन्तञ्च अनुसिक्खामि, गन्थादोसस्स [कण्डभेदस्स (सी०), गण्डभेदस्स (स्या०)] पत्तिया॥86॥

''अद्दसं विरजं बुद्धं, आहुतीनं पटिग्गहं।

उसभं पवरं अग्गं, तिस्सं बुद्धं गणुत्तमं [गजुत्तमं (स्या०)]॥87॥

''द्विनवतावितः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, तालवृन्तस्येदं फलम्॥83॥

''त्रिषष्ट्याम् इतः कल्पे, महानामसनामकः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥84॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥85॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् तालवृन्तदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''कुशाटकं गृहीत्वा, उपाध्यायस्याहं पुरे।

मन्त्रञ्चानुशिक्षामि, ग्रन्थादोषस्य प्राप्तये॥86॥

''अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्।

वृषभं प्रवरम् अग्रम्, तिष्यं बुद्धं गणोत्तमम्॥87॥

यहाँ से 92 वें कल्प में जो तालवृन्त (पंखा) दान किया था यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥83॥

यहाँ से 63 वें कल्प में महानाम नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥84॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥85॥

इस प्रकार आयुष्मान् तालवृन्तदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पूर्व में मैले वस्त्र (पांशुकूलिक) को ग्रहण कर मैं उपाध्याय के समक्ष गया और ग्रन्थ-दोष की प्राप्ति के लिए मन्त्र की शिक्षा ग्रहण करने लगा॥86॥

गण में उत्तम, आहुतियों के ग्रहणकर्ता, अग्र, निर्मल मन वाले श्रेष्ठ तिष्य बुद्ध को मैंने देखा॥87॥

''कुसाटकं पत्थरितं, अक्कमन्तं नरुत्तमं।
समुग्गतं महावीरं, लोकजेट्ठं नरासभं॥88॥
''दिस्वा तं लोकपज्जोतं, विमलं चन्दसन्निभं।
अवन्दिं सत्थुनो पादे, विप्पसन्नेन चेतसा॥89॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं अदासिं कुसाटकं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, कुसाटकस्सिदं फलं॥90॥
''सत्ततिंसे इतो कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।
सुनन्दो नाम नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥91॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥92॥
इत्थं सुदं आयस्मा अक्कन्तसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अक्कन्तसञ्ञकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

''कुशाटकं प्रस्तारितम्, अर्कमन्तं नरोत्तमम्।
समुद्गतं महावीरम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥88॥
''दृष्ट्वा तं लोकप्रद्योतम्, विमलं चन्द्रसन्निभम्।
अवन्दे शास्तुः पादौ, विप्रसन्नेन चेतसा॥89॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यददाम् कुशाटकम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, कुशाटकस्येदं फलम्॥90॥
''सप्तत्रिंशे इतः कल्पे, एक आसं जनाधिपः।
सुनन्दो नाम नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥91॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥92॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् अर्कान्तसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

फैले हुए मैले, कुचैले वस्त्र को पहने हुए नरों में श्रेष्ठ, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ ऊपर उठे हुए (सुशिक्षित) महावीर को.. ॥88॥

लोक को प्रसन्न करने वाले, चाँद के समान विमल (स्वच्छ) उस शास्ता के चरणों की अत्यधिक प्रसन्न मन से मैंने वन्दना की॥89॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो कुशाटक दान दिया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥90॥

यहाँ से 37 वें कल्प में सुनन्द नामक बलशाली, एक चक्रवर्ती राजा हुआ॥91॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥92॥

इस प्रकार आयुष्मान् अर्कान्तसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

9. सप्पिदायकत्थेरअपदानं

''निसिन्नो पासादवरे, नारीगणपुरक्खतो।
ब्याधितं समणं दिस्वा, अभिनामेसहं घरं॥93॥
''उपविट्ठं महावीरं, देवदेवं नरासभं।
सप्पितेलं मया दिन्नं, सिद्धत्थस्स महेसिनो॥94॥
''पस्सद्धदरथं दिस्वा, विप्पसन्नमुखिन्द्रियं।
वन्दित्वा सत्थुनो पादे, अनुसंसावयिं पुरे॥95॥
''दिस्वा मं सुप्पसन्नत्तं [सुप्पसन्नन्तं (स्या॰ क॰) सुप्पसन्नचित्तन्ति अत्थो], इद्धिया पारमिङ्गतो।
नभं अब्भुग्गमी धीरो, हंसराजाव अम्बरे॥96॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सप्पितेलस्सिदं फलं॥97॥

''निषण्णः प्रासादवरे, नारीगणपुरस्कृतः।
व्याधितं श्रमणं दृष्ट्वा, अभ्यनामयमहं गृहम्॥93॥
''उपविष्टं महावीरम्, देवदेवं नरर्षभम्।
सर्पिष्तैलं मया दत्तम्, सिद्धार्थाय महर्षये॥94॥
''प्रस्रब्धदरथं दृष्ट्वा, विप्रसन्नमुखेन्द्रियम्।
वन्दित्वा शास्त्रे पादौ, **अनुसमश्रावयं** पुरे॥95॥
''दृष्ट्वा मां सुप्रसन्नात्मम्, ऋध्या पारमीङ्गतः।
नभस्युदगमद् धीरः, हंसराज इवाम्बरे॥96॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, सर्पिष्तैलस्येदं फलम्॥97॥

श्रेष्ठ प्रासाद में बैठा हुआ नारी गणों से पुरस्कृत मैं रोग से ग्रस्त श्रमण को देखकर उन्हें अपने घर ले गया॥93॥

देवों के देव, नरर्षभ महावीर के समीप बैठ कर सिद्धार्थ, महर्षि को मेरे द्वारा घी, तेल का दान दिया गया॥94॥

कष्ट का शमन किये, अत्यधिक प्रसन्न मुख-इन्द्रिय वाले शास्ता के चरणों की वन्दना करके हम पूर्वकाल में कृतकृत्य हो गये॥95॥

ऋद्धि की पूर्णता को प्राप्त किये हुए धीर ने अत्यधिक प्रसन्न आत्मा वाले मुझको देखकर हंसराज के समान अम्बर की ओर प्रस्थान किया॥96॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो घी और तेल का दान दिया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥97॥

''इतो सत्तरसे कप्पे, जुतिदेव [दुतिदेव (स्या॰), तुतिदेव (क॰)] सनामको।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥98॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥99॥

इत्थं सुदं आयस्मा सप्पिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सप्पिदायकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. पापनिवारियस्थविरापदानम्

''पियदस्सिस्स भगवतो, चङ्कमं सोधितं मया।

नळकेहि पटिच्छन्नं, वातातपनिवारणं॥100॥

''पापं विवज्जनत्थाय, कुसलस्सुपसम्पदा।

किलेसानं पहानाय, पदहिं सत्थु सासने॥101॥

''इतो एकादसे कप्पे, अग्गिदेवोति विस्सुतो।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥102॥

''इतः सप्तदशे कल्पे, द्युतिदेवसनामकः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥98॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥99॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सर्पिर्दायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''प्रियदर्शिनो भगवतः, चङ्क्रमं शोधितं मया।

नलकैः प्रतिच्छन्नम्, वातातपनिवारणम्॥100॥

''पापं विवर्जनार्थाय, कुशलस्योपसम्पदा।

क्लेशानां प्रहाणाय, **प्राधां** शास्तुः शासने॥101॥

''इतः एकादशे कल्पे, अग्निदेवेति विश्रुतः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥102॥

यहाँ से 17 वें कल्प में द्युतिदेव नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥98॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥99॥

इस प्रकार आयुष्मान् सर्पिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

प्रियदर्शी भगवान् के लिए मैंने सरकण्डों से ढके हुए तथा गर्म वायु का निवारण करने वाले चङ्क्रमण भूमि को स्वच्छ किया॥100॥

पापों के त्याग के लिए, कुशल उपसम्पदा (संघ के द्वारा दी जाने वाली दीक्षा) के हेतु तथा क्लेशों के प्रहाण (त्याग) के लिए मैं शास्ता के शासन में प्रविष्ट हुआ॥101॥

यहाँ से 11 वें कल्प में अग्निदेव के समान जाना जाने वाला सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥102॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥103॥

इत्थं सुदं आयस्मा पापनिवारियो [वातातपनिवारियो (?)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तस्सुद्दानं –

हत्थि पानधि सच्चञ्च, एकसञ्ञि च रंसिको।

सन्धितो तालवण्टञ्च, तथा अक्कन्तसञ्ञको।

सप्पि पापनिवारी च, चतुप्पञ्ञास गाथकाति॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥103॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पापनिवारकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

हस्तिपानधिसत्यञ्च, एकसंज्ञी च रश्मिकः।

सन्धितः तालवृन्तञ्च, तथा आक्रान्तसंज्ञकः।

सर्पिः पापनिवारी च, चतुःपञ्चाशद् गाथका इति॥

चार पटिसम्भिदा, आठ विमोक्ष और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥103॥

इस प्रकार आयुष्मान् पापनिवारिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- हस्ति, पानधि, सत्य एकसंज्ञी और रश्मिक सन्धित, तालवण्ट तथा आक्रान्तसंज्ञक, सर्पि, पापनिवारि इस प्रकार यहाँ पर चौवन गाथाएं हैं

पापनिवारियत्थेरस्सापदानं दसमं।

हत्थिवग्गो बावीसतिमो।

23. आलम्बणदायकवग्गो

1. आलम्बणदायकत्थेरअपदानं

आलम्बनदायकस्थविरापदानम्

पालि- ‘‘अत्थदस्सिस्स भगवतो, लोकजेट्ठस्स तादिनो।
आलम्बणं मया दिन्नं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥104॥

‘‘धरणिं पटिपज्जामि, विपुलं सागरप्परं।
पाणेसु च इस्सरियं, वत्तेमि वसुधाय च॥105॥

‘‘किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥106॥

‘‘इतो द्वेसट्ठिकप्पम्हि, तयो आसिंसु खत्तिया।
एकापस्सितनामा ते, चक्कवत्ती महब्बला॥107॥

संस्कृत- ‘‘अर्थदर्शिने भगवते, लोकज्येष्ठाय तायिने।
आलम्बनं मया दत्तम्, द्विपदिन्द्राय तायिने॥104॥

‘‘धरणीं प्रतिपद्यामि, विपुलं सागरः परम्।
प्राणिषु च ऐश्वर्यम्, वर्त्तामि वसुधायां च॥105॥

‘‘क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥106॥

‘‘इतो द्विषष्ट्यां कल्पे, त्रय आसन् क्षत्रियाः।
एकापस्सितनाम्ना ते, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥107॥

हिन्दी- उन अर्थदर्शी भगवान्, लोकज्येष्ठ, द्विपदिन्द्र को मेरे द्वारा आलम्बन प्रदान किया गया॥104॥

धरणी पर आरूढ़ विपुल सागर के पार और प्राणियों का स्वामी हो कर मैं पृथ्वी पर वास करता हूँ॥105॥

तीनों विद्याओं को प्राप्त कर मेरे सभी क्लेश समाप्त हो गये हैं और मेरे भव समूल नष्ट हो गये, मैंने बुद्ध शासन को पूर्ण किया॥106॥

यहाँ से 62 वें कल्प में एकापस्सित नाम वाला महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥107॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।

छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥108॥

इत्थं सुदं आयस्मा आलम्बणदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति

आलम्बणदायकत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. अजिनदायकस्थविरापदानम्

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, गणसत्थारको अहं।

अद्दसं विरजं बुद्धं, आहुतीनं पटिग्गहं॥109॥

''चम्मखण्डं मया दिन्नं, सिखिनो लोकबन्धुनो।

तेन कम्मेन द्विपदिन्द, लोकजेट्ठ नरासभ॥110॥

''सम्पत्तिं अनुभोत्वान, किलेसे झापयिं अहं।

धारेमि अन्तिमं देहं, सम्मासम्बुद्धसासने॥111॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।

षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥108॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् आलम्बणदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, गणशास्तिकारकोऽहम्।

अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्॥109॥

''चर्मखण्डं मया दत्तम्, शिखिने लोकबन्धवे।

तेन कर्मणा द्विपदिन्द्र, लोकज्येष्ठ नरर्षभ॥110॥

''सम्पत्तिम् अनुभूय, क्लेशान् अध्मापयम् अहम्।

धारयाम्यन्तिमं देहम्, सम्यक्सम्बुद्धशासने॥111॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥108॥

इस प्रकार आयुष्मान् आरलम्बनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

यहाँ से 31 वें कल्प में गण के शास्ता के रूप में मैंने आहुतियों के ग्रहणकर्ता, विरज बुद्ध को देखा॥109॥

लोकबन्धु शिखी को मेरे द्वारा चर्मखण्ड (चर्म का टुकड़ा) दिया गया। हे द्विपदिन्द्र, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ, उस कर्म से मैं... ॥110॥

सम्पत्ति को अनुभव कर मेरे सभी क्लेश समाप्त हो गये और सम्यक्सम्बुद्ध के शासन में मैं अन्तिम देह धारण करता हूँ॥111॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, अजिनं यं अदासहं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अजिनस्स इदं फलं॥112॥

''इतो पञ्चमके कप्पे, राजा आसिं सुदायको।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥113॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥114॥

इत्थं सुदं आयस्मा अजिनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अजिनदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. द्वेरतनियत्थेरअपदानं

द्विरत्नीयस्थविरापदानम्

''मिगलुद्दो पुरे आसिं, अरञ्ञे कानने अहं।

अद्दसं विरजं बुद्धं, आहुतीनं पटिग्गहं॥115॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, अजिनं यददामहम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, अजिनस्य इदं फलम्॥112॥

''इतः पञ्चमके कल्पे, राजा आसं सुदायकः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥113॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥114॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अजिनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''मृगलुब्धः पुरे आसम्, अरण्ये कानने अहम्।

अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्॥115॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो अजिन का दान दिया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥112॥

यहाँ से 5 वें कल्प में सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली चक्रवर्ती सुदायक (सहायता करने वाला) राजा हुआ॥113॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥114॥

इस प्रकार आयुष्मान् अजिनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पूर्व में मैं घने जंगल में शिकारी था, तब मैंने आहुतियों के ग्रहणकर्ता निर्मल मन वाले बुद्ध को देखा॥115॥

''मंसपेसि मया दिन्ना, विपस्सिस्स महेसिनो।
सदेवकस्मिं लोकस्मिं, इस्सरं कारयामहं॥116॥
''इमिना मंसदानेन, रतनं निब्बत्तते मम।
दुवेमे रतना लोके, दिट्ठधम्मस्स पत्तिया॥117॥
''तेहं सब्बे अनुभोमि, मंसदानस्स सत्तिया।
गत्तञ्च मुदुकं मय्हं, पञ्ञा निपुणवेदनी॥118॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं मंसमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, मंसदानस्सिदं फलं॥119॥
''इतो चतुत्थके कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।
महारोहितनामो सो, चक्कवत्ती महब्बलो॥120॥

''मांसपेशी मया दत्तः, विपश्यिने महर्षये।
सदेवकस्मिन् लोके, ऐश्वर्यं कारयाम्यहम्॥116॥
''अनेन मांसदानेन, रत्नं निर्वर्त्तते मम।
द्वे मे रत्ने लोके, दृष्टधर्मस्य प्राप्त्या॥117॥
''तदहं सर्वमनुभवामि, मांसदानस्य शक्त्या।
गात्रञ्च मृदुकं मम, प्रज्ञा निपुणवेदनी॥118॥
''एकनवतितमे कल्पे, यन् मांसमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, मांसदानस्येदं फलम्॥119॥
''इतश्चतुर्थके कल्पे, एक आसं जनाधिपः।
महारोहित नाम्ना सः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥120॥

विपश्यी, महर्षि को मेरे द्वारा मांसपेशी का दान दिया गया और देवताओं से युक्त लोक में मैं ऐश्वर्य की रचना करता हूँ॥116॥

इस मांस-दान के कारण रत्न उत्पन्न होते हैं ये दो रत्न इस लोक में दृष्टधर्म की प्राप्ति के लिए हैं॥117॥

हम सभी मांस-दान की शक्ति को अनुभव कर रहे हैं और इस कारण मेरा शरीर कोमल एवं प्रज्ञा निपुणवेदनी हो गयी है॥118॥।

यहाँ से 91 वें कल्प में जो मांस-दान किया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥119॥

यहाँ से चौथे कल्प में वह एक महारोहित नामक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥120॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥121॥

इत्थं सुदं आयस्मा द्वेरतनियो [द्विरतनियो (सी॰)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

द्वेरतनियत्थेरस्सापदानं ततियं।

दसमं भाणवारं।

4. आरक्खदायकत्थेरअपदानं

आरक्षदायकस्थविरापदानम्

''सिद्धत्थस्स भगवतो, वेदि कारापिता [वेदिका कारिता (स्या॰)] मया।

आरक्खो च मया दिन्नो, सुगतस्स महेसिनो॥122॥

''तेन कम्मविसेसेन, न पस्सिं भयभेरवं।

कुहिञ्चि उपपन्नस्स, तासो मय्हं न विज्जति॥123॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं वेदिं कारयिं पुरे।

दुग्गतिं नाभिजानामि, वेदिकाय इदं फलं॥124॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥121॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् द्विरत्नीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''सिद्धार्थाय भगवते, वेदिका कारिता मया।

आरक्षिश्च मया दत्तः, सुगताय महर्षये॥122॥

''तेन कर्मविशेषेण, नापश्यं भयभैरवम्।

कुत्रचित् उपपन्नस्य, त्रासो मह्यं न विद्यते॥123॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यां वेदीमकारयं पूर्वम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, वेदिकाया इदं फलम्॥124॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥121॥

इस प्रकार आयुष्मान् द्विरत्नीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

सिद्धार्थ भगवान् के लिए मेरे द्वारा (विश्रामालय) का निर्माण कराया गया और महर्षि सुगत को पहरेदार दिया गया॥122॥

उस कर्म की विशेषता (विश्रामालय) से मैं भयानक डर को नहीं देखता और कहीं भी जन्म ग्रहण करने पर मुझमें कम्पन विद्यमान नहीं रहता॥123॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो मैंने वेदिका (विश्रामालय) का निर्माण कराया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥124॥

''इतो छट्ठम्हि कप्पम्हि, अपस्सेनसनामको।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥125॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥126॥

इत्थं सुदं आयस्मा आरक्खदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

आरक्खदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. अब्याधिकत्थेरअपदानं

अव्याधिकस्थविरापदानम्

''विपस्सिस्स भगवतो, अग्गिसालं अदासहं।

ब्याधिकानञ्च आवासं, उण्होदकपटिग्गहं॥127॥

''तेन कम्मेनयं मय्हं, अत्तभावो सुनिम्मितो।

ब्याधाहं नाभिजानामि, पुञ्ञकम्मस्सिदं फलं॥128॥

''इतः षष्ठे कल्पे, **अपस्सेनसनामकः**।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥125॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥126॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् आरक्षदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''विपश्यिने भगवते, अग्निशालाम् अदामहम्।

व्याधिकानाञ्च आवासम्, उष्णोदकप्रतिग्रहम्॥127॥

''तेन कर्मणाऽयं मह्यम्, आत्मभावः सुनिर्मितः।

व्याधोऽहं नाभिजानामि, पुण्यकर्मण इदं फलम्॥128॥

यहाँ से 6 वें कल्प में अपस्सेन नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥125॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥126॥

इस प्रकार आयुष्मान् आरक्षदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

मैंने विपश्यी भगवान् को अग्निशाला प्रदान किया और रोगियों के लिए आवास एवं गर्म जल ग्रहण करने के लिए पात्र॥127॥

उस कर्म से मेरा आत्मभाव भली प्रकार सुनिर्मित हो गया और उसी पुण्यकर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं व्याधि को नहीं जानता॥128॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं सालमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, अग्गिसालायिदं फलं॥129॥

''इतो च सत्तमे कप्पे, एकोसिं अपराजितो [एको आसिं नराधिपो (स्या॰)]।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥130॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥131॥
इत्थं सुदं आयस्मा अब्याधिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
अब्याधिकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. अङ्कोलपुप्फियत्थेरअपदानं

अङ्कोलपुष्पियस्थविरापदानम्

''नारद इति मे नामम्, कश्यप इति मां विदू।
अद्राक्षं श्रमणानग्रम्, विपश्यिं देवशाक्यतम्॥132॥

''एकनवतितमे कल्पे, यां शालामददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, अग्निशालाया इदं फलम्॥129॥

''इतश्च सप्तमे कल्पे, एक आसम् अपराजितः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥130॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥131॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् अव्याधिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नारद इति मे नामम्, कश्यप इति मां विदू।
अद्राक्षं श्रमणानग्रम्, विपश्यिं देवशाक्यतम्॥132॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो अग्निशाला का दान दिया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥129॥

यहाँ से 7 वें कल्प में सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती एक अपराजित राजा हुआ॥130॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥131॥

इस प्रकार आयुष्मान् अव्याधिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

मेरा नाम नारद है और मैं काश्यप नाम से जाना जाता हूँ। मैंने देवताओं में सत्कृत एवं श्रमणों में अग्र विपश्यी को देखा॥132॥

''अनुब्यञ्जनधरं बुद्धं, आहुतीनं पटिग्गहं।
अङ्कोलपुप्फं [वकुलपुप्फं (स्या॰), बकोलपुप्फं (क॰)] पग्गय्ह, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥133॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥134॥
''चतुसत्ततितो कप्पे, रोमसो नाम खत्तियो।
आमुक्कमालाभरणो, सयोग्गबलवाहनो॥135॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥136॥
इत्थं सुदं आयस्मा अङ्कोलपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

7. सोवण्णवटंसकियत्थेरअपदानं

''उय्यानभूमिं निय्यन्तो, अद्दसं लोकनायकं।
वटंसकं गहेत्वान, सोवण्णं साधुनिम्मितं॥137॥

''अनुव्यञ्जनधरं बुद्धम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्।
अङ्कोलपुष्पं प्रगृह्य, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥133॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पेणाभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥134॥
''चतुस्सप्ततितमे कल्पे, रोमसो नाम क्षत्रियः।
आमुक्तमालाभरणः, सयोग्यबलवाहनः॥135॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥136॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् अङ्कोलपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''उद्यानभूमिं निर्यान्तम्, अद्राक्षं लोकनायकम्।
वतंसकं गृहीत्वा, सौवर्णं साधुनिर्मितम्॥137॥

विशेष प्रकार के चिह्नों को धारण करने वाले, आहुतियों के ग्रहणकर्ता बुद्ध को अङ्कोलपुष्प ग्रहण कर मैंने अभ्यर्पित किया॥133॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प द्वारा अभिपूजन किया था उसी बुद्धपूजा का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥134॥

यहाँ से 74 वें कल्प में एक रोमस नामक मोतियों की माला को धारण किया हुआ और योग्य बल-वाहन से युक्त क्षत्रिय हुआ॥135॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥136॥

इस प्रकार आयुष्मान् अङ्कोलपुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तब मैंने उद्यानभूमि से निकलते हुए लोकनायक को देखा और साधुपूर्वक निर्मित सोने की मुकुट माला को ग्रहण कर..... ॥137॥

''सीघं ततो समारुय्ह, हत्थिक्खन्धगतो अहं।
बुद्धस्स अभिरोपेसिं, सिखिनो लोकबन्धुनो॥138॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुप्फपूजायिदं फलं॥139॥
''सत्तवीसे इतो कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।
महापतापनामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥140॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥141॥
इत्थं सुदं आयस्मा सोवण्णवटंसकियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सोवण्णवटंसकियत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. मिञ्जवटंसकियत्थेरअपदानं

''निब्बुते लोकनाथम्हि, सिखिम्हि वदतं वरे।
वटंसकेहि आकिण्णं, बोधिपूजं अकासहं॥142॥

''शीघ्रं ततः समारुह्य, हस्तिस्कन्धगतो अहम्।
बुद्धाय अभ्यरोपयम्, शिखिने लोकबन्धवे॥138॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत्पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुष्पपूजाया इदं फलम्॥139॥
''सप्तविंशतितमे कल्पे, एक आसं जनाधिपः।
महाप्रताप नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥140॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥141॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सौवर्णवतंसकीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''निर्वृते लोकनाथे, शिखिनि वदतां वरे।
वतंसकैराकीर्णाम्, बोधिपूजाम् अकार्षमहम्॥142॥

शीघ्र ही हस्तिस्कन्ध पर आरूढ़ होकर वहाँ गया और वह स्वर्णमयी मुकुटमाला शिखी लोकबन्धु बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥138॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था उसी बुद्धपूजा का ये सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥139॥

यहाँ से 27 वें कल्प में एक महाप्रताप नामक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥140॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥141॥

इस प्रकार आयुष्मान् सोवण्णवटंसकिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

निर्वृत्त हुए लोकनाथ, शिखी, बोलने वालो में श्रेष्ठ बुद्ध की घने फूलों की माला से मैंने बोधि पूजा की॥142॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पूजमकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बोधिपूजायिदं फलं॥143॥

''इतो छब्बीसतिकप्पे, अहुं मेघब्भनामको।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥144॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥145॥
इत्थं सुदं आयस्मा मिञ्जवटंसकियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

मिञ्जवटंसकियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. सुकतावेळियत्थेरअपदानं

सुकृतावेलीयस्थविरापदानम्

''असितो नाम नामेन, मालाकारो अहं [अहुं (?)] तदा।
आवेळं पग्गहेत्वान, रञ्ञो दातुं वजामहं॥146॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पूजामकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बोधिपूजाया इदं फलम्॥143॥

''इतः षड्विंशतितमे कल्पे, अभूवं मेघाभ्रनामकः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥144॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥145॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् मिञ्जवतंसकीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''असितनाम्ना नाम, मालाकारोऽहं तदा।
आवेळं प्रगृह्य, राज्ञे दातुं व्रजाम्यहम्॥146॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो पूजन-कर्म किया था, उस बोधिपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥143॥

यहाँ से 26 वें कल्प में मेघाभ्र नामक सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती राजा हुआ॥144॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥145॥

इस प्रकार आयुष्मान् मिञ्जावटंसकीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

जब मैं असित नामक मालाकार था तब फूलों का गजरा ग्रहण कर राजा को देने के लिए गया॥146॥

''असम्पत्तोम्हि [असम्पत्तम्हि (सी॰), असम्पत्तोव (?)] राजानं, अद्दसं सिखिनायकं।

हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥147॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥148॥

''पञ्चवीसे इतो कप्पे, राजाहोसिं महब्बलो।

वेभारो नाम नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥149॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥150॥

इत्थं सुदं आयस्मा सुकतावेळियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सुकतावेळियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. एकवन्दनियत्थेरअपदानं

''उसभं पवरं वीरं, वेस्सभुं विजितावितं।

पसन्नचित्तो सुमनो, बुद्धसेट्ठमवन्दहं॥151॥

''असम्प्राप्तोस्मि राजानम्, अद्राक्षं शिखिनायकम्।

हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥147॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत्पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥148॥

''पञ्चविंशतितमे कल्पे, राजाऽभूवं महाबलः।

वैभारो नाम नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥149॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥150॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सुकृतावेलीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''वृषभं प्रवरं वीरम्, विश्वभवं विजितायिनम्।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, बुद्धश्रेष्ठमवन्देऽहम्॥151॥

राजा को न प्राप्त कर मैंने शिखी नायक को देखा और अत्यधिक प्रसन्न मन से (फूलों की माला) बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥147॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो पुष्प से पूजा की थी यह उसी बुद्धपूजा का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥148॥

यहाँ से 25 वें कल्प में एक वैभार नामक महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥149॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥150॥

इस प्रकार आयुष्मान् सुकतावेळिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

वृषभ, श्रेष्ठ, वीर, विश्वभू विजितावी बुद्ध-श्रेष्ठ की मैंने प्रसन्नचित्त एवं सौमनस्यपूर्वक वन्दना की॥151॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, वन्दनाय इदं फलं॥152॥

''चतुवीसतिकप्पम्हि, विकतानन्दनामको।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥153॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥154॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकवन्दनियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकवन्दनियत्थेरस्सापदानं दसमं।

आलम्बणदायकवग्गो तेवीसतिमो।

तस्योद्दानं –

आलम्बणञ्च अजिनं, मंसदारक्खदायको।

अब्याधि अङ्कोलं [वकुलं (स्या०), बकुळं (क०)] सोण्णं, मिञ्जआवेळवन्दनं।

पञ्चपञ्ञास गाथायो, गणिता अत्थदस्सिभि॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, वन्दनाया इदं फलम्॥152॥

''चतुर्विंशतितमे कल्पे, विकृतानन्दनामकः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥153॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥154॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकवन्दनीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् – आलम्बनञ्च अजिनम्, मांसदारक्षदायकम्।

अव्याधि अङ्कोलं स्वर्णम्, मिञ्जावेलवन्दनम्।

पञ्चपञ्चाशद् गाथा, गणिता अर्थदर्शिभिः॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था उसी वन्दना का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥152॥

यहाँ से 24 वें कल्प में एक विकतानन्द नामक सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली राजा हुआ॥153॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥154॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकवन्दनीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- आलम्बन, अजिन, मांसदारक्षदायक अब्याध, अङ्कोल, स्वर्ण, मिञ्जावेलवन्दन इस प्रकार इक्यावन गाथायें यहाँ अर्थदर्शियों के द्वारा दर्शायी गयी हैं।

24. उदकासनवग्गो

उदकासनदायकत्थेरअपदानं

पालि- ''आरामद्वारा निक्खम्म, फलकं सन्थरिं अहं।
उदकञ्च उपट्ठासिं, उत्तमत्थस्स पत्तिया ॥155॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, आसने चोदके फलं ॥156॥
''इतो पन्नरसे कप्पे, अभिसामसमव्हयो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो ॥157॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥158॥
इत्थं सुदं आयस्मा उदकासनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उदकासनदायकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- "आरामद्वारान् निष्क्रम्य, फलकं समस्तारिषम् अहम्।
उदकञ्च उपास्थाम्, उत्तमार्थस्य प्राप्तये ॥155॥
''एकत्रिंशे इतो कल्पे, यत् कर्ममकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, आसनानि चोदकानि फलम् ॥156॥
''इतो पञ्चदशे कल्पे, अभिसामसमाह्वयः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः ॥157॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥158॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उदकासनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- आरामद्वार (विहार द्वार) से निकलकर मैंने परमार्थ की प्राप्ति के लिए चटाई बिछायी और पानी रखा॥155॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो आसन और उदक रखा था उसी कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥156॥

यहाँ से 15 वें कल्प में एक अभिसाम के नाम से जाना जाने वाला सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली राजा हुआ॥157॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥158॥

इस प्रकार आयुष्मान् उदकासनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. भाजनपालकत्थेरअपदानं

''नगरे बन्धुमतिया, कुम्भकारो अहं तदा।
भाजनं अनुपालेसिं, भिक्खुसङ्घस्स तावदे ॥159॥

''एकनवुतितो कप्पे, भाजनं अनुपालयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, भाजनस्स इदं फलं ॥160॥

''तेपञ्ञासे इतो कप्पे, अनन्तजालिनामको।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो ॥161॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥162॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् भाजनपालकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

भाजनपालकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''नगर्यां बन्धुमत्याम्, कुम्भकारो अऽहं तदा।
भाजनम् अन्वपालयम्, भिक्षुसङ्घाय तावदेव॥159॥

''एकनवतितमे कल्पे, भाजनम् अन्वपालयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, भाजनस्य इदं फलम् ॥160॥

''त्रिपञ्चाशे इतः कल्पे, अनन्तजालिनामकः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः ॥161॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥162॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् भाजनपालकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- उस समय मैं बन्धुमती नगर में एक कुम्भकार था, तब मैंने भिक्षुसंघ के लिए पात्र (बर्तन) बनाया॥159॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो भाजन (पात्र) बनाया था उस कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥160॥।

यहाँ से 53 वें कल्प में एक अनन्तजालि नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥161॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥162॥

इस प्रकार आयुष्मान् भाजनपालक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. सालपुप्फियत्थेरअपदानं

शालपुष्पीयस्थविरापदानम्

''अरुणवतिया नगरे, अहोसिं पूपिको तदा।
मम द्वारेन गच्छन्तं, सिखिनं अद्दसं जिनं॥163॥
''बुद्धस्स पत्तं पग्गय्ह, सालपुप्फं अदासहं।
सम्मग्गतस्स बुद्धस्स, विप्पसन्नेन चेतसा॥164॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिदासहं [यं खज्जकमदासहं (सी॰), यं खज्जमभिदासहं (क॰) सालपुप्फनामकं खज्जकं वा भवेय्य]।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सालपुप्फस्सिदं फलं॥165॥
''इतो चुद्दसकप्पम्हि, अहोसिं अमितञ्जलो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥166॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥167॥
इत्थं सुदं आयस्मा सालपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सालपुप्फियत्थेरस्सापदानं ततियं।

''अरुणवत्यां नगर्याम्, अभूवं पूपिकस्तदा।
मम द्वारेण गच्छन्तम्, शिखिनम् अद्राक्षं जिनम्॥163॥
''बुद्धस्य पात्रं प्रगृह्य, शालपुष्पम् अदामहम्।
सम्यग्गताय बुद्धाय, विप्रसन्नेन चेतसा॥164॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यदामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, शालपुष्पस्येदं फलम्॥165॥
''इतश्चतुर्दशे कल्पे, अभूवम् अमिताञ्जलः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥166॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥167॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् शालपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

एक समय मैं अरुणवती नामक नगर में एक पूपिक (पुआ बेचने वाला) था, तब मैंने द्वार पर आये हुए शिखी जिन को देखा॥163॥

तब बुद्ध के पात्र को ग्रहणकर मैंने अत्यधिक प्रसन्नमन से सम्यक्सम्बुद्ध को शालपुष्प प्रदान किया॥164॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो शाल-पुष्प का दान दिया था उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥165॥

यहाँ से 14 वें कल्प में एक अमिताञ्जल नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥166॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥167॥

इस प्रकार आयुष्मान् शालपुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

4. किलञ्जदायकत्थेरअपदानं

किलञ्जदायकत्थेरअपदानं

''तिवरायं पुरे रम्मे, नळकारो अहं तदा।
सिद्धत्थे लोकपज्जोते, पसन्ना जनता तहिं॥168॥
''पूजत्थं लोकनाथस्स, किलञ्जं परियेसति।
बुद्धपूजं करोन्तानं, किलञ्जं अददिं अहं॥169॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, किलञ्जस्स इदं फलं॥170॥
''सत्तसत्ततिकप्पम्हि, राजा आसिं जलद्धरो [जुतिन्धरो (सी॰)]।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥171॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥172॥
इत्थं सुदं आयस्मा किलञ्जदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

किलञ्जदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''त्विवराये पुरे रम्ये, नलकारो अऽहं तदा।
सिद्धार्थे लोकप्रद्योते, प्रसन्ना **जनतास्त**त्र॥168॥
''पूजार्थं लोकनाथस्य, **किलिञ्जं** पर्येषति।
बुद्धपूजां कुर्वाणानाम्, **किलिञ्जम्** अददामहम्॥169॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, किलिञ्जस्य इदं फलम्॥170॥
''सप्तसप्ततिकल्पे, राजा आसम् जलद्धरः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥171॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥172॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् किलञ्जदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

जब मैं सुन्दर तिवरा पुर में टोकरी बनाने वाला था तब वहाँ लोकप्रकाशक सिद्धार्थ पर प्रसन्न जनता॥168॥

लोकनाथ की पूजा के लिए चटाई का अन्वेष्ण कर रही थी, तब बुद्धपूजा करते हुए लोगों को मैंने चटाई प्रदान किया॥169॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो कर्म किया था, उसी किलिञ्जदान यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥170॥

यहाँ से 77 वें कल्प में जलद्धर नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥171॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥172॥

इस प्रकार आयुष्मान् किलञ्जदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. वेदिकारकत्थेरअपदानं

वेदिकारकस्थविरापदानम्

''विपस्सिनो भगवतो, बोधिया पादपुत्तमे।

पसन्नचित्तो सुमनो, कारेसिं वेदिकं अहं॥173॥

''एकनवुतितो कप्पे, कारेसिं वेदिकं अहं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, वेदिकाय इदं फलं॥174॥

''इतो एकादसे कप्पे, अहोसिं सूरियस्समो।

सत्तरत्तनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥175॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥176॥

इत्थं सुदं आयस्मा वेदिकारको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

वेदिकारकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

''**विपश्यिने भगवते**, बोधौ पादपोत्तमे।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, अकारयं वेदिकामहम्॥173॥

''एकनवतितमे कल्पे, अकारयं वेदिकामहम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, वेदिकाया इदं फलम्॥174॥

''इत एकादशे कल्पे, अभूवं सूर्यस्य समः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥175॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥176॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् वेदिकारकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

विपश्यी भगवान् के लिए वृक्षों में उत्तम बोधि-वृक्ष पर मैंने अत्यधिक प्रसन्नचित्त से वेदिका बनायी॥173॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो मेरे द्वारा वेदिका बनाई गयी थी उस कर्म का ही यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥174॥

यहाँ से 11 वें कल्प में सूर्य के समान तेज वाला सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥175॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥176॥

इस प्रकार आयुष्मान् वेदिकारक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

6. वण्णकारत्थेरअपदानं

''नगरे अरुणवतिया, वण्णकारो अहं तदा।
चेतिये दुस्सभण्डानि, नानावण्णं रजेसहं [रजिं अहं (क॰), रजेमहं (स्या॰)]॥177॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं वण्णं रजयिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, वण्णदानस्सिदं फलं॥178॥

''इतो तेवीसतिकप्पे, वण्णसम [चन्दुपम (सी॰), चन्दसम (स्या॰)] सनामको।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥179॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥180॥
इत्थं सुदं आयस्मा वण्णकारो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

वण्णकारत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

''नगर्याम् अरुणवत्याम्, वर्णकारो अहं तदा।
चैत्ये दूष्यभाण्डानि, नानावर्णम् अरजयम्॥177॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यं वर्णमरजयं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, वर्णदानस्येदं फलम्॥178॥

''इतस्त्रयोविंशतिकल्पे, वर्णसमसनामकः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥179॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥180॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् वर्णकारस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उस समय मैं अरुणवती नगर में वर्णकार था तब चैत्य के नाना वर्ण के कपड़ों की मैंने रंगाई की॥177॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो विविध वर्णों से (चैत्य वन को) रंगा था उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥178॥

यहाँ से 23 वें कल्प में एक वर्णसम नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥179॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥180॥

इस प्रकार आयुष्मान् वर्णकार स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

7. पियालपुप्फियत्थेरअपदानं

पियालपुष्पीयस्थविरापदानम्

''मिगलुद्दो पुरे आसिं, अरञ्ञे कानने अहं।

पियालं पुप्फितं दिस्वा, गतमग्गे खिपिं अहं॥181॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥182॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥183॥

इत्थं सुदं आयस्मा पियालपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पियालपुप्फियत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. अम्बयागदायकत्थेरअपदानं

आम्रयागदायकस्थविरापदानम्

''सके सिप्पे अपत्थद्धो, अगमं काननं अहं।

सम्बुद्धं यन्तं दिस्वान, अम्बयागं अदासहं॥184॥

''मृगलुब्धः पुरे आसम्, अरण्ये कानने अहम्।

पियालं पुष्पितं दृष्ट्वा, गतमार्गेऽक्षिपम् अहम्॥181॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥182॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥183॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पियालपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''स्वके शिल्पे अवस्तब्धः, अगमं काननम् अहम्।

सम्बुद्धं यान्तं दृष्ट्वा, आम्रयागम् अदामहम्॥184॥

पूर्व काल में मैं घने जंगल में शिकारी था, तब मैंने खिले हुए पियाल पुष्प को देखकर भगवान् बुद्ध के गये हुए मार्ग पर फैला दिया॥181॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो मैंने पुष्प भगवान् बुद्ध के ऊपर अभ्यर्पित कर उनकी पूजा की थी, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥182॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥183॥

इस प्रकार आयुष्मान् पियालपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

अपनी कला पर घमण्डी मैं वन को गया और वहाँ सम्बुद्ध को जाते हुए देख कर उनको यज्ञ हेतु आम की लकड़ियाँ प्रदान की॥184॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अम्बयागस्सिदं फलं॥185॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥186॥

इत्थं सुदं आयस्मा अम्बयागदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अम्बयागदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. जगतिकारकत्थेरअपदानं

जगतिकारकस्थविरापदानम्

''निब्बुते लोकनाथम्हि, अत्थदस्सि नरुत्तमे।

जगती कारिता मय्हं, बुद्धस्स थूपमुत्तमे॥187॥

''अट्ठारसे कप्पसते, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, जगतिया इदं फलं॥188॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥189॥

इत्थं सुदं आयस्मा जगतिकारको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

जगतिकारकत्थेरस्सापदानं नवमं।

''एकनवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, आम्रयागस्येदं फलम्॥185॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥186॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् आम्रयागदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''निर्वृते लोकनाथे, अर्थदर्शि नरोत्तमे।

जगती कारिता मया, बुद्धस्य स्तूप उत्तमे॥187॥

अष्टादशे कल्पशते, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, जगत्या इदं फलम्॥188॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥189॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् जगतीकारकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो सम्बुद्ध को यज्ञ हेतु आम की लकड़ी प्रदान की थी, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥185॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥186॥

इस प्रकार आयुष्मान् आम्रयागदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

लोकनाथ, अर्थदर्शी, नरोत्तम, बुद्ध के उत्तम स्तूप पर मैंने एक वेदिका का निर्माण किया॥187॥

यहाँ से 18 वें कल्प में जो बुद्ध के स्तूप पर वेदिका का निर्माण किया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥188॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥189॥

इस प्रकार आयुष्मान् जगतिकारक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

10. वासिदायकत्थेरअपदानं

वासिदायकस्थविरापदानम्

''कम्मारोहं पुरे आसिं, तिवरायं पुरुत्तमे।

एका वासि मया दिन्ना, सयम्भुं अपराजितं [सयम्भुम्हिपराजिते (?)]॥190॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं वासिमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, वासिदानस्सिदं फलं॥191॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥192॥

इत्थं सुदं आयस्मा वासिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

वासिदायकत्थेरस्सापदानं दसमं।

उदकासनवग्गो चतुवीसतिमो।

तस्योद्दानम् –

उदकासनभाजनम्, शालपुष्पी किलञ्जकः।

वेदिका वर्णकारश्च, पियालम्बयागदः।

जगती वासिदाता च, गाथास्त्रिंशच्च अष्ट च॥

''कर्मारोऽहं पुरा आसम्, त्रिवरायंपुरोत्तमे।

एका वासिर्मया दत्ता, स्वयम्भुवेऽपराजिताय॥190॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं वासिमदां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, वासिदानस्येदं फलम्॥191॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥192॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् वासिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम्- उदकासनभाजनम्, शालपुष्पी किलञ्जकः।

वेदिका वर्णकारश्च, पियालम्बयागदः।

जगती वासिदाता च, गाथास्त्रिंशच्च अष्ट च॥

पूर्व काल में मैं इस उत्तम पुरी में तीन श्रेष्ठ कर्मों (धर्म, अर्थ, काम) में लिप्त था, उस समय मेरे द्वारा स्वयम्भू अपराजित भगवान् बुद्ध को एक आवास प्रदान किया गया॥190॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो मैंने भगवान् स्वयम्भू को वास का दान किया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥191॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥192॥

इस प्रकार आयुष्मान् वासिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- उदकासन, भाजन, शालपुष्पी किलञ्जक वेदिका, वर्णकार और पियाल, अम्बयाग, जगती वासिददाता ने अड़तीस गाथाओं को कहा-

25. तुवरदायकवग्गो

तुवरदायकवर्गः

1. तुवरदायकत्थेरअपदानं

तुवरदायकस्थविरापदानम्

पालि- ''मिगलुद्दो पुरे आसिं, अरञ्ञे कानने अहं।
भरित्वा तुवरमादाय [भरित्वा तुरवमादाय (क॰), भज्जितं तुवरमादाय (?) एत्थ तुवरन्ति मुग्गकलायसदिसं तुवरट्ठिन्ति तदट्ठकथा। तुवरो धञ्ञभेदेति सक्कताभिधाने], सङ्घस्स अददिं अहं॥193॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, तुवरस्स इदं फलं॥194॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥195॥

इत्थं सुदं आयस्मा तुवरदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तुवरदायकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''मृगलुब्धः पुरा आसम्, अरण्ये कानने अहम्।
भरित्वा तुवरमादाय, सङ्घाय अददामहम्॥193॥

''एकनवतितमे कल्पे, यद् दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, तुवरस्य इदं फलम्॥194॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥195॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् तुवरदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- पूर्व काल में मैं घने जंगल में शिकारी था तब मैंने (पात्र में) भरा हुआ तुवर (अरहर की दाल) सङ्घ को प्रदान किया॥193॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो सङ्घ को तुवर का दान दिया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥194॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥195॥

इस प्रकार आयुष्मान् तुवरदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. नागकेसरियत्थेरअपदानं

नागकेशरीयस्थविरापदानम्

''धनुं अद्धेज्झं कत्वान, वनमज्झोगहिं अहं।
केसरं ओगतं [ओसरं (स्या॰), ओसटं (सी॰)] दिस्वा, पतपत्तं समुट्ठितं॥196॥
''उभो हत्थेहि पग्गय्ह, सिरे कत्वान अञ्जलिं।
बुद्धस्स अभिरोपेसिं, तिस्सस्स लोकबन्धुनो॥197॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥198॥
''तेसत्ततिम्हि कप्पम्हि [सत्तसत्ततिमे कप्पे (स्या॰)], सत्त केसरनामका।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥199॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥200॥
इत्थं सुदं आयस्मा नागकेसरियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
नागकेसरियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''धनुरनुज्झितं कृत्वा, वनमध्यवागाहमहम्।
केशरम् अवगतं दृष्ट्वा, पतितपत्रं समुत्थितम्॥196॥
''उभाभ्यां हस्ताभ्यां प्रगृह्य, शिरसि कृत्वा अञ्जलिम्।
बुद्धाय अभ्यरोपयम्, तिष्याय लोकबन्धवे॥197॥
''द्विनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥198॥
''त्रिसप्ततितमे कल्पे, सप्त केशरनामकाः।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥199॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥200॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् नागकेशरीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

धनुष को कन्धे पर रख कर मैंने वन में प्रवेश किया। वहाँ केशर और ऊपर उठे हुए पत्र को देखकर ॥196॥

उसको दोनों हाथों से ग्रहण कर अञ्जलि को अपने शिर के ऊपर कर लोकबन्धु, तिष्य बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥197॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो बुद्ध का पुष्पाभिपूजन किया था, उसी बुद्धपूजा का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥198॥

यहाँ से 73 वें कल्प में केशर नामक सात सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुए॥199॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥200॥

इस प्रकार आयुष्मान् नागकेशरी स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. नळिनकेसरियत्थेरअपदानं

''जातस्सरस्स वेमज्झे, वसामि जलकुक्कुटो।
अद्दसाहं [अथद्दसं (सी॰ स्या॰)] देवदेवं, गच्छन्तं अनिलञ्जसे॥201॥
''तुण्डेन केसरिं [केसरं (स्या॰)] गय्ह, विप्पसन्नेन चेतसा।
बुद्धस्स अभिरोपेसिं, तिस्सस्स लोकबन्धुनो॥202॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥203॥
''तेसत्ततिम्हि कप्पम्हि, सत्त केसरनामका [सतपत्तसनामको (सी॰ स्या॰)]।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥204॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥205॥
इत्थं सुदं आयस्मा नळिनकेसरियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
नळिनकेसरियत्थेरस्सापदानं ततियं।

''जातसरस्य वैमध्ये, वसामि जलकुक्कुटः।
अद्राक्षमहं देवदेवम्, गच्छन्तम् अनिलञ्जसे॥201॥
''तुण्डेन केसरं गृह्य, विप्रसन्नेन चेतसा।
बुद्धाय अभ्यरोपयम्, तिष्याय लोकबन्धवे॥202॥
''द्विनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥203॥
''त्रिसप्ततितमे कल्पे, सप्त केशरनामकाः।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥204॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥205॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् नळिनकेशरीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तालाब के मध्य वास करने वाला मैं जलकुक्कुट था, तब मैंने आकाश मार्ग से देवों के देव को जाते हुए देखा॥201॥

अत्यधिक प्रसन्न मन से मैंने अपने चोंच में केशर को ग्रहण कर लोकबन्धु तिष्य बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥202॥।

यहाँ से 92 वें कल्प में जो बुद्ध पर पुष्प अभिरोपित किया था उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥203॥

यहाँ से 77 वें कल्प में केशर नामक 7 सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुए॥204॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥205॥

इस प्रकार आयुष्मान् निलिनकेशरीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

4. विरवपुप्फियत्थेरअपदानं

विरवपुष्पीयस्थविरापदानम्

''खीणासवसहस्सेहि, निय्याति लोकनायको।

विरवपुप्फमादाय [विरविपुप्फं पग्गय्ह (सी॰)], बुद्धस्स अभिरोपयिं॥206॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥207॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥208॥

इत्थं सुदं आयस्मा विरवपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

विरवपुप्फियत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. कुटिधूपकत्थेरअपदानं

कुटीधूपकस्थविरापदानम्

''सिद्धत्थस्स भगवतो, अहोसिं कुटिगोपको।

कालेन कालं धूपेसिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥209॥

''क्षीणास्रवसहस्रैः, निर्याति लोकनायकः।

विरवपुष्पमादाय, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥206॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥207॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥208॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् विरवपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''सिद्धार्थस्य भगवतः, अभूवं कुटिगोपकः।

कालेन कालेऽधूपयम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥209॥

एक बार लोकनायक हजारों क्षीणास्रवों के साथ निकलकर जा रहे थे, तब मैंने बुद्ध को विरव पुष्प अभ्यर्पित किया॥206॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो बुद्ध पर पुष्प अभ्यर्पित किया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥207॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥208॥

इस प्रकार आयुष्मान् विरवपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं सिद्धार्थ भगवान् की झोपड़ी का चौकीदार हुआ और समय-समय पर अपने दोनों हाथों से धूप जलाया॥209॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, धूपदानस्सिदं [बुद्धपूजायिदं (सी॰)] फलं॥210॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥211॥
इत्थं सुदं आयस्मा कुटिधूपको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
कुटिधूपकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. पत्तदायकत्थेरअपदानं

''परमेन दमथेन, सिद्धत्थस्स महेसिनो।
पत्तदानं मया दिन्नं, उजुभूतस्स तादिनो॥212॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पत्तदानस्सिदं फलं॥213॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥214॥
इत्थं सुदं आयस्मा पत्तदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पत्तदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, धूपदानस्येदं फलम्॥210॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥211॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कुटिधूपकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''परमेण दमथेन, सिद्धार्थाय महर्षये।
पत्रदानं मया दत्तम्, ऋजुभूताय तायिने॥212॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पत्रदानस्येदं फलम्॥213॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥214॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पत्रदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

यहाँ से 94 वें कल्प में जो धूप-दान दिया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥210॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥211॥

इस प्रकार आयुष्मान् कुटिधूपक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

भली प्रकार से इन्द्रियों को संयत किये हुए ऋजुभूत, महर्षि, सिद्धार्थ को मेरे द्वारा पत्र-दान किया गया॥212॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो पत्र-दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥213॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥214॥

इस प्रकार आयुष्मान् पत्रदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

7. धातुपूजकत्थेरअपदानं

''निब्बुते लोकनाथम्हि, सिद्धत्थम्हि नरुत्तमे।
एका धातु मया लद्धा, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥215॥
''ताहं धातुं गहेत्वान, बुद्धस्सादिच्चबन्धुनो।
पञ्चवस्से परिचरिं, तिट्ठन्तंव नरुत्तमं॥216॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं धातुं पूजयिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, धातुपट्ठहने फलं॥217॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥218॥
इत्थं सुदं आयस्मा धातुपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
धातुपूजकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. सत्तलिपुप्फपूजकत्थेरअपदानं

''सत्त सत्तलिपुप्फानि, सीसे कत्वानहं तदा।
बुद्धस्स अभिरोपेसिं, वेस्सभुम्हि नरुत्तमे [विभत्तिविपल्लासो चिन्तेतब्बो]॥219॥

''निर्वृते लोकनाथे, सिद्धार्थे नरोत्तमे।
एको धातुर्मया लब्धः, द्विपदेन्द्रस्य तायिनः॥215॥
''**तमहं** धातुं गृहीत्वा, बुद्धस्यादित्यबन्धोः/बन्धुनः।
पञ्चवर्षेषु पर्यचरम्, तिष्ठन्तमिव नरोत्तमम्॥216॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं धातुम् अपूजयं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, **धातूपस्थाने** फलम्॥217॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥218॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् धातुपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सप्त सत्तलिपुष्पाणि, शिरसि कृत्वाऽहं तदा।
बुद्धाय अभ्यरोपयम्, विश्वभुवि नरोत्तमे॥219॥

नरोत्तम, लोकनाथ, सिद्धार्थ के निवृत्त हो जाने पर उस द्विपदिन्द्र (नरश्रेष्ठ) की एक धातु प्राप्त हुई॥215॥

तब मैंने आदित्यबन्धु बुद्ध के धातु को ग्रहण कर, नरोत्तम बैठे हों, ऐसा मान कर पाँच वर्षों तक उसकी परिचर्या की॥216॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो धातु की पूजा की थी, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥217॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥218॥

इस प्रकार आयुष्मान् धातुपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तब मैंने सात सत्तलि पुष्प को शीर्ष से करके नरोत्तम, विश्वभू बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥219॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥220॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥221॥
इत्थं सुदं आयस्मा सत्तलिपुप्फपूजक थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सत्तलिपुप्फपूजकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. बिम्बिजालियत्थेरअपदानं

बिम्बिजालीयस्थविरापदानम्

''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सयम्भू अग्गपुग्गलो।
चतुसच्चं पकासेति, दीपेति अमतं पदं॥222॥
''बिम्बिजालकपुप्फानि [बिम्बजालकपुप्फानि (क०)], पुथु कत्वानहं तदा।
बुद्धस्स अभिरोपेसिं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥223॥
''अट्ठसट्ठिम्हितो कप्पे, चतुरो किञ्जकेसरा।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥224॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥220॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥221॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सत्तलिपुष्पपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''पद्मोत्तरो नाम जिनः, स्यम्भूरग्रपुद्गलः।
चतुःसत्यं प्रकाशयति, दीपयत्यमृतं पदम्॥222॥
''बिम्बजालकपुष्पाणि, पृथूनि कृत्वाहं तदा।
बुद्धाय अभ्यरोपयम्, द्विपदिन्द्राय तायिने॥223॥
''अष्टषष्टितमे कल्पे, चत्वारः किञ्जकेशराः।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥224॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥220॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥221॥

इस प्रकार आयुष्मान् सत्तलिपुष्पपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पद्मोत्तर नाम के जिन, स्वयम्भू, अग्रपुद्गल ने चार आर्यसत्य को प्रकाशित कर अमृत पद को प्रकाशित किया॥222॥

तब मैंने बिम्बजालक पुष्प को पृथक्-पृथक् करके उस द्विपदिन्द्र, बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥223॥

यहाँ से 68 वें कल्प में सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली किञ्जकेशर नाम का चार चक्रवर्ती हुआ॥224॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥225॥
इत्थं सुदं आयस्मा बिम्बिजालियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
बिम्बिजालियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. उद्दालकदायकत्थेरअपदानं

''ककुधो नाम नामेन, सयम्भू अपराजितो।
पवना निक्खमित्वान, अनुप्पत्तो महानदिं॥226॥
''उद्दालकं गहेत्वान, सयम्भुस्स अदासहं।
संयतस्सुजुभूतस्स, पसन्नमानसो अहं॥227॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुप्फदानस्सिदं फलं॥228॥
उद्दालकदायकत्थेरस्सापदानं दसमं।
तुवरदायकवग्गो पञ्चवीसतिमो।
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥229॥
इत्थं सुदं आयस्मा उद्दालकदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥225॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् बिम्बिजालीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''ककुधो नाम नाम्ना, स्वयम्भूरपराजितः।
प्रवणान् निष्क्रम्य, अनुप्राप्तो महानदीम्॥226॥
''उद्दालकं गृहीत्वा, स्वयम्भुवे अदामहम्।
संयताय ऋजुभूताय, प्रसन्नमानसो अहम्॥227॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुष्पदानस्येदं फलम्॥228॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥229॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उद्दालकदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥225॥

इस प्रकार आयुष्मान् बिम्बिजालिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

ककुध नाम के स्वयम्भू अपराजित ने पर्वत से निकलकर महानदी को प्राप्त किया॥226॥

तब प्रसन्नमन मैंने उद्दालक के पुष्प को ग्रहण कर आत्म-जिन तथा सरल स्वभाव वाले स्वयम्भू को प्रदान किया॥227॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो पुष्प अभिरोपित किया था उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥228॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥229॥

इस प्रकार आयुष्मान् उद्दालकदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तस्सुद्दानं –

तुवरनागनळिना, विरवी कुटिधूपको।
पत्तो धातुसत्तलियो, बिम्बि उद्दालकेन च।
सत्ततिंसति गाथायो, गणितायो विभाविभि॥

तस्योदानम् –

तुवरनागनलिना, विरवी कुटिधूपकः।
प्राप्तः धातुसत्तलियः, बिम्ब उद्दालकेन च।
सप्तत्रिंशद् गाथा, गणिता विभाविभिः॥

उनके उदान- इस प्रकार तुवर, नाग, विरव, कुटिधूपक, पत्त, धातु, सत्तलि, बिम्बि तथा उद्दालक के साथ यहाँ सैंतीस गाथाओं का विभागवार वर्णन है।

26. थोमकवग्गो

1. थोमकत्थेरअपदानं

पालि- ''देवलोके ठितो सन्तो, विपस्सिस्स महेसिनो।

धम्मं सुणित्वा मुदितो, इमं वाचं अभासहं॥230॥

'''नमो ते पुरिसाजञ्ञ, नमो ते पुरिसुत्तम।

बहुज्जनं [बहुं जनं (सी॰)] तारयसि, देसेन्तो अमतं पदं'॥231॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं वाचमभणिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, थोमनाय इदं फलं॥232॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।

छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥233॥

इत्थं सुदं आयस्मा थोमको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

थोमकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''देवलोके स्थितः शान्तः, विपश्यिनः महर्षेः।

धर्मं श्रुत्वा मुदितः, इमां वाचम् अभाषेऽहम्॥230॥

'''नमस्ते पुरुषाजण्य, नमस्ते पुरुषोत्तम।

बहुजनं अतारयत्, देशयन् अमृतं पदम्'॥231॥

''एकनवतितमे कल्पे, यद्वाचमभणं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, स्तोमनाया इदं फलम्॥232॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।

षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥233॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् स्तोमकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- देवलोक में रह रहे विपश्यी, महर्षि के धर्म को प्रसन्न मन से सुनकर मैंने इन वचनों को कहा- ॥230॥

हे श्रेष्ठ पुरुष! हे पुरुषोत्तम! आपने अमृत पद की देशना करते हुए बहुजनों को तारा है ॥231॥

91 वें कल्प में मैंने, जो वचनों से स्तुति की थी, उसी कर्म का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥232॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥233॥

इस प्रकार आयुष्मान् स्तोमक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. एकासनदायकत्थेरअपदानं

एकासनदायकस्थविरापदानम्

''विजहित्वा देववण्णं, सभरियो इधागमिं।
अधिकारं कत्तुकामो, बुद्धसेट्ठस्स सासने॥234॥
''देवलो नाम नामेन, पदुमुत्तरसावको।
तस्स भिक्खा मया दिन्ना, विप्पसन्नेन चेतसा॥235॥
''सतसहस्सितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पिण्डपातस्सिदं फलं॥236॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥237॥
इत्थं सुदं आयस्मा एकासनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
एकासनदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''विहाय देववर्णम्, सभार्या इहागमम्।
अधिकारं कर्तुकामः, बुद्धश्रेष्ठस्य शासने॥234॥
''देवलो नाम नाम्ना, पद्मोत्तरश्रावकः।
तस्मै भिक्षा मया दत्ता, विप्रसन्नेन चेतसा॥235 ॥
''शतसहस्रे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पिण्डपातस्येदं फलम्॥236॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥237॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकासनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

देव-वर्ण को त्याग कर बुद्धश्रेष्ठ के शासन पर अधिकार प्राप्त करने की कामना से मैं पत्नी सहित इस लोक में आया ॥234॥

मेरे द्वारा देवल नामक पद्मोत्तर श्रावक को अत्यधिक प्रसन्नमन से भिक्षा का दान दिया गया ॥235॥

यहाँ से 100 हजार कल्प में मैंने जो पिण्डपात का दान दिया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥236॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥237॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकासनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. चितकपूजकत्थेरअपदानं
चितकपूजकस्थविरापदानम्

''आनन्दो नाम सम्बुद्धो, सयम्भू अपराजितो।
अरञ्ञे परिनिब्बायि, अमनुस्सम्हि कानने॥238॥
''देवलोका इधागन्त्वा, चितं कत्वानहं तदा।
सरीरं तत्थ झापेसिं, सक्कारञ्च अकासहं॥239॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥240॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥241॥
इत्थं सुदं आयस्मा चितकपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
चितकपूजकत्थेरस्सापदानं ततियं।

''आनन्दो नाम सम्बुद्धः, स्वयम्भूरपराजितः।
अरण्ये परिन्यवर्तत, अमनुष्येऽस्मिन् कानने॥238॥
''देवलोकात् इहागत्य, चितं कृत्वा अहं तदा।
शरीरं तत्राध्मासिषम्, सत्कारञ्च अकार्षमहम्॥239॥
''एकनवतितः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥240॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥241॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् चितकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

आनन्द नाम के अपराजित, स्वयम्भू, सम्बुद्ध, मनुष्यों से रहित घने जंगल में परिनिवृत्त हो गये ॥238॥

तब मैंने देव लोक से इस लोक में जन्म लेकर ध्यान किया। तत्पश्चात् वहाँ शरीर को नष्ट कर सत्कार करने लगा ॥239॥

यहाँ से 91 वें कल्प में अपराजित जो बुद्ध पूजा किया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥240॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥241॥

इस प्रकार आयुष्मान् चितकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

4. तिचम्पकपुप्फियत्थेरअपदानं
त्रिचम्पकपुष्पीयस्थविरापदानम्

''हिमवन्तस्साविदूरे, विकतो [विकनो (सी॰ स्या॰)] नाम पब्बतो।
तस्स वेमज्झे वसति, समणो भावितिन्द्रियो॥242॥
''दिस्वान तस्सोपसमं, विप्पसन्नेन चेतसा।
तीणि चम्पकपुप्फानि, गहेत्वान समोकिरिं॥243॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥244॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥245॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिचम्पकपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तिचम्पकपुप्फियत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''हिमवतः अविदूरे, विकृतो नाम पर्वतः।
तस्य वैमध्ये वसति, श्रमणो भावितेन्द्रियः॥242॥
''दृष्ट्वा तस्योपसमम्, विप्रसन्नेन चेतसा।
त्रीणि चम्पकपुष्पाणि, गृहीत्वा समवाकिरम्॥243॥
''एकनवतितः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥244॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥245॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् त्रिचम्पकपुष्पीयस्थविर इमा *गाथा* अभाषिष्टेति।

हिमालय के समीप विकृत नामक पर्वत के मध्य विकसित इन्द्रियों वाले श्रमण ने वास किया ॥242॥

शान्त चित्त श्रमण को देखकर अत्यधिक प्रसन्न मन मैं तीन चम्पक पुष्पों को ग्रहण कर उनके सामने फैला दिया ॥243॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित कर बुद्ध-पूजा की थी, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥244॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥245॥

इस प्रकार आयुष्मान् त्रिचम्पकपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. सत्तपाटलियत्थेरअपदानं

सप्तपाटलीयस्थविरापदानम्

''कणिकारंव जोतन्तं, निसिन्नं पब्बतन्तरे।

सत्त पाटलिपुप्फानि, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥246॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥247॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥248॥

इत्थं सुदं आयस्मा सत्तपाटलियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सत्तपाटलियत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. उपाहनदायकत्थेरअपदानं

उपाहनदायकस्थविरापदानम्

''अहोसिं चन्दनो नाम, सम्बुद्धस्सत्रजो तदा।

एकोपाहनो मया दिन्नो, बोधिं सम्पज्ज मे तुवं॥249॥

''कर्णिकारमिव द्योतन्तम्, निषण्णं पर्वतान्तरे।

सप्त पाटलिपुष्पानि, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥246॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥247॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥248॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सप्तपाटलीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''अभूवं चन्दनो नाम, सम्बुद्धस्य आत्मजस्तदा।

एकोपानद् मया दत्ता, बोधिं सम्पाद्य मे त्वाम्॥249॥

पर्वत के मध्य में प्रकाशमान कणिकार पुष्प की भाँति सात पाटलिपुष्प को मैंने बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥246॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित कर बुद्ध-पूजा की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥247॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥248॥

इस प्रकार आयुष्मान् सप्तपाटलीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

चन्दन नाम वाला मैं उस समय सम्बुद्ध का आत्मज हुआ और बोधि को सम्पन्न करके मैंने उनके पाँवों के लिए एक खड़ाऊ प्रदान किया॥249॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पानधिं [यमुपाहनं (सी॰), यं पादुं (स्या॰)] ददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, उपाहनस्सिदं फलं॥250॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥251॥

इत्थं सुदं आयस्मा उपाहनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

उपाहनदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. मञ्जरिपूजकत्थेरअपदानं

मञ्जरीपूजकस्थविरापदानम्

''मञ्जरिकं करित्वान, रथियं पटिपज्जहं।

अद्दसं समणानग्गं, भिक्खुसङ्घपुरक्खतं॥252॥

''पसन्नचित्तो सुमनो, परमाय च पीतिया।

उभो हत्थेहि पग्गय्ह, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥253॥

''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, पुप्फपूजायिदं फलं॥254॥

''एकनवतितमे कल्पे, यमुपानहमदां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, उपानह इदं फलम्॥250॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥251॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उपानद्दायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''मञ्जरिकं कृत्वा, रथिकं प्रतिपद्येऽहम्।
अद्राक्षं श्रमणानामग्रम्, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतम्॥252॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, परमया च प्रीत्या।
उभाभ्यां हस्ताभ्यां प्रगृह्य, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥253॥
''द्विनवति इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुष्पपूजाया इदं फलम्॥254॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो खड़ाऊँ प्रदान किया था, यह उसी कर्म का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥250॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥251॥

इस प्रकार आयुष्मान् उपानद्दायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

कोंपलों का गुच्छा तैयार कर मार्गारूढ़ मैंने भिक्षुसंघ से पुरस्कृत श्रमणों के अग्र तथा रथी बुद्ध को देखा-॥252॥

अत्यधिक प्रसन्नमन और परम-प्रीति से दोनों हाथों से मञ्जरि (कोंपलगुच्छ) को ग्रहण कर मैंने बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥253॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो पुष्प से पूजा की थी उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥254॥

''इतो तेसत्ततिकप्पे, एको आसिं महीपति।

जोतियो नाम नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥255॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥256॥

इत्थं सुदं आयस्मा मञ्जरिपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

मञ्जरिपूजकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. पण्णदायकत्थेरअपदानं

पर्णदायकस्थविरापदानम्

''पब्बते हिमवन्तम्हि, वाकचीरधरो अहं।

अलोणपण्णभक्खोम्हि, नियमेसु च संवुतो॥257॥

''पातरासे अनुप्पत्ते, सिद्धत्थो उपगच्छि मं।

ताहं बुद्धस्स पादासिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥258॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पण्णमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, पण्णदानस्सिदं फलं॥259॥

''इतस्त्रिसप्ततितमे कल्पे, एक आसं महीपतिः।

जोतिको नाम नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥255॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥256॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् मञ्जरीपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''पर्वते हिमवन्ते, वाकचीरधरोऽहम्।

अलोणपर्णभक्ष्योऽस्मि, नियमेषु च संवृतः॥257॥

''प्रातरासे अनूत्पत्ते, सिद्धार्थ उपागच्छन्मम्।

तदाऽहं बुद्धाय प्रादाम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥258॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं पर्णमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, पर्णदानस्येदं फलम्॥259॥

यहाँ से 73 वें कल्प में जोति नामक चक्रवर्ती, महाबलशाली एक राजा हुआ ॥255॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥256॥

इस प्रकार आयुष्मान् मञ्जरीपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमवन्त के समीप वल्कल चीरधारी मैं बिना नमक के पत्तों का भक्षण करने वाला और नियमों में संयत था ॥257॥

कलेवा का समय होने पर सिद्धार्थ (बुद्ध) मेरे समीप आये, तब मैंने प्रसन्नतापूर्वक अपने दोनों हाथों से बुद्ध को पर्ण प्रदान किया ॥258॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो पर्ण का दान दिया था उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥259॥

''सत्तवीसतिकप्पम्हि, राजा आसिं सदत्थियो [यदत्थियो (सी॰ स्या॰)]।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥260॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥261॥

इत्थं सुदं आयस्मा पण्णदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पण्णदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. कुटिदायकत्थेरअपदानं

कुटिदायकस्थविरापदानम्

''विपिनचारी सम्बुद्धो, रुक्खमूले वसी तदा।

पण्णसालं करित्वान, अदासिं अपराजिते॥262॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पण्णकुटिकं अदं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, कुटिदानस्सिदं फलं॥263॥

''अट्ठवीसे [अट्ठतिंसे (स्या॰)] इतो कप्पे, सोळसासिंसु राजानो।

सब्बत्थ अभिवस्सीति, वुच्चरे चक्कवत्तिनो॥264॥

''सप्तविंशतिकल्पे, राजा आसं सदर्थिकः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥260॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥261॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पर्णदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''विपिनचारी सम्बुद्धः, वृक्षमूले अवसत् तदा।

पर्णशालां कृत्वा, अददाम् अपराजिते॥262॥

''एकनवतितमे कल्पे, यं पर्णकुटिकम् अदाम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, कुटिदानस्येदं फलम्॥263॥

''अष्टविंशे इतः कल्पे, षोडशासन् राज्ञः।

सर्वत्र अभ्यवर्षत् इति, उच्यते चक्रवर्त्तिनः॥264॥

मैं यहाँ से 27 वें कल्प में सदर्थी सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ ॥260॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥261॥

इस प्रकार आयुष्मान् पर्णदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

जंगल में विचरण करने वाले सम्बुद्ध वृक्ष के मूल (जड़) में बैठ गये तब मैंने पर्णकुटी का निर्माण कर उन अपराजित को प्रदान किया ॥262॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पर्णकुटि बना कर प्रदान किया था उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता हूँ ॥263॥

ऐसा कहा जाता है कि यहाँ से 28 वें कल्प में सर्वत्र वर्षा कराने वाले 16 चक्रवर्ती राजा हुए थे ॥264॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥265॥

इत्थं सुदं आयस्मा कुटिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

कुटिदायकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. अग्गपुप्फियत्थेरअपदानं

अग्रपुष्पीयस्थविरापदानम्

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, निसिन्नं पब्बतन्तरे।

ओभासयन्तं रंसेन [रंसिया (स्या०)], सिखिनं सिखिनं यथा॥266॥

''अग्गजं पुप्फमादाय, उपागच्छिं नरुत्तमं।

पसन्नचित्तो सुमनो, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥267॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥268॥

''पञ्चवीसतिकप्पम्हि, अहोसि अमितोगतो [अमितव्हयो (सी०)]।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥269॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥265॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् कुटिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, निषण्णं पर्वतान्तरे।

अवभासयन् रश्मिणा, शिखिणा शिखीनाम् यथा॥266॥

''अग्रजं पुष्पमादाय, उपागच्छं नरोत्तमम्।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥267॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥268॥

''पञ्चविंशतिकल्पे, अभूत् अमितोगतः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥269॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥265॥

इस प्रकार आयुष्मान् कुटिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पर्वत के मध्य बैठे हुए सुवर्ण वर्ण वाले सम्बुद्ध अपनी रश्मि से उसको ऐसे अवभासित कर रहे हैं जैसे प्रज्वलित अग्नि स्कन्ध से अग्नि स्कन्ध प्रज्वलित हो ॥266॥

अग्रज नामक पुष्प को ग्रहण कर मैं नरोत्तम के समीप गया और अत्यधिक प्रसन्न मन से बुद्ध को अभ्यर्पित किया ॥267॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित कर बुद्ध पूजा की थी यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥268॥

यहाँ से 25 वें कल्प में अमितोगत नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ ॥269॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥270॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अग्रपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

अग्गपुप्फियत्थेरस्सापदानं दसमं।

थोमकवग्गो छब्बीसतिमो।

तस्सुद्दानं –

थोमकेकासनचितकं, चम्पको सत्तपाटलि।

पानधि [पाहनो (सी०), पादु (स्या०)] मञ्जरी पण्णं, कुटिदो अग्गपुप्फियो।

गाथायो गणिता चेत्थ, एकतालीसमेव चाति॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥270॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अग्रपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

स्तोमकेकासनचितकम्, चम्पकः सत्तपाटलि।

पानधि मञ्जरी पर्णम्, कुटिदः अग्रपुष्पिकः।

गाथाः गणिता चाऽत्र, एकचत्वारिंशमेव च इति॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥270॥

इस प्रकार आयुष्मान् अग्रपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- थोमक, एकासन चितक, चम्पक, सत्तपाटली, पानधि मञ्जरि, पर्ण, कुटिद और अग्गपुष्पिय। इस प्रकार यहाँ एकतालिस गाथाओं की ही गणना है।

27. पदुमुक्खिपवग्गो

1. आकासुक्खिपियत्थेरअपदानं

पालि- ''सुवण्णवण्णं सिद्धत्थं, गच्छन्तं अन्तरापणे।
जलजग्गे दुवे गय्ह, उपागच्छिं नरासभं॥271॥
''एकञ्च पुप्फं पादेसु, बुद्धसेट्ठस्स निक्खिपिं।
एकञ्च पुप्फं पग्गय्ह, आकासे उक्खिपिं अहं॥272॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुप्फदानस्सिदं फलं॥273॥
''इतो छत्तिंसकप्पम्हि, एको आसिं महीपति।
अन्तलिक्खकरो नाम, चक्कवत्ती महब्बलो॥274॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥275॥
इत्थं सुदं आयस्मा आकासुक्खिपियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
आकासुक्खिपियत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''सुवर्णवर्णं सिद्धार्थम्, गच्छन्तम् अन्तरापणे।
जलजाग्रे द्वौ ग्रह्य, उपागच्छं नरर्षभम्॥271॥
''एकञ्च पुष्पं पादयोः, बुद्धश्रेष्ठाय न्यक्षिपम्।
एकञ्च पुष्पं प्रगृह्य, आकाशे उदक्षिपम् अहम्॥272॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुष्पदानस्येदं फलम्॥273॥
''इतः षट्त्रिंशकल्पे, एक आसं महीपतिः।
अन्तरीक्षकरो नाम, चक्रवर्त्ती महाबलः॥274॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥275॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् आकाशुक्षिपीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- मैं दो कमल-पुष्पों को लेकर बाजार के मध्य जाते हुए सुवर्ण वर्ण वाले नरर्षभ सिद्धार्थ के समीप गया ॥271॥

एक पुष्प बुद्धश्रेष्ठ के चरणों में चढा दिया और एक पुष्प को ग्रहण कर मैंने आकाश की ओर उछाल दिया॥272॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥273॥

यहाँ से 36 वें कल्प में एक अन्तरिक्षकर नामक चक्रवर्ती, महाबलशाली राजा हुआ ॥274॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥275॥

इस प्रकार आयुष्मान् आकाशुक्षिपीयस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. तेलमक्खियत्थेरअपदानं

तेलमक्षीयस्थविरापदानम्

''सिद्धत्थम्हि भगवति, निब्बुतम्हि नरासभे।
बोधिया वेदिकायाहं, तेलं मक्खेसि तावदे॥276॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं तेलं मक्खयिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, मक्खनाय इदं फलं॥277॥
''चतुवीसे इतो कप्पे, सुच्छवि नाम खत्तियो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥278॥
तेलमक्खियत्थेरस्सापदानं दुतियं।
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥279॥
इत्थं सुदं आयस्मा तेलमक्खियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

''सिद्धार्थे भगवति, निर्वृत्ते नरर्षभे।
बोधौ वेदिकायामऽहम्, तैलम् अम्रक्षीत् तावदेव॥276॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं तैलम् अम्रक्षिषं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, म्रक्षणम् इदं फलम्॥277॥
''चतुर्विंशे इतः कल्पे, सुच्छवि नाम क्षत्रियः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥278॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥279॥
इत्थं स्विद् आयुस्मान् तैलम्रक्षीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

नरर्षभ सिद्धार्थ भगवान् के निर्वाण प्राप्त कर लेने पर मैंने बोधिवृक्ष की वेदिका में तेल का लेपन किया ॥276॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो बोधि वृक्ष की वेदिका में तेल का लेपन किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥277॥

यहाँ से 24 वें कल्प में एक सुच्छवि नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती क्षत्रिय हुआ ॥278॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥279॥

इस प्रकार आयुष्मान् तैलमक्खीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. अड्ढचन्दियत्थेरअपदानं

''तिस्सस्स खो भगवतो, बोधिया पादपुत्तमे।
अड्ढचन्दं मया दिन्नं, धरणीरुहपादपे॥280॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं चन्द [यं पुप्फ (क॰)] मभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बोधिपूजायिदं फलं॥281॥
''पञ्चवीसे इतो कप्पे, देवलो नाम खत्तियो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥282॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥283॥
इत्थं सुदं आयस्मा अड्ढचन्दिय थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
अड्ढचन्दियत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. पदीपदायकत्थेरअपदानं

''देवभूतो अहं सन्तो, ओरुय्ह पथविं तदा।
पदीपे पञ्च पादासिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥284॥

''तिष्याय खलु भगवतः, बोधौ पादपुत्तमे।
अर्धचन्द्रं मया दत्तम्, धरणीरुहपादपे॥280॥
''द्विनवतितमे कल्पे, यं चन्द्रमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बोधिपूजाया इदं फलम्॥281॥
''पञ्चविंशे इतः कल्पे, देवलो नाम क्षत्रियः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥282॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥283॥
इत्थं स्विद् आयुस्मान् अर्धचन्द्रिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''देवभूतोऽहं श्रान्तः, अवरुह्य पृथ्वीं तदा।
प्रदीपान् पञ्च प्रादाम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥284॥

पृथ्वी पर उगे हुए वृक्षों में उत्तम बोधि वृक्ष के नीचे बैठे हुए तिष्य भगवान् को मेरे द्वारा अर्धचन्द्र दिया गया ॥280॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो चन्द्र अभ्यर्पित कर बोधि-पूजा की थी उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥281॥

यहाँ से 25 वें कल्प में एक देवल नामक सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती क्षत्रिय हुआ ॥282॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षट्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥283॥

इस प्रकार आयुष्मान् अर्धचन्द्रिय थेर ने इन गाथाओं को कहा-

मैं शान्तचित्त वाला देव होकर पृथ्वी पर उतरा और प्रसन्नमन से अपने दोनों हाथों से भगवान् को पाँच दीपक प्रदान किया ॥284॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पदीपमदं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, दीपदानस्सिदं फलं॥285॥
''पञ्चपञ्ञासके कप्पे, एको आसिं महीपति।
समन्तचक्खुनामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥286॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥287॥
इत्थं सुदं आयस्मा पदीपदायको [अपण्णदीपियो (सी० क०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पदीपदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. बिळालिदायकत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, रोमसो नाम पब्बतो।
तम्हि पब्बतपादम्हि, समणो भावितिन्द्रियो॥288॥
''बिळालियो गहेत्वान, समणस्स अदासहं।
अनुमोदि महावीरो, सयम्भू अपराजितो॥289॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् प्रदीपमदां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, दीपदानस्येदं फलम्॥285॥
''पञ्चपञ्चाशके कल्पे, एक आसम् महीपतिः।
समन्तचक्षुनाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥286॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥287॥
इत्थं स्विद् आयुस्मान् प्रदीपदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''हिमवतः अविदूरे, रोमसो नाम पर्वतः।
तस्मिन् पर्वतपादे, श्रमणो भावितेन्द्रियः॥288॥
''विडालयः गृहीत्वा, श्रमणाय अदामहम्।
अन्वमोदत् महावीरः, स्वयम्भूरपराजितः॥289॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो प्रदीप प्रदान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥285॥

55 वें कल्प में एक समन्तचक्षु नामक चक्रवर्ती महाबलशाली राजा हुआ ॥286॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥287॥

इस प्रकार आयुष्मान् प्रदीपदायक थेर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय के समीप एक रोमस नामक पर्वत था जिसके मूल में संयतेन्द्रिय श्रमण विराजमान थे॥288॥

तब मैंने विडालि (नेत्र की औषधि विशेष) को ग्रहण कर श्रमण को प्रदान किया और स्वयम्भू, अपराजित, महावीर ने उसका अनुमोदन किया ॥289॥

''बिळाली ते मम दिन्ना, विप्पसन्नेन चेतसा।

भवे निब्बत्तमानम्हि, फलं निब्बत्ततं तव॥290॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं बिळालिमदासहं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बिळालिया इदं फलं॥291॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥292॥

इत्थं सुदं आयस्मा बिळालिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

बिळालिदायकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. मच्छदायकत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, उक्कुसो आसहं तदा।

महन्तं मच्छं पग्गय्ह, सिद्धत्थमुनिनो अदं॥293॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं मच्छमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, मच्छदानस्सिदं फलं॥294॥

''बिडालिं तेभ्यः मम दत्ता, विप्रसन्नेन चेतसा।

भवे निर्वर्त्तमाने, फलं निर्वर्त्तात्मं तव॥290॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं विडालिमदामहम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, विडालीया इदं फलम्॥291॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥292॥

इत्थं स्विद् आयुस्मान् विडालीदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''चन्द्रभागानदीतीरे, उक्कुसः आसमहं तदा।

महान्तं मत्स्यं प्रगृह्य, सिद्धार्थमुनये अदाम्॥293॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यम् मत्स्यमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, मत्स्यदानस्येदं फलम्॥294॥

अत्यधिक प्रसन्न मन से मेरे द्वारा विडाली दिया गया तब इस भव से निर्वृत्त होने के पश्चात् पुनः जन्म ग्रहण करने पर यह फल देगा ॥290॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो विडाली का दान दिया था, उसी कर्म का यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥291॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥292॥

इस प्रकार आयुष्मान् विडालीदायक थेर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं चन्द्रभागा नदी के तट पर उक्कुस (मछली खाने वाला पक्षी) था तब मैंने एक बड़ी मछली को ग्रहण कर सिद्धार्थ मुनि को प्रदान किया ॥293॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो मत्स्य (मछली) का दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥294॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥295॥

इत्थं सुदं आयस्मा मच्छदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

मच्छदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. जवहंसकत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, आसिं वनचरो तदा।

सिद्धत्थं अद्दसं बुद्धं, गच्छन्तं अनिलञ्जसे॥296॥

''अञ्जलिं पग्गहेत्वान, उल्लोकेन्तो महामुनिं।

सकं चित्तं पसादेत्वा, अवन्दिं नायकं अहं॥297॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यमवन्दिं नरासभं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, वन्दनाय इदं फलं॥298॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥299॥

इत्थं सुदं आयस्मा जवहंसको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

जवहंसकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥295॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् मत्स्यदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''चन्द्रभागानदीतीरे, आसं वनचरः तदा।

सिद्धार्थम् अद्राक्षं बुद्धम्, गच्छन्तम् अनिलञ्जसे॥296॥

''अञ्जलिं प्रगृह्य, उल्लोकयन् महामुनिम्।

स्वकं चित्तं प्रसाद्य, अवन्दे नायकमहम्॥297॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यमवन्दे नरर्षभम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, वन्दनाया इदं फलम्॥298॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥299॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् जवहंसकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥295॥

इस प्रकार आयुष्मान् मत्स्यदायक थेर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं चन्द्रभागा नदी के तट पर वनचर (वनवासी) था तब मैंने सिद्धार्थ बुद्ध को वायु मार्ग से जाते हुए देखा ॥296॥

करबद्ध हो कर मैंने महामुनि को देखते हुए अपने चित्त को प्रासादित कर नायक की वन्दना की ॥297॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो नरर्षभ की वन्दना की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥298॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥299॥

इस प्रकार आयुष्मान् जवहंसक थेर ने इन गाथाओं को कहा-

8. सळलपुप्फियत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अहोसिं किन्नरो तदा।

विपस्सिं अद्दसं बुद्धं, रंसिजालसमाकुलं॥300॥

''पसन्नचित्तो सुमनो, परमाय च पीतिया।

पग्गय्ह सळलं पुप्फं, विपस्सिं ओकिरिं अहं॥301॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥302॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥303॥

इत्थं सुदं आयस्मा सळलपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सळलपुप्फियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. उपागतासयत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्स वेमज्झे, सरो आसि सुनिम्मितो।

तत्थाहं रक्खसो आसिं, हेठसीलो भयानको॥304॥

''चन्द्रभागानदीतीरे, अभवं किन्नरस्तदा।

विपश्यीम् अद्राक्षं बुद्धम्, रश्मिजालसमाकुलम्॥300॥

''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, परमया च प्रीत्या।

प्रगृह्य सरलं पुष्पम्, विपश्यीम् अवाकिरमहम्॥301॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥302॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥303॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सरलपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''हिमवतः वैमध्ये, सर आसीत् सुनिर्म्मितः।

तत्राहं राक्षस आसम्, अधश्शीलो भयानकः॥304॥

उस समय मैं चन्द्रभागा नदी के तट पर एक किन्नर था तब मैंने रश्मिजाल से युक्त ऐसे विपश्यी बुद्ध को देखा ॥300॥

मैंने प्रसन्नचित्त, सुष्ठुमन और परम प्रीति से सरल पुष्प को ग्रहण कर विपश्यी पर चढ़ा दिया ॥301॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभिरोपित कर बुद्धपूजा की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥302॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥303॥

इस प्रकार आयुष्मान् सरलपुष्पीय थेर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय पर्वत के मध्य एक सुनिर्मित झील थी, वहाँ पर मैं एक शीलरहित भयानक राक्षस था ॥304॥

''अनुकम्पको कारुणिको, विपस्सी लोकनायको।
ममुद्धरितुकामो सो, आगच्छि मम सन्तिकं॥305॥
''उपागतं महावीरं, देवदेवं नरासभं।
आसया अभिनिक्खम्म, अवन्दिं सत्थुनो अहं॥306॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं वन्दिं पुरिसुत्तमं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, वन्दनाय इदं फलं॥307॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥308॥
इत्थं सुदं आयस्मा उपागतासयो [उपागतहासनियो (स्या°), उपागताहासनियो (क°)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उपागतासयत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. तरणियत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णो सम्बुद्धो, विपस्सी दक्खिणारहो।
नदीतीरे ठितो सत्था, भिक्खुसङ्घपुरक्खतो॥309॥

''अनुकम्पकः कारुणिकः, विपश्यी लोकनायकः।
मामुद्धर्तुकामः सः, आगच्छत् मम सान्तिकम्॥305॥
''उपागतं महावीरम्, देवदेवं नरर्षभम्।
आसयात् अभिनिष्क्रम्य, अवन्दे शास्त्रेऽहम्॥306॥
''एकनवतितमे कल्पे, यमवन्दे पुरुषोत्तमम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, वन्दनया इदं फलम्॥307॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥308॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उपागतासयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सुवर्णवर्णः सम्बुद्धः, विपश्यी दक्षिणार्हः।
नदीतीरे स्थितः शास्ता, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतः॥309॥

अनुकम्पा करने वाले, कारुणिक, विपश्यी, लोकनायक मेरे उद्धार की कामना से मेरे समीप आ गये ॥305॥

अपने निवास स्थान से निकलकर मेरे समीप आये हुए महावीर, देवों के देव, नरर्षभ, शास्ता की मैंने वन्दना की ॥306॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुरुषोत्तम की वन्दना की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥307॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥308॥

इस प्रकार आयुष्मान् उपागतासय थेर ने इन गाथाओं को कहा-

सुवर्णवर्ण, सम्बुद्ध, विपश्यी, दक्षिणा को ग्रहण करने योग्य, भिक्षुसंघ से पुरस्कृत शास्ता नदी के तट पर खड़े थे ॥309॥

''नावा न विज्जते तत्थ, सन्तारणी महण्णवे।

नदिया अभिनिक्खम्म, तारेसिं लोकनायकं॥310॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं तारेसिं नरुत्तमं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, तरणाय इदं फलं॥311॥

इत्थं सुदं आयस्मा तरणियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तरणियत्थेरस्सापदानं दसमं।

पदुमुक्खिपवग्गो सत्तवीसतिमो।

तस्सुद्दानं –

उक्खिपी तेलचन्दी च, दीपदो च बिळालिदो।

मच्छो जवो सळलदो, रक्खसो तरणो दस।

गाथायो चेत्थ सङ्खाता, तालीसं चेकमेव चाति॥

''नावा न विद्यते तत्र, सन्तारणी महार्णवे।

नद्याः अभिनिष्क्रम्य, अतारयत् लोकनायकम्॥310॥

''एकनवतितमे कल्पे, यमतारयम् नरोत्तमम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, तरणाया इदं फलम्॥311॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् तरणीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

उदक्षिपत् तेलचन्दी च, दीपदश्च बिडालिदः।

मत्स्यः जवः सरलदः, राक्षसः तरणः दश।

गाथा चात्र सङ्ख्याता, तालीसं चैकमेव च इति॥

वहाँ उस महासमुद्र को पार कराने वाली कोई नौका नहीं थी तब मैंने नदी से निकलकर उन लोकनायक को नदी पार कराया ॥310॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो नरोत्तम को मैंने नदी के पार उतारा था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥311॥

इस प्रकार आयुष्मान् तरणीय थेर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- उक्खिपी, तेलचन्द, दीपद और बिळालिद, मच्छ जव सळलद रक्खस तरण इस प्रकार यहाँ पर संख्या में बयालिस गाथाओं का वर्णन हैं।

28. सुवण्णबिब्बोहनवग्गो

1. सुवण्णबिब्बोहनियत्थेरअपदानं

पालि- ''एकासनं अहमदं, पसन्नो सेहि पाणिभि।
बिब्बोहनञ्च [बिम्बोहनञ्च (सी॰ पी॰)] पादासिं, उत्तमत्थस्स पत्तिया॥312॥
''एकनवुतितो कप्पे, बिब्बोहनमदासहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बिब्बोहनस्सिदं फलं॥313॥
''इतो तेसट्ठिमे कप्पे, असमो नाम खत्तियो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥314॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥315॥
इत्थं सुदं आयस्मा सुवण्णबिब्बोहनियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सुवण्णबिब्बोहनियत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''एकासनम् अहमदाम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
विम्बोहनञ्च प्रादाम्, उत्तमार्थस्य प्राप्तये॥312॥
''एकनवतितमे कल्पे, विम्बोहनमदामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, विम्बोहनस्येदं फलम्॥313॥
''इतः त्रिषष्टितमे कल्पे, असमो नाम क्षत्रियः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥314॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥315॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सुवर्णविम्बोहनीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- मैंने प्रसन्न मन से दोनों हाथों से एक आसन प्रदान किया और परमार्थ की प्राप्ति के लिए तकिया प्रदान किया॥312॥

यहाँ से 91 वें कल्प मैंने में जो तकिया का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥313॥

यहाँ से 63 वें कल्प में असम नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती क्षत्रिय हुआ॥314॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥315॥

इस प्रकार आयुष्मान् सुवण्णबिब्बोहनिय थेर ने इन गाथाओं को कहा-

2. तिलमुट्ठिदायकत्थेरअपदानं

''मम सङ्कप्पमञ्ञाय, सत्था लोकग्गनायको।
मनोमयेन कायेन, इद्धिया उपसङ्कमि॥316॥
''सत्थारं उपसङ्कन्तं, वन्दित्वा पुरिसुत्तमं।
पसन्नचित्तो सुमनो, तिलमुट्ठिमदासहं॥317॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, तिलमुट्ठियिदं फलं॥318॥
''इतो सोळसकप्पम्हि, तन्तिसो [खन्तियो (स्या॰)] नाम खत्तियो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥319॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥320॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिलमुट्ठिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तिलमुट्ठिदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''मम सङ्कल्पमाज्ञाय, शास्ता लोकाग्रनायकः।
मनोमयेन कायेन, ऋद्ध्या उपसमक्रमीत्॥316॥
''शास्तारम् उपसङ्क्रमन्तम्, वन्दित्वा पुरुषोत्तमम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, तिलमुष्टिमदामहम्॥317॥
''एकनवतितमे कल्पे, यद्दानमददिषि तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, तिलमुष्टि इदं फलम्॥318॥
''इतः षोडशकल्पे, तन्तिसो नाम क्षत्रियः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥319॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥320॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तिलमुष्टिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

मेरे सङ्कल्प को जान कर लोकाग्र नायक शास्ता मनोमय काय से और ऋद्धि से समीप आये॥316॥

समीप आये हुए शास्ता पुरुषोत्तम को मैंने वन्दना करके अत्यधिक प्रसन्न मन से एक मुट्ठी तिल प्रदान किया॥317॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो मुष्टि भर तिल का दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥318॥

यहाँ से 16 वें कल्प में एक तन्तिस नामक सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती, क्षत्रिय हुआ॥319॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥320॥

इस प्रकार आयुष्मान् तिलमुष्टिदायक थेर ने इन गाथाओं को कहा-

3. चङ्कोटकियत्थेरअपदानं

''महासमुद्दं निस्साय, वसती पब्बतन्तरे।

पच्चुग्गन्त्वान कत्वान [पच्चुग्गन्त्वान'कासहं (अट्ठ॰), पच्चुग्गमनं कत्वान (?)],

चङ्कोटक [चङ्गोटक (सी॰)] मदासहं॥321॥

''सिद्धत्थस्स महेसिनो, सब्बसत्तानुकम्पिनो [सयम्भुस्सानुकम्पिनो (स्या॰)]।

पुप्फचङ्कोटकं दत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥322॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, चङ्कोटकमदं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, चङ्कोटकस्सिदं फलं॥323॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥324॥

इत्थं सुदं आयस्मा चङ्कोटकियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

चङ्कोटकियत्थेरस्सापदानं ततियं।

''महासमुद्रं निःस्राय, वसती पर्वतान्तरे।

प्रत्युद्गत्य कृत्वा, चङ्कोटकमदामहम्॥321॥

''सिद्धार्थाय महर्षये, सर्वसत्वानुकम्पिने।

पुष्पचङ्कोटकं दत्वा, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥322॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, चङ्कोटकमदां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, चङ्कोटकस्येदं फलम्॥323॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥324॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् चङ्कोटकीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

महासमुद्र से निकलकर पर्वत के नीचे वास किया और सिद्धार्थ का स्वागत कर मैंने छोटी टोकरी का निर्माण कर उन्हें प्रदान किया॥321॥

सभी प्राणियों पर अनुकम्पा करने वाले सिद्धार्थ को पुष्प की टोकरी प्रदान कर मैं कल्प भर स्वर्ग में सानन्द रहा॥322॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो चङ्कोटक (टोकरी) का दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥323॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥324॥

इस प्रकार आयुष्मान् चङ्कोटकिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

4. अब्भञ्जनदायकत्थेरअपदानं

''कोण्डञ्ञस्स भगवतो, वीतरागस्स तादिनो।

आकाससमचित्तस्स [अकक्कसचित्तस्साथ (अट्ठ॰)], निप्पपञ्चस्स झायिनो॥325॥

''सब्बमोहातिवत्तस्स, सब्बलोकहितेसिनो।

अब्भञ्जनं मया दिन्नं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥326॥

''अपरिमेय्ये इतो कप्पे, अब्भञ्जनमदं तदा [अम्भञ्जनमदासहं (स्या॰)]।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अब्भञ्जनस्सिदं फलं॥327॥

''इतो पन्नरसे कप्पे, चिरप्पो नाम खत्तियो।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥328॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥329॥

इत्थं सुदं आयस्मा अब्भञ्जनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अब्भञ्जनदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''कौण्डिन्याय भगवते, वीतरागाय तायिने।

आकाशसमचित्ताय, निश्प्रपञ्चाय ध्यायिने॥325॥

''सर्वमोहात् अति**वर्त्ताय**, सर्वलोकहितैषिणे।

अभ्यञ्जनं मया दत्तम्, द्विपदेन्द्राय तायिने॥326॥

''अपरिमेये इतः कल्पे, अभ्यञ्जनमदां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, अभ्यञ्जनस्येदं फलम्॥327॥

''इतः पञ्चदशे कल्पे, चिरल्पो नाम क्षत्रियः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥328॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥329॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अभ्यञ्जनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उस कौण्डिन्य, भगवान्, वीतराग आकाश के समान चित्त वाले निश्प्रपञ्च, ध्यायी..... ॥325॥

सभी मोहों के पार जाने वाले, सर्वलोकहितैषी, द्विपदिन्द्र को मेरे द्वारा काजल प्रदान किया गया॥326॥

यहाँ से अपरिमेय कल्प में मैंने जो अभ्यञ्जन (काजल) का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥327॥

यहाँ से पन्द्रह सौ वें कल्प में एक चिरल्प नाम से सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती महाबलशाली क्षत्रिय हुआ॥328॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥329॥

इस प्रकार आयुष्मान् अब्भञ्जनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. एकञ्जलिकत्थेरअपदानं

''उदुम्बरे वसन्तस्स, नियते पण्णसन्थरे।
वुत्थोकासो मया दिन्नो, समणस्स महेसिनो॥330॥
''तिस्सस्स द्विपदिन्दस्स, लोकनाथस्स तादिनो।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, सन्थरिं पुप्फसन्थरं॥331॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं करिं पुप्फसन्थरं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सन्थरस्स इदं फलं॥332॥
''इतो चुद्दसकप्पम्हि, अहोसिं मनुजाधिपो।
एकअञ्जलिको नाम, चक्कवत्ती महब्बलो॥333॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥334॥
इत्थं सुदं आयस्मा एकञ्जलिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
एकञ्जलिकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

''उदुम्बरे **वसत्यै**, नियते पर्णसंस्तरे।
व्युत्थावकाशो मया दत्ता, श्रमणाय महर्षये॥330॥
''तिष्याय द्विपदेन्द्राय, लोकनाथाय तायिने।
अञ्जलिं प्रगृह्य, समस्तार्षं पुष्पसंस्तरम्॥331॥
''द्विनवति इतः कल्पे, यमकारयं पुष्पसंस्तरम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, संस्तरस्य इदं फलम्॥332॥
''इतः चतुर्दशकल्पे, अभूवं मनुजाधिपः।
एकाञ्जलिको नाम, चक्रवर्त्ती महाबलः॥333॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥334॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकाञ्जलिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उदुम्बर वृक्ष के नीचे पत्तों की चटाई पर बैठे श्रमण महर्षि को यथा समय मेरे द्वारा दान किया॥330॥

तिष्य, द्विपदिन्द्र, लोकनाथ के लिए मैंने अञ्जलि में ग्रहण कर पुष्पों का बिछौना (चटाई) बिछाया॥331॥

यहाँ से 92 वें कल्प में जो पुष्प की चटाई प्रदान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥332॥

यहाँ से 14 वें कल्प में एक एकाञ्जलि नामक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥333॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥334॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकञ्जलिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

6. पोत्थकदायकत्थेरअपदानं

''सत्थारं धम्ममारब्भ, सङ्घञ्चापि महेसिनं।
पोत्थदानं मया दिन्नं, दक्खिणेय्ये अनुत्तरे॥335॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पोत्थदानस्सिदं फलं॥336॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥337॥
इत्थं सुदं आयस्मा पोत्थकदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पोत्थकदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. चितकपूजकत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अनुसोतं वजामहं।
सत्त मालुवपुप्फानि, चितमारोपयिं अहं॥338॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, चितकं यमपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, चितपूजायिदं फलं॥339॥

''शास्तारं धर्ममारभ्य, **सङ्घाय चापि महर्षये**।
पुस्तदानं मया दत्तम्, दाक्षिणेये अनुत्तरे॥335॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुस्तदानस्येदं फलम्॥336॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥337॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पुस्तकदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''चन्द्रभागानदीतीरे, अनुस्रोतं अव्रजमहम्।
सप्त मालुवपुष्पानि, चितामारोपयम् अहम्॥338॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, चितकं यमपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, चितपूजाया इदं फलम्॥339॥

धर्म को आरम्भ करने वाले, महर्षि, संघ में अग्र, दक्षिणा देने योग्य, अनुत्तर शास्ता को मेरे द्वारा पुस्तक का दान दिया गया॥335॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुस्तक दान का कर्म किया था, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥336॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥337॥

इस प्रकार आयुष्मान् पोत्थकदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

चन्द्रभागा नदी के तट पर धाराओं के स्रोत के अनुसार मैं वहाँ पहुँचा और सात मालु-पुष्पों को ग्रहण कर प्रसन्न चित्त से अभ्यर्पित किया॥338॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो चित्ता की पूजा की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥339॥

''सत्तसट्ठिम्हितो कप्पे, पटिजग्गसनामका।
सत्तरतनसम्पन्ना, सत्तासुं चक्कवत्तिनो [पटिजग्गसनामको। सत्तरतनसम्पन्नो,
चक्कवत्ती महब्बलो (स्या॰)]॥340॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥341॥
इत्थं सुदं आयस्मा चितकपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
चितकपूजकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. आलुवदायकत्थेरअपदानं

''पब्बते हिमवन्तम्हि, महासिन्धु सुदस्सना।
तत्थद्दसं वीतरागं, सुप्पभासं सुदस्सनं॥342॥
''परमोपसमे युत्तं, दिस्वा विम्हितमानसो।
आलुवं तस्स पादासिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥343॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, आलुवस्स इदं फलं॥344॥

''सप्तषष्ट्याम् इतः कल्पे, पटिजग्गसनामकाः।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, सप्तासन् चक्रवर्त्तिनः॥340॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥341॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् चितकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''पर्वते हिमवन्ते, महासिन्धु सुदर्शना।
तत्राद्राक्षं वीतरागम्, सुप्रभासं सुदर्शनम्॥342॥
''परमोपशमे युक्तम्, दृष्ट्वा विस्मृतमानसः।
आलुवं तस्मै प्रादाम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥343॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, आलुवस्य इदं फलम्॥344॥

यहाँ से 67 वें कल्प में प्रतिजग्रस नाम वाला सप्तरत्नसम्पन्न, सात चक्रवर्ती राजा हुआ॥340॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥341॥

इस प्रकार आयुष्मान् चितकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

एक समय हिमालय पर्वत के समीप महासिन्धु नामक एक सुन्दर नदी थी, वहाँ मैंने सुन्दर शोभा से युक्त वीतराग भगवान् सुदर्शन को देखा॥342॥

उन परम शान्ति से युक्त सुदर्शन भगवान् को देखकर मैंने प्रसन्न मन से अपने हाथों से उन्हें आलू प्रदान किया॥343॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो फल का दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥344॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥345॥

इत्थं सुदं आयस्मा आलुवदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

आलुवदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. एकपुण्डरीकत्थेरअपदानं

''रोमसो नाम नामेन, सयम्भू सुब्बतो [सप्पभो (स्या०)] तदा।

पुण्डरीकं मया दिन्नं, विप्पसन्नेन चेतसा॥346॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, पुण्डरीकमदं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, पुण्डरीकस्सिदं फलं॥347॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥348॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकपुण्डरीको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकपुण्डरीकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. तरणीयत्थेरअपदानं

''महापथम्हि विसमे, सेतु कारापितो मया।

तरणत्थाय लोकस्स, पसन्नो सेहि पाणिभि॥349॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥345॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् आलुवदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''रोमसो नाम नाम्ना, स्वयम्भू सुव्रतस्तदा।

पुण्डरीकं मया दत्ता, विप्रसन्नेन चेतसा॥346॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, पुण्डरीकमदां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, पुण्डरीकस्येदं फलम्॥347॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥348॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकपुण्डरीकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''महापथे विषमे, सेतुः कारापितो मया।

तरणार्थाय लोकस्य, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥349॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥345॥

इस प्रकार आयुष्मान् आलुवदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा

रोमस नाम से प्रसिद्ध सुव्रत स्वम्भू को तब मेरे द्वारा अत्यधिक प्रसन्नमन से पुण्डरीक (श्वेतकमल) प्रदान किया॥346॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो पुण्डरीक का दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥347॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥348॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकपुण्डरीक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

ऊबड़-खाबड़ महापथ पर लोक से पार जाने हेतु प्रसन्नमन से मेरे द्वारा दोनों हाथों से सेतु का निर्माण किया गया॥349॥

''एकनवुतितो कप्पे, यो सेतु कारितो मया।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सेतुदानस्सिदं फलं॥350॥
''पञ्चपञ्ञासितो कप्पे, एको आसिं समोगधो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥351॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥352॥
इत्थं सुदं आयस्मा तरणीयो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तरणीयत्थेरस्सापदानं दसमं।
सुवण्णबिब्बोहनवग्गो अट्ठवीसतिमो।

तस्सुद्दानं –

सुवण्णं तिलमुट्ठि च, चङ्कोटब्भञ्जनञ्जली।
पोत्थको चितमालुवा, एकपुण्डरी सेतुना।
द्वेचत्तालीस गाथायो, गणितायो विभाविभीति॥

''एकनवतितमे कल्पे, यः सेतुः कारितो मया।
दुर्गतिं नाभिजानामि, सेतुदानस्येदं फलम्॥350॥
''पञ्चपञ्चाशत्तमे कल्पे, एक आसं समोगधः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥351॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥352॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तरणीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

सुवर्णं तिलमुष्टिश्च, चङ्कोटभ्यञ्जनाञ्जली।
पुस्तकं चितमालुवान्, एकपुण्डरी सेतुना।
द्विचत्वारिंशत् गाथा, गणिता विभाविभि इति॥
एकादसमं भाणवारं।

यहाँ से 91 वें कल्प में मेरे द्वारा जो सेतु निर्माण किया गया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥350॥

यहाँ से 50 वें कल्प में एक समोगध नाम का सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुआ॥351॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥352॥

इस प्रकार आयुष्मान् तरणीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा

उनके उदान- सुवर्ण, तिलमुट्ठि,चङ्कोट, अब्यञ्जन, एकञ्जलिय पोत्थक, चित आलुव, एकपुण्डरीक, सेतुन इस प्रकार यहाँ पर एक्तालीस गाथाओं का क्रमवार वर्णन है।

29. पण्णदायकवग्गो

1. पण्णदायकत्थेरअपदानं

पालि- ''पण्णसाले निसिन्नोम्हि, पण्णभोजनभोजनो।

उपविट्ठञ्च मं सन्तं, उपागच्छि महाइसि [महामुनि (सी॰)]॥353॥

''सिद्धत्थो लोकपज्जोतो, सब्बलोकतिकिच्छको।

तस्स पण्णं मया दिन्नं, निसिन्नं [निसिन्नस्स (स्या॰ अट्ठ॰)] पण्णसन्थरे॥354॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पण्णमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, पण्णदानस्सिदं फलं॥355॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।

छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥356॥

इत्थं सुदं आयस्मा पण्णदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पण्णदायकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''पर्णशालायां निषण्णोस्मि, पर्णभोजनभोजनः।

उपविष्टञ्च मम शान्तम्, उपागमत् महर्षिः॥353॥

''सिद्धार्थो लोकप्रद्योतः, सर्वलोकचिकित्सकः।

तस्मै पर्णं मया दत्तम्, निषण्णं पर्णसंस्तरे॥354॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पर्णमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, पर्णदानस्येदं फलम्॥355॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।

षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥356॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पर्णदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- पर्ण का भोजन करने वाला मैं पर्ण-कुटी में प्रवेश कर शान्त बैठा हुआ था। तभी मेरे समीप महर्षि पहुँच गये॥353॥

सिद्धार्थ भगवान् , संसार को प्रकाशित करने वाले, लोक में सभी के चिकित्सक, पत्ते के बिछौने पर बैठे हुए को मेरे द्वारा पत्ता प्रदान किया गया॥354॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो पर्ण दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥355॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥356॥

इस प्रकार आयुष्मान् पण्णदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. फलदायकत्थेरअपदानं

''सिनेरुसमसन्तोसो, धरणीसम [धरणीधर (सी॰ स्या॰)] सादिसो।
वुट्ठहित्वा समाधिम्हा, भिक्खाय ममुपट्ठितो॥357॥
''हरीतकं [हरीतकिं (स्या॰)] आमलकं, अम्बजम्बुविभीतकं।
कोलं भल्लातकं बिल्लं, फारुसकफलानि च॥358॥
''सिद्धत्थस्स महेसिस्स, सब्बलोकानुकम्पिनो।
तञ्च सब्बं मया दिन्नं, विप्पसन्नेन चेतसा॥359॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं फलं अददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥360॥
''सत्तपञ्ञासितो कप्पे, एकज्झो नाम खत्तियो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥361॥

''सुमेरुसमसन्तोषः, धरणीसम सादृशः।
व्युत्थाय समाधेः, भिक्षाय मामुपस्थितः॥357॥
''हरीतकम् आमलकम्, आम्रजम्बुविभीतकम्।
कोलं भल्लातकं बिल्वम्, पारुषकफलानि च॥358॥
''सिद्धार्थाय महर्षये, सर्वलोकानुकम्पिने।
तञ्च सर्वं मया दत्तम्, विप्रसन्नेन चेतसा॥359॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् फलम् अददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥360॥
''सप्तपञ्चाशत्तमे कल्पे, एकज्झो नाम क्षत्रियः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥361॥

सुमेरू पर्वत और धरणी के सदृश सन्तोष वाले भगवान् समाधि से उठकर मेरे समीप भिक्षा के लिए उपस्थित हुए॥357॥

हरीतक (हरड़), आँवला, आम, जम्बु, विभीतक (बहेड़ा), कोल (रसभरी), भल्लातक (लोध), बेल और फारूस (फालसा) ॥358॥

लोक में सभी पर अनुकम्पा करने वाले सिद्धार्थ, महर्षि को अत्यधिक प्रसन्नमन से मेरे द्वारा उन फलों को प्रदान किया गया॥359॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो फल का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥360॥

यहाँ से 57 वें कल्प में एक एकज्झ नामक सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली क्षत्रिय हुआ॥361॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥362॥
इत्थं सुदं आयस्मा फलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
फलदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. पच्चुग्गमनियत्थेरअपदानं

''सीहं यथा वनचरं, निसभाजानियं यथा।
ककुधं विलसन्तंव, आगच्छन्तं नरासभं॥363॥
''सिद्धत्थं लोकपज्जोतं, सब्बलोकतिकिच्छकं।
अकासिं पच्चुग्गमनं, विप्पसन्नेन चेतसा॥364॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, पच्चुग्गच्छिं नरासभं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पच्चुग्गमने इदं फलं॥365॥
''सत्ततिंसे [सत्तवीसे (सी० स्या०)] इतो कप्पे, एको आसिं जनाधिपो।
सपरिवारोति नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥366॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥362॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् फलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सिंह यथा वनचरम्, नृषभाजानीयं यथा।
ककुधं विलसन्निव, आगच्छन्तं नरर्षभम्॥363॥
''सिद्धार्थं लोकप्रद्योतम्, सर्वलोकचिकित्सकम्।
अकार्षं प्रत्युद्गमनम्, विप्रसन्नेन चेतसा॥364॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, प्रत्युदगमं नरर्षभम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, प्रत्युद्गमने इदं फलम्॥365॥
''सप्तत्रिंशे इतः कल्पे, एक आसं जनाधिपः।
सपरिवारोति नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥366॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥362॥

इस प्रकार आयुष्मान् फलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

वनचारी सिंह समान, अच्छी नस्ल के घोड़े के समान तथा ककुध (ऊँचे पुट्ठों) वाले बैल के सदृश नरर्षभ मेरे समीप आए॥363॥

तब मैंने सर्वलोक चिकित्सक एवं लोक प्रकाशक सिद्धार्थ का अत्यधिक प्रसन्नमन से स्वागत किया॥364॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो प्रसन्नता पूर्वक स्वागत किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥365॥

यहाँ से 37 वें कल्प में एक सपरिवार नामक महाबलशाली एवं चक्रवर्ती राजा हुआ॥366॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥367॥

इत्थं सुदं आयस्मा पच्चुग्गमनियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पच्चुग्गमनियत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. एकपुप्फियत्थेरअपदानं

''दक्खिणम्हि दुवारम्हि, पिसाचो आसहं तदा।

अद्दसं विरजं बुद्धं, पीतरंसिंव भाणुमं॥368॥

''विपस्सिस्स नरग्गस्स, सब्बलोकहितेसिनो।

एकपुप्फं मया दिन्नं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥369॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥370॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥371॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकपुप्फियत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥367॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् प्रत्युद्गमनीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''दक्षिणे द्वारे, पिशाच आसमहं तदा।

अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, पीतरश्मीव भानुमान्॥368॥

''**विपश्यिने** नराग्राय, सर्वलोकहितैषिणे।

एकपुष्पं मया दत्तम्, द्विपदेन्द्राय तायिने॥369॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥370॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥371॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥367॥

इस प्रकार आयुष्मान् प्रत्युद्गमनीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पूर्व काल में मैं पिशाच था तब भानु के समान पीतरश्मि निर्मल बुद्ध को देखा॥368॥

नरों में अग्र, लोक में सभी के हितैषी उन द्विपदेन्द्र को मेरे द्वारा एक पुष्प प्रदान किया गया॥369॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प प्रदान किया था, उसी कर्म का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥370॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥371॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. मघवपुप्फियत्थेरअपदानं

''नम्मदानदिया तीरे, सयम्भू अपराजितो।

समाधिं सो समापन्नो, विप्पसन्नो अनाविलो॥372॥

''दिस्वा पसन्नसुमनो, सम्बुद्धं अपराजितं।

ताहं मघवपुप्फेन, सयम्भुं पूजयिं तदा॥373॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥374॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥375॥

इत्थं सुदं आयस्मा मघवपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

मघवपुप्फियत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. उपट्ठाकदायकत्थेरअपदानं

''रथियं पटिपज्जन्तं, आहुतीनं पटिग्गहं।

द्विपदिन्दं महानागं, लोकजेट्ठं नरासभं॥376॥

''नर्मदानद्यास्तीरे, स्वयम्भ्वपराजितः।

समाधिं सः समापन्नः, विप्रसन्न अनाविलः॥372॥

''दृष्ट्वा प्रसन्नसुमनाः, सम्बुद्धम् अपराजितम्।

तदाऽहं मघवपुष्पेन, स्वयम्भुवमपूपुजं तदा॥373॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूपुजम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥374॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥375॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् मघवपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''रथिनं प्रतिप्रद्यन्तम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्।

द्विपदिन्द्रं महानागम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥376॥

नर्मदा नदी के तट पर अपराजित, विप्रसन्न एवं निर्मल स्वयम्भू समाधि में संलग्न थे ॥372॥

तब प्रसन्नमन मैंने अपराजित स्वयम्भू सम्बुद्ध को देखकर मघव पुष्प से उनकी पूजा की ॥373॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥374॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥375॥

इस प्रकार आयुष्मान् मघवपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

रथ पर चढ़े हुए आहुतियों के ग्रहणकर्ता, द्विपदिन्द्र, महानाग, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ....॥376॥

''पक्कोसापिय तस्साहं, सब्बलोकहितेसिनो।
उपट्ठाको मया दिन्नो, सिद्धत्थस्स महेसिनो॥377॥
''पटिग्गहेत्वा [पटिग्गहेसि (क॰)] सम्बुद्धो, निय्यादेसि महामुनि [महाइसि (क॰)]।
उट्ठाय आसना तम्हा, पक्कामि पाचिनामुखो॥378॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, उपट्ठाकमदं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, उपट्ठानस्सिदं फलं॥379॥
''सत्तपञ्ञासितो कप्पे, बलसेनसनामको।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥380॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥381॥
इत्थं सुदं आयस्मा उपट्ठाकदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उपट्ठाकदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

''**प्रक्रुषापय्य** तस्मै अहम्, सर्वलोकहितैषिणे।
उपस्थाको मया दत्तः, सिद्धार्थाय महर्षये॥377॥
''प्रगृह्य सम्बुद्धः, **निरयातयत्/निरयासीत्** महामुनिः।
उत्थाय आसनात् तस्मात्, प्राक्रमीत् प्राचीनमुखः॥378॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, उपस्थाकमदां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, उपस्थानस्येदं फलम्॥379॥
''सप्तपञ्चाशत्तमे कल्पे, बलसेनसनामकः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥380॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥381॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उपस्थाकदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उन सभी लोकों के हितैषी, सिद्धार्थ, महर्षि को बुलवाकर मेरे द्वारा पीठिका प्रदान की गयी ॥377॥
महामुनि ने उसको ग्रहण कर उसका अनुमोदन किया और आसन से उठकर प्राचीनाभिमुख चले गये ॥378॥
यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो पीठिका प्रदान की थी, उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥379॥
यहाँ से 55 वें कल्प में एक बलसेन नामक सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली राजा हुआ ॥380॥
चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥381॥
इस प्रकार आयुष्मान् उपस्थाकदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

7. अपदानियत्थेरअपदानं

''अपदानं सुगतानं, कित्तयिंहं महेसिनं।
पादे च सिरसा वन्दिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥382॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, अपदानं पकित्तयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, कित्तनाय इदं फलं॥383॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥384॥
इत्थं सुदं आयस्मा अपदानियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
अपदानियत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. सत्ताहपब्बजितत्थेरअपदानं

''विपस्सिस्स भगवतो, सङ्घो सक्कतमानितो।
ब्यसनं मे अनुप्पत्तं, ञातिभेदो पुरे अहु॥385॥
''पब्बज्जं उपगन्त्वान, ब्यसनुपसमायहं।
सत्ताहाभिरतो तत्थ, सत्थुसासनकम्यता॥386॥

''अपदानं सुगतानाम्, अकीर्त्तयमहं **महर्षये**।
पादे च शिरसा अवन्दे, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥382॥
''द्विनवति इतः कल्पे, अपदानं प्राकीर्त्तयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, कीर्त्तनया इदं फलम्॥383॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥384॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् अपदानीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''विपश्यिनः भगवतः, सङ्घः सत्कृतमानितः।
व्यसनं मे अनुप्राप्तम्, ज्ञातिभेदः पुरा अभूत्॥385॥
''प्रव्रज्याम् उपगत्य, व्यसनोपशमायाहम्।
सप्ताहाभिरतस्तत्र, शास्तृशासनकम्यता॥386॥

सुगत महर्षि के जीवनचर्या की कीर्ति को मैंने कहा और उनके पैरों में शिर को रख कर प्रसन्नमन से दोनों हाथों से वन्दना की ॥382॥

यहाँ से 92 वें कल्प में जो सुगत महर्षि की जीवनचर्या कही थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥383॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥384॥

इस प्रकार आयुष्मान् अपदानीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पूर्व काल में विपश्यी भगवान् का एक सत्कृत मानित संघ था, तब मैं दुर्गति को प्राप्त अपने सगे-सम्बन्धियों से बिछड़ गया ॥385॥

दुर्गति को प्राप्त मैं प्रव्रज्या की कामना से शास्ता के शासन में सप्ताहभर वहाँ रहा ॥386॥

''एकनवुतितो कप्पे, यमहं पब्बजिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पब्बज्जाय इदं फलं॥387॥
''सत्तसट्ठिम्हितो कप्पे, सत्त आसुं महीपती।
सुनिक्खमाति ञायन्ति, चक्कवत्ती महब्बला॥388॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥389॥
इत्थं सुदं आयस्मा सत्ताहपब्बजितो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सत्ताहपब्बजितत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. बुद्धुपट्ठायिकत्थेरअपदानं

''वेटम्भिनीति [वेटम्बरीति (सी०), वेधम्भिनीति (स्या०)] मे नामं, पितुसन्तं [पिता'सन्तं (?)] ममं तदा।
मम हत्थं गहेत्वान, उपानयि महामुनिं॥390॥
''इमेमं उद्दिसिस्सन्ति, बुद्धा लोकग्गनायका।
तेहं उपट्ठिं सक्कच्चं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥391॥

''एकनवतितमे कल्पे, यमहं प्राव्रजं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, प्रव्रज्यया इदं फलम्॥387॥
''सप्तषष्ट्याम् इतः कल्पे, सप्त आसन् महीपतयः।
सुनिष्क्रमाति ज्ञायन्ते, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥388॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥389॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सप्ताहप्रव्रजितस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''वेटम्भिनी इति मम नाम, पितुः अन्तं मां तदा।
मम हस्तं गृहीत्वा, उपानयत् महामुनिम्॥390॥
''इमेमम् उद्दिश्यन्ति, बुद्धाः लोकाग्रनायकाः।
तेऽहम् उपास्थाम् सत्कृत्यम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥391॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो प्रव्रज्या ग्रहण की थी यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥387॥

यहाँ से 67 वें कल्प में सुनिष्क्रम नाम से जाने जाने वाले सात महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हूए ॥388॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥389॥

इस प्रकार आयुष्मान् सप्ताहप्रव्रजित स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय पिता के साथ रहता था, मेरा नाम वेटम्भिनी था, तब मेरा हाथ पकड़ कर मेरे पिता मुझे महामुनि के समीप ले गये ॥390॥

ये जो लोक के अग्र नायक बुद्ध हैं, उन्होंने मुझे नियम का उपदेश प्रदान किया और उनके समीप जाकर प्रसन्नमन से दोनों हाथों से उनका सत्कार किया ॥391॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, बुद्धे उपट्ठहिं [परिचरिं (सी॰ स्या॰)] तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, उपट्ठानस्सिदं फलं॥392॥

''तेवीसम्हि इतो कप्पे, चतुरो आसु खत्तिया।

समणुपट्ठाका नाम, चक्कवत्ती महब्बला॥393॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥394॥

इत्थं सुदं आयस्मा बुद्धुपट्ठायिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

बुद्धुपट्ठायिकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. पुब्बङ्गमियत्थेरअपदानं

''चुल्लासीतिसहस्सानि, पब्बजिम्ह अकिञ्चना।

तेसं पुब्बङ्गमो आसिं, उत्तमत्थस्स पत्तिया॥395॥

''सरागा सभवा [समोहा (स्या॰)] चेते, विप्पसन्नमनाविला।

उपट्ठहिंसु सक्कच्चं, पसन्ना सेहि पाणिभि॥396॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, बुद्धे उपास्थामहं/पर्यचरं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, उपस्थानस्येदं फलम्॥392॥

''त्रयोविंशत् इतः कल्पे, चत्वारः आस्म खत्रियाः।

श्रमणोपस्थाका नाम, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥393॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥394॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् बुद्धोपस्थायिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''चतुराशीतिसहस्राणि, प्राव्रजम् अकिञ्चना।

तेषां पूर्वाङ्गम आसम्, **उत्तमार्थस्य प्राप्तयाः**॥395॥

''सरागाः सभवाः चेते, विप्रसन्नमनाविलाः।

उपातिष्ठन् सत्कृत्यम्, प्रसन्नाः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥396॥

यहाँ से 31वें कल्प में जो बुद्ध की परिचर्या की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥392॥

यहाँ से 23 वें कल्प में श्रमणोपस्थाक नामक चक्रवर्ती, महाबलशाली चार क्षत्रिय हुआ ॥393॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥394॥

इस प्रकार आयुष्मान् बुद्धोपस्थायिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

84 हजार (वर्ष) पूर्व मैं अकिञ्चन और उनका पूर्वगामी था तब मैंने उत्तम अर्थ (परमार्थ) की प्राप्ति के लिए प्रव्रज्या ग्रहण की ॥395॥

राग से युक्त, भाव से युक्त, प्रसन्न, स्वच्छ मन वाले ये दोनों हाथों से सत्कृत्य करने के लिए उपस्थित हुए ॥396॥

''खीणासवा वन्तदोसा, कतकिच्चा अनासवा।
फरिंसु मेत्तचित्तेन, सयम्भू अपराजिता॥397॥
''तेसं उपट्ठहित्वान, सम्बुद्धानं पतिस्सतो।
मरणञ्च अनुप्पत्तो, देवत्तञ्च अगम्हसे॥398॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सीलमनुपालयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सञ्ञमस्स इदं फलं॥399॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥400॥
इत्थं सुदं आयस्मा पुब्बङ्गमियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पुब्बङ्गमियत्थेरस्सापदानं दसमं।
पण्णदायकवग्गो एकूनतिंसतिमो।

तस्सुद्दानं – पण्णं फलं पच्चुग्गमं, एकपुप्फि च मघवा।
उपट्ठाकापदानञ्च , पब्बज्जा बुद्धुपट्ठाको।
पुब्बङ्गमो च गाथायो, अट्ठतालीस कित्तिता॥

''क्षीणास्रवाः वन्तदोषाः, कृतकृत्या अनास्रवाः।
स्फुरन् मित्रचित्तेन, स्वयम्भू अपराजिताः॥397॥
''तेषामुपस्थाप्य, सम्बुद्धानां प्रतिश्रितः।
मरणञ्च अनुप्राप्तः, देवत्वञ्च **अगमामहि**॥398॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् शीलमन्वपालयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, संयमस्य इदं फलम्॥399॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥400॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पूर्वाङ्गमिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् – पर्णं फलं प्रत्युद्गमम्, एकपुष्पी च मघवन्।
उपस्थाकापदानञ्च , प्रव्रज्या बुद्धोपस्थाकः।
पुर्वाङ्गमश्च गाथा, अष्टचत्वारिंशत् कीर्त्तिता॥

क्षीणास्रव, दोष से रहित, कृतकृत्य, अनास्रव मित्रचित्त में रत स्वयम्भू उन अपराजित.... ॥397॥

विचारवान् सम्बुद्धों की सेवा कर मैंने मृत्योपरान्त देवत्व को प्राप्त किया ॥398॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो शील का पालन किया था, यह उस संयम का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता। ॥399॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥400॥

इस प्रकार आयुष्मान् पूर्वाङ्गमिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- पर्ण, फल पच्चुग्गम, एकपुष्फि मघवा उगट्ठाक अपदानि, प्रव्रज्या, बुद्धउपट्ठाक, और पुब्बङ्गम् अड़तालीस गाथाओं की कृति हैं।

30. चितकपूजकवग्गो

1. चितकपूजकत्थेरअपदानं

पालि- ''अजितो नाम नामेन, अहोसिं ब्राह्मणो तदा।
आहुतिं यिट्ठुकामोहं, नानापुप्फं समानयिं॥401॥
''जलन्तं चितकं दिस्वा, सिखिनो लोकबन्धुनो।
तञ्च पुप्फं समानेत्वा, चितके ओकिरिं अहं॥402॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥403॥
''सत्तवीसे [सत्ततिंसे (क॰)] इतो कप्पे, सत्तासुं मनुजाधिपा।
सुपज्जलितनामा ते, चक्कवत्ती महब्बला॥404॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥405॥
चितकपूजकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''अजितो नाम नाम्ना, अभूवं ब्राह्मणस्तदा।
आहुतिमिष्टकामोऽहम्, नानापुष्पाणि समानयम्॥401॥
''जलन्तं चितकं दृष्ट्वा, शिखिने लोकबन्धवे।
तञ्च पुष्पं समानीय, चितके अवाकिरम् अहम्॥402॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥403॥
''सप्तविंशे इतः कल्पे, सप्तासन् मनुजाधिपाः।
सुप्रज्वलितनामा ते, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥404॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥405॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् चितकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- उस समय मैं अजित नाम से ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ, तब आहुति देने की कामना रखने वाला मैं विविध पुष्पों को लाकर..... ॥401॥

शिखी लोकबन्धु की जलती हुई चिता को देखकर उन पुष्पों को लाकर चिता के चारों ओर बिखेर दिया॥402॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित कर बुद्धपूजा की थी यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥403॥

यहाँ से 27 वें कल्प में सुप्रज्वलित नाम से चक्रवर्ती, महाबलशाली सात (बार) राजा हुआ ॥404॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥405॥

इस प्रकार आयुष्मान् चितकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. पुप्फधारकत्थेरअपदानं

''वाकचीरधरो आसिं, अजिनुत्तरवासनो।
अभिञ्ञा पञ्च निब्बत्ता, चन्दस्स परिमज्जको॥406॥
''विपस्सिं लोकपज्जोतं, दिस्वा अभिगतं ममं।
पारिच्छत्तकपुप्फानि, धारेसिं सत्थुनो अहं॥407॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, धारणाय इदं फलं॥408॥
''सत्तासीतिम्हितो कप्पे, एको आसिं महीपति।
समन्तधारणो नाम, चक्कवत्ती महब्बलो॥409॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥410॥
इत्थं सुदं आयस्मा पुप्फधारको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पुप्फधारकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''वाकचीरधर आसम्, अजिनोत्तरवासनः।
अभिज्ञा पञ्च निर्वृता, चन्द्रस्य परिमार्जकः॥406॥
''विपश्यिनं लोकप्रद्योतम्, दृष्ट्वा अभिगतं मम।
पारिच्छत्रकपुष्पाणि, अधार्षं शास्त्रे अहम्॥407॥
''एकनवतितमे कल्पे, यन्पुष्पमभ्यपूपुजम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, धारणाया इदं फलम्॥408॥
''सप्ताशीतितमे कल्पे, एक आसं महीपतिः।
समन्तधारणो नाम, चक्रवर्त्ती महाबलः॥409॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥410॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पुष्पधारकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

वल्कल चीवर धारी मैं अजिनोत्तर पर वास करने वाला, पाँच अभिज्ञाओं से निर्वृत चन्द्र के परिमार्जक... ॥406॥

लोक को प्रकाशित करने वाले विपश्यी, भगवान् के समीप जाकर मैंने शास्ता पर पारिच्छत्रकपुष्प को चढ़ाया ॥407॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित कर पूजा किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥408॥

यहाँ से 87 वें कल्प में एक समन्तधारण नाम का चक्रवर्ती, महाबलशाली राजा हुआ ॥409॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥410॥

इस प्रकार आयुष्मान् पुष्पधारक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. छत्रदायकस्थविरापदानम्

''पुत्तो मम पब्बजितो, कासायवसनो तदा।
सो च बुद्धत्तं सम्पत्तो, निब्बुतो लोकपूजितो॥411॥
''विचिनन्तो सकं पुत्तं, अगमं पच्छतो अहं।
निब्बुतस्स महन्तस्स, चितकं अगमासहं॥412॥
''पग्गय्ह अञ्जलिं तत्थ, वन्दित्वा चितकं अहं।
सेतच्छत्तञ्च पग्गय्ह, आरोपेसिं अहं तदा॥413॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं छत्तमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, छत्तदानस्सिदं फलं॥414॥
''पञ्चवीसे इतो कप्पे, सत्त आसुं जनाधिपा।
महारहसनामा ते, चक्कवत्ती महब्बला॥415॥

''पुत्रो मम प्रव्रजितः, काषायवसनस्तदा।
सश्च बुद्धत्त्वं सम्प्राप्तः, निर्वृतो लोकपूजितः॥411॥
''**विचिन्वन्** स्वकं पुत्रम्, अगमं पृष्टतोऽहम्।
निर्वृतस्य महान्तस्य, चितकम् अगमाम्यहम्॥412॥
''प्रगृह्य अञ्जलिं तत्र, वन्दित्वा चितकमहम्।
श्वेतच्छत्रञ्च प्रगृह्य, आरोपयमहं तदा॥413॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यच्छत्रमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, छत्रदानस्येदं फलम्॥414॥
''पञ्चविंशे इतः कल्पे, सप्त आस्म जनाधिपाः।
महारहसनामा ते, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥415॥

तब काषाय वस्त्र धारी मेरा प्रव्रजित पुत्र बुद्धत्व को प्राप्त निर्वृत हो लोक में पूजित हुआ ॥411॥

अपने पुत्र की विवेचना करते हुए मैं उसके पीछे-पीछे गया और उन निर्वृत की महान् चिता के समीप पहुँच गया ॥412॥

वहाँ अञ्जलि बद्ध होकर मैंने चिता की वन्दना की और श्वेत छत्र को ग्रहण कर उस पर अभ्यर्पित किया ॥413॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो छत्र अभ्यर्पित किया था यह उस छत्रदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥414॥

यहाँ से 25 वें कल्प में महारहस नामक सात महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुए थे॥415॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥416॥

इत्थं सुदं आयस्मा छत्तदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

छत्तदायकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. सद्दसञ्ञकत्थेरअपदानं

''अनुग्गतम्हि आदिच्चे, पनादो [पसादो (स्या॰ अट्ठ॰)] विपुलो अहु।

बुद्धसेट्ठस्स लोकम्हि, पातुभावो महेसिनो॥417॥

''घोस [सद्द (सी॰ स्या॰)] मस्सोसहं तत्थ, न च पस्सामि तं जिनं।

मरणञ्च अनुप्पत्तो, बुद्धसञ्ञमनुस्सरिं॥418॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥419॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥420॥

इत्थं सुदं आयस्मा सद्दसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सद्दसञ्ञकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥416॥

इत्थंस्विद् आयुष्मान् छत्रदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''अनुद्गते आदित्ये, **प्रनादो** विपुलोऽभूत्।

बुद्धश्रेष्ठस्य लोके, प्रादुर्भावो महर्षेः॥417॥

''घोषमश्रौषमहं तत्र, न च पश्यामि तं जिनम्।

मरणञ्च अनुप्राप्तः, बुद्धसंज्ञामन्वस्मरम्॥418॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥419॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥420॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् शब्दसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥416॥

इस प्रकार आयुष्मान् छत्रदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय सूर्य-उदय से पहले तीव्र घोष हुआ कि लोक में बुद्धश्रेष्ठ, महर्षि का प्रादुर्भाव हुआ ॥417॥

वहाँ मैंने महान् घोष को सुना पर जिन को नहीं देख मृत्यु के समय मैंने बुद्ध संज्ञा का स्मरण किया ॥418॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो संज्ञा का लाभ प्राप्त किया था यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥419॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥420॥

इस प्रकार आयुष्मान् शब्दसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. गोसीसनिक्खेपकत्थेरअपदानं

''आरामद्वारा निक्खम्म, गोसीसं सन्थतं मया।
अनुभोमि सकं कम्मं, पुब्बकम्मस्सिदं फलं॥421॥
''आजानिया वातजवा, सिन्धवा सीघवाहना।
अनुभोमि सब्बमेतं, गोसीसस्स इदं फलं॥422॥
''अहो कारं परमकारं, सुखत्ते सुकतं मया।
सङ्घे कतस्स कारस्स, न अञ्ञं कलमग्घति॥423॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सीसं सन्थरिं अहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सन्थरस्स इदं फलं॥424॥
''पञ्चसत्ततिकप्पम्हि, सुप्पतिट्ठितनामको।
एको आसिं महातेजो, चक्कवत्ती महब्बलो॥425॥

''आरामद्वारात् निष्क्रम्य, गोशीर्षं संस्तृतं मया।
अनुभवामि स्वकं कर्म, पूर्वकर्मण इदं फलम्॥421॥
''आजानीयाः वातजवाः, सैन्धवाः शीघ्रवाहनाः।
अनुभवामि सर्वान् एतान्, गोशीर्षस्य इदं फलम्॥422॥
''अहो कार्यं परमकार्यम्, **सुक्षत्राय** सुकृतं मया।
सङ्घाय कृतस्य कार्यस्य, न अन्यां कलामर्हति॥423॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं शीसं समस्तरम् अहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, संस्तरस्य इदं फलम्॥424॥
''पञ्चसप्ततितमे कल्पे, सुप्रतिष्ठितनामकः।
एक आसम् महातेजः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥425॥

आरामद्वार से निकलकर मैंने चन्दन (गोशीर्ष) का लेपन किया और अपने कर्मों का अनुभव किया, यह मेरे पूर्व के कर्म का ही सुपरिणाम है ॥421॥

अच्छी नस्ल का घोड़ा, वायुवेग के समान चलने वाला शीघ्र वाहन, और सैन्धव घोड़ा इन सभी का मैं अनुभव करता हूँ, यह गोशीर्ष लेपन का ही सुपरिणाम है ॥422॥

मेरे द्वारा शासन के लिए किया गया कार्य कितना श्रेष्ठ है कि मेरे इस कार्य की अन्य कोई कला मात्र भी बराबरी नहीं कर सकता है ॥423॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मेरे द्वारा जो चन्दन का लेपन किया गया, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥424॥

यहाँ से 75 वें कल्प में एक सुप्रतिष्ठित नामक महाबलशाली, महातेजस्वी चक्रवर्ती राजा हुआ ॥425॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥426॥
इत्थं सुदं आयस्मा गोसीसनिक्खेपको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
गोसीसनिक्खेपकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. पादपूजकत्थेरअपदानं

''पब्बते हिमवन्तम्हि, अहोसिं किन्नरो तदा।
अद्दसं विरजं बुद्धं, पीतरंसिंव भाणुमं॥427॥
''उपेतं तमहं [उपेतोपि तदा (स्या०), उपेसिं तमहं (?)] बुद्धं, विपस्सिं लोकनायकं।
चन्दनं तगरञ्चापि, पादे ओसिञ्चहं तदा॥428॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पादं अभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पादपूजायिदं फलं॥429॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥430॥
इत्थं सुदं आयस्मा पादपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पादपूजकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥426॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् गोशीर्षनिक्षेपकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''पर्वते हिमवति, अभूवम् किन्नरस्तदा।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, पीतरश्मिरिव भानुमान्॥427॥
''उपेतं तमहं बुद्धम्, **विपश्यिनं** लोकनायकम्।
चन्दनं तगरञ्चापि, पादौ अवासिञ्चमहं तदा॥428॥
''एकनवतितमे कल्पे, यौ पादौ अभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पादपूजाया इदं फलम्॥429॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥430॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पादपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥426॥

इस प्रकार आयुष्मान् गोशीर्षनिक्षेपक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं हिमवन्त पर्वत के समीप किन्नर था तब मैंने पीली रश्मियों वाले सूर्य के समान निर्मल बुद्ध को देखा ॥427॥

विपश्यी लोक नायक के पास गया। तब मैंने सुगन्धित चन्दन जल से उनके पैरों को सींचा ॥428॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो बुद्ध के पैरों की पूजा की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥429॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥430॥

इस प्रकार आयुष्मान् पादपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

7. देसकित्तकत्थेरअपदानं

''उपसालकनामोहं, अहोसिं ब्राह्मणो तदा।
काननं वनमोगाळ्हं, लोकजेट्ठं नरासभं॥431॥
''दिस्वान वन्दिं पादेसु, लोकाहुतिपटिग्गहं।
पसन्नचित्तं मं ञत्वा, बुद्धो अन्तरधायथ॥432॥
''कानना अभिनिक्खम्म, बुद्धसेट्ठमनुस्सरिं।
तं देसं कित्तयित्वान, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥433॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं देसमभिकित्तयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, कित्तनाय इदं फलं॥434॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥435॥
इत्थं सुदं आयस्मा देसकित्तको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

देसकित्तकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

''उपसालकनामोऽहम्, अभूवं ब्राह्मणस्तदा।
काननं वनम् अवगाह्यम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥431॥
''दृष्ट्वा अवन्दे पादेषु, लोकाहुतिप्रतिग्रहम्।
प्रसन्नचित्तं मां ज्ञात्वा, बुद्धः **अन्तरध्यायत**॥432॥
''काननात् अभिनिष्क्रम्य, बुद्धश्रेष्ठमन्वस्मरम्।
तद्देशं कीर्त्तयित्वा, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥433॥
''द्विनवतितमे कल्पे, यद्देशमभ्यकीर्त्तयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, कीर्त्तनया इदं फलम्॥434॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥435॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् देशकीर्त्तिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उस समय मैं उपसालक नाम का ब्राह्मण हुआ तब घने जंगल में प्रवेश कर लोकज्येष्ठ नरर्षभ को देखा ॥431॥

लोक में आहुतियों के ग्रहणकर्ता को देखकर मैंने उनके चरणों की वन्दना की और मुझे प्रसन्नचित्त जानकर बुद्ध अन्तर्हित हो गये ॥432॥

जंगल से निकलकर मैंने बुद्ध श्रेष्ठ का अनुस्मरण किया और उस देश (स्थान) में उनकी कीर्ति को कहकर कल्पों तक स्वर्ग में प्रसन्नता का अनुभव किया ॥433॥

अब से 92 वें कल्प में क्षेत्र में मैंने जो कीर्ति गान किया था, यह उस कीर्ति का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥434॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥435॥

इस प्रकार आयुष्मान् देशकीर्तिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

8. सरणगमनियत्थेरअपदानं

''पब्बते हिमवन्तम्हि, अहोसिं लुद्दको तदा।
विपस्सिं अद्दसं बुद्धं, लोकजेट्ठं नरासभं॥436॥
''उपासित्वान सम्बुद्धं, वेय्यावच्चमकासहं।
सरणञ्च उपागच्छिं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥437॥
''एकनवुतितो कप्पे, सरणं उपगच्छहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सरणागमनप्फलं॥438॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥439॥
इत्थं सुदं आयस्मा सरणगमनियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सरणगमनियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. अम्बपिण्डियत्थेरअपदानं

''रोमसो नाम नामेन, दानवो इति विस्सुतो।
अम्बपिण्डी मया दिन्ना [अम्बपिण्डो मया दिन्नो (स्या॰)], विपस्सिस्स महेसिनो॥440॥

''पर्वते हिमवति, अभूवं लुब्धकस्तदा।
विपश्यिनम् अद्राक्षं बुद्धम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥436॥
''उपास्य सम्बुद्धम्, वैय्यावृत्यमकार्षमहम्।
शरणञ्च उपागच्छम्, द्विपदेन्द्रस्य तायिनः॥437॥
''एकनवतितमे कल्पे, शरणम् उपागच्छमहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, शरणागमनफलम्॥438॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥439॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् शरणगमनीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''रोमसो नाम नाम्ना, दानव इति विश्रुतः।
आम्रपिण्डी मया दत्ता, **विपश्यिने** महर्षये॥440॥

हिमालय पर्वत के समीप मैं एक शिकारी था, तब वहाँ मैंने लोकज्येष्ठ, नरर्षभ, विपश्यी बुद्ध को देखा ॥436॥
उस द्विपदेन्द्र के शरण में जाकर मैंने सम्बुद्ध की सेवा का कार्य किया ॥437॥
अब से 91 वें कल्प में बुद्ध की शरण में गया था, यह उस शरणगमन का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥438॥
चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥439॥
इस प्रकार आयुष्मान् शरणगमनीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-
एक समय मैं रोमस नाम का विशेषतया जाना जाने वाला दानव था, तब मेरे द्वारा विपश्यी, महर्षि को आम्रपिण्ड प्रदान किया गया ॥440॥

''एकनवुतितो कप्पे, यमम्बमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अम्बदानस्सिदं फलं॥441॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥442॥

इत्थं सुदं आयस्मा अम्बपिण्डियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अम्बपिण्डियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. अनुसंसावकत्थेरअपदानं

''पिण्डाय चरमानाहं, विपस्सिमद्दसं जिनं।

उळुङ्गभिक्खं पादासिं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥443॥

''पसन्नचित्तो सुमनो, अभिवादेसहं तदा।

अनुसंसावयिं बुद्धं, उत्तमत्थस्स पत्तिया॥444॥

''एकनवुतितो कप्पे, अनुसंसावयिं अहं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अनुसंसावना फलं॥445॥

''एकनवतितमे कल्पे, यमाम्रददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, आम्रदानस्येदं फलम्॥441॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥442॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् आम्रपिण्डीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''पिण्डाय चरमाणोऽहम्, विपश्यिनम् अद्राक्षं जिनम्।

उळुङ्गभिक्षां प्राददाम्, द्विपदिन्द्राय तायिने॥443॥

''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, अभ्यवादयमहं तदा।

अनुसमश्रावयं बुद्धम्, उत्तमार्थस्य **प्राप्तयाः**॥444॥

''एकनवतितमे कल्पे, अनुसमश्रावयम् अहम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, **अनुसंश्रावणा** फलम्॥445॥

अब से 91 वें कल्प में मैंने जो आम्र प्रदान किया था, यह उस आम्रदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥441॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥442॥

इस प्रकार आयुष्मान् आम्रपिण्डिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पिण्डचारिका करते हुए उस द्विपदिन्द्र, विपश्यी, जिन को मैंने देखा और करछुल भर भिक्षा प्रदान किया ॥443॥

मैंने प्रसन्नचित्त और सौमनस्य पूर्वक उनका अभिवादन किया और उत्तम अर्थ की प्राप्ति के लिए उनकी अनुश्रवण किया ॥444॥

अब से 91 वें कल्प में मैंने जो अनुश्रवण किया था, यह उसी अनुश्रवण का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥445॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥446॥

इत्थं सुदं आयस्मा अनुसंसावको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तस्सुद्दानं – चितकं पारिच्छत्तो च, सद्दगोसीससन्थरं।
पादो पदेसं सरणं, अम्बो संसावकोपि च।
अट्ठतालीस गाथायो, गणितायो विभाविभि॥

अथ वग्गुद्दानं – कणिकारो हत्थिददो, आलम्बणुदकासनं।
तुवरं थोमको चेव, उक्खेपं सीसुपधानं॥
पण्णदो चितपूजी च, गाथायो चेव सब्बसो।
चत्तारि च सतानीह, एकपञ्ञासमेव च॥
पञ्चवीससता सब्बा, द्वासत्तति तदुत्तरि।
तिसतं अपदानानं, गणिता अत्थदस्सिभि॥

कणिकारवग्गदसकं।
ततियसतकं समत्तं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥446॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अनुशंसावकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम्– चितकं पारिच्छत्रश्च, शब्दगोशीर्षसंस्तरम्।
पादः प्रदेशं शरणम्, आम्रः संश्रावकोऽपि च।
अष्टचत्वारिंशत् गाथा, गणिता विभाविभिः॥

अथ वर्गोदानं – कणिकारो हस्तिदः, आलम्बनोदकासनम्।
तुवरं स्तोमकश्चैव, उत्क्षेपं शीर्षोपधानम्॥
पर्णदश्चितपूजी च, गाथा चैव सर्वशः।
चतस्रः च **सतानीह**, एकपञ्चाशमेव च॥
पञ्चविंशशता सर्वाः, द्विसप्तति **तदुदतरत्**।
त्रिशतम् अपदानानाम्, गणिता अर्थदर्शिभिः॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥446॥

इस प्रकार आयुष्मान् अनुशंसावक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- चितक, पारिच्छत्र शब्द गोसीससन्थर, पाद पदेस, सरण अम्ब और संसावक। यहाँ पर अड़तालिस गाथाओं की विभागवार गणना है।

31. पदुमकेसरवग्गो

1. पदुमकेसरियत्थेरअपदानं

पालि- ''इसिसङ्घे अहं पुब्बे, आसिं मातङ्गवारणो।
महेसीनं पसादेन, पद्मकेसरमोकिरिं॥447॥

''पच्चेकजिनसेट्ठेसु, धुतरागेसु तादिसु।
तेसु चित्तं पसादेत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥448॥

''एकनवुतितो कप्पे, केसरं ओकिरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥449॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥450॥

इत्थं सुदं आयस्मा पदुमकेसरियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पदुमकेसरियत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- ''ऋषिसङ्घे अहं पूर्वे, अभूवं मातङ्गवारणः।
महर्षीणां प्रसादेन, पद्मकेशरम् अवाकिरम्॥447॥

''प्रत्येकजिनश्रेष्ठेषु, धुतरागेषु **तायिषु**।
तेषु चित्तं प्रसाद्य, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥448॥

''एकनवतितमे कल्पे, केशरम् अवाकिरं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥449॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥450॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पद्मकेशरीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- पूर्व में मैं ऋषि के संघ में मातङ्ग नाम का हाथी था तब मैंने महर्षि के अनुग्रह से पद्मकेशर को फैला दिया ॥447॥

रागमुक्त, प्रत्येक-बुद्ध-श्रेष्ठ में अपने चित्त को प्रसन्न कर मैंने कल्प भर स्वर्ग में मोदन किया ॥448॥

अब से 91 वें कल्प में मैंने जो केशर फैलाया था, यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥449॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥450॥

इस प्रकार आयुष्मान् पद्मकेशरीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

2. सब्बगन्धियत्थेरअपदानं

''गन्धमालं मया दिन्नं, विपस्सिस्स महेसिनो।
अदासिं उजुभूतस्स, कोसेय्यवत्थमुत्तमं॥451॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं वत्थमददिं [गन्धमददिं (स्या॰)] पुरे।
दुग्गतिं नाभिजानामि, गन्धदानस्सिदं फलं॥452॥
''इतो पन्नरसे कप्पे, सुचेळो नाम खत्तियो।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥453॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥454॥
इत्थं सुदं आयस्मा सब्बगन्धियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सब्बगन्धियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. परमन्नदायकत्थेरअपदानं

''कणिकारंव जोतन्तं, उदयन्तंव भाणुमं।
विपस्सिं अद्दसं बुद्धं, लोकजेट्ठं नरासभं॥455॥

''गन्धमालां मया दत्ता, विपश्यिने महर्षये।
अददाम् ऋजुभूताय, कौशेयवस्त्रमुत्तमम्॥451॥
''एकनवतितमे कल्पे, यद् वस्त्रमददां पुरे।
दुर्गतिं नाभिजानामि, गन्धदानस्येदं फलम्॥452॥
''इतः पञ्चदशे कल्पे, सुचैलो नाम क्षत्रियः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥453॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥454॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सर्वगन्धीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''कर्णिकारमिव द्योतन्तम्, उदयन्निव भाणुमान्।
विपश्यिनम् अद्राक्षं बुद्धम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥455॥

सीधे खड़े हुए विपश्यी, महर्षि को मेरे द्वारा उत्तम कौशेयवस्त्र और गन्धमाला प्रदान किया गया ॥451॥
अब से 91 वें कल्प पूर्व मैंने जो वस्त्र प्रदान किया था, यह उस गन्धदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥452॥
यहाँ से 15 वें कल्प में एक सुचैल नाम का सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली चक्रवर्ती क्षत्रिय हुआ ॥453॥
चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥454॥
इस प्रकार आयुष्मान् सर्वगन्धिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-
कणिकार फूल और उदित हुए सूर्य के समान प्रकाशमान लोकज्येष्ठ, नरर्षभ, विपश्यी बुद्ध को देखा ॥455॥

''अञ्जलिं पग्गहेत्वान, अभिनेसिं सकं घरं।

अभिनेत्वान सम्बुद्धं, परमन्नमदासहं॥456॥

''एकनवुतितो कप्पे, परमन्नमदिं [परमन्नं ददिं (सी॰), परमन्नमदं (स्या॰)] तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, परमन्नस्सिदं फलं॥457॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥458॥

इत्थं सुदं आयस्मा परमन्नदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

परमन्नदायकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. धम्मसञ्ञकत्थेरअपदानं

''विपस्सिनो भगवतो, महाबोधिमहो अहु।

रुक्खट्ठस्सेव सम्बुद्धो, [रुक्खट्ठेयेव सम्बुद्धे (सी॰), लोकजेट्ठो नरासभो॥459॥

''भगवा तम्हि समये, भिक्खुसङ्घपुरक्खतो।

चतुसच्चं पकासेति, वाचासभिमुदीरयं॥460॥

''अञ्जलिं प्रगृह्य, अभ्यनयं स्वकं गृहम्।

अभिनीय सम्बुद्धम्, परमन्नमदामहम्॥456॥

''एकनवतितमे कल्पे, परमन्नमदां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, परमन्नस्येदं फलम्॥457॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥458॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् परमन्नदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''विपश्यिनो भगवतः, महाबोधिमहोऽभूत्।

वृक्षस्थ इव सम्बुद्धः, लोकज्येष्ठो नरर्षभः॥459॥

''भगवान् तस्मिन् समये, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतः।

चतुर्सत्यं प्रकाशयति, वाचम् आर्षभीमुदैरयम्॥460॥

अञ्जलिबद्ध होकर मैं सम्बुद्ध को अपने घर में लाया और उन्हें लाकर परम अन्न का दान किया ॥456॥

अब से 91 वें कल्प में मैंने जो परम अन्न का दान दिया था यह उस परम अन्नदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥457॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥458॥

इस प्रकार आयुष्मान् परमन्नदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

वृक्ष के सदृश लोकज्येष्ठ, नरर्षभ, विपश्यी, भगवान् की महाबोधि हुई ॥459॥

उस समय भिक्षुसंघ से पुरस्कृत भगवान् ने चार आर्य सत्यों का प्रकाशन करते आर्षभ वचनोंद्वार किया.. ॥460॥

''सङ्खित्तेन च देसेन्तो, वित्थारेन च देसयं [देसयि (स्या॰), भासति (क॰)]।
विवट्टच्छदो सम्बुद्धो, निब्बापेसि महाजनं॥461॥
''तस्साहं धम्मं सुत्वान, लोकजेट्ठस्स तादिनो।
वन्दित्वा सत्थुनो पादे, पक्कामिं उत्तरामुखो॥462॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं धम्ममसुणिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, धम्मसवस्सिदं फलं॥463॥
''तेत्तिंसम्हि इतो कप्पे, एको आसिं महीपति।
सुतवा नाम नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥464॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥465॥
इत्थं सुदं आयस्मा धम्मसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
धम्मसञ्ञकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''सङ्क्षिप्तेन च देशयन्, विस्तरेण चादेशयम्।
विवृत्तच्छदः सम्बुद्धः, निरवापयन् महाजनम्॥461॥
''तस्याहं धर्म श्रुत्वा, लोकज्येष्ठस्य तायिनः।
वन्दित्वा शास्त्रे पादौ, प्राक्रामम् उत्तरमुखः॥462॥
''एकनवतितमे कल्पे, यं धर्ममशृणवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, धर्मश्रवणस्येदं फलम्॥463॥
''त्रयस्त्रिंशे इतः कल्पे, एक आसं महीपतिः।
श्रुतवा नाम नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥464॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥465॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् धर्मसङ्ज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

भगवान् ने संक्षिप्त में देशना करते हुए विस्तार से बतलाया और उत्तरोत्तर कल्पों में महाजनों को निर्वाण प्राप्त कराया॥461॥

उन लोकज्यष्ठ के धर्म को सुनकर मैंने उनके चरणों की वन्दना की और उत्तरमुख होकर चला गया ॥462॥

अब से 91 वें कल्प में जो धर्म सुना था, यह उस धर्मश्रवण का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥463॥

यहाँ से 33 वें कल्प में एक श्रुतवा नामक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ ॥464॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥465॥

इस प्रकार आयुष्मान् धर्मसङ्ज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. फलदायकत्थेरअपदानं

''भागीरथीनदीतीरे, अहोसि अस्समो तदा।
तमहं अस्समं गच्छिं, फलहत्थो अपेक्खवा॥466॥
''विपस्सिं तत्थ अद्दक्खिं, पीतरंसिंव भाणुमं।
यं मे अत्थि फलं सब्बं, अदासिं सत्थुनो अहं॥467॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं फलं अददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥468॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥469॥
इत्थं सुदं आयस्मा फलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
फलदायकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. सम्पसादकत्थेरअपदानं

'''नमो ते बुद्ध वीरत्थु, विप्पमुत्तोसि सब्बधि।
ब्यसनम्हि [ब्यसनं हि (सी°)] अनुप्पत्तो, तस्स मे सरणं भव'॥470॥

''भागीरथीनदीतीरे, अभवत् आश्रमस्तदा।
तदाऽहम् आश्रमम् अगमम्, फलहस्त अपेक्षावान्॥466॥
''विपश्यिनं तत्र अद्राक्षम्, पीतरश्मिरिव भाणुमान्।
यन्मे अस्ति फलं सर्वम्, अददां शास्त्रे अहम्॥467॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् फलम् अददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥468॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥469॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् फलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
'''नमस्ते बुद्ध वीरस्तु, विप्रमुक्तोऽसि सर्वधा।
व्यसने अनुप्राप्तः, तस्य मे शरणं भव'॥470॥

उस समय भागीरथी नदी के तट पर आश्रम स्थित था, तब अपेक्षावान् मैं हाथ में फल ग्रहण कर आश्रम में गया ॥466॥

सूर्य के समान पीतरश्मि युक्त विपश्यी को वहाँ देखा और जो मेरे पास फल था, वह सब शास्ता को प्रदान किया ॥467॥

अब से 91 वें कल्प में मैंने जो फल प्रदान किया था, यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥468॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥469॥

इस प्रकार आयुष्मान् फलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हे बुद्ध वीर! आपको नमस्कार है, आप सर्वथा विमुक्त हैं। मैं व्यसन में डूबा हूँ, अतः मेरी शरण बनें॥470॥

''सिद्धत्थो तस्स ब्याकासि, लोके अप्पटिपुग्गलो।
'महोदधिसमो सङ्घो, अप्पमेय्यो अनुत्तरो॥471॥
'''तत्थ त्वं विरजे खेत्ते, अनन्तफलदायके।
सङ्घे चित्तं पसादेत्वा, सुबीजं वाप [चापि (सी॰), वापि (स्या॰)] रोपय॥472॥
''इदं वत्वान सब्बञ्ञू, लोकजेट्ठो नरासभो।
ममेव अनुसासित्वा, वेहासं नभमुग्गमि॥473॥
''अचिरं गतमत्तम्हि, सब्बञ्ञुम्हि नरासभे।
मरणं समनुप्पत्तो, तुसितं उपपज्जहं॥474॥
''तदाहं विरजे खेत्ते, अनन्तफलदायके।
सङ्घे चित्तं पसादेत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥475॥

''सिद्धार्थः तस्य व्याकार्षीत्, लोके अप्रतिपुद्गलः।
'महोदधिसमस्सङ्घः, अप्रमेय अनुत्तरः॥471॥
'''तत्र त्वं विरजे क्षेत्रे, अनन्तफलदायके।
सङ्घे चित्तं प्रसाद्य, सुबीजं वा अपि **रोपय**॥472॥
''इदम् उक्त्वा सर्वज्ञः, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
मामेव अनुशास्य, वैहायसं नभस्युदगमत्॥473॥
''अचिरं गतमात्रे, सर्वज्ञे नरर्षभे।
मरणं समनुप्राप्तः, तुषितम् उपपद्येऽहम्॥474॥
''तदाऽहं विरजे क्षेत्रे, अनन्तफलदायके।
सङ्घे चित्तं प्रसाद्य, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥475॥

लोक के अप्रतिम पुद्गल सिद्धार्थ ने उसको कहा की ये संघ महोदधि के समान अप्रमेय, अनुत्तर है ॥471॥

वहाँ तुम निर्मल एवं अनन्तफलदायक क्षेत्र में अपने चित्त को संघ में प्रसादित कर सुबीज का रोपण करो ॥472॥

यह कह कर सर्वज्ञ, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ मुझे अनुशासित कर खुले आकाश में चले गये ॥473॥

सर्वज्ञ नरर्षभ के शीघ्रता से जाने के पश्चात् मैं मृत्यु को प्राप्त हुआ और तुषित लोक में उत्पन्न हुआ ॥474॥

तब मैंने निर्मल एवं अनन्तफलदायक क्षेत्र संघ में अपने चित्त को प्रसादित कर कल्पपर्यन्त स्वर्ग में आनन्द प्राप्त किया ॥475॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, पसादमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पसादस्स इदं फलं॥476॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥477॥
इत्थं सुदं आयस्मा सम्पसादको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सम्पसादकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. आरामदायकत्थेरअपदानं

''सिद्धत्थस्स भगवतो, आरामो रोपितो मया।
सन्दच्छायेसु [सीतछायेसु (स्या०), सन्तच्छायेसु (क०)] रुक्खेसु, उपासन्तेसु पक्खिसु॥478॥
''अद्दसं विरजं बुद्धं, आहुतीनं पटिग्गहं।
आरामं अभिनामेसिं, लोकजेट्ठं नरासभं॥479॥
''हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, फलं पुप्फमदासहं।
ततो जातप्पसादोव, तं वनं परिणामयिं॥480॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, प्रसादमलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, प्रसादस्य इदं फलम्॥476॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥477॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सम्प्रसादकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सिद्धार्थाय भगवतः, आरामः रोपितो मया।
सान्द्रच्छायासु वृक्षेषु, उपश्रान्तेषु पक्षिषु॥478॥
''अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्।
आरामम् अभ्यनंसिषम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥479॥
''हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, फलं पुष्पमदामहम्।
ततो जातप्रसाद इव, तद्वनं परिणामयम्॥480॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो प्रसाद का लाभ प्राप्त किया था यह उस चित्त प्रसाद का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥476॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥477॥

इस प्रकार आयुष्मान् सम्प्रसादक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

मेरे द्वारा सिद्धार्थ भगवान् के लिए आराम का निर्माण किया गया, वृक्ष के घने छाये में बैठे हुए पक्षियों के समूह में... ॥478॥

लोकज्येष्ठ, नरर्षभ आहुतियों के ग्रहणकर्ता निर्मल बुद्ध को देख कर मैं आराम की ओर गया ॥479॥

अत्यधिक प्रसन्नचित्त हो मैंने फल और पुष्प प्रदान किया तब मानो प्रसन्नचित्त मैंने उस वन को परिवर्तित किया ॥480॥

''बुद्धस्स यमिदं दासिं, विप्पसन्नेन चेतसा।
भवे निब्बत्तमानम्हि, निब्बत्तति फलं मम॥481॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं आराममदं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, आरामस्स इदं फलं॥482॥
''सत्ततिंसे इतो कप्पे, सत्तासुं मुदुसीतला।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥483॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥484॥
इत्थं सुदं आयस्मा आरामदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
आरामदायकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. अनुलेपदायकत्थेरअपदानं

''अत्थदस्सिस्स मुनिनो, अद्दसं सावकं अहं।
नवकम्मं करोन्तस्स, सीमाय उपगच्छहं॥485॥

''बुद्धाय यमिदं अदाम्, विप्रसन्नेन चेतसा।
भवे निर्वर्त्तमाने, निर्वर्त्तति फलं मम॥481॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् आराममदां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, आरामस्य इदं फलम्॥482॥
''सप्तत्रिंशे इतः कल्पे, सप्तासन् मृदुशीतलाः।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥483॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥484॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् आरामदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''अर्थदर्शिनः मुनेः, अद्राक्षं श्रावकम् अहम्।
नवकर्म **कुर्वतः**, सीमायाम् उपागच्छमहम्॥485॥

अत्यधिक प्रसन्नचित्त हो जो मैंने बुद्ध को प्रदान किया था, उस कारण भव में पुनः जन्म लेने पर उसका संचित फल मुझे प्राप्त होता है ॥481॥

अब से 94 वें कल्प में जो आराम का दान किया था, यह उस आराम दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥482॥

अब से 37 वें कल्प में मृदु, शीतल, सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, सात (बार) महाबलशाली राजा हुआ ॥483॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया ॥484॥

इस प्रकार आयुष्मान् आरामदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

अर्थदर्शी महामुनि के नव-कर्म (नवनिर्माण, प्लास्टर) में लगे हुए श्रावकों को देखकर मैं सीमा के समीप गया ॥485॥

''निट्ठिते नवकम्मे च, अनुलेपमदासहं।

पसन्नचित्तो सुमनो, पुञ्ञक्खेत्ते अनुत्तरे॥486॥

''अट्ठारसे कप्पसते, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अनुलेपस्सिदं फलं॥487॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥488॥

इत्थं सुदं आयस्मा अनुलेपदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अनुलेपदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. बुद्धसञ्ञकत्थेरअपदानं

''उदेन्तं सतरंसिंव, पीतरंसिंव भाणुमं।

वनन्तरगतं सन्तं, लोकजेट्ठं नरासभं॥489॥

''अद्दसं सुपिनन्तेन, सिद्धत्थं लोकनायकं।

तत्थ चित्तं पसादेत्वा, सुगतिं उपपज्जहं॥490॥

''निष्ठिते नवकर्मे च, अनुलेपमदामहम्।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, पुण्यक्षेत्रे अनुत्तरे॥486॥

''अष्टादशे कल्पशते, यं कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, अनुलेपस्येदं फलम्॥487॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥488॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अनुलेपदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''उदयन् सप्तरश्मिरिव, पीतरश्मिरिव भानुमान्।

वनान्तरगतं श्रान्तम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥489॥

''अद्राक्षं स्वप्नान्तेन, सिद्धार्थं लोकनायकम्।

तत्र चित्तं प्रसाद्य, सुगतिम् उपपद्येऽहम्॥490॥

अनुत्तर पुण्य क्षेत्र में निष्ठित नव कर्म में मैंने प्रसन्नचित्त सौमनस्यपूर्वक अनुलेप का दान किया ॥486॥

अब से 18 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥487॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥488॥

इस प्रकार आयुष्मान् अनुलेपदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उदित होते हुए पीली रश्मि और सप्तरश्मियों से युक्त सूर्य के समान शान्त लोकज्येष्ठ नरर्षभ को.. ॥489॥

वहाँ सोते हुए सिद्धार्थ, लोकनायक को देखा और अपने चित्त को प्रसन्न कर मैं सुगति को प्राप्त हुआ॥490॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥491॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥492॥
इत्थं सुदं आयस्मा बुद्धसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
बुद्धसञ्ञकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. पब्भारदायकत्थेरअपदानं

''पियदस्सिनो भगवतो, पब्भारो सोधितो मया।
घटकञ्च उपट्ठासिं, परिभोगाय तादिनो॥493॥
''तं मे बुद्धो वियाकासि, पियदस्सी महामुनि।
सहस्सकण्डो सतभेण्डु [सतगेण्डु (स्या॰ क॰)], धजालु हरितामयो॥494॥
''निब्बत्तिस्सति सो यूपो, रतनञ्च अनप्पकं।
पब्भारदानं दत्वान, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥495॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥491॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥492॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् बुद्धसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''प्रियदर्शिनो भगवतः, प्राग्भारः शोधितो मया।
घटकञ्च उपास्थाम्, परिभोगाय तायिनः॥493॥
तन्मे बुद्धो व्याकार्षीत्, प्रियदर्शी महामुनिः।
सहस्रकाण्डः शतभेण्डु, ध्वजालु हरितामयः॥494॥
''निर्वर्त्तिष्यति सः यूपः, रतनञ्च अनल्पकम्।
प्राग्भारदानं दत्वा, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥495॥

अब से 94 वें कल्प में जो बुद्धसंज्ञा प्राप्त की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥491॥

चार पटिसम्भिदा, आठ विमोक्ष और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥492॥

इस प्रकार आयुष्मान् बुद्धसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

प्रियदर्शी, भगवान् के लिए मेरे द्वारा पर्वत का निचला भाग शुद्ध किया गया और उनको भोग के लिए घट (घड़ा) स्थापित किया गया॥493॥

तब प्रियदर्शी भगवान् बुद्ध ने मुझे व्याकरण किया कि, उसे सहस्रकाण्ड माप वाले वृत्ताकार हरितमय ध्वजायुक्त तथा अनल्प रत्नों से युक्त यज्ञस्तम्भ उत्पन्न होंगे। तब प्राग्भार दान देकर मैंने कल्प भर स्वर्ग में आनन्द किया॥494-495॥

''इतो बात्तिंसकप्पम्हि, सुसुद्धो नाम खत्तियो।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥496॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥497॥

इत्थं सुदं आयस्मा पब्भारदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पब्भारदायकत्थेरस्सापदानं दसमं।

पदुमकेसरवग्गो एकतिंसतिमो।

तस्सुद्दानं –

केसरं गन्धमन्नञ्च, धम्मसञ्ञी फलेन च।

पसादारामदायी च, लेपको बुद्धसञ्ञको।

पब्भारदो च गाथायो, एकपञ्ञास कित्तिता॥

''इतः द्वात्रिंशत्कल्पे, सुशुद्धो नाम क्षत्रियः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥496॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥497॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् प्राग्भारदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

केशरं गन्धमन्नञ्च, धर्मसंज्ञी फलेन च।

प्रासादारामदायी च, लेपकः बुद्धसंज्ञकः।

प्राग्भारदश्च गाथा, एकपञ्चाशत् कीर्त्तिता॥

अब से 32 वें कल्प में सुशुद्ध नाम का सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली क्षत्रिय हुआ ॥496॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥497॥

इस प्रकार आयुष्मान् प्राग्भारदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- केसर गन्धमन्नञ्च, धर्मसंज्ञी, फल पसाद आरामदायी लेपक बुद्धसञ्ञक, तिरंसिय कन्दलि और कुमुद सत्तावन् गाथाओं का वर्णन हैं।

32. आरक्खदायकवग्गो

1. आरक्खदायकत्थेरअपदानं

पालि- ''धम्मदस्सिस्स मुनिनो, वति कारापिता मया।
आरक्खो च मया दिन्नो, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥498॥
''अट्ठारसे कप्पसते, यं कम्ममकरिं तदा।
तेन कम्मविसेसेन, पत्तो मे आसवक्खयो॥499॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥500॥
इत्थं सुदं आयस्मा आरक्खदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
आरक्खदायकत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. भोजनदायकत्थेरअपदानं

''सुजातो साललट्ठीव, सोभञ्जनमिवुग्गतो।
इन्दलट्ठिरिवाकासे, विरोचति सदा जिनो॥501॥

संस्कृत- ''धर्मदर्शिणे मुनये, वृतिः कारापिता मया।
आरक्षश्च मया दत्तः, द्विपदिन्द्राय तायिने॥498॥
''अष्टादशे कल्पशते, यत् कर्माकरवं तदा।
तेन कर्मविशेषेन, प्राप्तो मे आस्रवक्षयः॥499॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥500॥
इत्थं स्विद् आयुषमान् आरक्षदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सुजातः शाललष्टीव, शुभञ्जनमिवुद्गतः।
इन्द्रलष्टिरिवाकाशे, विरोचति सदा जिनः॥501॥

हिन्दी- उन धर्मदर्शी, मुनि, द्विपदेन्द्र के लिए मेरे द्वारा चाहरदीवारी का निर्माण किया गया और पहरेदार भी प्रदान किया गया॥498॥

अब से 18 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, उस कर्म के कारण मैं आश्रवक्षय को प्राप्त हुआ॥499॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥500॥

इस प्रकार आयुष्मान् आरक्षदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

सुजात जिन भगवान् शाल वृक्ष एवं शोभान्जन के समान उद्गत और इन्द्रलष्टि (वज्र) के समान आकाश में सदा विरोचित होते हैं॥501॥

''तस्स देवातिदेवस्स, वेस्सभुस्स महेसिनो।
अदासि भोजनमहं, विप्पसन्नेन चेतसा॥502॥
''तं मे बुद्धो अनुमोदि, सयम्भू अपराजितो।
भवे निब्बत्तमानम्हि, फलं निब्बत्ततू तव॥503॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, भोजनस्स इदं फलं॥504॥
''पञ्चवीसे इतो कप्पे, एको आसिं अमित्तको।
सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥505॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥506॥
इत्थं सुदं आयस्मा भोजनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

भोजनदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''तस्मै देवातिदेवाय, विश्वभुवे महर्षये।
अददां भोजनमहम्, विप्रसन्नेन चेतसा॥502॥
''तन्मे बुद्ध अन्वमोदत्, स्वयम्भू अपराजितः।
भवे निर्वर्त्तमाने, फलं **निर्वर्तस्व** तव॥503॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, भोजनस्य इदं फलम्॥504॥
''पञ्चविंशे इतः कल्पे, एक आसम् अमित्रकः।
सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥505॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥506॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् भोजनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उन देवातिदेव, विश्वभू, महर्षि को मैंने प्रसन्न चित्त से भोजन प्रदान किया।॥502॥

उन स्वयम्भू, अपराजित बुद्ध ने मेरे दिये का अनुमोदन किया और मुझे कहा कि भव में पुनः उत्पन्न होने पर इसका फल भी मेरे लिए उत्पन्न होगा॥503॥

अब से 31 वें कल्प में जो भोजन का दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥504॥

अब से 25 वें कल्प में मैं एक सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली अमित्रक हुआ॥505॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षो और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥506॥

इस प्रकार आयुष्मान् भोजनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

3. गतसञ्ञकत्थेरअपदानं

''आकासेव पदं नत्थि, अम्बरे अनिलञ्जसे।
सिद्धत्थं जिनमद्दक्खिं, गच्छन्तं तिदिवङ्गणे [तिदिवङ्गणं (स्या॰ क॰)]॥507॥
''अनिलेनेरितं दिस्वा, सम्मासम्बुद्धचीवरं।
वित्ति ममाहु तावदे [वित्ति मे पाहुणा ताव (स्या॰), वित्ति मे तावदे जाता (सी॰)],
दिस्वान गमनं मुनिं [मुने (सी॰)]॥508॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥509॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥510॥
इत्थं सुदं आयस्मा गतसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
गतसञ्ञकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. सत्तपदुमियत्थेरअपदानं

''नदीकूले वसामहं, नेसादो नाम ब्राह्मणो।
सतपत्तेहि पुप्फेहि, सम्मज्जित्वान अस्समं॥511॥

''आकाश इव पदं नास्ति, अम्बरे अनिलाञ्जसे।
सिद्धार्थं जिनमद्राक्षम्, गच्छन्तं त्रिदिवङ्गणे॥507॥
''अनिलेनेरितं दृष्ट्वा, सम्यक्सम्बुद्धचीवरम्।
वित्ति मम अभवं तावत्, दृष्ट्वा गमनं मुने॥508॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥509॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥510॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् गतसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''नदीकूले वसाम्यहम्, नेसादो नाम ब्राह्मणः।
शतपत्रैः पुष्पैः, सम्मार्ज्य आश्रमम्॥511॥

आकाश के समान कोई स्थान नहीं है और अम्बर में कोई मार्ग नहीं है वैसे ही सिद्धार्थ जिन को दिव्य लोक के आंगन में जाते देखा॥507॥

जाते हुए सम्यक्सम्बुद्ध मुनि के चीवर को कम्पित होता देखकर मुझमें प्रीति उत्पन्न हुई॥508॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो संज्ञा का लाभ प्राप्त किया था, यह उस बुद्ध-संज्ञा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥509॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥510॥

इस प्रकार आयुष्मान् गतसञ्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

नेसाद नामक ब्राह्मण मैं कमलपुष्पों से आश्रम को सुसज्जित कर नदी के तट पर वास कर रहा था॥511॥

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, सिद्धत्थं लोकनायकं।
दिस्वा नभेन [वनेन (स्या॰ क॰)] गच्छन्तं, हासो मे उदपज्जथ॥512॥
''पच्चुग्गन्त्वान सम्बुद्धं, लोकजेट्ठं नरासभं।
अस्समं अतिनामेत्वा, जलजग्गेहि ओकिरिं॥513॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥514॥
''इतो ते सत्तमे कप्पे, चतुरो पादपावरा।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥515॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥516॥
इत्थं सुदं आयस्मा सत्तपदुमियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सत्तपदुमियत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, सिद्धार्थं लोकनायकम्।
दृष्ट्वा नभसि गच्छन्तम्, हासः मे उदपद्यत॥512॥
''प्रत्युद्गत्य सम्बुद्धम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्।
आश्रमम् अतिनामय, जलजाग्रैरवाकिरम्॥513॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥514॥
''इतस्ते सप्तमे कल्पे, चत्वारः **पादप्रवराः**।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥515॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥516॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सप्तपद्मीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

सुवर्ण वर्ण वाले सम्बुद्ध, सिद्धार्थ, लोकनायक को आकाश मार्ग से जाते हुए देखकर मेरे मन में प्रसन्नता उत्पन्न हुई॥512॥

आश्रम में समय व्यतीत कर लोकज्येष्ठ, नरर्षभ, सम्बुद्ध का स्वागत कर उन्नत पद्म-पुष्पों को फैला दिया॥513॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभिरोपित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥514॥

यहाँ से 7 वें कल्प में चार पादपावर सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली, चक्रवर्ती राजा हुए॥515॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥516॥

इस प्रकार आयुष्मान् सप्तपद्मीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

5. पुप्फासनदायकत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, पीतरंसिंव [सतरंसिंव (सी॰ स्या॰)] भाणुमं।
अविदूरेन गच्छन्तं, सिद्धत्थं अपराजितं॥517॥
''तस्स पच्चुग्गमित्वान, पवेसेत्वान अस्समं।
पुप्फासनं मया दिन्नं, विप्पसन्नेन चेतसा॥518॥
''अञ्जलिं पग्गहेत्वान, वेदजातो तदा अहं।
बुद्धे चित्तं पसादेत्वा, तं कम्मं परिणामयिं॥519॥
''यं मे अत्थि कतं पुञ्ञं, सयम्भुम्हपराजिते।
सब्बेन तेन कुसलेन, विमलो होमि सासने॥520॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, पुप्फासनमदं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुप्फासनस्सिदं फलं॥521॥

''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, पीतरश्मिरिव भानुमान्।
अविदूरेण गच्छन्तम्, सिद्धार्थम् अपराजितम्॥517॥
''तस्मै प्रत्युद्गत्य, प्रविश्य आश्रमम्।
पुष्पासनं मया दत्तम्, विप्रसन्नेन चेतसा॥518॥
''अञ्जलिं प्रगृह्य, वेदजातः तदा अहम्।
बुद्धे चित्तं प्रसाद्य, तत् कर्म परिणामयम्॥519॥
''यन्मे अस्ति कृतं पुण्यम्, स्वयम्भ्वहमपराजिते।
सर्वेण तेन कुशलेन, विमलो भवामि शासने॥520॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, पुष्पासनमदां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुष्पासनस्येदं फलम्॥521॥

पीली रश्मि से युक्त भानु के समान सुवर्ण वर्ण वाले सम्बुद्ध, सिद्धार्थ अपराजित के समीप ॥517॥

मेरे द्वारा आश्रम में प्रवेश कर अत्यधिक प्रसन्नमन से उनका स्वागत कर पुष्प-आसन प्रदान किया गया॥518॥

अञ्जलि-बद्ध हो बुद्ध में चित्त को प्रसादित कर मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ। यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है॥519॥

स्वयम्भू अपराजित के लिए मैंने जो पुण्यकर्म किया था, उन सभी कुशलकर्मों से मैं बुद्धशासन में विमल हो गया॥520॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो पुष्प आसन का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥521॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥522॥
इत्थं सुदं आयस्मा पुप्फासनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पुप्फासनदायकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. आसनसन्थविकत्थेरअपदानं

''चेतियं उत्तमं नाम, सिखिनो लोकबन्धुनो।
अरञ्ञे इरीणे वने, अन्धाहिण्डामहं तदा॥523॥
''पवना निक्खमन्तेन, दिट्ठं सीहासनं मया।
एकंसं अञ्जलिं कत्वा, सन्थविं [थविस्सं (सी०)] लोकनायकं॥524॥
''दिवसभागं थवित्वान, बुद्धं लोकग्गनायकं।
हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, इमं वाचं उदीरयिं॥525॥
'''नमो ते पुरिसाजञ्ञ, नमो ते पुरिसुत्तम।
सब्बञ्ञूसि महावीर, लोकजेट्ठ नरासभ'॥526॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥522॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पुष्पासनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''चैत्यम् उत्तमं नाम, शिखिनः लोकबन्धोः।
अरण्ये इरीणे वने, अन्धाहिण्डाम्यहं तदा॥523॥
''प्रवणात् निष्क्रम्य, दृष्टं सिहासनं मया।
एकांशम् अञ्जलिं कृत्वा, समतुस्तोमं लोकनायकम्॥524॥
''दिवसभागं **स्तुत्य**, बुद्धं लोकाग्रनायकम्।
हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, इमं वाचमुदैरयम्॥525॥
'''नमस्ते पुरुषाजन्य, नमस्ते पुरुषोत्तम।
सर्वज्ञोऽसि महावीर, लोकज्येष्ठ नरर्षभ'॥526॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥522॥

इस प्रकार आयुष्मान् पुष्पासनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

शिखी, लोकबन्धु का एक उत्तम नामक चैत्य था। उस समय मैं उस घने कान्तार वन में अन्धे के समान भटक गया॥523॥

पहाड़ के किनारे से निकल कर मेरे द्वारा सिंहासन देखा गया और मैंने कन्धे पर वस्त्र को रखकर और अञ्जलिबद्ध होकर लोकनायक की स्तुति की॥524॥

दिन के समय बुद्ध लोकग्रनायक की स्तुति करके मैंने अत्यधिक प्रसन्नमन से इन वचनों को कहा॥525॥

हे पुरुषश्रेष्ठ!, हे पुरुषोत्तम! आपको नमस्कार है। हे लोकज्येष्ठ!, नरर्षभ! महावीर! आप सर्वज्ञ हैं॥526॥

''अभित्थवित्वा सिखिनं, निमित्तकरणेनहं।
आसनं अभिवादेत्वा, पक्कामिं उत्तरामुखो॥527॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं थविं वदतं वरं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, थोमनाय इदं फलं॥528॥
''सत्तवीसे इतो कप्पे, अतुला सत्त आसु ते।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥529॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥530॥
इत्थं सुदं आयस्मा आसनसन्थविको [आसनसन्थवको (?), आसनथविको (क°), आसनत्थविको (सी° स्या°)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
आसनसन्थविकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. सद्दसञ्ञकत्थेरअपदानं

''सुदस्सनो महावीरो, देसेति अमतं पदं।
परिवुतो सावकेहि, वसति घरमुत्तमे॥531॥

''अभिस्तुत्य शिखिनम्, निमित्तकरणेनाहम्।
आसनम् अभिवाद्य, प्राक्रामम् उत्तरामुखः॥527॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यमतु**स्तोमं** वदतां वरम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, स्तोमनाया इदं फलम्॥528॥
''सप्तविंशे इतः कल्पे, **अतुलाः सप्त आस्म ते**।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥529॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥530॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् आसनसन्थविकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सुदर्शनो महावीरः, देशयति अमृतं पदम्।
परिवृतः श्रावकैः, वसति गृहमुत्तमे॥531॥

भगवान् शिखी को निमित्त करके मैंने उनकी स्तुति की और उनके आसन का अभिवादन कर उत्तरमुख कर चला गया॥527॥

अब से 31 वें कल्प में मैंने जो स्तुति की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥528॥

अब से 27 वें कल्प में अतुल नामक सात सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुए॥529॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥530॥

इस प्रकार आयुष्मान् आसनसन्थविक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

महावीर सुदर्शन ने अमृतपद का उपदेश किया और श्रावकों से परिवृत उत्तम गृह में वास किया॥531॥

''ताय वाचाय मधुराय, सङ्गण्हाति [सङ्गण्हन्ते (सी॰)] महाजनं।
घोसो च विपुलो आसि, आसीसो [आसंसो (सी॰)] देवमानुसे॥532॥
''निग्घोससद्दं सुत्वान, सिद्धत्थस्स महेसिनो।
सद्दे चित्तं पसादेत्वा, अवन्दिं लोकनायकं॥533॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥534॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥535॥
इत्थं सुदं आयस्मा सद्दसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सद्दसञ्ञकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. तिरंसियत्थेरअपदानं

''केसरिं अभिजातंव, अग्गिक्खन्धंव पब्बते।
ओभासेन्तं दिसा सब्बा [निवासेन्तं (क॰), दिसासिन्नं (स्या॰)], सिद्धत्थं पब्बतन्तरे॥536॥

''**तया वाचा मधुरया**, सङ्गृह्णन्ते महाजनम्।
घोषश्च विपुल आसीत्, आशीशः देवमानुषे॥532॥
''निर्घोषशब्दं श्रुत्वा, सिद्धार्थस्य महर्षेः।
शब्दे चित्तं प्रसाद्य, अवन्दे लोकनायकम्॥533॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥534॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥535॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् शब्दसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''केशरिम् अभिजातमिव, अग्निस्कन्धमिव पर्वते।
अवभाषयन् दिशः सर्वाः, सिद्धार्थं पर्वतान्तरे॥536॥

आपकी मधुर वाणी को सुनकर महाजन शालीनता का व्यवहार करते हैं और विपुल घोष कर देवों एवं मनुष्यों के लिए आशीष मागते हैं॥532॥

मैंने महर्षि सिद्धार्थ के निर्घोष शब्द को सुनकर शब्द में चित्त को प्रसादित कर लोकनायक की वन्दना की॥533॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो संज्ञा का लाभ किया था, यह उस बुद्ध-संज्ञा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥534॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥535॥

इस प्रकार आयुष्मान् शब्दसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

केशरीकुल में उत्पन्न, अग्निस्कन्ध के समान पर्वत के मध्य में स्थित सभी दिशाओं को अवभासित करते हुए सिद्धार्थ ॥536॥

''सूरियस्स च आलोकं, चन्दालोकं तथेव च।
बुद्धालोकञ्च दिस्वान, वित्ति मे उदपज्जथ॥537॥
''तयो आलोके दिस्वान, सम्बुद्धं [बुद्धञ्च (सी॰)] सावकुत्तमं।
एकंसं अजिनं कत्वा, सन्थविं लोकनायकं॥538॥
''तयो हि आलोककरा, लोके लोकतमोनुदा।
चन्दो च सूरियो चापि, बुद्धो च लोकनायको॥539॥
''ओपम्मं उपदस्सेत्वा, कित्तितो मे महामुनि।
बुद्धस्स वण्णं कित्तेत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥540॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं बुद्धमभिकित्तयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, कित्तनाय इदं फलं॥541॥

''सूर्यस्य च आलोकम्, चन्द्रालोकं तथैव च।
बुद्धालोकञ्च दृष्ट्वा, **वित्ति** मे उदपद्यत॥537॥
''त्रय आलोके दृष्ट्वा, सम्बुद्धं श्रावकुत्तमम्।
एकांशम् अजिनं कृत्वा, समतुस्तोमं लोकनायकम्॥538॥
''त्रयः हि आलोककरा, लोके लोकतमोनुदाः।
चन्द्रश्च सूर्यश्चापि, बुद्धश्च लोकनायकः॥539
''औपमन्यम् उपदर्श्य, कीर्त्तितो मे महामुनिः।
बुद्धस्य वर्णं कीर्त्तयित्वा, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥540॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं बुद्धमभ्यकीर्त्तयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, कीर्त्तनस्येदं फलम्॥541॥

सूर्य तथा चन्द्र के आलोक की तरह बुद्ध के आलोक को देखकर मुझमें अत्यधिक प्रसन्नता उत्पन्न हुई॥537॥

तीनों लोकों को प्रकाशित देखकर एक कन्धे पर उत्तरासंग रख कर मैंने श्रावकोत्तम, सम्बुद्ध, लोकनायक की स्तुति की॥538॥

तीनों लोको को प्रकाशित करने वाले, लोक से अन्धकार को दूर करने वाले सूर्य और चन्द्र की भाँति लोकनायक, बुद्ध... ॥539॥

मेरे द्वारा उपमा देकर महामुनि की कीर्ति कही गयी। बुद्ध की कीर्ति का वर्णन करके मैंने कल्प भर स्वर्ग में प्रसन्नता प्राप्त की॥540॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो बुद्ध की कीर्ति की थी, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥541॥

"एकसट्ठिम्हितो कप्पे, एको आणधरो अहु।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥542॥

"पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं"॥543॥

इत्थं सुदं आयस्मा तिरंसियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तिरंसियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. कन्दलिपुप्फियत्थेरअपदानं

"सिन्धुया नदिया तीरे, अहोसिं कस्सको तदा।

परकम्मायने युत्तो, परभत्तं अपस्सितो॥544॥

"सिन्धुं अनुचरन्तोहं, सिद्धत्थं जिनमद्दसं।

समाधिना निसिन्नंव, सतपत्तंव पुप्फितं॥545॥

"सत्त कन्दलिपुप्फानि, वण्टे छेत्वानहं तदा।

मत्थके अभिरोपेसिं, बुद्धस्सादिच्चबन्धुनो॥546॥

"एकषष्टितमे कल्पे, एकः ज्ञानधरोऽभूत्।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥542॥

"प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्"॥543॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् तिरंसियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

"सिन्धोः नद्यास्तीरे, अभूवं कृषकस्तदा।

परकर्मायने युक्तः, परभत्तं अपाश्रितः॥544॥

"सिन्धौ अनुचरन् अहम्, सिद्धार्थं जिनमद्राक्षम्।

समाधेः निषण्णमिव, शतपत्रमिव पुष्पितम्॥545॥

"सप्त कन्दलिपुष्पाणि, वृन्तानि छित्वाऽहं तदा।

मस्तके अभ्यरोपयम्, बुद्धस्यादित्यबन्धोः॥546॥

अब से 61 वें कल्प में एक ज्ञानधर सप्तरत्नसम्पन्न, महाबलशाली चक्रवर्ती हुआ॥542॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥543॥

इस प्रकार आयुष्मान् तिरंसिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं सिन्धु नदी के तट परकर्म में लगा हुआ था तथा दूसरों से प्राप्त भोजन पर आश्रित था॥544॥

सिन्धु नदी के किनारे चलते हुए मैंने समाधि में बैठे हुए कमलपुष्प के समान पुष्पित सिद्धार्थ जिन को देखा॥545॥

तब मैंने सात कन्दलि पुष्पों को डाल से तोड़कर आदित्य-बन्धु के मस्तक पर अभिरोपित किया॥546॥

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, अनुकूले समाहितं।

तिधापभिन्नमातङ्गं, कुञ्जरंव दुरासदं॥547॥

''तमहं उपगन्त्वान, निपकं भावितिन्द्रियं।

अञ्जलिं पग्गहेत्वान, अवन्दिं सत्थुनो अहं॥548॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥549॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥550॥

इत्थं सुदं आयस्मा कन्दलिपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

कन्दलिपुप्फियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. कुमुदमालियत्थेरअपदानं

''उसभं पवरं वीरं, महेसिं विजितावितं।

विपस्सिनं महावीरं, अभिजातंव केसरिं॥551॥

''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, अनुकूले समाहितम्।

त्रिधाप्रभिन्नमातङ्गम्, कुञ्जरमिव दुरासदम्॥547॥

''तमहम् उपगत्य, निपकं भावितेन्द्रियम्।

अञ्जलिं प्रगृह्य, अवन्दे शास्त्रेऽहम्॥548॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥549॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥550॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् कन्दलिपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''वृषभं प्रवरं वीरम्, महर्षिं विजितायिनम्।

विपश्यिनं महावीरम्, अभिजातमिव केशरिम्॥551॥

नदी किनारे समाधिस्थ सुवर्णवर्ण सम्बद्ध जिनके पास तीन प्रकार से भिन्न मातङ्ग हाथी के समान पहुँचना कठिन है॥

तब मैंने दक्ष एवं संयत इन्द्रिय वाले शास्ता के समीप जाकर और अञ्जलिबद्ध होकर उनकी वन्दना की॥548॥

अब से 94 वें कल्प में जो पुष्प अभिरोपित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥549॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥550॥

इस प्रकार आयुष्मान् कन्दलिपुष्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

श्रेष्ठ पुरुष, प्रवर, वीर, विजयी, महर्षि, विपश्यी, महावीर अभिजात कुल में उत्पन्न केसरी.. ॥551॥

''रथियं पटिपज्जन्तं, आहुतीनं पटिग्गहं।

गहेत्वा कुमुदं मालं, बुद्धसेट्ठं समोकिरिं॥552॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥553॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥554॥

इत्थं सुदं आयस्मा कुमुदमालियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

कुमुदमालियत्थेरस्सापदानं दसमं।

आरक्खदायकवग्गो बात्तिंसतिमो [बत्तिंसतिमो (सी० स्या०)]।

तस्सुद्दानं –

आरक्खदो भोजनदो, गतसञ्ञी पदुमियो।

पुप्फासनी सन्थविको, सद्दसञ्ञी तिरंसियो।

कन्दलिको कुमुदी च, सत्तपञ्ञास गाथकाति॥

''रथीयं प्रतिप्रद्यन्तम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्।

गृहीत्वा कुमुदं मालाम्, बुद्धश्रेष्ठं समवाकिरम्॥552॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥553॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥554॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् कुमुदमालीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

आरक्षदः भोजनदः, गतसंज्ञी पद्म्यः।

पुष्पासनी संस्तविकः, शब्दसंज्ञी त्रिरश्म्यः।

कन्दलिकः कुमुदी च, सप्तपञ्चाशत् गाथा इति॥

रथ पर आरुढ़ हो और कुमुद माला को ग्रहण कर आहुतियों के ग्रहण कर्ता बुद्धश्रेष्ठ के ऊपर बिखेर दिया॥552॥

अब से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभिरोपित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥553॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥554॥

इस प्रकार आयुष्मान् कुमुदमालिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उनके उदान- आरक्षद, भोजनद, गतसंज्ञी, पद्म्य, पुष्पासनी, संस्तविक, शब्दसंज्ञी, त्रिरश्मी, कन्दलिक, और कुमुदी इस प्रकार यहाँ 57 गाथाएँ वर्णित हैं।

33. उमापुप्फियवग्गो

1. उमापुप्फियत्थेरअपदानं

पालि- ‘‘समाहितं समापन्नं, सिद्धत्थमपराजितं।
समाधिना उपविट्ठं, अद्दसाहं नरुत्तमं॥555॥
‘‘उमापुप्फं गहेत्वान, बुद्धस्स अभिरोपयिं।
सब्बपुप्फा एकसीसा, उद्धंवण्टा अधोमुखा॥556॥
‘‘सुचित्ता विय तिट्ठन्ते, आकासे पुप्फसन्थरा।
तेन चित्तप्पसादेन, तुसितं उपपज्जहं॥557॥
‘‘चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥558॥
‘‘पञ्चपञ्ञासितो कप्पे, एको आसिं महीपति।
समन्तछदनो नाम, चक्कवत्ती महब्बलो॥559॥

संस्कृत- ‘‘समाहितं समापन्नम्, सिद्धार्थमपराजितम्।
समाधेः उपाविष्टम्, अद्राक्षमहं नरोत्तमम्॥555॥
‘‘उमापुष्पं गृहीत्वा, बुद्धाय अभ्यरोपयम्।
सर्वपुष्पाणि एकशीर्षाः, ऊर्द्धवृन्ता अधोमुखाः॥556॥
‘‘सुचित्रा इव तिष्ठन्ते, आकाशे पुष्पसंस्तराः।
तेन चित्तप्रसादेन, तुषितम् उपपद्येऽहम्॥557॥
‘‘चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥558॥
‘‘पञ्चपञ्चाशत् इतः कल्पे, एक आसम् महीपतिः।
समन्तच्छदनो नाम, चक्रवर्त्ती महाबलः॥559॥

हिन्दी- एकाग्रचित्त, समाधि में रत आसन पर बैठे हुए सिद्धार्थ, अपराजित, नरोत्तम को मैंने देखा॥555॥

सभी एक शीर्ष वाले ऊपर के डण्ठल में लगे हुए एवं नीचे की ओर मुख किये हुए उमापुष्प को ग्रहण कर बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥556॥

आकाश में पुष्प बिखरे हों, इस प्रकार से सुचित्रित पुष्पों में चित्त को प्रसादित कर मैं तुषित लोक में उत्पन्न हुआ॥557॥

अब से 94 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥558॥

यहाँ से 50 वें कल्प में समन्तच्छदन नाम का चक्रवर्ती, महाबलशाली एक राजा हुआ॥559॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं॥560॥
इत्थं सुदं आयस्मा उमापुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उमापुप्फियत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. पुलिनपूजकत्थेरअपदानं

''ककुधं विलसन्तंव, निसभाजानियं यथा।
ओसधिंव विरोचन्तं, ओभासन्तं नरासभं॥561॥
''अञ्जलिं पग्गहेत्वान, अवन्दिं सत्थुनो अहं।
सत्थारं परिवण्णेसिं, सककम्मेन तोसयिं [तोसितो (सी॰)]॥562॥
''सुसुद्धं पुलिनं गय्ह, गतमग्गे समोकिरिं।
उच्छङ्गेन गहेत्वान, विपस्सिस्स महेसिनो॥563॥
''ततो उपड्ढपुलिनं, विप्पसन्नेन चेतसा।
दिवाविहारे ओसिञ्चिं, द्विपदिन्दस्स तादिनो॥564॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥560॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उमापुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''ककुधं विलसन्निव, नृषभाजानीयं यथा।
औषधीः इव विरोचन्तम्, अवभासयन् नरर्षभम्॥561॥
''अञ्जलिं प्रगृह्य, अवन्दे शास्त्रेऽहम्।
शास्तारं पर्यववर्णयम्, **स्वककर्मणा** अतुषम्॥562॥
''सुशुद्धं पुलिनं गृह्य, गतमार्गे समवाकिरम्।
उत्सङ्गेन गृहीत्वा, विपश्यिनः महर्षेः॥563॥
''ततः उपार्धपुलिनम्, विप्रसन्नेन चेतसा।
दिवाविहारे अवासिञ्चम्, द्विपदिन्द्रस्य तायिनः॥564॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥560॥
इस प्रकार आयुष्मान् उमापुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-
जैसे ऋषभ के पीठ पर निकला हुआ कुकुध चमकता है, उसी प्रकार चमकती हुई औषधि को नरर्षभ जानते हैं॥561॥
अञ्जलिबद्ध हो कर मैंने शास्ता की वन्दना की और अपने कर्म से सन्तुष्ट शास्ता की प्रशंसा की॥562॥
शुद्ध बालू गोद में ग्रहण कर विपश्यी, महर्षि के जाने वाले मार्ग पर फैला दिया॥563॥
उसके पश्चात् बचे हुए बालू को मैंने अत्यधिक प्रसन्न मन से उन द्विपदेन्द्र के कुछ समय विश्राम करने वाले विहार पर छिड़क दिया॥564॥

''एकनवुतितो कप्पे, पुलिनं यमसिञ्चहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुलिनस्स इदं फलं॥565॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥566॥
इत्थं सुदं आयस्मा पुलिनपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पुलिनपूजकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. हासजनकत्थेरअपदानं

''दुमग्गे पंसुकूलकं [पंसुकूलिकं (स्या॰ क॰)], लग्गं दिस्वान सत्थुनो।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, भिय्यो उच्चारितं मया॥567॥
''दूरतो पन दिस्वान [पतिदिस्वान (सी॰ स्या॰)], हासो मे उदपज्जथ।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, भिय्यो चित्तं पसादयिं॥568॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥569॥

''एकनवतितमे कल्पे, पुलिनं यमसिञ्चमहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुलिनस्य इदं फलम्॥565॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥566॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पुलिनपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''द्रुमाग्रे पांशुकूलिकम्, लग्नं दृष्ट्वा शास्तुः।
अञ्जलिं प्रगृह्य, भूयस् उच्चारितं मया॥567॥
''दूरतः पुनः दृष्ट्वा, **हासः** मे उदपद्यत।
अञ्जलिं प्रगृह्य, भूयस् चित्तं प्रासादयम्॥568॥
''एकनवतितमे कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥569॥

अब से 91 वें कल्प में मैंने जो बालू से सिञ्चित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥565॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥566॥

इस प्रकार आयुष्मान् पुलिनपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

शास्ता के चीथड़ो से बने चीवर को पेड़ के शिखर पर लगा देखकर अञ्जलिबद्ध होकर मेरे द्वारा अत्यधिक उच्चारित किया गया॥567॥

दूर से पुनः देख कर मुझ में प्रसन्नता उत्पन्न हुई और अञ्जलिबद्ध होकर अत्यधिक चित्त को प्रसादित (प्रसन्न) किया॥568॥

अब से 91 वें कल्प में जो संज्ञा का लाभ प्राप्त किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥569॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥570॥

इत्थं सुदं आयस्मा हासजनको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

हासजनकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. यञ्ञसामिकत्थेरअपदानं

''जातिया सत्तवस्सोहं, अहोसिं मन्तपारगू।

कुलवत्तं [कुलवंसं (सी० स्या०)] अधारेसिं, यञ्ञो उस्साहितो मया॥571॥

''चुल्लासीतिसहस्सानि, पसू हञ्ञन्ति मे तदा।

सारथम्भुपनीतानि [तारस्मीहि उपनीतानि (क०), सारस्मिंहि उपनीतानि (स्या०)], यञ्ञत्थाय उपट्ठिता॥572॥

''उक्कामुखपहट्ठोव, खदिरङ्गारसन्निभो।

उदयन्तोव सूरियो, पुण्णमायेव [पुण्णमासेव (सी०)] चन्दिमा॥573॥

''सिद्धत्थो सब्बसिद्धत्थो, तिलोकमहितो हितो।

उपगन्त्वान सम्बुद्धो, इदं वचनमब्रवि॥574॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥570॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् हासजनकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''जात्या सप्तवर्षोऽहम्, अभूवं **मन्त्रपारगः**।

कुलवंशम् अधारयम्, यज्ञोत्साहितो मया॥571॥

''चतुरासीतिसहस्राणि, पशू **घ्नन्ति** मे तदा।

सारस्तम्भुपनीतानि, यज्ञार्थाय उपस्थिता॥572॥

''**उल्कामुखप्रहृष्ट इव**, खदिराङ्गारसन्निभः।

उदयन्निव सूर्यः, पौर्णमास इव चन्द्रमा॥573॥

''सिद्धार्थः सर्वसिद्धार्थः, त्रिलोकमहितो हितः।

उपगत्य सम्बुद्धः, इदं वचनमब्रवीत्॥574॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥570॥

इस प्रकार आयुष्मान् हासजनक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

जन्म से सात वर्ष बाद मैं मन्त्रों में पारंगत हुआ और कुल की यज्ञ की परम्परा को उत्साहित हो धारण किया॥571॥

मेरे द्वारा छोटे-छोटे 80 हजार पशुओं की हत्या की गई, तब मैं सारस्तम्भ के समीप यज्ञार्थ उपस्थित हुआ॥572॥

मशाल के प्रज्वलित मुख के समान और बबूल के लकड़ी के समान, उदित हुए सूर्य एवं पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान.. ॥573॥

सिद्धार्थ, सर्वसिद्धार्थ तीनों लोकों का हित करने वाले सम्बुद्ध के समीप गया और यह वचन कहा॥574॥

‘‘‘अहिंसा सब्बपाणीनं, कुमार मम रुच्चति।
थेय्या च अतिचारा च, मज्जपाना च आरति॥575॥
‘‘‘रति च समचरियाय, बाहुसच्चं कतञ्ञुता।
दिट्ठे धम्मे परत्थ च, धम्मा एते पसंसिया॥576॥
‘‘‘एते धम्मे भावयित्वा, सब्बसत्तहिते रतो [हितेसितो (क॰)]।
बुद्धे चित्तं पसादेत्वा, भावेहि मग्गमुत्तमं’॥577॥
‘‘इदं वत्वान सब्बञ्ञू, लोकजेट्ठो नरासभो।
ममेवं अनुसासित्वा, वेहासं उग्गतो गतो॥578॥
‘‘पुब्बे चित्तं विसोधेत्वा, पच्छा चित्तं पसादयिं।
तेन चित्तप्पसादेन, तुसितं उपपज्जहं॥579॥

‘‘‘अहिंसा सर्वप्राणीनाम्, कुमार मम रुच्यति।
स्तेयाश्च अतिचाराच्च, मद्यपानाच्च **आरतिः**॥575॥
‘‘‘रति च समचर्ययाः, बाहुसत्यं कृतज्ञता।
दृष्टे धर्मे परत्र च, धर्माः एते प्रशंसनीयाः॥576॥
‘‘‘एतान् धर्मान् भावयित्वा, सर्वसत्वहिते रतः।
बुद्धे चित्तं प्रसादय, भावैः मार्गमुत्तमम्’॥577॥
‘‘इदमुक्त्वा सर्वज्ञ, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
माम् एवम् अनुशास्य, वैहायसम् उद्गतो गतः॥578॥
‘‘पूर्वे चित्तं विशोधय, पश्चाच्चित्तं प्रासादयम्।
तेन चित्तप्रसादेन, तुषितम् उपापद्येऽहम्॥579॥

हे कुमार! मुझे सभी प्राणियों की अहिंसा, चोरी, अत्याचार, मद्यपान इन सभी से दूर रहना अच्छा लगता है॥575॥

आसक्ति, शान्त, चर्या, अधिक विद्वत्ता, कृतज्ञता, ये धर्म कहीं भी देखे जाय, ये धर्म प्रशंसनीय हैं॥576॥

इन धर्मों की भावना करके सभी सत्त्वों के हित में रत, बुद्ध में चित्त को प्रसादित कर भव का मार्ग उत्तम किया॥577॥

यह कह कर सर्वज्ञ, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ मुझे इस प्रकार अनुशासित कर खुले आकाश में चले गये॥578॥

पूर्व में चित्त को विशोधित कर, पश्चात् चित्त को प्रसादित किया, उस चित्त के प्रसाद से मैं तुषित लोक में उत्पन्न हुआ॥579॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यदा चित्तं पसादयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥580॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥581॥
इत्थं सुदं आयस्मा यञ्ञसामिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
यञ्ञसामिकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. निमित्तसञ्ञकत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, वसामि अस्समे अहं।
सुवण्णमिगमद्दक्खिं, चरन्तं विपिने अहं॥582॥
''मिगे चित्तं पसादेत्वा, लोकजेट्ठं अनुस्सरिं।
तेन चित्तप्पसादेन, अञ्ञे बुद्धे अनुस्सरिं॥583॥
''अब्भतीता च ये बुद्धा, वत्तमाना अनागता।
एवमेवं विरोचन्ति, मिगराजाव ते तयो॥584॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यदा चित्तं प्रासादयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥580॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥581॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् यज्ञस्वामिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''चन्द्रभागानदीतीरे, वसामि आश्रमे अहम्।
सुवर्णमृगमद्राक्षम्, चरन्तं विपिने अहम्॥582॥
''मृगे चित्तं प्रसाद्य, लोकज्येष्ठम् अन्वस्मरम्।
तेन चित्तप्रसादेन, अन्यान् बुद्धान् अन्वस्मरम्॥583॥
''अभ्यतीताः च ये बुद्धाः, वर्त्तमाना अनागताः।
एवमेवं विरोचन्ति, मृगराज इव ते त्रयः॥584॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो चित्त प्रसादित किया था, यह उस बुद्धसंज्ञा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥580॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥581॥

इस प्रकार आयुष्मान् हासजनक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

चन्द्रभागा नदी के तट पर स्थित आश्रम में निवास किया और वहाँ मैंने जंगल में स्वर्ण-मृग को विचरण करते हुए देखा॥582॥

मृग में चित्त को प्रसादित कर मैंने लोकज्येष्ठ का अनुस्मरण किया और उस चित्त के प्रसाद से मैंने अन्य बुद्धों का अनुस्मरण किया॥583॥

वे बुद्ध जो गुजर चुके हैं, जो वर्त्तमान में हैं और जो नहीं आये हैं वे तीनों मृगराज के समान विचरण करते हैं॥584॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं सञ्ञमलभिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसञ्ञायिदं फलं॥585॥
''सत्तवीसे इतो कप्पे, एको आसिं महीपति।
अरञ्ञसत्थो नामेन, चक्कवत्ती महब्बलो॥586॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥587॥
इत्थं सुदं आयस्मा निमित्तसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
निमित्तसञ्ञकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. अन्नसंसावकत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, गच्छन्तं अन्तरापणे।
कञ्चनग्घियसङ्कासं, बात्तिंसवरलक्खणं॥588॥
''सिद्धत्थं सब्बसिद्धत्थं, अनेजं अपराजितं।
सम्बुद्धं अतिनामेत्वा, भोजयिं तं महामुनिं॥589॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यां संज्ञामलभे तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धसंज्ञाया इदं फलम्॥585॥
''सप्तविंशे इतः कल्पे, एक आसं महीपतिः।
अरण्यसत्थो नाम्ना, चक्रवर्त्ती महाबलः॥586॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥587॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् निमित्तसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, गच्छन्तम् अन्तरापणे।
काञ्चनार्घीयसङ्काशम्, द्वात्रिंशद्वरलक्षणम्॥588॥
''सिद्धार्थं सर्वसिद्धार्थम्, अनेजम् अपराजितम्।
सम्बुद्धम् **अतिनम्य/अतिनामय्य**, अभोजयं तं महामुनिम्॥589॥

अब से 94 वें कल्प में जो संज्ञा का लाभ प्राप्त किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता हैं॥585॥

अब से 27 वें कल्प में एक अरण्यसत्थ नामक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा हुआ॥586॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया हैं॥587॥

इस प्रकार आयुष्मान् निमित्तसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तब बाजार में जाते हुए कञ्चन अर्घ के समान, बत्तीस लक्ष्णों से युक्त, सुवर्ण वर्ण वाले सम्बुद्ध-॥588॥

सिद्धार्थ, सर्वसिद्धार्थ, अनेज (तृष्णा विहीन), अपराजित सम्बुद्ध के साथ समय व्यतीत कर उन्हें भोजन कराया॥589॥

''मुनि कारुणिको लोके, ओभासयि ममं तदा।
बुद्धे चित्तं पसादेत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥590॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, भिक्खादानस्सिदं फलं॥591॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥592॥
इत्थं सुदं आयस्मा अन्नसंसावको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
अन्नसंसावकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. निग्गुण्डिपुप्फियत्थेरअपदानं

''यदा देवो देवकाया, चवते आयुसङ्खया।
तयो सद्दा निच्छरन्ति, देवानं अनुमोदतं॥593॥
'''इतो भो सुगतिं गच्छ, मनुस्सानं सहब्यतं।
मनुस्सभूतो सद्धम्मे, लभ सद्धं अनुत्तरं॥594॥

''मुनिः कारुणिको लोके, अवभासयत् मां तदा।
बुद्धे चित्तं प्रसाद्य, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥590॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, भिक्षादानस्येदं फलम्॥591॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥592॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् अन्नसंश्रावकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''यदा देवः देवकायात्, च्यवते आयुसङ्क्षयाः।
त्रयश्शब्दाः निच्छरन्ति, देवानाम् अनुमोदताम्॥593॥
'''इतो भो सुगतिं गच्छ, मनुष्याणां सहवस्तुम्।
मनुष्यभूतः सद्धर्मे, लभ श्रद्धाम् अनुत्तरम्॥594॥

मुझे लोककारुणिक मुनि ने प्रकाशित किया, तब बुद्ध में चित्त को प्रसादित कर मैं कल्प भर स्वर्ग में प्रसन्न हुआ॥590॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो दान दिया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥591॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥592॥

इस प्रकार आयुष्मान् अन्नसंश्रावक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

आयु के क्षय होने पर जब देवता देवकाय से च्युत होते हैं, तब देवताओं के द्वारा अनुमोदित तीन शब्द उत्पन्न होते हैं॥593॥

हे देव! आप यहाँ से अच्छी गति को प्राप्त होवें और मनुष्य के साथ मित्रता साधें एवं मनुष्य रूप में उत्पन्न आप अनुत्तर श्रद्धा को प्राप्त करें॥594॥

‘‘‘सा ते सद्धा निविट्ठास्स, मूलजाता पतिट्ठिता।
यावजीवं असंहीरा, सद्धम्मे सुप्पवेदिते॥595॥
‘‘‘कायेन कुसलं कत्वा, वाचाय कुसलं बहुं।
मनसा कुसलं कत्वा, अब्यापज्जं निरूपधिं॥596॥
‘‘‘ततो ओपधिकं पुञ्ञं, कत्वा दानेन तं बहुं।
अञ्ञेपि मच्चे सद्धम्मे, ब्रह्मचरिये निवेसय’॥597॥
‘‘इमाय अनुकम्पाय, देवादेवं यदा विदू।
चवन्तं अनुमोदन्ति, एहि देव पुनप्पुनं [देवपुरं पुन (सी॰)]॥598॥
‘‘संवेगो मे [संविग्गोहं (स्या॰)] तदा आसि, देवसङ्घे समागते।
कंसु नाम अहं योनिं, गमिस्सामि इतो चुतो॥599॥

‘‘‘सा ते श्रद्धा निविष्टास्व, मूलजाता प्रतिष्ठिता।
यावज्जीवम् असंहीरा, सद्धर्मे सुप्रवेदिते॥595॥
‘‘‘कायेन कुशलं कृत्वा, वाचा कुशलं बहून्।
मनसा कुशलं कृत्वा, अव्यापद्यं निरूपधिम्॥596॥
‘‘‘तत औपधिकं पुण्यम्, कृत्वा दानेन तं बहून्।
अन्येऽपि मर्त्ये सद्धर्मे, ब्रह्मचर्ये निवेशय’॥597॥
‘‘अनया अनुकम्पया, देवादेवं यदा विद्।
च्यवन्तम् अनुमोदन्ति, एहि देव पुनः पुनः॥598॥
‘‘संवेगो मे तदा आसीत्, देवसङ्घे समागते।
कंसु नाम अहं योनिम्, गमिष्यामि इतश्च्युतः॥599॥

मौलिक रूप से प्रतिष्ठित तुम्हारी वह श्रद्धा सुप्रवेदित धर्म में अविचल रूप से जीवनपर्यन्त बनी रहे॥595॥

काय से, वचन से और मन से मैं बहुत से कुशल कर्म करके रागरहित मार्ग पर आरुढ़ हुआ॥596॥

वहाँ पुनर्जन्म के आधार सम्बन्धी पुण्य तथा बहुत से दान कर्म को करके अन्य मनुष्य भी सद्धर्म ब्रह्मचर्य में निवास करें॥597॥

इस अनुकम्पा से देव-अदेव को जब जाना गया, तब पतित होते हुए अनुमोदन करते है कि हे देव! पुनः पुनः आवें॥598॥

समस्त देव-संघ में तब मुझे संवेग उत्पन्न हुआ। तब मैं यहाँ से च्युत होने के उपरान्त कंसु नाम के योनि में उत्पन्न हुआ॥599॥

''मम संवेगमञ्ञाय, समणो भावितिन्द्रियो।
ममुद्धरितुकामो सो, आगच्छि मम सन्तिकं॥600॥
''सुमनो नाम नामेन, पदुमुत्तरसावको।
अत्थधम्मानुसासित्वा, संवेजेसि ममं तदा॥601॥
''तस्साहं वचनं सुत्वा, बुद्धे चित्तं पसादयिं।
तं धीरं अभिवादेत्वा, तत्थ कालंकतो अहं॥602॥
''उपपज्जिं स [उपपज्जिस्सं (सी॰)] तत्थेव, सुक्कमूलेन चोदितो।
वसन्तो मातुकुच्छिम्हि, पुन धारेति मातुया॥603॥
''तम्हा काया चवित्वान, तिदसे उपपज्जहं।
एत्थन्तरे न पस्सामि, दोमनस्समहं तदा॥604॥

''मम संवेगमाज्ञाय, श्रमणो भावितेन्द्रियः।
मामुद्धर्तुकामः सः, आगच्छत् मम सान्तिकम्॥600॥
''सुमनो नाम नाम्ना, पद्मोत्तरश्रावकः।
अर्थधर्मानुशास्य, **समविजीत्** मां तदा॥601॥
''तस्याहं वचनं श्रुत्वा, बुद्धे चित्तं प्रासादयम्।
तं धीरम् अभिवाद्य, तत्र कालकृत अहम्॥602॥
''उपपद्ये सः तत्रैव, शुक्लमूलेन चोदितः।
वसन् मातृकुक्षे, पुनः धारयति मातरि॥603॥
''तस्मात् कायात् च्यवित्वा, त्रिदशे उपपद्येऽहम्।
अत्रान्तरे न पश्यामि, दौर्मनस्यमहं तदा॥604॥

संयत इन्द्रियों वाले श्रमण मेरे संवेग को जानकर उद्धार की कामना से मेरे समीप आ गये॥600॥

सुमन नाम के पद्मोत्तर श्रावक ने अर्थधर्म की अनुशंसा करके मुझमें संवेग उत्पन्न किया॥601॥

उनके इस वचन को सुनकर मैंने बुद्ध में चित्त को प्रसादित किया और तब उन धीर का अभिवादन कर मैं वहाँ मृत्यु को प्राप्त हुआ॥602॥

कुशल कर्म से प्रेरित वह वहाँ उत्पन्न होगा और माता के गर्भ में वास करते हुए पुनः मातृत्व को धारण करेगा॥603॥

उस काय से च्युत होकर मैं (त्रिदश) देवलोक में उत्पन्न हुआ। अब यहाँ से मैं दौर्मनस्य को नहीं देखता॥604॥

''तावतिंसा चवित्वान, मातुकुच्छिं समोक्कमिं।
निक्खमित्वान कुच्छिम्हा, कण्हसुक्कं अजानहं॥605॥
''जातिया सत्तवस्सोव [जातिया सत्तवस्सेन (स्या॰)], आरामं पाविसिं अहं।
गोतमस्स भगवतो, सक्यपुत्तस्स तादिनो॥606॥
''वित्थारिके [वित्थारिते (सी॰ क॰)] पावचने, बाहुजञ्ञम्हि सासने।
अद्दसं सासनकरे, भिक्खवो तत्थ सत्थुनो॥607॥
''सावत्थि नाम नगरं, राजा तत्थासि कोसलो।
रथेन नागयुत्तेन, उपेसि बोधिमुत्तमं॥608॥
''तस्साहं नागं दिस्वान, पुब्बकम्मं अनुस्सरिं।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, समयं अगमासहं॥609॥

''त्रायस्त्रिंशात् च्यवित्वा, मातृकुक्षे समवाक्रमम्।
निष्क्राम्य कुक्षे, कृष्णशुक्लम् आजानमहम्॥605॥
''जात्या सप्तवर्षमिव, आरामं प्राविशम् अहम्।
गोतमस्य भगवतः, शाक्यपुत्रस्य तायिनः॥606॥
''विस्तारिके प्रावचने, बाहुजन्ये शासने।
अद्राक्षं शासनकरान्, भिक्षून् तत्र शास्तुः॥607॥
''श्रावस्ति नाम नगरम्, राजा तत्रासीत् कोशलः।
रथेन नागयुक्तेन, **उपायात्/उपायासीत्** बोधिमुत्तमाम्॥608॥
''तस्याहं नागं दृष्ट्वा, पूर्वकर्म अन्वस्मरम्।
अञ्जलिं प्रगृह्य, समयम् अगमाम्यहम्॥609॥

यहाँ से 33 वें कल्प में च्युत होकर माता के गर्भ में भली प्रकार पहुँचा और गर्भ से निकलकर मैंने कृष्ण एवं शुक्ल का भेद जाना॥605॥

मैं शाक्यपुत्र, उन गौतम भगवान् के आराम में प्रविष्ट हुआ॥606॥

वहाँ मैंने बहुत जनों से युक्त शासन और विस्तृत प्रवचन में शास्त्रों के लिखने वाले शास्ता के भिक्षुओं को देखा॥607॥

श्रावस्ती नामक नगर था, कोशल वहाँ का राजा था और वह हाथी से युक्त रथ पर चढ़कर उत्तम बोधि के समीप गया॥608॥

नाग को देखकर मैंने उसके पूर्व कर्म का अनुस्मरण किया और अञ्जलि-बद्ध होकर वहाँ समय पर पहुँचा॥609॥

''जातिया सत्तवस्सोव, पब्बजिं अनगारियं।
यो सो बुद्धं उपट्ठासि, आनन्दो नाम सावको॥610॥
''गतिमा धितिमा चेव, सतिमा च बहुस्सुतो।
रञ्ञो चित्तं पसादेन्तो, निय्यादेसि महाजुति॥611॥
''तस्साहं धम्मं सुत्वान, पुब्बकम्मं अनुस्सरिं।
तत्थेव ठितको सन्तो, अरहत्तमपापुणिं॥612॥
''एकंसं चीवरं कत्वा, सिरे कत्वान अञ्जलिं।
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, इमं वाचं उदीरयिं॥613॥
'''पदुमुत्तरबुद्धस्स, द्विपदिन्दस्स सत्थुनो।
निग्गुण्डिपुप्फं पग्गय्ह, सीहासने ठपेसहं॥614॥

''जात्या सप्तवर्षेव, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
यः सः बुद्धम् उपस्थात्, आनन्दो नाम श्रावकः॥610॥
''गतिमान् धृतिमान् चैव, स्मृतिमान् च बहुश्रुतः।
राज्ञस्चित्तं प्रसादयन्, निरयातयत् महाद्युतिः॥611॥
''तस्याहं धर्म श्रुत्वा, पूर्वकर्म अन्वस्मरम्।
तत्रैव स्थितकः श्रान्तः, अर्हत्त्वमप्राप्नवम्॥612॥
''एकांशं चीवरं कृत्वा, शिरसि कृत्वा अञ्जलिम्।
सम्बुद्धम् अभिवाद्य, इमां वाचमुदैरयम्॥613॥
'''पद्मोत्तरबुद्धस्य, द्विपदिन्द्रस्य शास्तुः।
निर्गुण्डिपुष्पं प्रगृह्य, सिंहासने स्थापयमहम्॥614॥

जिसने जन्म से सात वर्ष में अनागारिक हो प्रव्रज्या ग्रहण की, वह आनन्द नामक श्रावक बुद्ध के समीप उपस्थित हुआ॥610॥

गतिमान् व धृतिमान्, स्मृतिमान् एवं बहुश्रुत महाद्युति राजा के चित्त को प्रसन्न कर वहाँ से लौटा दिया॥611॥

उनके धर्म को सुनकर मैंने पूर्व जन्म का स्मरण किया और वहीं शान्त स्थित रह कर अर्हत्व को प्राप्त किया॥612॥

अंश (कंधे) पर चीवर रखकर अञ्जलि शिर पर करके सम्बुद्ध का अभिवादन कर यह वचन कहा॥613॥

निर्गुण्डिपुष्प को ग्रहण करके पद्मोत्तर, द्विपदेन्द्र, शास्ता के लिए सिंहासन पर स्थापित किया॥614॥

‘‘‘तेन कम्मेन द्विपदिन्द, लोकजेट्ठ नरासभ।

पत्तोम्हि अचलं ठानं, हित्वा जयपराजयं’॥615॥

‘‘पञ्चवीससहस्सम्हि, कप्पानं मनुजाधिपा।

अब्बुदनिरब्बुदानि, अट्ठट्ठासिंसु खत्तिया॥616॥

‘‘पटिसम्भिदा चतस्सो…पे॰… कतं बुद्धस्स सासनं’’॥617॥

इत्थं सुदं आयस्मा निग्गुण्डिपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

निग्गुण्डिपुप्फियत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. सुमनावेळियत्थेरअपदानं

‘‘वेस्सभुस्स भगवतो, लोकजेट्ठस्स तादिनो।

सब्बे जना समागम्म, महापूजं करोन्ति ते॥618॥

‘‘सुधाय पिण्डं कत्वान, आवेळं सुमनायहं।

सीहासनस्स पुरतो, अभिरोपेसहं तदा॥619॥

‘‘‘तेन कर्मणा द्विपदिन्द्र, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।

प्राप्तोस्मि अचलं स्थानम्, हित्वा जयापराजयम्’॥615॥

‘‘पञ्चविंशत्सहस्रे, कल्पानां मनुजाधिपाः।

अर्बुदनिर्बुदानि, अष्टाष्टासन् क्षत्रियाः॥616॥

‘‘प्रतिसंविदश्चतस्रः…पे॰… कृतं बुद्धस्य शासनम्’’॥617॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् निग्गुण्डिपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

‘‘विश्वभुवः भगवतोः, लोकज्येष्ठस्य तायिनः।

सर्वे जनाः समागत्य, महापूजां कुर्वन्ति ते॥618॥

‘‘सुधया पिण्डं कृत्वा, आवेलं **सुमनसाऽहम्**।

सिंहासनस्य पुरतः, अभ्यरोपयमहं तदा॥619॥

हे द्विपदेन्द्र, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ उस कर्म से जय-पराजय को छोड़कर मैंने अचल स्थान को प्राप्त किया॥615॥

यहाँ से 25 वें कल्प में अर्बुदनिर्बुदानि आठ क्षत्रिय मनुजाधिपति हुए थे॥616॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥617॥

इस प्रकार आयुष्मान् निग्गुण्डिपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उन सभी ने वहाँ एकत्रित होकर लोकज्येष्ठ विश्वभू भगवान् की महापूजा किया॥618॥

तब मैंने प्रसन्नमन से चूने का पिण्ड और पुष्प का गुच्छा बनाकर सिंहासन के समीप अभ्यर्पित किया॥619॥

''सब्बे जना समागम्म, पेक्खन्ति पुप्फमुत्तमं।
केनिदं पूजितं पुप्फं, बुद्धसेट्ठस्स तादिनो॥620॥
''तेन चित्तप्पसादेन, निम्मानं उपपज्जहं।
अनुभोमि [अनुभोसिं (सी॰)] सकं कम्मं, पुब्बे सुकतमत्तनो॥621॥
''यं यं योनुपपज्जामि, देवत्तं अथ मानुसं।
सब्बेसानं पियो होमि, पुप्फपूजायिदं फलं॥622॥
''नाभिजानामि कायेन, वाचाय उद चेतसा।
संयतानं तपस्सीनं, कतं अक्कोसितं मया॥623॥
''तेन सुचरितेनाहं, चित्तस्स पणिधीहि च।
सब्बेसं पूजितो होमि, अनक्कोसस्सिदं फलं॥624॥

''सर्वे जनाः समागत्य, प्रेक्षन्ति पुष्पमुत्तमम्।
केनेदं पूजितं पुष्पम्, बुद्धश्रेष्ठाय तायिने॥620॥
''तेन चित्तप्रसादेन, निर्माणम् उपपद्येऽहम्।
अनुभवामि स्वकं कर्म, पूर्वे सुकृतमात्मनः॥621॥
''यां यां योनिमुपपद्ये, देवत्वम् अथ मानुषम्।
सर्वेषां प्रियो भवामि, पुष्पपूजाया इदं फलम्॥622॥
''नाभिजानामि कायेन, वाचा उद चेतसा।
संयतानां तपस्वीनाम्, कृतं आक्रोषितं मया॥623॥
''तेन सुचरितेनाऽहम्, चित्तस्य प्रणिधिभश्च।
सर्वेषां पूजितो भवामि, अनाक्रोशस्येदं फलम्॥624॥

वहाँ सभी लोग उपस्थित होकर उत्तमपुष्प को देखते हैं कि उन बुद्धश्रेष्ठ की पूजा किसके द्वारा कि गयी॥620॥

उस चित्त की प्रसन्नता से मैं मानरहित उत्पन्न होता हूँ और पूर्व में अपने द्वारा सुकृत कर्म का अनुभव करता हूँ॥621॥

मैं देव अथवा मनुष्य जिस-जिस योनि में उत्पन्न होता हूँ वहाँ सभी का प्रिय होता हूँ, यह पुष्पपूजा का ही सुपरिणाम है॥622॥

मैं ऐसा नहीं जानता कि मेरे द्वारा काय, वचन, अथवा मन से कभी संयत तपस्वियों का अपमान किया गया॥623॥

मेरे उस सदाचरण और चित्त की प्रसन्नता से मैं सभी से पूजित होता हूँ, यह न क्रोध करने का ही सुपरिणाम है॥624॥

''इतो एकादसे कप्पे, सहस्सारोसि खत्तियो।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥625॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥626॥

इत्थं सुदं आयस्मा सुमनावेळियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सुमनावेळियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. पुप्फच्छत्तियत्थेरअपदानं

''सिद्धत्थस्स भगवतो, लोकजेट्ठस्स तादिनो।

सच्चं पकासयन्तस्स, निब्बापेन्तस्स पाणिनो॥627॥

''जलजं आहरित्वान, सतपत्तं मनोरमं।

पुप्फस्स छत्तं कत्वान, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥628॥

''सिद्धत्थो च लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।

भिक्खुसङ्घे ठितो सत्था, इमं गाथं अभासथ॥629॥

''इत एकादशे कल्पे, **सहस्रारोऽसि** क्षत्रियः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥625॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥626॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सुमनावेलीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''सिद्धार्थाय भगवतः, लोकज्येष्ठाय तायिने।

सत्यं **प्रकाशयन्**, **निर्वापयन्** प्राणिनः॥627॥

''जलजम् आहृत्य, शतपत्रं मनोरमम्।

पुष्पस्य छत्रं कृत्वा, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥628॥

''सिद्धार्थश्च लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।

भिक्षुसङ्घे स्थितः शास्ता, इमा गाथा अभाषत्॥629॥

यहाँ से 11 वें कल्प में सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली हजार क्षत्रिय हुए॥625॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥626॥

इस प्रकार आयुष्मान् सुमनावेलीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

सत्यप्रकाशक, प्राणियों को निर्वाण प्राप्त कराने वाले उन लोकज्येष्ठ तायिन् सिद्धार्थ भगवान्...॥ 627॥

बुद्ध को मैंने मनोरम कमलपुष्प लाकर पुष्प का छत्र बनाकर अभ्यर्पित किया॥628॥

तब भिक्षु संघ में स्थित आहुतियों के ग्रहणकर्ता, लोकविद् तथा शास्ता सिद्धार्थ ने इन गाथाओं को कहा..॥629॥

‘‘‘‘यो मे चित्तं पसादेत्वा, पुप्फच्छत्तं अधारयिं।
तेन चित्तप्पसादेन, दुग्गतिं सो न गच्छति’’॥630॥
‘‘इदं वत्वान सम्बुद्धो, सिद्धत्थो लोकनायको।
उय्योजेत्वान परिसं, वेहासं नभमुग्गमि॥631॥
‘‘वुट्ठिते नरदेवम्हि, सेतच्छत्तम्पि वुट्ठहि।
पुरतो बुद्धसेट्ठस्स, गच्छति छत्तमुत्तमं॥632॥
‘‘चतुन्नवुतितो कप्पे, यं छत्तं अभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुप्फच्छत्तस्सिदं फलं॥633॥
‘‘चतुसत्ततिकप्पम्हि, अट्ठ जलसिखा अहू।
सत्तरतनसम्पन्ना, चक्कवत्ती महब्बला॥634॥

‘‘‘‘यो मे चित्तं प्रसाद्य, पुष्पच्छत्रम् अधारयम्।
तेन चित्तप्रसादेन, दुर्गतिं सः न गच्छति’’॥630
‘‘इदम् उक्त्वा सम्बुद्धः, सिद्धार्थो लोकनायकः।
उद्युज्य परिषदि, वैहायसं नभमुद्गमत्॥631॥
‘‘स्थिते नरदेवे, श्वेतच्छत्रमपि स्थितैः।
पुरतः बुद्धश्रेष्ठस्य, गच्छति छत्रमुत्तमम्॥632॥
‘‘चतुर्णवतितमे कल्पे, यच्छत्रम् अभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुष्पच्छत्रस्येदं फलम्॥633॥
‘‘चतुर्सप्ततिकल्पे, अष्ट जलशिखा अभूत्।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, चक्रवर्त्तिमहाबलाः॥634॥

जिसने मेरे में चित्त को प्रसादित कर मुझे छत्र धारण कराया था, यह उस चित्त की प्रसन्नता से वह दुर्गति को नहीं जानता ॥630॥

यह कह कर सिद्धार्थ, लोकनायक, सम्बुद्ध परिषद को प्रेरित कर आकाश की ओर चले गये ॥631॥

नरदेव बुद्ध-श्रेष्ठ के स्थित होने पर उनके सामने उत्तम श्वेत छत्र स्थित हो चला गया ॥632॥

अब से 94 वें कल्प में जो छत्र अभिरोपित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता ॥633॥

अब से 74 वें कल्प में जलशिखा नामक आठ महाबलशाली सप्तरत्नसम्पन्न चक्रवर्ती हुए थे ॥634॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥635॥

इत्थं सुदं आयस्मा पुप्फच्छत्तियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पुप्फच्छत्तियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. सपरिवारछत्तदायकत्थेरअपदानं

''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।

आकासे जलवुट्ठीव वस्सते [वस्सति (सी० स्या०), वस्सेति (?)] धम्मवुट्ठिया॥636॥

''तमद्दसासिं सम्बुद्धं, देसेन्तं अमतं पदं।

सकं चित्तं पसादेत्वा, अगमासिं सकं घरं॥637॥

''छत्तं अलङ्कतं गय्ह, उपगच्छिं नरुत्तमं।

हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, आकासे उक्खिपिं अहं॥638॥

''सुसङ्गहितयानंव, दन्तोव सावकुत्तमो।

उपगन्त्वान सम्बुद्धं, मत्थके सम्पतिट्ठहि॥639॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥635॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पुष्पच्छत्रीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।

आकाशे जलवृष्टिरिव वर्षति धर्मवृष्ट्याः॥636॥

''तमद्राक्षम् सम्बुद्धम्, देशयन् अमृतं पदम्।

स्वकं चित्तं प्रसाद्य, अगमामि स्वकं गृहम्॥637॥

''छत्रम् अलङ्कृतं गृह्य, उपागच्छं नरोत्तमम्।

हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, आकाशे उतक्षिपम् अहम्॥638॥

''सुसङ्गृहीतयानमिव, दान्त इव श्रावकुत्तमः।

उपगत्य सम्बुद्धम्, मस्तके सम्प्रतिष्ठ॥639॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥635॥

इस प्रकार आयुष्मान् पुष्पच्छत्रीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पद्मोत्तर, लोकविद, आहुतियों के ग्रहणकर्ता ने आकाश से जैसे जल वर्षा हो इस तरह धर्म की वर्षा की॥636॥

अमृतपद की देशना करते हुए उन बुद्ध को मैंने देखा और अपने चित्त को प्रसन्न कर अपने घर आ गया॥637॥

अलंकृत छत्र को ग्रहण कर नरोत्तम के समीप गया और अपने चित्त को अत्यधिक प्रसन्न कर मैंने आकाश में उछाल दिया ॥638॥

जिस प्रकार उत्तम श्रावक (राजकुमार) सुसज्जित यान पर प्रतिष्ठित होता है, उसी प्रकार सम्बुद्ध के समीप पहुँच कर मैं शीर्ष पर प्रतिष्ठित हुआ ॥639॥

‘‘अनुकम्पको कारुणिको, बुद्धो लोकग्गनायको।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥640॥
‘‘‘येन छत्तमिदं दिन्नं, अलङ्कतं मनोरमं।
तेन चित्तप्पसादेन, दुग्गतिं सो न गच्छति॥641॥
‘‘‘सत्तक्खत्तुञ्च देवेसु, देवरज्जं करिस्सति।
बात्तिंसक्खत्तुञ्च राजा, चक्कवत्ती भविस्सति॥642॥
‘‘‘कप्पसतसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥643॥
‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो’’॥644॥

‘‘अनुकम्पकः कारुणिकः, बुद्धो लोकाग्रनायकः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमा गाथा अभाषत॥640॥
‘‘‘येन छत्रमिदं दत्तम्, अलङ्कृतं मनोरमम्।
तेन चित्तप्रसादेन, दुर्गतिं सः न गच्छति॥641॥
‘‘‘सप्तकृत्वञ्च देवेसु, देवराज्यं करिष्यति।
द्वात्रिंशत्कृत्वञ्च राजा, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥642॥
‘‘‘कल्पशतसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥643॥
‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यति अनास्रवः’’॥644॥

अनुकम्पा करने वाले कारुणिक, बुद्ध, लोकअग्रनायक ने भिक्षु संघ में बैठकर इन आथाओं को कहा॥640॥

जिसने मुझे अलंकृत मनोरम छत्र का दान दिया था, उस चित्त के प्रसाद से वह दुर्गति को नहीं जायेगा॥641॥

सात बार देवताओं में देव राज्य करेगा और बत्तीस बार चक्रवर्ती राजा होगा॥642॥

सौ हजारवें कल्प में इक्ष्वाकु कुल में गौतम नामक गोत्र से वह इस लोक में शास्ता होगा ॥643॥

उनके धर्म का अधिकारी, औरस और धर्मनिर्मित वह सभी आश्रवों को जानकर अनास्रव हो निर्वाण प्राप्त कर लेगा ॥644॥

''बुद्धस्स गिरमञ्ञाय, वाचासभिमुदीरितं।
पसन्नचित्तो सुमनो, भिय्यो हासं जनेसहं॥645॥
''जहित्वा मानुसं योनिं, दिब्बं योनिं मज्झगं।
विमानमुत्तमं मय्हं, अब्भुग्गतं मनोरमं॥646॥
''विमाना निक्खमन्तस्स, सेतच्छत्तं धरीयति।
तदा सञ्ञं पटिलभिं, पुब्बकम्मस्सिदं फलं॥647॥
''देवलोका चवित्वान, मनुस्सत्तञ्च आगमिं।
छत्तिंसक्खत्तुं चक्कवत्ती, सत्तकप्पसतम्हितो॥648॥
''तम्हा काया चवित्वान, आगच्छिं तिदसं पुरं।
संसरित्वानुपुब्बेन, मानुसं पुनरागमिं॥649॥

''बुद्धस्य गीरमाज्ञाय, वाचमार्षभीमुदीरितम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, भूयः हासं **अजायेऽहम्** ॥645॥
''हित्वा मानुषं योनिम्, दिव्यं योनिमध्यगाम्।
विमानमुत्तमं मह्यम्, अभ्युद्गतं मनोरमम्॥646॥
''विमानात् **निष्क्रमन्तस्य**, श्वेतच्छत्रं धरीयति।
तदा संज्ञां प्रत्यलभे, पूर्व कर्मण इदं फलम्॥647॥
''देवलोकात् च्यवित्वा, मनुष्यत्वञ्च अगमम्।
षट्त्रिंशकृत्वञ्च चक्रवर्ती, **सप्तकल्पशत्तमे**॥648॥
''तस्मात् कायात् च्यवित्वा, अगच्छं त्रिदशं पुरम्।
संसृत्यानुपूर्वेण, मानुषं पुनरागमम्॥649॥

बुद्ध द्वारा कथित आर्षभ वाणी को जानकर मुझ प्रसन्नचित्त और सौमनस्य में अत्यन्त आनन्द उत्पन्न हुआ॥645॥

मैं मनुष्य योनि को त्याग कर दिव्य योनि में उत्पन्न हुआ जहाँ मेरे लिए एक आकाश में अभ्युद्गत एवं मनोरम विमान प्रकट हुआ ॥646॥

विमान से निकलने पर मैं स्वेतछत्र को धारण करता था। मेरे पूर्वकर्म के परिणाम स्वरूप मैंने संज्ञा का प्रतिलाभ किया॥647॥

सात सौवें कल्प में देवलोक से च्युत होकर मैं मनुष्यत्व में आ गया जहाँ 36 बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥648॥

उस काय से च्युत हो कर मैं देवलोक को गया और क्रमशः एक योनि से दूसरे योनि में संसर्ग करते हुए पुनः मनुष्ययोनि में आ गया ॥649॥

''ओक्कन्तं मातुकुच्छिं मं, सेत्तच्छत्तं अधारयुं।
जातिया सत्तवस्सोहं, पब्बजिं अनगारियं॥650॥
''सुनन्दो नाम नामेन, ब्राह्मणो मन्तपारगू।
फलिकं छत्तमादाय, सावकग्गस्स सो तदा॥651॥
''अनुमोदि महावीरो, सारिपुत्तो महाकथी।
सुत्वानुमोदनं तस्स, पुब्बकम्ममनुस्सरिं॥652॥
''अञ्जलिं पग्गहेत्वान, सकं चित्तं पसादयिं।
सरित्वा पुरिमं कम्मं, अरहत्तमपापुणिं॥653॥
''उट्ठाय आसना तम्हा, सिरे कत्वान अञ्जलिं।
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, इमं वाचं उदीरियिं॥654॥

''अवक्रान्तं मातृकुक्षे मम, श्वेतच्छत्रम् अधारयम्।
जात्या सप्तवर्षोऽहम्, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥650॥
''सुनन्दो नाम नाम्ना, ब्राह्मणो मन्त्रपारगः।
फलिकं छत्रमादाय, श्रावकाग्राय सस्तदा॥651॥
''अन्वमोदत् महावीरः, सारिपुत्रो महाकथी।
श्रुत्वानुमोदनं तस्य, पूर्वकर्ममन्वस्मरम्॥652॥
''अञ्जलिं प्रगृह्य, स्वकं चित्तं प्रासादयम्।
स्मृत्वा पूर्व कर्म, अर्हत्वमप्राप्नवम्॥653॥
''उत्थाय आसनात् तस्मात्, शिरसि कृत्वा अञ्जलिम्।
सम्बुद्धम् अभिवाद्य, इमां वाचम् उदैरयम्॥654॥

मातृकुक्षि में प्रवेश करते हुए मुझे श्वेतच्छत्र धारण कराया गया और जन्म से सात वर्षों में मैंने अनागारिक प्रवज्या ग्रहण की ॥650॥

मन्त्र में पारंगत सुनन्द नाम के ब्राह्मण ने तब श्रावकों के अग्र को फलकयुक्त छत्र प्रदान किया ॥651॥

महाकथन करने वाले सारिपुत्र, महावीर ने अनुमोदन किया और उनके अनुमोदन को सुनकर मैंने पूर्व जन्म का स्मरण किया ॥652॥

अञ्जलिबद्ध हो मैंने अपने चित्त को प्रसन्न कर पूर्वकर्म का स्मरण किया और अर्हत्व को प्राप्त किया ॥653॥

उस आसन से उठकर शिर से अञ्जलिबद्ध प्रणाम करके सम्बुद्ध का अभिवादन कर मैंने इन वचनों को कहा॥654॥

''सतसहस्सितो कप्पे, बुद्धो लोके अनुत्तरो।

पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो॥655॥

''तस्स छत्तं मया दिन्नं, विचित्तं समलङ्कतं।

उभो हत्थेहि पग्गण्हि, सयम्भू अग्गपुग्गलो॥656॥

''अहो बुद्धो अहो धम्मो, अहो नो सत्थुसम्पदा।

एकच्छत्तस्स दानेन, दुग्गतिं नुपपज्जहं॥657॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।

सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥658॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥659॥

इत्थं सुदं आयस्मा सपरिवारछत्तदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सपरिवारछत्तदायकत्थेरस्सापदानं दसमं।

उमापुप्फियवग्गो तेत्तिंसतिमो।

''शतसहस्र इतः कल्पे, बुद्धो लोके अनुत्तरः।

पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः॥655॥

''तस्मै छत्रं मया दत्तम्, विचित्रं समलङ्कृतम्।

उभाभ्यां हस्ताभ्यां प्रत्यगृह्णात्, स्वयम्भू अग्रपुद्गलः॥656॥

''अहो बुद्ध अहो धर्म, अहो नो शास्तृसम्पदा।

एकच्छत्रस्य दानेन, दुर्गतिं नोपपद्येऽहम्॥657॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।

सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥658॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥659॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सपरिवारच्छत्रदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में आहुतियों के ग्रहणकर्ता, पद्मोत्तर, लोकविद् बुद्ध लोक हुए॥655॥

मेरे द्वारा उन्हें विविध अलंकारों से अलंकृत छत्र प्रदान किया गया जिसे स्वयम्भु अग्रपुद्गल ने उसे दोनों हाथों से ग्रहण किया॥656॥

अद्भुत हैं बुद्ध, अद्भुत है धर्म, अद्भुत है संघसम्पदा। उस एक छत्रदान के कारण मैं दुर्गति में उत्पन्न नहीं होता॥657॥

मेरे भवरूपी क्लेश समूल नष्ट हो गये और सभी आस्रवों को जान कर मैं अनास्रव हो विचरण करने लगा॥658॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥659॥

इस प्रकार आयुष्मान् सपरिवारच्छत्रदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तस्सुद्दानं –

उमापुप्फञ्च पुलिनं, हासो यञ्ञो निमित्तको।
संसावको निग्गुण्डी च, सुमनं पुप्फछत्तको।
सपरिवारछत्तो च, गाथा सत्तसतुत्तराति॥

तस्योदानम् –

उमापुष्पञ्च पुलिनम्, हासः यज्ञः निमित्तकः।
संस्रावकः निग्गुण्डी च, सुमनं पुष्पच्छत्रकः।
सपरिवारच्छत्रश्च, गाथा सप्तशतुत्तरा इति॥

उनके उदान- उमापुष्पिय, पुलिन, हासजनक, यञ्ञसामिक, निमित्तक, अन्नसंसावक, निग्गुण्डि सुमनवेलिय और पुष्पच्छक सपरिवारछत्र इस प्रकार यहां पर एक सौ पाँच गाथाओं का वर्णन है।

34. गन्धोदकवग्गो

1. गन्धधूपियत्थेरअपदानं

पालि- ‘‘सिद्धत्थस्स भगवतो, गन्धधूपं अदासहं।
सुमनेहि पटिच्छन्नं, बुद्धानुच्छविकञ्च तं॥660
‘‘कञ्चनग्घियसङ्कासं, बुद्धं लोकग्गनायकं।
इन्दीवरंव जलितं, आदित्तंव हुतासनं॥661॥
‘‘ब्यग्घुसभंव पवरं, अभिजातंव केसरिं।
निसिन्नं समणानग्गं, भिक्खुसङ्घपुरक्खतं॥662॥
‘‘दिस्वा चित्तं पसादेत्वा, पग्गहेत्वान अञ्जलिं।
वन्दित्वा सत्थुनो पादे, पक्कामिं उत्तरामुखो॥663॥
‘‘चतुन्नवुतितो कप्पे, यं गन्धमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, गन्धपूजायिदं फलं॥664॥

संस्कृत- ‘‘सिद्धार्थाय भगवते, गन्धधूपम् अदामहम्।
सुमनोभिः प्रतिच्छन्नम्, बुद्धानुच्छविकञ्च तम्॥660॥
‘‘काञ्चनार्घीयसङ्काशम्, बुद्धं लोकाग्रनायकम्।
इन्दीवरमिव ज्वलितम्, आदीप्तमिव हुताशनम्॥661॥
‘‘व्याघ्रर्षभमिव प्रवरम्, अभिजातमिव केशरीम्।
निषण्णं श्रमणाग्रम्, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतम्॥662॥
‘‘दृष्ट्वा चित्तं प्रसाद्य, प्रगृह्य अञ्जलिम्।
वन्दित्वा शास्तुः पादौ, प्राक्रामम् उत्तरमुखः॥663॥
‘‘चतुर्णवतितमे कल्पे, यं गन्धमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, गन्धपूजाया इदं फलम्॥664॥

हिन्दी- प्रसन्नमन से व्याप्त, योग्य, सिद्धार्थ, बुद्ध भगवान् को मेरे द्वारा गन्ध और धूप प्रदान किया गया॥660॥

नीलकमल के समान चमकीला, अग्नि के समान आदीप्त तथा कञ्चन अर्घ के समान प्रकाशित लोकाग्रनायक बुद्ध को.. ॥661॥

सिंह के समान प्रवर, कुलोत्पन्न श्रेष्ठ, श्रमणों के अग्र तथा भिक्षुसंघ से पुरस्कृत बैठे हुए बुद्ध को -॥662॥

देखकर चित्त को प्रसन्न कर अञ्जलिबद्ध हो उनके चरणों की वन्दना कर मैं उत्तरमुख होकर चला गया॥663॥

अब से 94 वें कल्प में मैंने जो गन्ध प्रदान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥664॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥665॥
इत्थं सुदं आयस्मा गन्धधूपियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
गन्धधूपियत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. उदकपूजकत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, गच्छन्तं अनिलञ्जसे।
घतासनंव जलितं, आदित्तंव हुतासनं॥666॥
''पाणिना उदकं गय्ह, आकासे उक्खिपिं अहं।
सम्पटिच्छि महावीरो, बुद्धो कारुणिको इसि॥667॥
''अन्तलिक्खे ठितो सत्था, पदुमुत्तरनामको।
मम सङ्कप्पमञ्ञाय, इमं गाथमभासथ॥668॥
'''इमिना दकदानेन, पीतिउप्पादनेन च।
कप्पसतसहस्सम्पि, दुग्गतिं नुपपज्जसि'॥669॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षाऽपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥665॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् गन्धधूपीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, गच्छन्तम् अनिलञ्जसे।
घृतासनमिव ज्वलितम्, आदीप्तमिव हुताशनम्॥666॥
''पाणिना उदकं गृहीत्वा, आकाशे उदक्षिपम् अहम्।
सम्प्रत्यैच्छत् महावीरः, बुद्धः कारुणिकः ऋषिः॥667॥
''अन्तरिक्षे स्थितः शास्ता, पद्मोत्तरनामकः।
मम सङ्कल्पमाज्ञाय, इमां गाथामभाषत्॥668॥
'''अनेन उदकदानेन, प्रीतिरुत्पादनेन च।
कल्पशतसहस्रमपि, दुर्गतिं नोपपद्यसे'॥669॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥665॥
इस प्रकार आयुष्मान् गन्धधूपीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-
अग्नि के समान प्रज्वलित और आदीप्त सुवर्णवर्ण वाले सम्बुद्ध को वायुमार्ग से जाते हुए-॥666॥
अञ्जलि में जल को ग्रहण कर मैंने आकाश में उछाला तब कारुणिक, ऋषि, महावीर, बुद्ध ने उसे शीघ्र ही प्राप्त कर लिया॥667॥
तब पद्मोत्तर नाम के शास्ता ने अन्तरिक्ष में स्थित रह कर मेरे संकल्प को जानकर इन गाथाओं को कहा- ॥668॥
जिसने मुझे जल का दान दिया और मुझमें प्रीति को उत्पन्न किया वह हजार कल्प में भी दुर्गति में उत्पन्न नहीं होगा॥669॥

''तेन कम्मेन द्विपदिन्द, लोकजेट्ठ नरासभ।

पत्तोम्हि अचलं ठानं, हित्वा जयपराजयं॥670॥

''सहस्सराजनामेन, तयो च चक्कवत्तिनो।

पञ्चसट्ठिकप्पसते, चातुरन्ता जनाधिपा॥671॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥672॥

इत्थं सुदं आयस्मा उदकपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

उदकपूजकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. पुन्नागपुप्फियत्थेरअपदानं

''काननं वनमोगय्ह, वसामि लुद्दको अहं।

पुन्नागं पुप्फितं दिस्वा, बुद्धसेट्ठं अनुस्सरिं॥673॥

''तं पुप्फं ओचिनित्वान, सुगन्धं गन्धितं सुभं।

थूपं कत्वान पुलिने, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥674॥

''तेन कर्मणा द्विपदेन्द्र, लोकज्येष्ठ नरर्षभ।

प्राप्तोस्मि अचलं स्थानम्, हित्वा जयापराजयम्॥670॥

''सहस्रराजनाम्ना, त्रयश्च चक्रवर्त्तिनः।

पञ्चषष्टिकल्पशते, चातुरन्तः जनाधिपाः॥671॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥672॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् उदकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''काननं वनमवगाह्य, वसामि लुब्धकोऽहम्।

पुन्नागं पुष्पितं दृष्ट्वा, बुद्धश्रेष्ठम् अन्वस्मरम्॥673॥

''तत् पुष्पम् अवचित्य, सुगन्धं गन्धितं शुभम्।

स्तूपं कृत्वा पुलिने, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥674॥

हे द्विपदेन्द्र!, लोकज्येष्ठ!, नरर्षभ! उस कर्म से मैंने जय-पराजय को छोड़कर अचलस्थान को प्राप्त किया॥670॥

वहाँ से पैंसठ सौवें कल्प में सहस्रराज नामक चारो दिशाओं का विजेता तीन राजा हुए॥671॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥672॥

इस प्रकार आयुष्मान् उदकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

घने वन में प्रवेश कर मैं शिकारी के रूप में निवास करने लगा तब पुष्पित पुन्नाग को देखकर मैंने बुद्धश्रेष्ठ का स्मरण किया॥673॥

उस सुगन्धित शुभ पुष्प को तोड़कर बालू पर स्तूप बनाकर बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥674॥

''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥675॥

''एकम्हि नवुते कप्पे, एको आसिं तमोनुदो।

सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो॥676॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥677॥

इत्थं सुदं आयस्मा पुन्नागपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पुन्नागपुप्फियत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. एकदुस्सदायकत्थेरअपदानं

''नगरे हंसवतिया, अहोसिं तिणहारको।

तिणहारेन जीवामि, तेन पोसेमि दारके॥678॥

''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।

तमन्धकारं नासेत्वा, उप्पज्जि लोकनायको॥679॥

''द्विनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥675॥

''एकोस्मि नवति कल्पे, एक आसं तमोनुदः।

सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः॥676॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥677॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पुन्नागपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नगर्यां हंसवत्याम्, अभूवं तृणहारकः।

तृणहारेण जीवामि, तेन पोषयामि दारकान्॥678

''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्मान् पारगः।

तमोऽन्धकारं नाशयित्वा, उपापद्यत् लोकनायकः॥679॥

इससे 92 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥675॥

इससे 9 वें कल्प में अन्धकार को दूर करने वाला सप्तरत्नसम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली एक राजा हुआ॥676॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥677॥

इस प्रकार आयुष्मान् पुन्नागपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय हंसवती नामक नगरी में मैं घसियारा हुआ और घास काटने का कार्य कर जीवन जीता था, उससे बच्चों का पालन-पोषण करता था॥678॥

तब तम व अन्धकार का नाश कर सभी धर्मों में पारंगत पद्मोत्तर नाम के जिन लोकनायक उत्पन्न हुए॥679॥

''सके घरे निसीदित्वा, एवं चिन्तेसहं तदा।
'बुद्धो लोके समुप्पन्नो, देय्यधम्मो च नत्थि मे॥680॥
'''इदं मे साटकं एकं, नत्थि मे कोचि दायको।
दुक्खो निरयसम्फस्सो, रोपयिस्सामि दक्खिणं'॥681॥
''एवाहं चिन्तयित्वान, सकं चित्तं पसादयिं।
एकं दुस्सं गहेत्वान, बुद्धसेट्ठस्सदासहं॥682॥
''एकं दुस्सं ददित्वान, उक्कुट्ठिं सम्पवत्तयिं।
यदि बुद्धो तुवं वीर, तारेहि मं महामुनि॥683॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
मम दानं पकित्तेन्तो, अका मे अनुमोदनं॥684॥

''स्वके गृहे निसीद्य, एवमचिन्तयमहं तदा।
'बुद्धो लोके समुत्पन्नः, देयधर्मश्च नास्ति मे॥680॥
'''इदं मे साटकं एकम्, नास्ति मे कश्चिद् दायकः।
दुःख निरयसंस्पर्षः, रोपयिश्यामि दक्षिणम्'॥681॥
''एवमहं चिन्तयित्वा, स्वकं चित्तं प्रासादयम्।
एकं दूष्यं गृहीत्वा, बुद्धश्रेष्ठायादामहम्॥682॥
''एकं दूष्यं दत्वा, उत्क्रोश्टं सम्प्रावर्त्तयम्।
यदि बुद्धस्त्वं वीर, तारैः मां महामुनिः॥683॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
मम दानं प्रकीर्त्तयन्, **अका/अकार्षीत्** मे अनुमोदनम्॥684॥

तब मैंने अपने घर में बैठकर इस प्रकार चिन्तन किया कि बुद्ध लोक में उत्पन्न हो गये हैं और मेरे पास कोई देय (दातव्य) धर्म नहीं है॥680॥

यह मेरा एक ही वस्त्र है, मेरे पास कुछ अन्य दायक नहीं है। नरक का स्पर्श भी दुःखकर है अतः (उससे बचने हेतु) इसे मैं दक्षिणा में दूगाँ॥681॥

इस प्रकार चिन्तन करके अपने चित्त को प्रसन्न कर एक कपड़े को ग्रहण करके मैंने बुद्धश्रेष्ठ को प्रदान किया॥682॥

हे बुद्ध वीर महामुनि! मैंने जो एक वस्त्र का दान किया तो मुझे तारने की महान् घोषणा हुई॥683॥

पद्मोत्तर, लोकविद्, आहुतियों के ग्रहणकर्ता ने मेरे दान की प्रशंसा करते हुए मेरा अनुमोदन किया॥684॥

‘‘‘इमिना एकदुस्सेन, चेतनापणिधीहि च।
कप्पसतसहस्सानि, विनिपातं न गच्छति॥685॥
‘‘‘छत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति।
तेत्तिंसक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥686॥
‘‘‘देवलोके मनुस्से वा, संसरन्तो तुवं भवे।
रूपवा गुणसम्पन्नो, अनवक्कन्तदेहवा।
अक्खोभं अमितं दुस्सं, लभिस्ससि यदिच्छकं’॥687॥
‘‘इदं वत्वान सम्बुद्धो, जलजुत्तमनामको।
नभं अब्भुग्गमी धीरो, हंसराजाव अम्बरे॥688॥
‘‘यं यं योनुपपज्जामि, देवत्तं अथ मानुसं।
भोगे मे ऊनता नत्थि, एकदुस्सस्सिदं फलं॥689॥

‘‘‘अनेन एकदूष्येन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
कल्पशतसहस्राणि, विनिपातं न गच्छति॥685॥
‘‘‘षट्त्रिंशत्कृत्वश्च देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति।
त्रयस्त्रिंशत्कृत्वश्च राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातः असङ्ख्यम्॥686॥
‘‘‘देवलोके मनुष्ये वा, संसरन् त्वं भवे।
रूपवान् गुणसम्पन्नः, अनवक्रान्तदेहवान्।
अक्षोभम् अमितं दूष्यम्, लभिष्यसि यदिच्छकम्’॥687॥
‘‘इदम् उक्त्वा सम्बुद्धः, जलजोत्तमनामकः।
नभम् अभ्युदगमत् धीरः, हंसराज इव अम्बरे॥688॥
‘‘यां यां योनिमुपपद्ये, देवत्त्वम् अथ मानुषम्।
भोगे मे ऊनता नास्ति, एकदूष्यस्य इदं फलम्॥689॥

चेतना व सङ्कल्प पूर्वक उस एक वस्त्रदान के परिणामस्वरूप वह सौ हजार कल्पों तक दुःख भोगने के स्थान में नहीं जायेगा॥685॥

36 बार वह देवताओं में देवेन्द्र हो राज्य करेगा और 33 बार गणना मे असङ्ख्य विपुल प्रदेश राज्य का चक्रवर्ती राजा होगा॥686॥

भव में तुम देवलोक अथवा मनुष्यलोक में रूपवान् और जिसको जीता न जा सके, ऐसे शरीर को धारण कर संसरण करोगे और यथेच्छ, असीमित एवं क्षोभ-रहित वस्त्र प्राप्त करोगे॥687॥

ऐसा कह कर धीर (बुद्धिमान) जलजोत्तर नामक सम्बुद्ध हंसराज के समान आकाश में चले गये॥688॥

यह एक दूष्य-दान का ही सुपरिणाम है कि मैं देव अथवा मानुष जिस-जिस योनि में उत्तपन्न होता हूँ, मेरे भोग में न्यूनता नहीं रहती॥689॥

''पदुद्धारे पदुद्धारे, दुस्सं निब्बत्तते ममं।
हेट्ठा दुस्सम्हि तिट्ठामि, उपरि छदनं मम॥690॥
''चक्कवाळमुपादाय, सकाननं सपब्बतं।
इच्छमानो चहं अज्ज, दुस्सेहि छादयेय्यहं॥691॥
''तेनेव एकदुस्सेन, संसरन्तो भवाभवे।
सुवण्णवण्णो हुत्वान, संसरामि भवाभवे॥692॥
''विपाकं एकदुस्सस्स, नज्झगं कत्थचिक्खयं।
अयं मे अन्तिमा जाति, विपच्चति इधापि मे॥693॥
''सतसहस्सितो कप्पे, यं दुस्समददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, एकदुस्सस्सिदं फलं॥694॥

''पदुद्धारे पदुद्धारे, दूष्यं निर्वर्त्तते माम्।
अधस्ताद् दूष्ये तिष्ठामि, उपरि छादनं मम॥690॥
''चक्रवालमुपादाय, सकाननं सपर्वतम्।
इच्छमानश्चाऽहम् अद्य, **दूष्यैः छदेयमहम्**॥691॥
''तेनैव एकदूष्येन, संसरन् भवाभवे।
सुवर्णवर्णो भूत्वा, संसरामि भवाभवे॥692॥
''विपाकम् एकदूष्यस्य, नाध्यगां कुत्रचित् क्षयम्।
अयं मे **अन्तिमा** जातिः, विपच्यति इहापि मे॥693॥
''शतसहस्र इतः कल्पे, यद्दूष्यमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, एकदूष्यस्येदं फलम्॥694॥

उस दूष्य के दान से मेरी प्रदुष्टता दूर हो गई है और मेरा पुनरुद्धार हो गया है, मैं नीचे दूष्य पर बैठा हूँ और ऊपर दूष्य का छादन है॥690॥

आज यदि मै चाहूँ तो कानन, पर्वत सहित चक्रवाल को वस्त्रों से आच्छादित कर दूँ॥691॥

उसी एक कपड़े से मैं भव और अभव में संसरण करते हुए, स्वर्णरूपी होकर भव अभव में संसरण करता हूँ॥692॥

एक दुष्य का परिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं पाता हूँ और यह मेरा अन्तिम जन्म है यहाँ भी मैं कष्ट को नहीं पाता हूँ॥693॥

इससे सौ हजार कल्प में जो दूष्य का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥694॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।

नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥695॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥696॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकदुस्सदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकदुस्सदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. फुसितकम्पियत्थेरअपदानं

''विपस्सी नाम [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति] सम्बुद्धो, लोकजेट्ठो नरासभो।

खीणासवेहि सहितो, सङ्घारामे वसी तदा॥697॥

''आरामद्वारा निक्खम्म, विपस्सी [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति] लोकनायको।

सह सतसहस्सेहि, अट्ठ [सहस्ससततसिस्सेहि, अट्ठ (क॰), अट्ठ सतसहस्सेहि, सह (?)] खीणासवेहि सो॥398॥

''अजिनेन निवत्थोहं, वाकचीरधरोपि च।

कुसुमोदकमादाय [कुसुम्भोदक... (सी॰ स्या॰)], सम्बुद्धं उपसङ्कमिं॥699॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।

नाग इव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥695॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥696॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकदूष्यदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''विपश्यी नाम सम्बुद्धः, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।

क्षीणाश्रवैः सहितः, सङ्घारामे अवसत् तदा॥697॥

''आरामद्वारात् निष्क्रम्य, विपश्यी लोकनायकः।

सह शतसहस्रैः, अष्ट क्षीणाश्रवैः सः॥698॥

''अजिनेन निर्वस्त्रोहम्, वाकचीरधरोऽपि च।

कुसुमोदकमादाय सम्बुद्धम् उपसमक्राम्यम्॥699॥

मेरे भव रूपी क्लेश समूल नष्ट हो गये और जैसे हाथी बन्धन तोड़कर विचरण करता है वैसे ही मैं अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥695॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥696॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकदूष्यदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तब विपश्यी नामक, सम्बुद्ध, लोकज्यष्ठ, नरर्षभ ने क्षीणाश्रव रहित हो सङ्घाराम में वास किया॥697॥

आठ लाख क्षीणाश्रव रहित वह विपश्यी, लोकनायक आरामद्वार से निकलकर.. ॥698॥

मृगचर्म को पूर्ण रूप से धारण किये हुए और वल्कल चीवर धारण किये हुए मैं कुसुम और उदक को ग्रहण कर सम्बुद्ध के समीप गया॥699॥

''सकं चित्तं पसादेत्वा, वेदजातो कताञ्जली।
कुसुमोदकमादाय, बुद्धमब्भुक्किरिं अहं॥700॥
''तेन कम्मेन सम्बुद्धो, जलजुत्तमनामको [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति]।
मम कम्मं पकित्तेत्वा, अगमा येन पत्थितं॥701॥
''फुसिता पञ्चसहस्सा, येहि पूजेसहं जिनं।
अड्ढतेय्यसहस्सेहि, देवरज्जं अकारयिं॥702॥
''अड्ढतेय्यविंशत्सहस्रैः, चक्कवत्ती अहोसहं।
अवसेसेन कम्मेन, अरहत्तमपापुणिं॥703॥
''देवराजा यदा होमि [अहोसिं (स्या॰ क॰)], मनुजाधिपती यदा [तदा (स्या॰ क॰)]।
तमेव नामधेय्यं मे, फुसितो नाम होमहं॥704॥

''स्वकं चित्तं प्रसाद्य, वेदजातः कृताञ्जलिः।
कुसुमोदकमादाय, **बुद्धमद्भुतकार्षम्** अहम्॥700॥
''तेन कर्मणा सम्बुद्धः, जलजोत्तमनामकः।
मम कर्म **प्रकीर्त्य**, **अगमाः** येन प्रार्थितम्॥701॥
''स्पृष्टाः पञ्चसहस्राः, येहि अपूजयमहं जिनम्।
अर्द्धत्रयस्सहस्रैः, देवराज्यम् अकारयम्॥702॥
''अर्द्धत्रयविंशत्सहस्रैः, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्।
अवशेषेन कर्मणा, अर्हत्वमप्राप्नवम्॥703॥
''देवराजा यदा भवामि, मनुजाधिपतिः यदा।
तमेव नामधेयं मे, फुसितो नाम भवाम्यहम्॥704॥

अपने चित्त को प्रसादित कर आनन्दित हो अञ्जलिबद्ध कुसुम और उदक ग्रहण कर बुद्ध को मैंने सिञ्चित किया॥700॥

उस कर्म से जिसके द्वारा कामना की गई है ऐसे कर्म का विस्तार कर जलजोत्तम नामक सम्बुद्ध यहाँ से चले गये॥701॥

पाँच हजार बार ये जो मैंने जिन की पूजा की उसका ये पुण्य है कि मैंने ढाई हजार वर्ष देवताओं में राज्य किया॥702॥

ढाई हजार वर्ष में मैं चक्रवर्ती हुआ और अवशेष कर्म में अर्हत्व को प्राप्त किया॥703॥

जब मैं देवताओं का राजा होऊ या मनुजाधिपति होऊँ तब मैं फुसित नास से युक्त होता हूँ॥704॥

''देवभूतस्स सन्तस्स, अथापि मानुसस्स वा।
समन्ता ब्यामतो मय्हं, फुसितंव पवस्सति॥705॥
''भवा उग्घाटिता मय्हं, किलेसा झापिता मम।
सब्बासवपरिक्खीणो, फुसितस्स इदं फलं॥706॥
''चन्दनस्सेव मे काया, तथा गन्धो पवायति।
सरीरतो मम गन्धो, अड्ढकोसे पवायति॥707॥
''दिब्बगन्धं सम्पवन्तं, पुञ्ञकम्मसमङ्गिनं।
गन्धं घत्वान जानन्ति, फुसितो आगतो इध॥708॥
''साखापलासकट्ठानि, तिणानिपि च सब्बसो।
मम सङ्कप्पमञ्ञाय, गन्धो सम्पज्जते खणे॥709॥

''देवभूतस्य श्रान्तस्य, अथाऽपि मानुषस्य वा।
समन्तात् व्यामतो मह्यम्, स्पृष्टमिव प्रवर्षति॥705॥
''भवा उद्घाटिता मह्यम्, क्लेशाः दाहिता मम।
सर्वास्रवपरिक्षीणः, स्पृष्टस्य इदं फलम्॥706॥
''चन्दनस्येव मे काया, तथा गन्धः प्रवायति।
शरीरतो मम गन्धः, अर्द्धकोशे प्रवायति॥707॥
''दिव्यगन्धं **सम्प्रवान्तम्**, पुण्यकर्मसमङ्गिनम्।
गन्धं घृत्वा जानन्ति, स्पृष्ट आगत इह॥708॥
''शाखापलासकाष्ठानि, तृणान्यपि च सर्वशः।
मम सङ्कल्पमाज्ञाय, गन्धः सम्पाद्यते क्षणे॥709॥

चाहे देव में उत्पन्न होऊँ अथवा मनुष्य में, वे सब मुझे चारों ओर से उसी प्रकार व्याप्त करते हैं जैसे की वर्षा का जल सभी स्थानों को सिञ्चित करती है॥705॥

मेरे भव उद्घाटित हो गये हैं तथा मेरे क्लेश समाप्त हो गये हैं और मैं सर्वास्रवक्षीण हो गया हूँ, यह स्पर्श का ही सुपरिणाम है॥706॥

चन्दन जैसी मेरी काया गन्ध को प्रवाहित करती है, इस प्रकार मेरा शरीर आधे कोश तक गन्ध को प्रवाहित करता है॥707॥

दिव्यगन्ध को प्रवाहित करते हुए पुण्यकर्म से युक्त गन्ध को धारण किये हुए स्पर्श यहाँ आ गया है, लोग यह जान जाते हैं॥708॥

पलाश की शाखा, काष्ठ और सभी तृण भी मेरे संकल्प को जानकर उसी क्षण गन्ध को प्रवाहित करने लगते हैं॥709॥

''सतसहस्सितो [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति] कप्पे, चन्दनं अभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फुसितस्स इदं फलं॥710॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥711॥
इत्थं सुदं आयस्मा फुसितकम्पियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
फुसितकम्पियत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. पभङ्करत्थेरअपदानं

''पदुमुत्तरभगवतो, लोकजेट्ठस्स तादिनो।
विपिने चेतियं आसि, वाळमिगसमाकुले॥712॥
''न कोचि विसहि गन्तुं, चेतियं अभिवन्दितुं।
तिणकट्ठलतोनद्धं, पलुग्गं आसि चेतियं॥713॥
''वनकम्मिको तदा आसिं, पितुमातुमतेनहं [पितुपेतामहेनहं (सी०), पितापेतामहेनहं (स्या०)]।
अद्दसं विपिने थूपं, लुग्गं तिणलताकुलं॥714॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, चन्दनम् अभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, स्पृष्टस्य इदं फलम्॥710॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥711॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पृषितकम्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''पद्मोत्तरभगवतः, लोकज्येष्ठस्य तायिनः।
विपिने चैत्यम् आसीत्, व्याडमृगसमाकुले॥712॥
''न कश्चिद् **विसह्य** गन्तुम्, चैत्यम् अभिवन्दितुम्।
तृणकाष्ठलतावनद्धम्, प्ररुग्णम् आसीत् चैत्यम्॥713॥
''वनकर्मिकः तदा आसम्, **पितुमातुमृतेनाऽहम्**।
अद्राक्षं विपिने स्तूपम्, रुग्णं तृणलताकुलम्॥714॥

इससे सौ हजार वें कल्प में जो चन्दन की पूजा की थी, यह उस स्पर्श का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥710॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥711॥

इस प्रकार आयुष्मान् फुसितकम्पिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

मांस खाने वाले जीव जैसे बाघ, बिल्ली, मृग से घिरा हुआ उन लोकज्येष्ठ, पद्मोत्तर भगवान् का चैत्य बाल-मृगों से व्याप्त वन में था॥712॥

वहाँ से कोई भी बिना चैत्य को अभिवादन किये हुए जाने में कोई समर्थ नहीं था और वह चैत्य रुग्ण, तृण, काष्ठ, लता से ठका हुआ था॥713॥

माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् मैं वनकर्मिक (जंगल से लकड़ी लाने वाला) था, तब मैंने रुग्ण, तृण, लता से ढका हुआ स्तूप वन में देखा॥714॥

''दिस्वानाहं बुद्धथूपं, गरुचित्तं उपट्ठहिं।
बुद्धसेट्ठस्स थूपोयं, पलुग्गो अच्छती वने॥715॥
''नच्छन्नं नप्पतिरूपं, जानन्तस्स गुणागुणं।
बुद्धथूपं असोधेत्वा, अञ्ञं कम्मं पयोजये॥416॥
''तिणकट्ठञ्च वल्लिञ्च, सोधयित्वान चेतिये।
वन्दित्वा अट्ठ वारानि [अट्ठ ठानानि (क॰)], पटिकुटिको अगच्छहं॥717॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं, तावतिंसमगच्छहं॥718॥
'तत्थ मे सुकतं ब्यम्हं, सोवण्णं सपभस्सरं।
सट्ठियोजनमुब्बिद्धं, तिंसयोजनवित्थतं॥719॥

''दृष्ट्वाऽहं बुद्धस्तूपम्, गरुचित्तम् **उपास्थामहम्**।
बुद्धश्रेष्ठस्य स्तूपोयम्, प्ररुग्ण अर्कती/आस्यति वने॥715॥
''नाच्छन्नं नाप्रतिरूपम्, जानन्तस्य गुणागुणम्।
बुद्धस्तूपम् अशोध्य, अन्यं कर्म प्रयोजयेत्॥716॥
''तृणकाष्ठञ्च वल्लिञ्च, शोधयित्वा चैत्ये।
वन्दित्वा अष्ट वाराणि, प्रतिकुटिको आगच्छाम्यहम्॥717॥
''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशम् आगच्छमहम्॥718॥
''तत्र मे सुकृतं विमानम्, सौवर्णं सप्रभास्वरम्।
षष्टियोजनमुद्विद्धम्, त्रिंशयोजनविस्तृतम्॥719॥

रुग्ण अवस्था में बुद्धश्रेष्ठ के स्तूप को वन में स्थित देखकर मेरा मन भारी हो गया॥715॥

आच्छादित एवं अप्रतिरूप में, इसके गुण-अवगुण को जाने विना अन्य कर्म के प्रयोजन से भी बुद्धस्तूप का शोधन नहीं किया गया था॥716॥

तृष्ण, काष्ठ और लता को चैत्य पर शोधित करके मैंने आठ दिन तक स्तूप की वन्दना करके अपनी कुटि को आ गया॥717॥

उस कर्म की सुकृति से और चेतना की प्रसन्नता से मैं मनुष्य शरीर को छोड़कर त्रायत्रिंश लोक में आ गया॥718॥

सोने की प्रभा से युक्त सुकृत विमान वहाँ मेरे लिए विद्यमान था जो 60 योजन ऊँचा तथा 30 योजन विस्तृत था॥719॥

''तिसतानि च वारानि, देवरज्जमकारयिं।
पञ्चवीसतिक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं॥720॥
''भवाभवे संसरन्तो, महाभोगं लभामहं।
भोगे मे ऊनता नत्थि, सोधनाय इदं फलं॥721॥
''सिविका हत्थिखन्धेन, विपिने गच्छतो मम।
यं यं दिसाहं गच्छामि, सरणं सम्पते [सिज्झते (क॰)] वनं॥722॥
''खाणुं वा कण्टकं वापि, नाहं पस्सामि चक्खुना।
पुञ्ञकम्मेन संयुत्तो, सयमेवापनीयरे॥723॥
''कुट्ठं गण्डो किलासो च, अपमारो वितच्छिका।
ददु कच्छु [कण्डु (स्या॰)] च मे नत्थि, सोधनाय इदं फलं॥724॥

''त्रिशतानि च वाराणि, देवराज्यमकारयम्।
पञ्चविंशत्कृत्वञ्च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्॥720॥
''भवाभवे संसरन्, महाभोगं लभेऽहम्।
भोगे मे ऊनता नास्ति, शोधनया इदं फलम्॥721॥
''शिविका हस्तिस्कन्धेन, विपिने गच्छतो मम।
यां यां दिशाऽहं गच्छामि, शरणं सम्प्राप्ते वनम्॥722॥
''स्थाणुं वा कण्टकं वाऽपि, नाऽहं पश्यामि चक्षुषा।
पुण्यकर्मणा संयुक्तः, स्वयमेवापनीयते॥723॥
''कुष्ठं गण्डः किलासश्च, अपमारः विचर्चिका।
दर्द्रुः कच्छुः (खर्जु) च मे नास्ति, शोधनया इदं फलम्॥724॥

मैंने तीन सौ बार देवों में राज्य किया और 25 बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥720॥

भव-अभव में संसरण करते हुए मुझे महाभोग का लाभ हुआ और मेरे भोग में कमी नहीं होती, यह स्तूपशोधन का ही सुपरिणाम है॥721॥

हाथी की पीठ पर पालकी में बैठकर मैं वन में गया और वन में जिस-जिस दिशा में जाता हूँ शरण (स्थान) को प्राप्त करता हूँ॥722॥

पुण्यकर्म से युक्त मैं पेड़ का ठूठ हो अथवा काँटा, मैं अपनी आँखों से नहीं देखता वे स्वयं ही दूर चले जाते हैं॥723॥

कुष्ठ, फोड़ा, कोढ़, मिर्गी, खुजली, दाद और काछ मुझमें नहीं है, यह स्तूप शोध का ही सुपरिणाम है॥724॥

''अञ्ञम्पि मे अच्छरियं, बुद्धथूपस्स सोधने [बुद्धथूपम्हि सोधिते (स्या॰)]।
नाभिजानामि मे काये, जातं पिळकबिन्दुकं॥725॥
''अञ्ञम्पि मे अच्छरियं, बुद्धथूपम्हि सोधिते [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति, तथा उपरिपि]।
दुवे भवे संसरामि, देवत्ते अथ मानुसे॥726॥
''अञ्ञम्पि मे अच्छरियं, बुद्धथूपम्हि सोधिते।
सुवण्णवण्णो सब्बत्थ, सप्पभासो भवामहं॥727॥
''अञ्ञम्पि मे अच्छरियं, बुद्धथूपम्हि सोधिते।
अमनापं विवज्जति, मनापं उपतिट्ठति॥728॥
''अञ्ञम्पि मे अच्छरियं, बुद्धथूपम्हि सोधिते।
विसुद्धं होति मे चित्तं, एकग्गं सुसमाहितं॥729॥

''अन्यमपि मे आश्चर्यम्, बुद्धस्तूपस्य शोधने।
नाभिजानामि मे काये, जातं पीडकबिन्दुकम्॥725॥
''अन्यमपि मे आश्चर्यम्, बुद्धस्तूपे शोधिते।
द्वयोः भवयोः संसरामि, देवत्त्वे अथ मानुषे॥726॥
''अन्यमपि मे आश्चर्यम्, बुद्धस्तूपे शोधिते।
सुवर्णवर्णः सर्वत्र, सप्रभासो भवामहम्॥727॥
''अन्यमपि मे आश्चर्यम्, बुद्धस्तूपे शोधिते।
अमनापं विवर्जति, मनापम् उपतिष्ठति॥728॥
''अन्यमपि मे आश्चर्यम्, बुद्धस्तूपे शोधिते।
विशुद्धं भवति मे चित्तम्, एकाग्रं सुसमाहितम्॥729॥

बुद्ध-स्तूप के शोधन का यह सुपरिणाम है कि मुझमें अन्य भी आश्चर्य हैं, मैं मेरे शरीर में पीड़ा का बिन्दु मात्र भी नहीं देखता।॥725॥

बुद्ध-स्तूप-शोधन का यह सुपरिणाम है कि मुझमें अन्य भी आश्चर्य है, मैं देवत्व अथवा मनुष्यत्व दोनों भवों में संसरण करता हूँ॥726॥

बुद्ध-स्तूप-शोधन का यह सुपरिणाम है कि मुझमें अन्य भी आश्चर्य है, मैं सर्वदा स्वर्ण-वर्ण आभा वाला हो गया॥727॥

बुद्ध-स्तूप-शोधन का यह सुपरिणाम है कि मुझमें अन्य भी आश्चर्य है कि मैं मन के जो अनुकूल नहीं है, उसे त्याग कर जो मनोनुकूल है उसके समीप खड़ा होता हूँ॥728॥

बुद्धस्तूप-शोधन का यह सुपरिणाम है कि मुझमें अन्य आश्चर्य है कि मेरा चित्त विशुद्ध, एकाग्र एवं सुसमाहित होता है॥729॥

''अञ्ञम्पि मे अच्छरियं, बुद्धथूपम्हि सोधिते।

एकासने निसीदित्वा, अरहत्तमपापुणिं॥730॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, सोधनाय इदं फलं॥731॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥732॥

इत्थं सुदं आयस्मा पभङ्करो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पभङ्करत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. तिणकुटिदायकत्थेरअपदानं

''नगरे बन्धुमतिया, अहोसिं परकम्मिको।

परकम्मायने युत्तो, परभत्तं अपस्सितो॥733॥

''रहोगतो निसीदित्वा, एवं चिन्तेसहं तदा।

बुद्धो लोके समुप्पन्नो, अधिकारो च नत्थि मे॥734॥

''अन्यमपि मे आश्चर्यम्, बुद्धस्तूपे शोधिते।

एकाशने निसीद्य, अर्हत्त्वमप्राप्नवम्॥730॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, शोधनया इदं फलम्॥731॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥732॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् प्रभङ्करस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नगर्यां बन्धुमत्याम्, अभूवं परकर्मिकः।

परकर्मायने युक्तः, परभक्तम् **अपाश्रितः**॥733॥

''रहोगतो निसीद्य, एवमचिन्तयमहं तदा।

बुद्धो लोके समुत्पन्नः, अधिकारश्च नास्ति मे॥734॥

बुद्धस्तूप-शोधन का यह सुपरिणाम है कि मुझमें अन्य आश्चर्य है कि मैंने एक आसन पर बैठकर अर्हत्व को प्राप्त किया॥730॥

इससे सौ हजार कल्प में जो कर्म किया था, उस शोधन का ही यह सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥731॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥732॥

इस प्रकार आयुष्मान् प्रभङ्कर स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

बन्धुमती नामक नगर में मैं दूसरों के कर्म में युक्त और दूसरों के दिए भोजन पर आश्रित एक मजदूर हुआ करता था॥733॥

तब मैंने एकान्त स्थान पर बैठकर ऐसा चिन्तन किया कि लोक में बुद्ध उत्पन्न होगें और उन पर मेरा अधिकार नहीं होगा॥734॥

''कालो मे गतिं [कालो गतिं मे (सी॰ स्या॰)] सोधेतुं, खणो मे पटिपादितो।
दुक्खो निरयसम्फस्सो, अपुञ्ञानञ्हि पाणिनं॥735॥
''एवाहं चिन्तयित्वान, कम्मसामिं उपागमिं।
एकाहं कम्मं याचित्वा, विपिनं पाविसिं अहं॥736॥
''तिणकट्ठञ्च वल्लिञ्च, आहरित्वानहं तदा।
तिदण्डके ठपेत्वान, अकं तिणकुटिं अहं॥737॥
''सङ्घस्सत्थाय कुटिकं, निय्यादेत्वान [निय्यातेत्वान (सी॰)] तं अहं।
तदहेयेव आगन्त्वा, कम्मसामिं उपागमिं॥738॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, तावतिंसमगच्छहं।
तत्थ मे सुकतं ब्यम्हं, कुटिकाय सुनिम्मितं [तिणकुटिकाय निम्मितं (सी॰)]॥739॥

''कालो मे गतिं शोधयितुम्, क्षणो मे प्रतिपादितः।
दुःखो निरयसंस्पर्शः, **अपुण्येषु प्राणीनाम्**॥735॥
''एवमहं चिन्तयित्वा, **कर्मस्वामिनम्** उपागमम्।
एकोऽहं कर्म याचित्वा, विपिनं प्राविशम् अहम्॥736॥
''तृणकाष्ठञ्च वल्लिञ्च, आहृत्याऽहं तदा।
त्रिदण्डकानि स्थात्वा, अकार्षं तृणकुटिम् अहम्॥737॥
''सङ्घस्यार्थाय कुटिकम्, **निर्यादय** त्वाम् अहम्।
तदा ह्येव आगत्य, **कर्मस्वामिनम्** उपागमम्॥738॥
''तेन कर्मणा सुकृतेन, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्।
तत्र मे सुकृतं विमानम्, कुटिकायाः सुनिर्म्मितम्॥739॥

मेरे द्वारा मार्ग-शोधन के लिये निर्धारित क्षण आ गया। पुण्यहीन प्राणियों के लिये निरय का स्पर्श दुःखकर होता है॥735॥

ऐसा चिन्तन करके मैं स्वामी के समीप गया और एक कर्म की याचना करके मैंने वन में प्रवेश किया॥736॥

तब मैंने तृण, काष्ठ, वल्ली (लता) को लाकर तीन दण्डों को स्थापित करके तृण-कुटी का निर्माण किया॥737॥

संघ के लिए मैंने कुटि को समर्पित किया तब वहाँ आकर कर्मस्वामी के समीप पहुँचा॥738॥

उस सुकृत कर्म के कारण मैं त्रायत्रिंश लोक में आ गया, वहाँ पर मेरे लिए सुनिर्मित कुटि और सुकृत विमान था॥739॥

''सहस्सकण्डं सतभेण्डु, धजालु हरितामयं।
सतसहस्सनिय्यूहा, ब्यम्हे पातुभविंसु मे॥740॥
''यं यं योनुपपज्जामि, देवत्तं अथ मानुसं।
मम सङ्कप्पमञ्ञाय, पासादो उपतिट्ठति॥741॥
''भयं वा छम्भितत्तं वा, लोमहंसो न विज्जति।
तासं मम न जानामि, तिणकुटिकायिदं [तिणकुटियिदं (क॰)] फलं॥742॥
''सीहब्यग्घा च दीपी च, अच्छकोकतरच्छका [तरच्छयो (स्या॰ क॰)]।
सब्बे मं परिवज्जेन्ति, तिणकुटिकायिदं फलं॥743॥
''सरीसपा [सिरिंसपा (सी॰ स्या॰), सरिंसपा (क॰)] च भूता च, अही कुम्भण्डरक्खसा।
तेपि मं परिवज्जेन्ति, तिणकुटिकायिदं फलं॥744॥

''सहस्रकण्डं **शतगेण्दुक**, ध्वजालु हरितामयम्।
शतसहस्रनिर्व्यूहाः, विमाने प्रादुरभूवन् मे॥740॥
''यां यां योनिमुपपद्ये, देवत्वम् अथ मानुषम्।
मम सङ्कल्पमाज्ञाय, प्रासाद उपतिष्ठति॥741॥
''भयं वा छम्भितत्वं वा, लोमहर्षो न विद्यति।
तासां मम न जानामि, तृणकुटिकया इदं फलम्॥742॥
''सिंहव्याघ्राश्च द्वीपिश्च, अच्छकोकतरक्षकाः।
सर्वे मां परिवर्जयन्ति, तृणकुटिकया इदं फलम्॥743॥
''सरीसृपाश्च भूताश्च, अही कुम्भाण्डराक्षसाः।
तेऽपि मां परिवर्जयन्ति, तृणकुटिकया इदं फलम्॥744॥

सौ हजार तीर, अस्त्र विशेष, हरितमय ध्वज, सौ हजार द्वार वाला विमान मेरे लिए प्रकट हुआ॥740॥

जिस-जिस योनि में उत्पन्न होता हूँ वह मनुष्यत्व हो अथवा देवत्व मेरे संकल्प को जान प्रासाद खड़ा होता है॥741॥

मुझमें भय जड़ी भूत नहीं होता और रोम हर्ष भी मुझमें विद्यमान नहीं है मैं उनको नहीं जानता, यह तृण कुटि का ही सुपरिणाम है॥742॥

सिंह, व्याघ्र, चीता, रीछ और भालू सभी मेरा बचाव करते हैं, यह तृण-कुटि दान का ही सुपरिणाम है॥743॥

साँप, भूत और दिव्य शक्तियों से युक्त राक्षस ये सभी मेरा बचाव करते हैं, यह तृण कुटि दान का ही सुपरिणाम है॥744॥

''न पापसुपिनस्सापि, सरामि दस्सनं मम।

उपट्ठिता सति मय्हं, तिणकुटिकायिदं फलं॥745॥

''तायेव तिणकुटिकाय, अनुभोत्वान सम्पदा।

गोतमस्स भगवतो, धम्मं सच्छिकरिं अहं॥746॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, तिणकुटिकायिदं फलं॥747॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥748॥

इत्थं सुदं आयस्मा तिणकुटिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तिणकुटिदायकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. उत्तरेय्यदायकत्थेरअपदानं

''नगरे हंसवतिया, अहोसिं ब्राह्मणो तदा।

अज्झायको मन्तधरो, तिण्णं वेदान पारगू॥749॥

''न पापस्वप्नस्यापि, स्मरामि दर्शनं मम।

उपस्थिता स्मृतिः मह्यम्, तृणकुटिकया इदं फलम्॥745॥

''**तायैव** तृणकुटिकया, अनुभूय सम्पदा।

गोतमस्य भगवतः, धर्मं साक्षादकरवम् अहम्॥746॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, तृणकुटिकया इदं फलम्॥747॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥748॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् तृणकुटिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नगर्यां हंसवत्याम्, अभूवं ब्राह्मणस्तदा।

अध्यायको मन्त्रधरः, त्रयाणां वेदानां पारगः॥749॥

मैं पापस्वप्न भी नहीं देखता मुझे दर्शन का स्मरण है, मुझमें स्मृति उपस्थित है, यह तृण-कुटी दान का ही सुपरिणाम है॥745॥

उस कुटी के दान से मैं सम्पदा का अनुभव कर, गौतम भगवान् के धर्म का साक्षात्कार किया॥746॥

91 वें कल्प में जो कर्म किया था, यह उस तृण-कुटी दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥747॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥748॥

इस प्रकार आयुष्मान् तृणकुटिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हंसवती नामक नगर में तब मैं अध्यापक, मन्त्रधर, तीनों वेदों में पारंगत हुआ॥749॥

''पुरक्खतो ससिस्सेहि, जातिमा च सुसिक्खितो।
तोयाभिसेचनत्थाय, नगरा निक्खमिं तदा॥750॥

''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।
खीणासवसहस्सेहि, पाविसी नगरं जिनो॥751॥

''सुचारुरूपं दिस्वान, आनेञ्जकारितं विय।
परिवुतं अरहन्तेहि, दिस्वा चित्तं पसादयिं॥752॥

''सिरस्मिं अञ्जलिं कत्वा, नमस्सित्वान सुब्बतं।
पसन्नचित्तो सुमनो, उत्तरीयमदासहं॥753॥

''उभो हत्थेहि पग्गय्ह, साटकं उक्खिपिं अहं।
यावता बुद्धपरिसा, ताव छादेसि साटको॥754॥

''पुरस्कृतः सशिष्यैः, जातिमान् च सुशिक्षितः।
तोयाभिषेचनार्थाय, नगरात् निरक्रामं तदा॥750॥

''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्मान् पारगः।
क्षीणाश्रवसहस्रैः, प्राविशत् नगरं जिनः॥751॥

''सुचारुरूपं दृष्ट्वा, आनेञ्जकारितम् इव।
परिवृतम् अर्हद्भिः, दृष्ट्वा चित्तं प्रासादयम्॥752॥

''शिरसि अञ्जलिं कृत्वा, **नत्वा** सुव्रतम्।
प्रसन्नचित्तः सुमना, उत्तरीयमदामहम्॥753॥

''उभाभ्यां हस्ताभ्यां प्रगृह्य, शाटकम् उदक्षिपम् अहम्।
यावत् बुद्धपरिषद्, तावत् अछादयत् शाटकः॥754॥

तब शिष्यों से पुरस्कृत, जाति से युक्त और सुशिक्षित मैं जल से सिंचित करने के लिए नगर से निकला॥750॥

सभी धर्मों में पारंगत पद्मोत्तर नामक जिन ने सहस्र क्षीणाश्रवों से युक्त नगर में प्रवेश किया॥751॥

अविचलित (चित्त) से निर्मित सुचारुरूप वाले, अर्हन्तों से घिरे हुए (बुद्ध) को देखकर चित्त प्रसन्न किया॥752॥

सदाचार-परायण को अञ्जलिबद्ध होकर, प्रसन्नचित्त, सौमनस्यपूर्वक मैंने उत्तरीय प्रदान किया॥753॥

मैंने दोनों हाथों से वस्त्र को पकड़कर आकाश में उछाला और जहाँ तक बुद्धपरिषद है, वहाँ तक वस्त्र आच्छादित हो गया॥754॥

''पिण्डचारं चरन्तस्स, महाभिक्खुगणादिनो।
छदं करोन्तो अट्ठासि, हासयन्तो ममं तदा॥755॥
''घरतो निक्खमन्तस्स, सयम्भू अग्गपुग्गलो।
वीथियंव ठितो सत्था, अका मे [अकासि (स्या॰)] अनुमोदनं॥756॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, यो मे अदासि साटकं।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणोथ मम भासतो॥757॥
'''तिंसकप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
पञ्ञासक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति॥758॥
'''देवलोके वसन्तस्स, पुञ्ञकम्मसमङ्गिनो।
समन्ता योजनसतं, दुस्सच्छन्नं भविस्सति॥759॥

''पिण्डचारं चरन्तः, महाभिक्षुगणादिनः।
छदनं कुर्वन् अस्थात्, हासयन् मां तदा॥755॥
''गृहतो **निष्क्रमन्तः**, स्वयम्भू अग्रपुद्गलः।
वीथ्यामवस्थितः शास्ता, अकार्षीत् मे अनुमोदनम्॥756॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, यो मे अदात् शाटकम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥757॥
'''त्रिंशकल्पसहस्राणि, देवलोके रमिष्यति/रंस्यति।
पञ्चाशत्कृत्वं देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति॥758॥
'''देवलोके **वसन्तः**, पुण्यकर्मसमङ्गिनः।
समन्ताद् योजनशतम्, दूष्यच्छन्नं भविष्यति॥759॥

वस्त्र से आच्छादित पिण्डाचार कर रहे ऐसे महाभिक्षुगण ने तब मुझे आनन्दित किया॥755॥

घर से निकले हुए स्वयम्भू, अग्रपुद्गल, वीथी में स्थित शास्त्र का मैंने अनुमोदन किया॥756॥

'प्रसन्न, सुमन से जिसने मुझे वस्त्र प्रदान किया, तब मैं उसकी कीर्ति करूँगा' मेरे ऐसे वचनों को सुनें॥757॥

इससे तीस हजार कल्प में देवलोक में रमण करेगा और 50 सौ बार देवताओं में देवों में राज्य करेगा॥758॥

पुण्यकर्म के संचय से देवलोक में वास करते हुए उसके चारों ओर सौ योजन तक वस्त्राच्छादित होगा॥759॥

‘‘‘छत्तिंसक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥760॥
‘‘‘भवे संसरमानस्स, पुञ्ञकम्मसमङ्गिनो।
मनसा पत्थितं सब्बं, निब्बत्तिस्सति तावदे॥761॥
‘‘‘कोसेय्यकम्बलियानि [कोसेय्यकम्बलीयानि (सी॰)], खोमकप्पासिकानि च।
महग्घानि च दुस्सानि, पटिलच्छतियं नरो॥762॥
‘‘‘मनसा पत्थितं सब्बं, पटिलच्छतियं नरो।
एकदुस्सस्स विपाकं, अनुभोस्सति सब्बदा॥763॥
‘‘‘सो पच्छा पब्बजित्वान, सुक्कमूलेन चोदितो।
गोतमस्स भगवतो, धम्मं सच्छिकरिस्सति’॥764॥

‘‘‘षट्त्रिंशत्कृत्वं राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातः असङ्ख्यम्॥760॥
‘‘‘भवे **संसरमानस्य**, पुण्यकर्मसमङ्गिनः।
मनसा प्रार्थितं सर्वम्, निर्वर्त्तयिष्यति **तावदेव**॥761॥
‘‘‘कौशेयकम्बलियानि, क्षौमकार्पासिकानि च।
महर्घाणि च दूष्याणि, प्रतिलक्षति अयं नरः॥762॥
‘‘‘मनसा प्रार्थितं सर्वम्, प्रतिलक्षति अयं नरः।
एकदूष्यस्य विपाकम्, अनुभूस्यति सर्वदा॥763॥
‘‘‘सः पश्चात् प्रव्रज्य, शुक्लमूलेन चोदितः।
गोतमस्य भगवतः, धर्मं साक्षात्करिष्यति’॥764॥

वह 63 बार गणना में असङ्ख्य विपुल प्रदेश राज्य वाला चक्रवर्ती राजा होगा ॥760॥

पुण्यकर्म के सञ्चय से भव में सञ्चरण करते हुए उसके लिए मन से प्रार्थित समस्त वस्तुएँ प्रकट हो जाएँगी॥761॥

कौशेय कम्बल, क्षौमकार्पास और अत्यन्त बहुमूल्य वस्त्र को यह नर प्राप्त करेगा॥762॥

वह नर मन से प्रार्थित सभी वस्तुएँ प्राप्त करेगा और सर्वदा एक दूष्यदान के फल का अनुभव करेगा॥763॥

तत्पश्चात् वह कुशल कर्मों के उदित होने पर प्रव्रजित हो गौतम भगवान् के धर्म का साक्षात्कार करेगा॥764॥

''अहो मे सुकतं कम्मं, सब्बञ्ञुस्स महेसिनो।

एकाहं साटकं दत्वा, पत्तोम्हि अमतं पदं॥765॥

''मण्डपे रुक्खमूले वा, वसतो सुञ्ञके घरे।

धारेति दुस्सछदनं, समन्ता ब्यामतो मम॥766॥

''अविञ्ञत्तं निवासेमि [अविञ्ञत्तानि सेवामि (?)], चीवरं पच्चयञ्चहं।

लाभी [लाभिम्हि (स्या॰)] अन्नस्स पानस्स, उत्तरेय्यस्सिदं फलं॥767॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, वत्थदानस्सिदं फलं॥768॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥769॥

इत्थं सुदं आयस्मा उत्तरेय्यदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

उत्तरेय्यदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

''अहो मे सुकृतं कर्म, सर्वज्ञे महर्षये।

एकोऽहं शाटकं दत्वा, प्राप्तोस्मि अमृतं पदम्॥765॥

''मण्डपे वृक्षमूले वा, वसतः शून्यके गृहे।

धारयति दूष्यच्छदनम्, समन्तात् व्यामतो मम॥766॥

''अविज्ञप्तं निवासयामि, चीवरं प्रत्ययञ्चाऽहम्।

लाभी अन्नस्य पानस्य, उत्तरीयस्येदं फलम्॥767॥

''शतसहस्रितः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, वस्त्रदानस्येदं फलम्॥768॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥769॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् उत्तरीयदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

आह! सर्वज्ञ महर्षि को एक वस्त्र प्रदान कर मैंने कितना सुकृत कर्म किया कि अमृतपद को प्राप्त कर लिया॥765॥

मण्डप में, वृक्षमूल में अथवा शून्य गृह में रहने वाले मेरा चारों ओर से आकास तक आच्छादित रहता है॥766॥

उत्तरीय दान के सुपरिणाम स्वरूप मैं अविज्ञप्त चीवर और प्रत्यय को धारण करता हूँ तथा अन्नपान का लाभी होता हूँ॥767॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, उसी वस्त्रदान के सुपरिणाम स्वरूप मैं दुर्गति को नहीं जानता॥768॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥769॥

इस प्रकार आयुष्मान् उत्तरीयदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

9. धम्मसवनियत्थेरअपदानं

''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।
चतुसच्चं पकासेन्तो, सन्तारेसि बहुं जनं॥770॥

''अहं तेन समयेन, जटिलो उग्गतापनो।
धुनन्तो वाकचीरानि, गच्छामि अम्बरे तदा॥771॥

''बुद्धसेट्ठस्स उपरि, गन्तुं न विसहामहं।
पक्खीव सेलमासज्ज [सेलमापज्ज (स्या॰)], गमनं न लभामहं॥772॥

''न मे इदं भूतपुब्बं, इरियस्स विकोपनं।
दके यथा उम्मुज्जित्वा, एवं गच्छामि अम्बरे॥773॥

''उळारभूतो मनुजो, हेट्ठासीनो [हेट्ठापि नो (क॰)] भविस्सति।
हन्द मेनं गवेसिस्सं, अपि अत्थं लभेय्यहं॥774॥

''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्मान् पारगः।
चतुर्सत्यं प्रकाशयन्, समतारयत् बहूनि जनानि॥770॥
''अहं तेन समयेन, जटिल उग्रतापनः।
धुनन्तो वाकचीराणि, गच्छामि अम्बरे तदा॥771॥
''बुद्धश्रेष्ठस्य उपरि, गन्तुं न विसह्यमहम् ।
पक्षीव शैलमापद्य, गमनं न लभेऽहम्॥772॥
''न मे इदं भूतपूर्वम्, ईर्यस्य विकोपनम्।
उदके यथा उन्मद्य, एवं गच्छामि अम्बरे॥773॥
''उदारभूतो मनुजः, अधस्तादपि नो भविष्यति।
हन्द **मे एतं** गवेषयिष्यम्, अपि अर्थं लभेयमहम्॥774॥

सभी धर्मों में पारंगत पद्मोत्तर नामक जिन ने बहुत से सन्तों को तारने के लिए चार सत्यों का उपदेश किया॥770॥

उस समय मैं जटाधारी उग्रतपस्वी था। तब मैं वल्कल चीवर को हिलाता हुआ अम्बर को चला गया॥771॥

बुद्धश्रेष्ठ से ऊपर जाने का साहस मैंने नहीं किया, जैसे पक्षी पर्वत से ऊपर जाने का साहस नहीं करते, मैं भी नहीं गया॥772॥

इससे पूर्व मैंने अपनी चाल-ढाल से किसी को हानि नहीं पहुचायी और जैसे जल में निमग्न की भाँति ही अम्बर में चला गया॥773॥

जो उदार मनुष्य है वह नीचे ही रहेगा। अच्छा हो कि मैं भी इनकी गवेषणा करूँ और अर्थ को प्राप्त करूँ॥774॥

''ओरोहन्तो अन्तलिक्खा, सद्दमस्सोसि सत्थुनो।
अनिच्चतं कथेन्तस्स, तमहं उग्गहिं तदा॥775॥
''अनिच्चसञ्ञमुग्गय्ह, अगमासिं ममस्समं।
यावतायुं वसित्वान, तत्थ कालङ्कतो अहं॥776॥
''चरिमे वत्तमानम्हि, तं धम्मसवनं [धम्मसवणं (सी॰)] सरिं।
तेन कम्मेन सुकतेन, तावतिंसमगच्छहं॥777॥
''तिंसकप्पसहस्सानि, देवलोके रमिं अहं।
एकपञ्ञासक्खत्तुञ्च, देवरज्जमकारयिं॥778॥
''एकसत्ततिक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥779॥

''अवरोहन् अन्तरिक्षात्, शब्दमश्रौषीत् शास्तुः।
अनित्यतां कथयन्तः, तमहम् उदग्रहीषं तदा॥775॥
''अनित्यसंज्ञामुद्ग्राह्य, अगमं ममाश्रमम्।
यावत् अयम् उषित्वा, तत्र कालङ्कृतोऽहम्॥776॥
''**चरमस्मिन्** वर्त्तमाने, तं धर्मश्रवणं अस्मरम्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥777॥
''त्रिंशत्कल्पसहस्राणि, देवलोके अरंसि अहम्।
एकपञ्चाशत्कृत्वञ्च, देवराज्यमकारयम्॥778॥
''एकसप्ततिकृत्वञ्च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, **गणनातोऽसङ्ख्यम्**॥779॥

अन्तरिक्ष से नीचे उतरते हुए मैंने शास्ता के शब्द सुना और अनित्यता का कथन करते हुए उनको मैंने सीखा॥775॥

अनित्यसंज्ञा का भली प्रकार ज्ञान प्राप्त कर अपने आश्रम आ गया और अपने जीवन काल तक वहाँ वास करते हुए मृत्यु को प्राप्त हुआ॥776॥

वर्तमान में यह मेरा अन्तिम जन्म है, उस धर्म-श्रवण-स्मरण के सुकृत कर्म से मैं त्रायत्रिंश लोक में गया॥777॥

तीस हजार कल्पों तक मैंने देवलोक में रमण किया और इक्यावन बार देवों में राज्य किया॥778॥

एकहत्तर बार मैं गणना में असंख्य एवं विपुल प्रदेशराज्य वाला चक्रवर्ती राजा हुआ॥779॥

''पितुगेहे निसीदित्वा, समणो भावितिन्द्रियो।
गाथाय परिदीपेन्तो, अनिच्चतमुदाहरि [अनिच्चवत्थुदाहरि (स्या॰ क॰)]॥780॥
''अनुस्सरामि तं सञ्ञं, संसरन्तो भवाभवे।
न कोटिं पटिविज्झामि [न कोचि पटिवज्जामि (क॰)], निब्बानं अच्चुतं पदं [अयं गाथा उपरि ४३ वग्गे सत्तमापदाने पुरिमगाथाय पुरेतरं दिस्सति]॥781॥
''अनिच्चा वत सङ्खारा, उप्पादवयधम्मिनो।
उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति, तेसं वूपसमो सुखो॥782॥
''सह गाथं सुणित्वान, पुब्बकम्मं अनुस्सरिं।
एकासने निसीदित्वा, अरहत्तमपापुणिं॥783॥
''जातिया सत्तवस्सोहं, अरहत्तमपापुणिं।
उपसम्पादयि बुद्धो, गुणमञ्ञाय चक्खुमा॥784॥

''पितुगृहे निसीद्य, श्रमणो भावितेन्द्रियः।
गाथया परिदीपयन्, **अनित्यतामुदाहरत्**॥780॥
''अनुस्मरामि तां संज्ञाम्, संसरन् भवाभवे।
न कोटिं **प्रतिवेधयामि**, निर्वाणम् अच्युतं पदम्॥781॥
''अनित्य वत् संस्काराः, उत्पादव्ययधर्म्मिणः।
उत्पद्य निरुध्यन्ति, तेषां व्युपशमः सुखः॥782॥
''सह गाथां श्रुत्वा, पूर्वकर्म अन्वस्मरम्।
एकासने निसीद्य, अर्हत्वमप्राप्नवम्॥783॥
''जात्या सप्तवर्षोऽहम्, अर्हत्वमप्राप्नवम्।
उपसमपादयत् बुद्धः, गुणमाज्ञाय चक्षुष्मान्॥784॥

पिता के घर में रहते हुए संयत इन्द्रिय श्रमण ने गाथाओं की व्याख्या करते हुए अनित्यता का बखान किया था॥780॥

भव और अभव में संसरण करते हुए मैं उस संज्ञा का स्मरण करता हूँ, परन्तु निर्वाण के अच्युत पद को प्राप्त नहीं करता॥781॥

संस्कार अनित्य हैं, उत्पाद-व्यय उनके धर्म हैं, वे उत्पन्न होकर नष्ट होते हैं, उनका शान्तहोना सुख है॥782॥

गाथा सुनने के साथ ही मैंने पूर्व कर्म का स्मरण किया और एक आसन पर बैठकर मैंने अर्हत्व को प्राप्त किया॥783॥

जन्म से सात वर्ष बाद मैंने अर्हत्व को प्राप्त किया और चक्षुष्मान् बुद्ध ने मेरे गुणों को जान कर उपसम्पदा प्रदान की॥784॥

''दारकोव अहं सन्तो, करणीयं समापयिं।

किं मे करणीयं अज्ज, सक्यपुत्तस्स सासने॥785॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, सद्धम्मसवने फलं॥786॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥787॥

इत्थं सुदं आयस्मा धम्मसवनियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

धम्मसवनियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. उक्खित्तपदुमियत्थेरअपदानं

''नगरे हंसवतिया, अहोसिं मालिको तदा।

ओगाहेत्वा पदुमसरं, सतपत्तं ओचिनामहं॥788॥

''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।

सह सतसहस्सेहि [सतसहस्ससिस्सेहि (क०)], सन्तचित्तेहि तादिभि॥789॥

''दारकरिव अहं श्रान्तः, करणीयं समापयम्।

किं मे करणीयम् अद्य, शाक्यपुत्रस्य शासने॥785॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, सद्धर्मश्रवणे फलम्॥786॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥787॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् धर्मश्रवणीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नगर्यां हंसवत्याम्, अभूवं मालिकस्तदा।

अवगाह्य पद्मसरम्, शतपत्रम् अवाचिनवमहम्॥788॥

''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्मान् पारगः।

सह शतसहस्रैः, श्रान्तचित्तैः तायिभिः॥789॥

मैंने बाल्यकाल में ही सभी करणीय कार्य पूर्ण कर लिये हैं और आज शाक्यपुत्र के शासन में मेरे लिए कुछ करणीय नहीं है॥785॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, उस सद्धर्म-श्रवण का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥786॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥787॥

इस प्रकार आयुष्मान् धर्मश्रवणीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

जब मैं हंसवती नामक नगर में माली हुआ तब पद्मसरोवर की गहराई में जाकर मैंने कमलपुष्प को तोड़ा॥788॥

सभी धर्मों में पारंगत पद्मोत्तर नामक जिन, सौ हजार शान्तचित भिक्षुओं के साथ,.... ॥789॥

''खीणासवेहि सुद्धेहि, छळभिञ्ञेहि झायिभि [सो तदा (सी॰), सो सह (क॰)]।
मम वुद्धिं समन्वेसं, आगच्छि मम सन्तिकं [मम सन्तिके (सी॰), पुरिसुत्तमो (स्या॰ क॰)]॥790॥
''दिस्वानहं देवदेवं, सयम्भुं लोकनायकं।
वण्टे छेत्वा सतपत्तं, उक्खिपिमम्बरे तदा॥791॥
''यदि बुद्धो तुवं वीर, लोकजेट्ठो नरासभो।
सयं गन्त्वा सतपत्ता, मत्थके धारयन्तु ते॥792॥
''अधिट्ठहि महावीरो, लोकजेट्ठो नरासभो।
बुद्धस्स आनुभावेन, मत्थके धारयिंसु ते॥793॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं, तावतिंसमगच्छहं॥794॥

''क्षीणास्रवैः शुद्धैः, षडभिज्ञैः ध्यायिभिः।
मम बुद्धिं समन्वेषम्, आगच्छन्मम सान्तिकम्॥790॥
''दृष्ट्वाऽहम् देवदेवम्, स्वयम्भुवं लोकनायकम्।
वृन्तान् छित्वा शतपत्रम्, उदक्षिपम् अम्बरे तदा॥791॥
''यदि बुद्धस्त्वं वीर, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
स्वयं गत्वा शतपत्राणि, मस्तके धारयन्तु ते॥792॥
''अधिष्ठैः महावीरः, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
बुद्धस्य आनुभावेन, मस्तके अधारयन् ते॥793॥
''तेन कर्मणा सुकृते, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥794॥

क्षीणास्रवों से शुद्ध, षडभिज्ञ, ध्यायी मेरी बुद्धि का अन्वेषण करने के लिए मेरे समीप आए ॥790॥

तब मैंने देवों के देव स्वयम्भू, लोकनायक को देखकर डण्ठल से कमलपुष्प को तोड़कर अम्बर में उछाला॥791॥

हे वीर! लोकज्येष्ठ! नरर्षभ! यदि आप बुद्ध हैं तो स्वयं जाकर कमलपुष्प आपके मस्तक पर धारण होवें॥792॥

दृढ़ संकल्प लिये महावीर, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ बैठे गए और बुद्ध के प्रताप से वे उनके मस्तक पर धारण हो गए॥793॥

उस अच्छे कर्म से युक्त और चेतना की प्रसन्नता से मैं मानव शरीर को छोड़कर त्रायत्रिंश लोक को चला गया॥794॥

''तत्थ मे सुकतं ब्यम्हं, सतपत्तन्ति वुच्चति।
सट्ठियोजनमुब्बिद्धं, तिंसयोजनवित्थतं॥795॥

''सहस्सक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जमकारयिं।
पञ्चसत्ततिक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं॥796॥

''पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
अनुभोमि सकं कम्मं, पुब्बे सुकतमत्तनो॥797॥

''तेनेवेकपदुमेन, अनुभोत्वान सम्पदा।
गोतमस्स भगवतो, धम्मं सच्छिकरिं अहं॥798॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥799॥

''तत्र मे सुकृतं विमानम्, शतपत्रमिति उच्यते।
षष्टियोजनमुद्विद्धम्, त्रिंशत्योजनविस्तृतम्॥795॥

''सहस्रकृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यमकारयम्।
पञ्चसप्ततिकृत्वञ्च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्॥796॥

''प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनात असङ्ख्यम्।
अनुभवामि स्वकं कर्म, पूर्वे सुकृतमात्मनः॥797॥

''तेनैव एकपद्मेन, अनुभूय सम्पदा।
गौतमस्य भगवतः, धर्म साक्षातकरवम् अहम्॥798॥

''क्लेशा ध्मापिताः मह्यम्, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
नाग इव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥799॥

कहा जाता है कि वहाँ मेरे लिए साठ योजन ऊपर उठा हुआ और तीस योजन विस्तृत फैला हुआ सुकृत विमान था॥795॥

सौ हजार बार मैंने देव लोक में राज्य किया और पचहत्तर बार मैं चक्रवर्ती राजा हुआ॥796॥

मेरा प्रदेश राज्य विपुल और गणना में असंख्य था। मैं पूर्व में किये सत्कर्म का अनुभव कर रहा हूँ॥797॥

उसी एक कमलपुष्प दान का अनुभव कर मैंने गौतम भगवान् के धर्म का साक्षात्कार किया॥798॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये। जैसे हाथी बन्धन रहित हो विहरण करता है, मैं भी आस्रवरहित हो विहरण करता हूँ॥799॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, एकपदुमस्सिदं फलं॥800॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥801॥

इत्थं सुदं आयस्मा उक्खित्तपदुमियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

उक्खित्तपदुमियत्थेरस्सापदानं दसमं।

गन्धोदकवग्गो चतुतिंसतिमो।

तस्सुद्दानं –

गन्धधूपो उदकञ्च, पुन्नाग एकदुस्सका।

फुसितो च पभङ्करो, कुटिदो उत्तरीयको॥

सवनी एकपदुमी, गाथायो सब्बपिण्डिता।

एकं गाथासतञ्चेव, चतुतालीसमेव च॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, एकपद्मस्येदं फलम्॥800॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥801॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् उक्षिप्तपद्मीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

गन्धधूपोदकञ्च, पुन्नाग एकदूष्यकाः।

स्पृष्टश्च प्रभङ्करः, कुटिदः उत्तरीयकः॥

सवनी एकपद्मी, गाथा सर्वपिण्डिता।

एकं गाथाशतञ्चैव, चत्वारिंशमेव च॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस एक पद्मदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥800॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥801॥

इस प्रकार आयुष्मान् उक्षिप्तपद्मीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- गन्धधूप, उदक, पुन्नाग, एकदुस्सक, फुसित, पभङ्कर, कुटिद, उत्तरीयक, सवनी तथा एकधर्मी इस प्रकार यहाँ पर 142 गाथाएं सर्वपिण्डित हैं।

35. एकपदुमियवग्गो

1. एकपदुमियत्थेरअपदानं

पालि- ''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।
भवाभवे विभावेन्तो, तारेसि जनतं बहुं॥802॥
''हंसराजा तदा होमि, दिजानं पवरो अहं।
जातस्सरं समोगय्ह, कीळामि हंसकीळितं॥803॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
जातस्सरस्स उपरि, आगच्छि तावदे जिनो॥804॥
''दिस्वानहं देवदेवं, सयम्भुं लोकनायकं।
वण्टे छेत्वान पदुमं, सतपत्तं मनोरमं॥805॥
''मुखतुण्डेन पग्गय्ह, पसन्नो लोकनायके [विप्पसन्नेन चेतसा (स्या॰)]।
उक्खिपित्वान गगणे [उक्खिपित्वा नलाटेन (क॰)], बुद्धसेट्ठं अपूजयिं॥806॥

संस्कृत- ''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्मान् पारगः।
भवाभवे विभावयन्, अतारयत् जनतां बहून्॥802॥
''हंसराजा तदा भवामि, द्विजानां प्रवरोऽहम्।
जातसरं समवगाह्य, क्रीडामि हंसक्रीडितम्॥803॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
जातसरस्य उपरि, आगच्छत् तावदेव जिनः॥804॥
''दृष्ट्वाऽहं देवदेवम्, स्वयम्भुवं लोकनायकम्।
वृन्ते छित्वा पद्मम्, शतपत्रं मनोरमम्॥805॥
''मुखतुण्डेन प्रगृह्य, प्रसन्नो लोकनायके।
उक्षिप्य गगने, बुद्धश्रेष्ठम् अपूजयम्॥806॥

हिन्दी- सभी धर्मों में पारंगत पद्मोत्तर नामक जिन ने भव-अभव स्पष्ट कर बहुत सी जनता को (भवसागर) पार कराया॥802॥

उस समय मैं पक्षियों में श्रेष्ठ हंसराज हुआ तब एक प्राकृतिक झील में उतर कर हंसक्रीड़ा कर रहा था॥803॥

तब उसी समय पद्मोत्तर, लोकविद्, आहुतियों के ग्रहणकर्ता जिन जातसर (प्राकृत- झील) के ऊपर आ गये॥804॥

देवों के देव सयम्भू लोकनायक को देखकर प्रसन्न सुन्दर पद्मपुष्प को डण्ठल से तोड़कर.. ॥805॥

मुखतुण्ड में ग्रहण कर प्रसन्न मैंने आकाश में लोकनायक पर फेंककर बुद्धश्रेष्ठ की पूजा की॥806॥

''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
अन्तलिक्खे ठितो सत्था, अका मे अनुमोदनं॥807॥
'''इमिना एकपदुमेन, चेतनापणिधीहि च।
कप्पानं सतसहस्सं, विनिपातं न गच्छसि'॥808॥
''इदं वत्वान सम्बुद्धो, जलजुत्तमनामको।
मम कम्मं पकित्तेत्वा, अगमा येन पत्थितं॥809॥
''सतसहस्सितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥810॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥811॥
इत्थं सुदं आयस्मा एकपदुमियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकपदुमियत्थेरस्सापदानं पठमं।

''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
अन्तरीक्षे स्थितश्शास्ता, **अका/अकार्षीत्** मे अनुमोदनम्॥807॥
'''अनेन एकपद्मेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
कल्पानां शतसहस्रम्, विनिपातं न गच्छसि'॥808॥
''इदमुक्त्वा सम्बुद्धः, जलजोत्तमनामकः।
मम कर्म प्रकीर्त्य, अगमत् येन प्रार्थितम्॥809॥
''शतसहस्रे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥810॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥811॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकपद्मीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

पद्मोत्तर, लोकविद्, आहुतियों के ग्रहणकर्ता शास्ता ने अन्तरिक्ष में स्थित रहकर उसका अनुमोदन किया॥807॥

चित्त की प्रसन्नता और सङ्कल्प पूर्वक एकपद्म प्रदान कर तुम सौ हजार कल्पों में भी नरक में नहीं जाओगे॥808॥

ऐसा कहकर मेरी प्रशंसा कर जलजोत्तर नामक सम्बुद्ध अपने प्रार्थित स्थान को चले गए॥809॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥810॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥811॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकपद्मीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

2. तीणुप्पलमालियत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अहोसिं वानरो तदा।
अद्दसं विरजं बुद्धं, निसिन्नं पब्बतन्तरे॥812॥
''ओभासेन्तं दिसा सब्बा, सालराजंव फुल्लितं।
लक्खणब्यञ्जनूपेतं, दिस्वा अत्तमनो अहुं॥813॥
''उदग्गचित्तो सुमनो, पीतिया हट्ठमानसो।
तीणि उप्पलपुप्फानि, मत्थके अभिरोपयिं॥814॥
''पुप्फानि अभिरोपेत्वा, विपस्सिस्स महेसिनो।
सगारवो भवित्वान [गमित्वान (सी॰), नमित्वान (क॰)], पक्कामिं उत्तरामुखो॥815॥
''गच्छन्तो पटिकुटिको, विप्पसन्नेन चेतसा।
सेलन्तरे पतित्वान [पपतित्वा (स्या॰ क॰)], पापुणिं जीवितक्खयं॥816॥

''चन्द्रभागानदीतीरे, अभूवं वानरस्तदा।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, निषण्णं पर्वतान्तरे॥812॥
''अवभासयन् दिशः सर्वाः, शालराजमिव फुल्लितम्।
लक्षणव्यञ्जनोपेतम्, दृष्ट्वा आत्तमना अभूवम॥813॥
''उदग्रचित्तः सुमना, प्रीत्या हृष्टमानसः।
त्रीणि उत्पलपुष्पाणि, मस्तके अभ्यरोपयम्॥814॥
''पुष्पाणि अभिरोपय, विपश्यिने महर्षये।
सगौरवो भूत्वा, प्राक्रामम् उत्तरामुखः॥815॥
''गच्छन् प्रतिकुटिकः, विप्रसन्नेन चेतसा।
शैलान्तरे पतित्वा, प्राप्नवं जीवितक्षयम्॥816॥

उस समय चन्द्रभागा नदी के तट पर मैं वानर हुआ तब पर्वत के निचले हिस्से में निर्मल बुद्ध को बैठे देखा॥812॥

समस्त दिशाओं को अवभाषित कर रहे पुष्पित शालराज वृक्ष के समान लक्षणों और व्यञ्जनों के से युक्त को देखकर मैं प्रसन्नमन हुआ॥813॥

प्रसन्नचित्त, सुमन एवं प्रीति से अत्यधिक प्रसन्नमन मैंने तीन कमल पुष्पों को उनके मस्तक पर अभिरोपित किया॥814॥

विपश्यी महर्षि को पुष्प अभ्यर्पित कर, गौरवान्वित हो मैं उत्तरमुख होकर चला गया॥815॥

अत्यधिक प्रसन्नमन से अपनी कुटी के प्रति आते समय पर्वतों के बीच में गिरकर मैं जीवन की हानि को प्राप्त हुआ॥816॥

''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं [पुरिमं जातिं (?) उपरि ३८ वग्गे ततियापदाने एवमेव दिस्सति],
तावतिंसमगच्छहं॥817॥
''सतानं तीणिक्खत्तुञ्च, देवरज्जं अकारयिं।
सतानं पञ्चक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं॥818॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥819॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥820॥
इत्थं सुदं आयस्मा तीणुप्पलमालियो [तिउप्पलमालियो (सी०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तीणुप्पलमालियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. धजदायकत्थेरअपदानं

''तिस्सो नाम अहु सत्था, लोकजेट्ठो नरासभो।
तयोपधिक्खये [तस्सोपधिक्खये (सी०)] दिस्वा, धजं आरोपितं मया॥821॥

''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥817॥
''शतानां त्रीणिकृत्वञ्च, देवराज्यमकारयम्।
शतानां पञ्चकृत्वञ्च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्॥818॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥819॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥820॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् त्रीण्योत्पलमालियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''तिष्यो नाम अभूत् शास्ता, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
तस्योपधिक्षये दृष्ट्वा, ध्वजम् आरोपितं मया॥821॥

उस चेतना तथा सङ्कल्प पूर्वक कृत सत्कर्म के परिणामस्वरूप मैं मानव शरीर को छोड़कर त्रायत्रिंश लोक में आ गया॥817॥

तीन सौ बार मैंने देवों में राज्य किया और पाँच सौ बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥818॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥819॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥820॥

इस प्रकार आयुष्मान् त्रीण्योत्पलमालिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

लोकज्येष्ठ, नरर्षभ तिस्स (तिष्य) नामक शास्ता हुए उनके उपाधिक्षय को देखकर मेरे द्वारा ध्वज अभ्यर्पित किया गया॥821॥

''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं, तावतिंसमगच्छहं॥822॥
''सतानं तीणिक्खत्तुञ्च, देवरज्जं अकारयिं।
सतानं पञ्चक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं॥823॥
''पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
अनुभोमि सकं कम्मं, पुब्बे सुकतमत्तनो॥824॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, धजदानस्सिदं फलं॥825॥
''इच्छमानो चहं अज्ज, सकाननं सपब्बतं।
खोमदुस्सेन छादेय्यं, तदा मय्हं कते फलं॥826॥

''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥822॥
''सतानां त्रीणिकृत्वञ्च, देवराज्यमकारयम्।
सतानां पञ्चकृत्वञ्च, चक्रवर्ती अभूवमहम्॥823॥
''प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्याम्।
अनुभवामि स्वकं कर्म, पूर्वे सुकृताप्तमनाः॥824॥
''द्विनवति इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, ध्वजादानस्येदं फलम्॥825॥
''इच्छमानश्चाऽहम् अद्य, सकाननं सपर्वतम्।
क्षौमदूष्येन छत्दयेयम्, तदा मह्यं कृते फलम्॥826॥

उस चेतना तथा सङ्कल्प पूर्वक कृत सत्कर्म के परिणामस्वरूप मैं मानव शरीर को छोड़कर त्रायस्त्रिंश लोक में आ गया ॥822॥

तीन सौ बार देवों में राज्य किया और पाँच सौ बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥823॥

जिसका प्रदेशराज्य गणना में असंख्य और विपुल था। मैं अपने द्वारा पूर्व में आप्तना कृत अच्छे कर्म का अनुभव कर रहा हूँ॥824॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था,यह उस ध्वज-दान का ही सुपरिणाम हैं कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥825॥

मेरे द्वारा उस समय कृतकर्म का यह परिणाम है कि मैं इच्छामात्र से वनसहित सम्पूर्ण पर्वत को क्षौमदूष्य (वस्त्र) से आच्छादित कर दूँ॥826॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥827॥

इत्थं सुदं आयस्मा धजदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

धजदायकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. तिकिङ्कणिपूजकत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, भूतगणो नाम पब्बतो।

तत्थद्दसं पंसुकूलं, दुमग्गम्हि विलग्गितं॥828॥

''तीणि किङ्कणिपुप्फानि, ओचिनित्वानहं तदा।

हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, पंसुकूलं अपूजयिं॥829॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, तिण्णं पुप्फानिदं फलं॥830॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥831॥

इत्थं सुदं आयस्मा तिकिङ्कणिपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तिकिङ्कणिपूजकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥827॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् ध्वजादायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''हिमवति अविदूरे, भूतगणो नाम पर्वतः।

तत्राद्राक्षं पांशुकूलम्, द्रुमाग्रे विलग्गितम्॥828॥

''त्रीणि किङ्किणिपुष्पाणि, अवचित्याऽहं तदा।

हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, पांशुकूलम् अपूजयम्॥829॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, **त्रीणि** पुष्पणि इदं फलम्॥830॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥831॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् त्रिकिङ्किणिपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥827॥

इस प्रकार आयुष्मान् ध्वजदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

हिमवान् के समीप भूतगण नाम का पर्वत था वहाँ मैंने पांशुकूल (धूल-धूसरित) कपड़ा पेड़ के शिखर पर लगा हुआ देखा॥828॥

तब मैंने तीन किङ्किणि पुष्पों को तोड़कर अत्यधिक प्रसन्न मन से पंसुकूल की पूजा की॥829॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो कर्म किया था यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥830॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥831॥

इस प्रकार आयुष्मान् त्रिकिङ्किणिपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

5. नळागारिकत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, हारितो नाम पब्बतो।
सयम्भू नारदो नाम, रुक्खमूले वसी तदा॥832॥
''नळागारं करित्वान, तिणेन छादयिं अहं।
चङ्कमं सोधयित्वान, सयम्भुस्स अदासहं॥833॥
''चतुद्दससु कप्पेसु, देवलोके रमिं अहं।
चतुसत्ततिक्खत्तुञ्च, देवरज्जं अकारयिं॥834॥
''चतुसत्तति [सत्तसत्तति (सी॰)] क्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥835॥
''उब्बिद्धं भवनं मय्हं, इन्दलट्ठीव उग्गतं।
सहस्सथम्भं अतुलं, विमानं सपभस्सरं॥836॥

''हिमवति अविदूरे, हारितो नाम पर्वतः।
स्वयम्भूः नारदो नाम, वृक्षमूले अवसत् तदा॥832॥
''नडागारं कृत्वा, तृणेन अछादयम् अहम्।
चङ्क्रमं शोधयित्वा, स्वयम्भुवे अदामहम्॥833॥
''चतुर्दशसु कल्पेषु, देवलोके रमे अहम्।
चतुर्सप्ततिकृत्वञ्च, देवराज्यमकारयम्॥834॥
''चतुर्सप्ततिकृत्वञ्च, चक्रवर्ती अभूवमहम्।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनात असङ्ख्यम्॥835॥
''उद्विद्धं भवनं मह्यम्, इन्द्रयष्टीव उद्गतम्।
सहस्रस्तम्भम् अतुलम्, विमानं सप्रभास्वरम्॥836॥

हिमवान् के समीप हारित नामक पर्वत था तब नारद नाम के स्वयम्भू ने वृक्षमूल में वास किया॥832॥

मैंने सरकण्डों की झोपड़ी बनाकर तृण से आच्छादित किया और चङ्क्रमण का शोधन (साफ) करके स्वयम्भू को प्रदान किया॥833॥

मैंने चौदह कल्पों में देवलोक में रमण किया और चौहत्तर बार देवलोक में राज्य किया॥834॥

चौहत्तर बार मैं चक्रवर्ती राजा हुआ जहाँ मेरा प्रदेशराज्य विपुल और गणना में असङ्ख्य था॥835॥

वहाँ मेरे लिए इन्द्र की लाठी के समान अतुलनीय हजार स्तम्भों से युक्त भवन तथा प्रकाशमान विमान भी था॥836॥

''द्वे सम्पत्ती अनुभोत्वा, सुक्कमूलेन चोदितो।
गोतमस्स भगवतो, सासने पब्बजिं अहं॥837॥
''पधानपहितत्तोम्हि, उपसन्तो निरूपधि।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥838॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥839॥
इत्थं सुदं आयस्मा नळागारिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
नळागारिकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. चम्पकपुप्फियत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, जापलो [चापलो (सी०), छापलो (स्या०)] नाम पब्बतो।
बुद्धो सुदस्सनो नाम, विहासि पब्बतन्तरे॥840॥
''पुप्फं हेमवन्तं [हेमवतं (सी०), हेमवण्णं (स्या०)] गय्ह, गच्छं वेहायसेनहं।
अद्दसं विरजं बुद्धं, ओघतिण्णमनासवं॥841॥

''द्वौ सम्पत्तौ अनुभूय, शुक्लमूलेन चोदितः।
गौतमस्य भगवतः, शासने प्राव्रजमहम्॥837॥
''प्रधानप्रहितत्वोऽस्मि, उपश्रान्तो **निरुपधिः**।
नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥838॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥839॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् नडागारिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''हिमवति अविदूरे, जापलो नाम पर्वतः।
बुद्धः सुदर्शनो नाम, व्यहार्षीत् पर्वतान्तरे॥840॥
''पुष्पं हैमवन्तं गृहीत्वा, अगच्छं वैहायसेनाहम्।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, ओघतीर्णमनास्रवम्॥841॥

कुशल कर्मों के उदित होने पर मैं दो सम्पत्तियों का अनुभव करता हूँ और गौतम भगवान् के शासन में प्रव्रजित होता हूँ॥837॥

निर्वाण के मार्ग में आरूढ़ उपश्रान्त, निरूपधि मैं, जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विहरण करता है, वैसे ही आस्रवरहित हो विहरण करता हूँ॥838॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥839॥

इस प्रकार आयुष्मान् नडागारिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

हिमवान् के समीप जापल नामक पर्वत था, वहाँ पर्वतों के मध्य सुदर्शन नाम के बुद्ध ने वास किया॥840॥

हेमवत पुष्प को ग्रहण कर मैं बुद्ध के वास-स्थान पर गया और आस्रव रूपी बाढ़ को पार किये हुए निर्मल बुद्ध को देखा॥841॥

''सत्त चम्पकपुप्फानि, सीसे कत्वानहं तदा।

बुद्धस्स अभिरोपेसिं, सयम्भुस्स महेसिनो॥842॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥843॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥844॥

इत्थं सुदं आयस्मा चम्पकपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

चम्पकपुप्फियत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. पदुमपूजकत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, रोमसो नाम पब्बतो।

बुद्धोपि सम्भवो नाम, अब्भोकासे वसी तदा॥845॥

''भवना निक्खमित्वान, पदुमं धारयिं अहं।

एकाहं धारयित्वान, पुन भवनुपागमिं॥846॥

''सप्त चम्पकपुष्पाणि, शीर्षे कृत्वाऽहं तदा।

बुद्धाय अभ्यरोपयम्, स्वयम्भुवे महर्षये॥842॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥843॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥844॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् चम्पकपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''हिमवत अविदूरे, रोमसो नाम पर्वतः।

बुद्धोपि सम्भवो नाम, अभ्यावकाशे अवसत् तदा॥845॥

''भवनात् निष्क्रम्य, पद्मं अधारयम् अहम्।

एकाऽहं धारयित्वा, पुनर्भवानुपागमम्॥846॥

तब मैंने सात चम्पकपुष्पों को सिर से करके स्वयम्भू, महर्षि, बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥842॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥843॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥844॥

इस प्रकार आयुष्मान् चम्पकपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

हिमवान् के समीप रोमस नाम का पर्वत था, तब खुले आकाश में सम्भव नाम के बुद्ध ने भी वास किया॥845॥

मैंने भवन से निकल कर कमल को धारण किया और उस एक को धारण किए मैं पुनः भवन में आ गया॥846॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिरोपयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥847॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥848॥
इत्थं सुदं आयस्मा पदुमपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पदुमपूजकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।
तेरसमं भाणवारं।

8. तिणमुट्ठिदायकत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, लम्बको नाम पब्बतो।
उपतिस्सो नाम सम्बुद्धो, अब्भोकासम्हि चङ्कमि॥849॥
''मिगलुद्दो तदा आसिं, अरञ्ञे कानने अहं।
दिस्वान तं देवदेवं, सयम्भुं अपराजितं॥850॥
''विप्पसन्नेन चित्तेन, तदा तस्स महेसिनो।
निसीदनत्थं बुद्धस्स, तिणमुट्ठिमदासहं॥851॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यरोपयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥847॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥848॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पद्मपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''हिमवत अविदूरे, लम्बको नाम पर्वतः।
उपतिष्यो नाम सम्बुद्धः, अभ्यावकाशे अचङ्क्रमत्॥849॥
''मृगलुब्धः तदा आसम्, अरण्ये कानने अहम्।
दृष्ट्वा तं देवदेवम्, स्वयम्भुवम् अपराजितम्॥850॥
''विप्रसन्नेन चित्तेन, तदा तस्मै महर्षये।
निसीदनार्थं बुद्धाय, तृणमुष्टिमदामहम्॥851॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥847॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥848॥

इस प्रकार आयुष्मान् पद्मपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

हिमवन्त के समीप लम्बक नाम का पर्वत था, वहाँ खुले आकाश में उपतिष्य नाम के सम्बुद्ध ने चङ्क्रमण किया॥849॥

उस समय घने जंगल में मैं शिकारी था तब उन देवों के देव स्वयम्भु अपराजित को देखा॥850॥

तब अत्यधिक प्रसन्न मन से मैंने उन महर्षि बुद्ध को बैठने के लिए मुट्ठि भर तृण प्रदान किया॥851॥

''दत्वान देवदेवस्स, भिय्यो चित्तं पसादयिं।
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, पक्कामिं उत्तरामुखो॥852॥
''अचिरं गतमत्तं मं, मिगराजा अपोथयि [अहेठयि (सी॰ स्या॰)]।
सीहेन पोथितो [पातितो (सी॰ स्या॰)] सन्तो, तत्थ कालङ्कतो अहं॥853॥
''आसन्ने मे कतं कम्मं, बुद्धसेट्ठे अनासवे।
सुमुत्तो सरवेगोव, देवलोकं अगञ्छहं॥854॥
''यूपो तत्थ सुभो आसि, पुञ्ञकम्माभिनिम्मितो।
सहस्सकण्डो सतभेण्डु, धजालु हरितामयो॥855॥
''पभा निद्धावते तस्स, सतरंसीव उग्गतो।
आकिण्णो देवकञ्ञाहि, आमोदिं कामकामहं॥856॥

''दत्वा देवदेवाय, भूयश्चित्तं प्रासादयम्।
सम्बुद्धम् अभिवाद्य, प्राक्रामम् उत्तरामुखः॥852॥
''अचिरं गतमात्रं माम्, मृगराजा **अस्फोटिषि**।
सिंहेन पातितः शान्तः, तत्र कालकृतोऽहम्॥853॥
''आसन्ने मे कृतं कर्म, बुद्धश्रेष्ठे अनास्रवे।
सुमुक्तः शरवेग इव, देवलोकम् आगच्छामहम्॥854॥
''यूपस्तत्र शुभ आसीत्, पुण्यकर्माभिनिर्मितः।
सहस्रकाण्डः शतगेण्दुक्, ध्वजालु हरितामयः॥855॥
''प्रभा **निर्धाव्यते** तस्य, शतरश्मीव उद्गतः।
आकीर्णो देवकन्याभिः, अमोदे कामकामहम्॥856॥

देवों के देव को देकर अत्यधिक प्रसन्नचित्त से सम्बुद्ध का अभिवादन कर मैं उत्तर मुख हो चला गया॥852॥

उसके तुरन्त बाद मार्ग से थोड़ी दूर जाते हुए मुझ पर सिंह ने आघात किया। उस सिंह के आघात से मैं घायल हो कर नीचे गिरा और वहाँ मृत्यु को प्राप्त हुआ॥853॥

आस्रवरहित बुद्धश्रेष्ठ के समीप मेरे द्वारा किये गए कर्म से मैं तीर के वेग के समान ही अच्छी तरह से मुक्त हो देवलोक में आ गया॥854॥

वहाँ पर पुण्यकर्म करने वालों के लिए शुभ यज्ञस्तम्भ था जो सहस्रकाण्ड माप वाले वृत्ताकार हरितमय एवं ध्वजा से युक्त था॥855॥

उसकी आभा सूर्य के समान उद्गत थी और देव कन्याओं से घिरा मैंने वहाँ आनन्द किया॥856॥

''देवलोका चवित्वान, सुक्कमूलेन चोदितो।
आगन्त्वान मनुस्सत्तं, पत्तोम्हि आसवक्खयं॥857॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, निसीदनमदासहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, तिणमुट्ठियिदं फलं॥858॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥859॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिणमुट्ठिदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तिणमुट्ठिदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. तिन्दुकफलदायकत्थेरअपदानं

''कणिकारंव जोतन्तं, निसिन्नं पब्बतन्तरे।
अद्दसं विरजं बुद्धं, ओघतिण्णमनासवं॥860॥
''तिन्दुकं सफलं दिस्वा, भिन्दित्वान सकोसकं [सकोटकं (सी°), सकोटिकं (स्या°)]।
पसन्नचित्तो सुमनो, सयम्भुस्स मदासहं [वेस्सभुस्स अदासहं (सी°)]॥861॥

''देवलोकात् च्युत्वा, शुक्लमूलेन चोदितः।
आगत्य मनुष्यत्वम्, प्राप्तोस्मि आस्रवक्षयम्॥857॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, निसीदनमदामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, तृणमुष्टि इदं फलम्॥858॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥859॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तृणमुष्टिदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''कणिकारमिव द्योतन्तम्, निषण्णं पर्वतान्तरे।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, ओघतीर्णमनास्रवम्॥860॥
''तिन्दुकं सफलं दृष्ट्वा, भित्वा सकोटिकम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, स्वयम्भुवे अदामहम्॥861॥

कुशल कर्मों के उदित होने पर मैं देव लोक से च्युत हो मनुष्य की योनि में आ गया और आस्रवक्षय को प्राप्त हुआ॥857॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो मैंने आसन प्रदान किया था यह उस मुष्टि भर तृण-दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥858॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥859॥

इस प्रकार आयुष्मान् तृणमुष्टिदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

पर्वत के मध्य जैसे कणिकार पुष्प प्रकाशित होता है वैसे ही आश्रव रूपी बाढ़ को पार किये हुए निर्मल बुद्ध को मैंने देखा॥860॥

मैंने तिन्दुक वृक्ष को फल से युक्त देखकर उस फल को कोस के साथ तोड़कर प्रसन्नचित्त एवं सौमनस्य पूर्वक स्वयम्भू को प्रदान किया॥861॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥862॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥863॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिन्दुकफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तिन्दुकफलदायकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. एकञ्जलियत्थेरअपदानं

''रोमसो [रेवतो (सी०)] नाम सम्बुद्धो, नदीकूले वसी तदा।
अद्दसं विरजं बुद्धं, पीतरंसिंव भाणुमं॥864॥
''उक्कामुखपहट्ठंव, खदिरङ्गारसन्निभं।
ओसधिंव विरोचन्तं, एकञ्जलिमकासहं॥865॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं अञ्जलिमकासहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, अञ्जलिया इदं फलं॥866॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥862॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥863॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तिन्दुकफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''रोमसो नाम सम्बुद्धः, नदीकूले अवसत् तदा।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, पीतरश्मीव भानुमान्॥864॥
''उल्कामुखप्रहृष्टमिव, खदिरङ्गारसन्निभम्।
ओषधिः इव विरोचन्तम्, एकाञ्जलिमकार्षमहम्॥865॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यमञ्जलिमकार्षमहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, अञ्जल्या इदं फलम्॥866॥

यहाँ से 91 वें कल्प पूर्व में जो मैंने फल का दान किया था, यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥862॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥863॥

इस प्रकार आयुष्मान् तिन्दुकफल दायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

रोमस नाम के सम्बुद्ध ने नदी के तट पर वास किया तब मैंने पीले रश्मि से युक्त भानु के समान निर्मल बुद्ध को देखा॥864॥

उल्का मुख के समान प्रज्वलित, बबूल के अंगारे के समान तेजस्वी औषधि के समान प्रकाशित (बुद्ध) को मैंने एक अञ्जलि कर प्रणाम किया॥865॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो मैंने अञ्जलीबद्ध प्रणाम किया था यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥866॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥867॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकञ्जलियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकञ्जलियत्थेरस्सापदानं दसमं।

एकपदुमियवग्गो पञ्चतिंसतिमो।

तस्सुद्दानं –

पदुमी उप्पलमाली, धजो किङ्कणिकं नळं [किङ्कणिको नळो (सी०)]।

चम्पको पदुमो मुट्ठि, तिन्दुकेकञ्जली तथा।

छ च सट्ठि च गाथायो, गणितायो विभाविभि॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥867॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकाञ्जलिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

पद्मी उत्पलमाली, ध्वजः किङ्किणिकं नडम्।

चम्पकः पद्मो मुष्टिः, तिन्दुकेकाञ्जलिः तथा।

छश्च षष्टिश्च गाथाः, गणिताः विभाविभिः॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥867॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकाञ्जलिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उनके उदान- इस प्रकार पदुमी उत्पलमाली ध्वजदायक किङ्कणिक नळागरिक चम्पक, पदुमी, मुट्ठि, तिन्दुकफल एकञ्जलिय के रूप में यहाँ पर 66 गाथाओं का विभागवार वर्णन है।

36. सद्दसञ्ञकवग्गो

1. सद्दसञ्ञकत्थेरअपदानं

पालि- "मिगलुद्दो पुरे आसिं, अरञ्ञे कानने अहं।
तत्थद्दसासिं सम्बुद्धं, देवसङ्घपुरक्खतं॥868॥
"चतुसच्चं पकासेन्तं, उद्धरन्तं महाजनं।
अस्सोसिं मधुरं वाचं, करवीकरुदोपमं [रुतोपमं (?)]॥869॥
"ब्रह्मसरस्स मुनिनो, सिखिनो लोकबन्धुनो।
घोसे चित्तं पसादेत्वा, पत्तोम्हि आसवक्खयं॥870॥
"एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पसादस्स इदं फलं॥871॥
"पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं"॥872॥
इत्थं सुदं आयस्मा सद्दसञ्ञको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सद्दसञ्ञकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- "मृगलुब्धः पुरे आसम्, अरण्ये कानने अहम्।
तत्राद्राक्षम् सम्बुद्धम्, देवसङ्घपुरस्कृतम्॥868॥
"चतुर्सत्यं प्रकाशयन्, उद्धरन् महाजनम्।
अश्रौषं मधुरं **वाचम्, करवीकरुदोपमम्**॥869॥
"ब्रह्मस्वरस्य **मुनेः**, शिखिनो **लोकबन्धोः**।
घोषे चित्तं प्रसाद्य, प्राप्तोस्मि आस्रवक्षयम्॥870॥
"एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, प्रसादस्य इदं फलम्॥871॥
"प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्"॥872॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् शब्दसंज्ञकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- पूर्व में मैं जब घने जंगल में रहने वाला शिकारी था, तब देवसंघ से पुरस्कृत सम्बुद्ध को वहाँ देखा॥868॥

तब मैंने चार सत्यों का प्रकाशन करते हुए तथा जनसमूह का उद्धार करते हुए कोयल के समान मधुर आवाज को सुना॥869॥

लोकबन्धु शिखी मुनि के ब्रह्मस्वर रूपी घोष में अपने चित्त को प्रसादित कर मैंने आस्रवक्षय को प्राप्त किया॥870॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, यह उस प्रसादकर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥871॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥872॥

इस प्रकार आयुष्मान् शब्दसंज्ञक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

2. यवकलापियत्थेरअपदानं

''नगरे अरुणवतिया, आसिं यवसिको तदा।

पन्थे दिस्वान सम्बुद्धं, यवकलापं सन्थरिं [यवकलापमवत्थरिं (सी॰)]॥873॥

''अनुकम्पको कारुणिको, सिखी लोकग्गनायको।

मम सङ्कप्पमञ्ञाय, निसीदि यवसन्थरे॥874॥

''दिस्वा निसिन्नं विमलं, महाझायिं विनायकं।

पामोज्जं जनयित्वान, तत्थ कालङ्कतो अहं॥875॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, यवत्थरे इदं फलं॥876॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥877॥

इत्थं सुदं आयस्मा यवकलापियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

यवकलापियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

''नगर्याम् अरुणवत्याम्, आसं यवसिकस्तदा।
पथि दृष्ट्वा सम्बुद्धम्, यवकलापं समस्तरम्॥873॥
''अनुकम्पकः कारुणिकः, शिखी लोकाग्रनायकः।
मम सङ्कल्पमाज्ञाय, न्यसदत् यवसंस्तरे॥874॥
''दृष्ट्वा निषण्णं विमलम्, महाध्यायिं विनायकम्।
प्रामोद्यं जनयित्वा, तत्र कालकृतो अहम्॥875॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, यवस्तरे इदं फलम्॥876॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥877॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् यवकलापियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उस समय मैं अरूणवती नामक नगर में कृषक था, तब मार्ग में सम्बुद्ध को देखकर जौ की चटाई को फैला दिया॥873॥

अनुकम्पक, कारुणिक, शिखी, लोकाग्रनायक मेरे संकल्प को जानकर जौ की चटाई पर बैठे॥874॥

विमल, महाध्यायी, विनायक को वहाँ बैठा हुआ देखकर, प्रसन्नता उत्पन्न कर मैं मृत्यु को प्राप्त हुआ॥875॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था, उन जौ आस्तरण का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥876॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥877॥

इस प्रकार आयुष्मान् यवकलापिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

3. किंसुकपूजकत्थेरअपदानं

''किंसुकं पुप्फितं दिस्वा, पग्गहेत्वान अञ्जलिं।

बुद्धं सरित्वा सिद्धत्थं, आकासे अभिपूजयिं॥878॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥879॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥880॥

इत्थं सुदं आयस्मा किंसुकपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

किंसुकपूजकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. सकोसककोरण्डदायकत्थेरअपदानं

''अक्कन्तञ्च पदं दिस्वा, सिखिनो लोकबन्धुनो।

एकंसं अजिनं कत्वा, पदसेट्ठं अवन्दहं॥881॥

''कोरण्डं पुप्फितं दिस्वा, पादपं धरणीरुहं।

सकोसकं [सकोटकं (सी० स्या०)] गहेत्वान, पदचक्कं अपूजयिं॥882॥

''किंशुकं पुष्पितं दृष्ट्वा, प्रगृह्य अञ्जलिम्।

बुद्धं **स्मृत्वा** सिद्धार्थम्, आकाशे अभ्यपूजयम्॥878॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥879॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥880॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् किंशुकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''आक्रान्तञ्च पदं दृष्ट्वा, शिखिनः लोकबन्धोः।

एकांशम् अजिनं कृत्वा, पदश्रेष्ठम् **अवन्देऽहम्**॥881॥

''कोरण्डं पुष्पितं दृष्ट्वा, पादपं धरणीरुहम्।

सकोटकं गृहीत्वा, पादचक्रम् अपूजयम्॥882॥

किंशुक पुष्प को पुष्पित देखकर अञ्जलि में ग्रहण कर मैंने आकाश में सिद्धार्थ बुद्ध की पूजा की॥878॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥879॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥880॥

इस प्रकार आयुष्मान् किंशुकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

शिखी, लोकबन्धु के पद को आगे बढ़ता हुआ देखकर मैंने अजिन उत्तरासंग को एक अंश पर करके पदश्रेष्ठ की वन्दना की॥881॥

पृथ्वी पर उगे हुए पुष्पित कोरण्ड वृक्ष को देखकर कोटसहित ग्रहण कर पादचक्र की पूजा की॥882॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, पदपूजायिदं फलं॥883॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥884॥

इत्थं सुदं आयस्मा सकोसक [सकोटक (सी॰ स्या॰)] कोरण्डदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सकोसककोरण्डदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. दण्डदायकत्थेरअपदानं

''काननं वनमोगय्ह, वेळुं छेत्वानहं तदा।

आलम्बनं करित्वान, सङ्घस्स अददं अहं॥885॥

''तेन चित्तप्पसादेन, सुब्बते अभिवादिय।

आलम्बनम्पि दत्वान, पक्कामिं उत्तरामुखो॥886॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दण्डमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, दण्डदानस्सिदं फलं॥887॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, पादपूजाया इदं फलम्॥883॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥884॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सकोटक कोरण्डदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''काननं वनमवगाह्य, वेणुं छित्वाऽहं तदा।

आलम्बनं कृत्वा, सङ्घाय अददाम् अहम्॥885॥

''तेन चित्तप्रसादेन, सुव्रते अभिवाद्य।

आलम्बनमपि दत्वा, प्राक्रामम् उत्तरामुखः॥886॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दण्डमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, दण्डदानस्येदं फलम्॥887॥

इससे 31 वें कल्प में जो कर्म किया था, यह उस पदपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥883॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥884॥

इस प्रकार आयुष्मान् सकोटक कोरण्डदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उस समय जंगल में जाकर वेणु (बाँस) को तोड़कर आलम्बन (आश्रय) का निर्माण कर मैंने संघ को दान किया॥885॥

प्रसन्नचित्त से उन सदाचार-परायणों का अभिवादन कर, आलम्बन को भी प्रदान कर मैं उत्तरमुख हो चला गया॥886॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो दण्ड का दान दिया था, यह उस दण्डदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥887॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥888॥

इत्थं सुदं आयस्मा दण्डदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

दण्डदायकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. अम्बयागुदायकत्थेरअपदानं

''सतरंसी नाम सम्बुद्धो, सयम्भू अपराजितो।

वुट्ठहित्वा समाधिम्हा, भिक्खाय ममुपागमि॥889॥

''पच्चेकबुद्धं दिस्वान, अम्बयागुं अदासहं।

विप्पसन्नमनं तस्स, विप्पसन्नेन चेतसा॥890॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, अम्बयागुयिदं फलं॥891॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥892॥

इत्थं सुदं आयस्मा अम्बयागुदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अम्बयागुदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥888

इत्थं स्विद् आयुष्मान् दण्डदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''शतरश्मी नाम सम्बुद्धः, स्वयम्भू अपराजितः।

उत्थाय समाधेः, भिक्षाय मामुपागमत्॥889॥

''प्रत्येकबुद्धं दृष्ट्वा, **आम्रयवागुम्** अदामहम्।

विप्रसन्नमनं तस्मै, विप्रसन्नेन चेतसा॥890॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, **आम्रयवागु** इदं फलम्॥891॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥892॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् आम्रयागुदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥888॥

इस प्रकार आयुष्मान् दण्डदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

शतरश्मि नाम के सम्बुद्ध, स्वयम्भू अपराजित, समाधि से उठकर, भिक्षा के लिए मेरे समीप आए॥889॥

मैंने विप्रसन्न मन वाले प्रत्येकबुद्ध को देखकर अत्यधिक प्रसन्नमन से उन्हें आम की खीर प्रदान किया॥890॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो कर्म किया था, उस आम्रखीर का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥891॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥892॥

इस प्रकार आयुष्मान् आम्रयागुदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

7. सुपुटकपूजकत्थेरअपदानं

''दिवाविहारा निक्खन्तो, विपस्सी लोकनायको।
भिक्खाय विचरन्तो सो, मम सन्तिकुपागमि॥893॥
''ततो पतीतो सुमनो, बुद्धसेट्ठस्स तादिनो।
लोणसुपुटकं दत्वा, कप्पं सग्गम्हि मोदहं॥894॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुटकमदासहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पुटकस्स इदं फलं॥895॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥896॥
इत्थं सुदं आयस्मा सुपुटकपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सुपुटकपूजकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. मञ्चदायकत्थेरअपदानं

''विपस्सिनो भगवतो, लोकजेट्ठस्स तादिनो।
एकं मञ्चं मया दिन्नं, पसन्नेन सपाणिना॥897

''दिवाविहारात् निष्क्रान्तः, विपश्यी लोकनायकः।
भिक्षाय विचरन् सः, मम अन्तिकुपागमत्॥893॥
''ततः प्रतीतः सुमनाः, बुद्धश्रेष्ठाय तायिने।
लवण**सुपुटकं** दत्वा, कल्पं स्वर्गे मोदेऽहम्॥894॥
''एकनवतितमे कल्पे, यं पुटकमदामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पुटकस्य इदं फलम्॥895॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥896॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सुपुटकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''विपश्यिने भगवते, लोकज्येष्ठाय तायिने।
एकं मञ्चं मया दत्तम्, प्रसन्नेन स्वपाणिभ्याम्॥897॥

दिन में विश्राम के पश्चात् निकलकर भिक्षाटन करते हुए वह विपश्यी, लोकनायक मेरे समीप आ गये॥893॥

उसके पश्चात् प्रसन्नमन एवं सुमन मैंने उन बुद्ध-श्रेष्ठ को लवण से पूरित दोना देकर कल्प भर स्वर्ग में प्रसन्नता प्राप्त किया॥894॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो दोना प्रदान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता किया॥895॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया किया॥896॥

इस प्रकार आयुष्मान् सुपुटकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उन लोकज्येष्ठ, विपश्यी, भगवान् को मेरे द्वारा अपने हाथों से प्रसन्न मन से एक चारपाई दी गयी॥897॥

''हत्थियानं अस्सयानं, दिब्बयानं समज्झगं।

तेन मञ्चकदानेन, पत्तोम्हि आसवक्खयं॥898॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं मञ्चमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, मञ्चदानस्सिदं फलं॥899॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥900॥

इत्थं सुदं आयस्मा मञ्चदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

मञ्चदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. सरणगमनियत्थेरअपदानं

''आरुहिम्ह तदा नावं, भिक्खु चाजीवको चहं।

नावाय भिज्जमानाय, भिक्खु मे सरणं अदा॥901॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यञ्च मे सरणं अदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, सरणागमने फलं॥902॥

''हस्तियानम् अश्वयानम्, दिव्ययानं समध्यगाम्।

तेन मञ्चकदानेन, प्राप्तोस्मि आस्रवक्षयम्॥898॥

''एकनवतितमे कल्पे, यं **मञ्चमददां** तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, मञ्चदानस्येदं फलम्॥899॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥900॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् मञ्चदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''आरुह्यमहं तदा नावम्, भिक्षु चाजीवकश्चाहम्।

नावः भिद्यमानाय, भिक्षुः मे शरणम् **अदात्**॥901॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यञ्च मे शरणम् अदात्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, शरणागमने फलम्॥902॥

उस चारपाई के दान से मैंने हस्तियान, अश्वयान एवं दिव्ययान तथा आस्रवक्षय को प्राप्त किया॥898॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंन जो चारपाई का दान दिया था, यह उसी मञ्चदान का सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥899॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥900॥

इस प्रकार आयुष्मान् मञ्चदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

जब मैं नाव पर आरूढ़ हो रहा था, तब भिक्षु जीवन का आचरण करता था। इस नाव की तरह मेरा जीवन क्षणभंगुर है इसलिए मैं भिक्षु संघ के सरण में गया॥901॥

इससे 31 वें कल्प में जो मैंने शरण गमन किया था, यह उस शरणगमन का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥902॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥903॥
इत्थं सुदं आयस्मा सरणगमनियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सरणगमनियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. पिण्डपातिकत्थेरअपदानं

''तिस्सो नामासि सम्बुद्धो, विहासि विपिने तदा।
तुसिता हि इधागन्त्वा, पिण्डपातं अदासहं॥904॥
''सम्बुद्धमभिवादेत्वा, तिस्सं नाम महायसं।
सकं चित्तं पसादेत्वा, तुसितं अगमासहं॥905॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पिण्डपातस्सिदं फलं॥906॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥907॥
इत्थं सुदं आयस्मा पिण्डपातिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पिण्डपातिकत्थेरस्सापदानं दसमं।
सद्दसञ्ञकवग्गो छत्तिंसतिमो।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥903॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् शरणगमनीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''तिष्यो नामासि सम्बुद्धः, **व्यहरत्** विपिने तदा।
तुषितात् हि इहागत्य, पिण्डपातम् अदामहम्॥904॥
''सम्बुद्धमभिवाद्य, तिष्यं नाम महायशम्।
स्वकं चित्तं प्रसाद्य, तुषितम् अगमाम्यहम्॥905॥
''द्विनवति इतः कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पिण्डपातस्येदं फलम्॥906॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥907॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पिण्डपातिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥903॥

इस प्रकार आयुष्मान् शरणगमनीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

तुषित लोक से इस लोक में आकर तिष्य नाम के सम्बुद्ध वन में विहार कर रहे थे, तब मैंने उनको पिण्डपात प्रदान किया॥904॥

महान यश वाले तिष्य नाम के सम्बुद्ध को अभिवादन कर अपने चित्त को प्रसन्न कर मैं तुषित लोक में आ गया॥905॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो पिण्डपात का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥906॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥907॥

इस प्रकार आयुष्मान् पिण्डपातिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

तस्सुद्दानं –

सद्दसञ्ञी यवसिको, किंसुकोरण्डपुप्फियो।
आलम्बनो अम्बयागु, सुपुटी मञ्चदायको।
सरणं पिण्डपातो च, गाथा तालीसमेव च॥

तस्योदानम् –

शब्दसंज्ञी यवसिकः, किंशुकोरण्डपुष्पीयः।
आलम्बन आम्रयागु, सुपुटी मञ्चदायकः।
शरणं पिण्डपातश्च, गाथा चत्वारिंशमेव च॥

उनके उदान– शब्दसंज्ञी, यवसिक, किंसुक, कोरण्डपुष्पीय, आलम्बन, आम्रयागु, सुपुटी, मञ्चदायक, शरण और पिण्डपात ये दश है। इस प्रकार यहाँ पर चालीस गाथाएं हैं।

37. मन्दारवपुप्फियवग्गो

1. मन्दारवपुप्फियत्थेरअपदानं

पालि- "तावतिंसा इधागन्त्वा, मङ्गलो नाम माणवो।
मन्दारवं गहेत्वान, विपस्सिस्स महेसिनो॥908॥
"समाधिना निसिन्नस्स, मत्थके धारयिं अहं।
सत्ताहं धारयित्वान, देवलोकं पुनागमिं॥909॥
"एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥910॥
"पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं"॥911॥
इत्थं सुदं आयस्मा मन्दारवपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
मन्दारवपुप्फियत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- "त्रायस्त्रिंशात् इहागत्य, मङ्गलो नाम माणवः।
मन्दारवं गृहीत्वा, विपश्यिनः महर्षेः॥908॥
"समाधिना निषण्णस्य, मस्तके अधारयम् अहम्।
सप्ताहं धारयित्वा, देवलोकं पुनरागमम्॥909॥
"एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥910॥
"प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्"॥911॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् मन्दारवपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- त्रायत्रिंश लोक से यहाँ आकर मङ्गल नाम का मैं माणव, विपश्यी, महर्षि के लिए मन्दार के पुष्प ग्रहण कर... ॥908॥

समाधि में बैठे हुए उनके मस्तक पर धारण कराया और सप्ताह भर धारण कराकर मैं पुनः देवलोक को चला गया॥909॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥910॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥911॥

इस प्रकार आयुष्मान् मन्दारवपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

2. कक्कारुपुप्फियत्थेरअपदानं

''यामा देवा इधागन्त्वा, गोतमं सिरिवच्छसं।
कक्कारुमालं [गोक्खनुमालं (सी॰)] पग्गय्ह, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥912॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं बुद्धमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥913॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥914॥
इत्थं सुदं आयस्मा कक्कारुपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
कक्कारुपुप्फियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. भिसमुळालदायकत्थेरअपदानं

''फुस्सो नामासि सम्बुद्धो, सब्बधम्मान पारगू।
विवेककामो सब्बञ्ञू [सप्पञ्ञो (सी॰ स्या॰)], आगञ्छि मम सन्तिके॥915॥
''तस्मिं चित्तं पसादेत्वा, महाकारुणिके जिने।
भिसमुळालं पग्गय्ह, बुद्धसेट्ठस्सदासहं॥916॥

''**यमात् देवा** इहागत्य, गौतमाय श्रीवत्समाय।
कर्कारुमालां प्रगृह्य, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥912॥
''द्विनवति इतः कल्पे, यं बुद्धमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥913॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥914॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कर्कारुपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''पुष्यो नामासीत् सम्बुद्धः, सर्वधर्मान् पारगः।
विवेककामः सर्वज्ञः, आगच्छन्मम सान्तिके॥915॥
''तस्मिन् चित्तं प्रसाद्य, महाकारुणिके जिने।
बिसमृणालं प्रगृह्य, बुद्धश्रेष्ठायादामहम्॥916॥

यमलोक से यहाँ आकर श्रीवत्स गौतम बुद्ध को मैंने कर्कारु (पुष्पविशेष) माला ग्रहण करके अभ्यर्पित किया॥912॥

इससे 92 वें कल्प में मैंने जो बुद्धपूजा की थी, यह उस पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥913॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥914॥

इस प्रकार आयुष्मान् कर्कारुपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

सभी धर्मों में पारंगत, एकान्त की इच्छा करने वाले सर्वज्ञ स्पर्श नाम के सम्बुद्ध, मेरे समीप आ गये॥915॥

उनमें चित्त को प्रसन्नकर महाकारुणिक जिन बुद्धश्रेष्ठ को मैंने कमलनाल ग्रहण कर प्रदान किया॥916॥

''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं भिसमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, भिसदानस्सिदं फलं॥917॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥918॥
इत्थं सुदं आयस्मा भिसमुळालदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
भिसमुळालदायकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. केसरपुप्फियत्थेरअपदानं

''विज्जाधरो तदा आसिं, हिमवन्तम्हि पब्बते।
अद्दसं विरजं बुद्धं, चङ्कमन्तं महायसं॥919॥
''तीणि केसरपुप्फानि [केसरिपुप्फानि (सी॰)], सीसे कत्वानहं तदा।
उपसङ्कम्म सम्बुद्धं, वेस्सभुं अभिपूजयिं॥920॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥921॥

''द्विनवति इतः कल्पे, यं **बिस**मददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, **बिस**दानस्येदं फलम्॥917॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥918॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् बिसमृणालदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''विद्याधरस्तदा आसम्, हिमवति पर्वते।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, चङ्क्रमन् महायशम्॥919॥
''त्रीणि केशरपुष्पाणि, शीर्षे कृत्वाऽहं तदा।
उपसङ्क्रम्य सम्बुद्धम्, विश्वभुवम् अभ्यपूजयम्॥920॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥921॥

यहाँ से 92 वें कल्प में जो मैंने कमलपुष्प का दान किया था, यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जनता॥917॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥918॥

इस प्रकार आयुष्मान् बिसमृणालदयक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

हिमालय पर्वत के समीप मैं विद्याधर (देवविशेष) था तब मैंने महायश वाले निर्मल बुद्ध को चङ्क्रमन करते देखा॥919॥

तब मैंने तीन केशरपुष्प को शीर्ष से तोड़कर विश्वभू सम्बुद्ध के समीप जा कर पूजा की॥920॥

यहां से 31 वें कल्प में मैंने जो कर्म किया था यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥921॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥922॥

इत्थं सुदं आयस्मा केसरपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

केसरपुप्फियत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. अङ्कोलपुप्फियत्थेरअपदानं

''पदुमो नाम सम्बुद्धो, चित्तकूटे वसी तदा।

दिस्वान तं अहं बुद्धं, सयम्भुं अपराजितं [उपगच्छिहं (सी० स्या०)]॥923॥

''अङ्कोलं पुप्फितं दिस्वा, ओचिनित्वानहं तदा।

उपगन्त्वान सम्बुद्धं, पूजयिं पदुमं जिनं॥924॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥925॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥926॥

इत्थं सुदं आयस्मा अङ्कोलपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अङ्कोलपुप्फियत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥922॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् केशरपुष्पीयस्थविर इमा गाथाम् अभाषिष्टेति।

''पद्मो नाम सम्बुद्धः, चित्रकूटे अवसत् तदा।

दृष्ट्वा तमहं बुद्धम्, स्वयम्भुवम् अपराजितम्॥923॥

''अङ्कोलं पुष्पितं दृष्ट्वा, अवचित्याऽहं तदा।

उपगत्य सम्बुद्धम्, अपूजयं पद्मं जिनम्॥924॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥925॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥926॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अङ्कोलपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥922॥

इस प्रकार आयुष्मान् केशरपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

पद्म नाम के सम्बुद्ध ने चित्रकूट पर वास किया, तब मैंने उन स्वयम्भु, अपराजित, बुद्ध को देखा॥923॥

तब अङ्कोल पुष्प को पुष्पित देखकर मैंने उसे तोड़कर सम्बुद्ध के समीप जाकर पद्म जिन की पूजा की॥924॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥925॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥926॥

इस प्रकार आयुष्मान् अङ्कोलपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

6. कदम्बपुप्फियत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, गच्छन्तं अन्तरापणे।
कञ्चनग्घियसङ्कासं, बात्तिंसवरलक्खणं॥927॥
''निसज्ज पासादवरे, अद्दसं लोकनायकं।
कदम्बपुप्फं पग्गय्ह, विपस्सिं अभिपूजयिं॥928॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं बुद्धमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥929॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥930॥
इत्थं सुदं आयस्मा कदम्बपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
कदम्बपुप्फियत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. उद्दालकपुप्फियत्थेरअपदानं

''अनोमो नाम सम्बुद्धो, गङ्गाकूले वसी तदा।
उद्दालकं गहेत्वान, पूजयिं अपराजितं॥931॥

''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, गच्छन्तं अन्तरापणे।
काञ्चनार्घीयसङ्काशम्, द्वात्रिंशद्वरलक्षणम्॥927॥
''निसीद्य प्रासादवरे, अद्राक्षं लोकनायकम्।
कदम्बपुष्पं प्रगृह्य, विपश्यिनम् अभ्यपूजयम्॥928॥
''एकनवतितमे कल्पे, यं बुद्धमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥929॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥930॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कदम्बपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''अनोमो नाम सम्बुद्धः, गङ्गाकूले अवसत् तदा।
उद्दालकं गृहीत्वा, अपूजयम् अपराजितम्॥931॥

बत्तीस लक्षणों से युक्त कञ्चनार्घ के समान सुवर्ण वर्ण वाले सम्बुद्ध बाजार के मध्य आ गया॥927॥

श्रेष्ठ प्रासाद में लोकनायक को बैठे देखा, तब कदम्ब पुष्प को ग्रहण कर विपश्यी की पूजा की॥928॥

इससे 91 वें कल्प में जो बुद्ध को अभिरोपित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥929॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥930॥

इस प्रकार आयुष्मान् कदम्बपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

अनोम नाम के सम्बुद्ध गङ्गा के तट पर वास कर रहे थे तब मैंने उद्दालक (वनकोद्रव का फूल या फल, अमलतास का फूल) को ग्रहण कर उन अपराजित की पूजा की॥931॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥932॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥933॥
इत्थं सुदं आयस्मा उद्दालकपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उद्दालकपुप्फियत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. एकचम्पकपुप्फियत्थेरअपदानं

''उपसन्तो च सम्बुद्धो, वसती पब्बतन्तरे।
एकचम्पकमादाय, उपगच्छिं नरुत्तमं॥934॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, पच्चेकमुनिमुत्तमं।
उभोहत्थेहि पग्गय्ह, पूजयिं अपराजितं॥935॥
''पञ्चसट्ठिम्हितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥936॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥932॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥933॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उद्दालकपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''उपशान्तश्च सम्बुद्धः, वसति पर्वतान्तरे।
एकचम्पकमादाय, उपागच्छम् नरोत्तमम्॥934॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, प्रत्येकमुनिमुत्तमम्।
उभाभ्यां हस्ताभ्यां प्रगृह्य, अपूजयम् अपराजितम्॥935॥
''पञ्चषष्टितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥936॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उसी बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥932॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥933॥

इस प्रकार आयुष्मान् उद्दालकपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

शान्तचित्त सम्बुद्ध पर्वत के मध्य वास कर रहे थे तब एक चम्पकपुष्प लेकर मैं नरोत्तम के समीप गया॥934॥

प्रत्येक मुनियो में उत्तम मुनि को प्रसन्नचित्त और सौमनस्य मैंने दोनों हाथों से अञ्जलिबद्ध हो अपराजित की पूजा की॥935॥

यहाँ से 65 वें कल्प में जो पुष्प अभिरोपित किया, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥936॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥937॥
इत्थं सुदं आयस्मा एकचम्पकपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
एकचम्पकपुप्फियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. तिमिरपुप्फियत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अनुसोतं वजामहं।
अद्दसं विरजं बुद्धं, सालराजंव फुल्लितं॥938॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, पच्चेकमुनिमुत्तमं।
गहेत्वा तिमिरं पुप्फं, मत्थके ओकिरिं अहं॥939॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥940॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥941॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिमिरपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तिमिरपुप्फियत्थेरस्सापदानं नवमं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥937॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकचम्पकपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''चन्द्रभागानदीतीरे, अनुस्रोतं व्रजाम्यहम्।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, शालराज इव फुल्लितम्॥938॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, प्रत्येकमुनिमुत्तमम्।
गृहीत्वा तिमिरं पुष्पम्, मस्तके अवाकिरम् अहम्॥939॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥940॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥941॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तिमिरपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥937॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकचम्पकपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

चन्द्रभागा नदी के तट का अनुसरण करते हुए जा रहा था, तब मैंने शालराज के समान प्रफुल्लित निर्मल बुद्ध को देखा॥938॥

प्रत्येक बुद्धों में उत्तम मुनि को प्रसन्नचित्त एवं सुन्दरमन से मैंने तिमिरपुष्प को ग्रहण कर उनके मस्तक पर फैला दिया॥939॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥940॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥941॥

इस प्रकार आयुष्मान् तिमिरपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

10. सळलपुप्फियत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अहोसिं किन्नरो तदा।
तत्थद्दसं देवदेवं, चङ्कमन्तं नरासभं॥942॥
''ओचिनित्वान सळलं, पुप्फं बुद्धस्सदासहं।
उपसिङ्घि महावीरो, सळलं देवगन्धिकं॥943॥
''पटिग्गहेत्वा सम्बुद्धो, विपस्सी लोकनायको।
उपसिङ्घि महावीरो, पेक्खमानस्स मे सतो॥944॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, वन्दित्वा द्विपदुत्तमं।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, पुन पब्बतमारुहिं॥945॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥946॥

''चन्द्रभागानदीतीरे, अभूवं किन्नरस्तदा।
तत्राद्राक्षं देवदेवम्, चङ्क्रमन्तं नरर्षभम्॥942॥
''अवचीय सरलम्, पुष्पं बुद्धायादामहम्।
उपाजिघ्रत् महावीरः, सरलं देवगन्धिकम्॥943॥
''प्रगृह्य सम्बुद्धः, विपश्यी लोकनायकः।
उपाजिघ्रत् महावीरः, प्रेक्ष्यमाणस्य मे स्मृतः॥944॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, वन्दित्वा द्विपदोत्तमम्।
अञ्जलिं प्रगृह्य, पुनः पर्वतमारुहम्॥945॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥946॥

मैं चन्द्रभागा नदी के तट पर एक किन्नर हुआ था, तब वहाँ देवों के देव नरर्षभ को चङ्क्रमन करते देखा॥942॥

सरलपुष्प को चुनकर मैंने बुद्ध को प्रदान किया, तब देवगन्ध से युक्त सरलपुष्प को महावीर ने सूँघा॥943॥

विपश्यी, लोकनायक, सम्बुद्ध महवीर ने ग्रहण कर सूँघा, यह देखकर मुझे स्मरण हुआ॥944॥

प्रसन्नचित्त सुमन से द्विपदोत्तम की अञ्जलि-बद्ध हो वन्दना कर मैं पुनः पर्वतारूढ़ हो गया॥945॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो पुष्प अभिरोपित किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥946॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥947॥

इत्थं सुदं आयस्मा सळलपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सळलपुप्फियत्थेरस्सापदानं दसमं।

मन्दारवपुप्फियवग्गो सत्ततिंसतिमो।

तस्सुद्दानं –

मन्दारवञ्च कक्कारु, भिसकेसरपुप्फियो।

अङ्कोलको कदम्बी च, उद्दाली एकचम्पको।

तिमिरं सळलञ्चेव, गाथा तालीसमेव च॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥947॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सरलपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

मन्दारवञ्च कर्कारु, बिसकेशरपुष्पीयः।

अङ्कोलकः कदम्बी च, उद्दाली एकचम्पकः।

तिमिरं सरलञ्चैव, गाथा चत्वारिंशमेव च॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥947॥

इस प्रकार आयुष्मान् सरलपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उनके उदान- मन्दारव कक्कारू, बिसकेसरपुप्फिय, अङ्कोल कदम्ब और उद्दालुक, एकचम्पक तिमिर, सळल, इस प्रकार यहाँ पर चालीस गाथाएं हैं।

38. बोधिवन्दनवग्गो

1. बोधिवन्दकत्थेरअपदानं

पालि- "पाटलिं हरितं दिस्वा, पादपं धरणीरुहं।
एकंसं अञ्जलिं कत्वा, अवन्दिं पाटलिं अहं॥948॥
"अञ्जलिं पग्गहेत्वान, गरुं कत्वान मानसं।
अन्तोसुद्धं बहिसुद्धं, सुविमुत्तमनासवं॥949॥
"विपस्सिं लोकमहितं, करुणाञाणसागरं।
सम्मुखा विय सम्बुद्धं, अवन्दिं पाटलिं अहं॥950॥
"एकनवुतितो कप्पे, यं बोधिमभिवन्दहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, वन्दनाय इदं फलं॥951॥
"पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं"॥952॥
इत्थं सुदं आयस्मा बोधिवन्दको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
बोधिवन्दकत्थेरस्सापदानं पठमं।

संस्कृत- "पाटलिं हरितं दृष्ट्वा, पादपं धरणीरुहम्।
एकांशम् अञ्जलिं कृत्वा, अवन्दे पाटलिम् अहम्॥948॥
"अञ्जलिं प्रगृह्य, गुरुः कृत्वा मानसम्।
अन्तर्शुद्धं बहिर्शुद्धम्, सुविमुक्तमनास्रवम्॥949॥
"विपश्यिनं लोकमहितम्, करुणाज्ञानसागरम्।
सम्मुखा इव सम्बुद्धम्, अवन्दे पाटलिम् अहम्॥950॥
"एकनवतितमे कल्पे, यां बोधिमभ्यवन्देऽहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, वन्दनया इदं फलम्॥951॥
"प्रतिसंविदश्तस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्"॥952॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् बोधिवन्दकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

हिन्दी- पृथ्वी पर उगे हुए हरित पाटलि के वृक्ष को देखकर एक अंश पर चीवर रखकर अञ्जलि-बद्ध हो मैंने पाटलि वृक्ष की वन्दना की॥948॥

मैंने अञ्जलि-बद्ध होकर मन को विशाल कर अन्तर्शुद्ध, बहिशुद्ध एवं सुविमुक्त अनास्रव को॥949॥

विपश्यी, लोक में पूजित तथा करूणा एवं ज्ञान के सागर सम्बुद्ध के समान ही मैंने पाटलि वृक्ष की वन्दना की॥950॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो मैंने बोधि-वृक्ष की वन्दना की थी, यह उस वन्दना का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥951॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥952॥

इस प्रकार आयुष्मान् बोधिवन्दक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

2. पाटलिपुप्फियत्थेरअपदानं

''विपस्सी नाम भगवा, सयम्भू अग्गपुग्गलो।
पुरक्खतो ससिस्सेहि, पाविसि बन्धुमं जिनो॥953॥
''तीणि पाटलिपुप्फानि, उच्छङ्गे ठपितानि मे।
सीसं न्हायितुकामोव, नदीतित्थं अगच्छमहम्॥954॥
''निक्खम्म बन्धुमतिया, अद्दसं लोकनायकं।
इन्दीवरंव जलितं, आदित्तंव हुतासनं॥955॥
''ब्यग्घूसभंव पवरं, अभिजातंव केसरिं।
गच्छन्तं समणानग्गं, भिक्खुसङ्घपुरक्खतं॥956॥
''तस्मिं पसन्नो सुगते, किलेसमलधोवने।
गहेत्वा तीणि पुप्फानि, बुद्धसेट्ठं अपूजयिं॥957॥

''विपश्यी नाम भगवान्, स्वयम्भू अग्रपुद्गलः।
पुरस्कृतः सशिष्यैः, प्राविशत् बन्धुमान् जिनः॥953॥॥
''त्रीणि पाटलिपुष्पाणि, **उत्सङ्गे** स्थापितानि मे।
शीर्षं स्नायितुकाम इव, नदीतीर्थम् अगच्छमहम्॥954॥
''निष्क्रम्य बन्धुमत्याः, अद्राक्षं लोकनायकम्।
इन्दीवरमिव ज्वलितम्, आदीप्तमिव हुताशनम्॥955॥
''व्याघ्रर्षभमिव प्रवरम्, अभिजातमिव केशरिम्।
गच्छन्तं **श्रमणानामग्रम्**, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतम्॥956॥
''तस्मिन् प्रसन्नः सुगते, क्लेशमलधोवने।
गृहीत्वा त्रीणि पुष्पाणि, बुद्धश्रेष्ठम् अपूजयम्॥957॥

शिष्यों से पुरस्कृत विपश्यी नाम के भगवान्, स्वयम्भू, अग्रपुद्गल बन्धुमान् जिन ने प्रवेश किया॥953॥
पाटलि के तीन पुष्पों को गोद में स्थापित कर सिर से स्नान की कामना से मैं नदी तट पर गया॥954॥
बन्धुमती नगर से निकलकर नीलकमल के समान प्रज्वलित एवं अग्नि के समान आदीप्त लोकनायक को देखा॥955॥
भिक्षुसंघ से पुरस्कृत व्याघ्र एवं वृषभ की भाँति श्रेष्ठ तथा कुलोत्पन्न श्रमणश्रेष्ठ केशरि को जाते हुए॥956॥
क्लेशमल को धोने वाले उन सुगत पर प्रसन्न मैंने तीन पुष्प को ग्रहण कर बुद्धश्रेष्ठ की पूजा की॥957॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥958॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥959॥
इत्थं सुदं आयस्मा पाटलिपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पाटलिपुप्फियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. तीणुप्पलमालियत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अहोसिं वानरो तदा।
अद्दसं विरजं बुद्धं, निसिन्नं पब्बतन्तरे॥960॥
''ओभासेन्तं दिसा सब्बा, सालराजंव फुल्लितं।
लक्खणब्यञ्जनूपेतं, दिस्वानत्तमनो अहं॥961॥
''उदग्गचित्तो सुमनो, पीतिया हट्ठमानसो।
तीणि उप्पलपुप्फानि, मत्थके अभिरोपयिं॥962॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥958॥
''प्रतिसंविदश्तस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥959॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पाटलिपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''चन्द्रभागानदीतीरे, अभूवं वानरस्तदा।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, निषण्णं पर्वतान्तरे॥960॥
''अवभासयन् दिशः सर्वाः, शालराजमिव फुल्लितम्।
लक्षणव्यञ्जनोपेतम्, दृष्ट्वाऽत्तमनाः/ दृष्टवाऽत्तमनोऽहम्॥961॥
''उदग्रचित्तः सुमनाः, प्रीत्या हृष्टमानसः।
त्रीणि उत्पलपुष्पाणि, मस्तके अभ्यरोपयम्॥962॥

यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभिरोपित किया था यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥958॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥959॥

इस प्रकार आयुष्मान् पाटलिपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

चन्द्रभागानदी के तट पर मैं वानर था, तब पर्वत के मध्य में बैठे हुए निर्मल बुद्ध को देखा॥960॥

पूर्ण रूप से खिले हुए शालराज वृक्ष के समान सभी दिशाओं को प्रकाशित करते हुए, लक्षणव्यञ्जन से युक्त को देखकर मैं आत्तमन हो गया॥961॥

प्रसन्नचित्त, सुमन, प्रीति एवं हर्षितमन से तीन उत्पल (नीलकमल) पुष्पों को उनके मस्तक पर अभ्यर्पित किया॥962॥

''पूजयित्वान पुप्फानि, फुस्सस्साहं महेसिनो।
सगारवो भवित्वान, पक्कामिं उत्तरामुखो॥963॥
''गच्छन्तो पटिकुटिको, विप्पसन्नेन चेतसा।
सेलन्तरे पतित्वान, पापुणिं जीवितक्खयं॥964॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा पुरिमं जातिं, तावतिंसमगच्छहं॥965॥
''सतानं तीणिक्खत्तुञ्च, देवरज्जमकारयिं।
सतानं पञ्चक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं॥966॥
''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥967॥

''पूजयित्वा पुष्पाणि, स्पर्शस्याहं महर्षेः।
सगौरवो भूत्वा, प्राक्रामम् उत्तरामुखः॥963॥
''गच्छन् प्रतिकुटिकः, विप्रसन्नेन चेतसा।
शैलान्तरे पतित्वा, प्राप्नवं जीवितक्षयम्॥964॥
''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा पूर्वं जातिम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥965॥
''शतानां त्रीणिकृत्वञ्च, देवराज्यमकारयम्।
शतानां पञ्चकृत्वञ्च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्॥966॥
''द्विनवति इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥967॥

महर्षि स्पर्श की पुष्पों से पूजा करके मैं गौरववान् हो वहाँ से उत्तरमुख हो चला गया॥963॥

अत्यधिक प्रसन्नमन से मैं अपने कुटी की ओर जाने लगा तब पर्वतो के मध्य गिर कर मैं मृत्यु को प्राप्त हुआ॥964॥

उस अच्छे कर्म और चेतना की प्रसन्नता से मैं पूर्वजन्म को छोड़कर त्रायत्रिंश लोक को चला गया॥965॥

तीन सौ बार मैंने देवों में राज्य किया और पाँच सौ बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥966॥

यहाँ से 92 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभिपूजन किया था, यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥967॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥968॥

इत्थं सुदं आयस्मा तीणुप्पलमालियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तीणुप्पलमालियत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. पट्टिपुप्फियत्थेरअपदानं

''यदा निब्बायि सम्बुद्धो, महेसी पदुमुत्तरो।

समागम्म जना सब्बे, सरीरं नीहरन्ति ते॥969॥

''नीहरन्ते सरीरम्हि, वज्जमानासु भेरिसु।

पसन्नचित्तो सुमनो, पट्टिपुप्फं अपूजयिं॥970॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, सरीरपूजिते फलं॥971॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।

नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥972॥

''प्रतिसंविदश्तस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥968॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् त्रीण्योत्पलमाल्यस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''यदा निरवात् सम्बुद्धः, महर्षिः पद्मोत्तरः।

समागम्य जनाः सर्वे, शरीरं नीहरन्ति ते॥969॥

''नीहरन्ते शरीरे, वद्यमानाषु भेरीषु।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, पत्रि/पट्टिपुष्पम् अपूजयम्॥970॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, शरीरपूजिते फलम्॥971॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।

नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥972॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥968॥

इस प्रकार आयुष्मान् त्रीण्योत्पलमाल्यस्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

जब महर्षि, पद्मोत्तर सम्बुद्ध निर्वाण को प्राप्त हुये तब सभी लोग उपस्थित हो उनके शरीर को देखते हैं॥969॥

बाहर ले जाते हुए शरीर और बजते हुए भेरिवाद्यों पर मैंने प्रसन्नचित्त एवं सौमनस्य पूर्वक पुष्प और पत्तों से पूजा की॥970॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित किया था, यह उस शरीरपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥971॥

मेरे समस्त क्लेश दग्ध हो गए और समस्त भव समूल नष्ट हो गये। जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता है वैसे मैं भी अनास्रव हो विहरण कर रहा हूँ॥972॥

''स्वागतं वत मे आसि, मम बुद्धस्स [बुद्धसेट्ठस्स (सी॰)] सन्तिके।

तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥973॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥974॥

इत्थं सुदं आयस्मा पट्टिपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पट्टिपुप्फियत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. सत्तपण्णियत्थेरअपदानं

''सुमनो नाम सम्बुद्धो, उप्पज्जि लोकनायको।

पसन्नचित्तो सुमनो, सत्तपण्णिमपूजयिं॥975॥

''सतसहस्सितो कप्पे, सत्तपण्णिमपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, सत्तपण्णिपूजायिदं [सत्तपण्णिस्सिदं (सी॰)] फलं॥976॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥977॥

''स्वागतं वत मे आसीत्, मम बुद्धस्य अन्तिके।

तिस्रो विद्या अनुप्राप्ताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥973॥

''प्रतिसंविदश्तस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥974॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पट्टिपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''सुमनो नाम सम्बुद्धः, उपापद्यत् लोकनायकः।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, सप्तपर्णिमपूजयम्॥975॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, सप्तपर्णिमपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, सप्तपर्णिपूजाया इदं फलम्॥976॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥977॥

मेरा बुद्ध के समीप में स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्या को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥973॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥974॥

इस प्रकार आयुष्मान् पट्टिपुष्पीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

सुमन नाम के लोकनायक सम्बुद्ध उत्पन्न हुए तब प्रसन्नमन और सौमनस्य पूर्वक मैंने सप्तपर्णी (छितवन) वृक्ष की पूजा की॥975॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो सप्तपर्णी की पूजा की थी, यह सप्तपर्णी की पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता है॥976॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता है मैं भी आनास्रव हो विहरण करता हूँ॥977॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥978॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥979॥

इत्थं सुदं आयस्मा सत्तपण्णियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सत्तपण्णियत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. गन्धमुट्ठियत्थेरअपदानं

[इध गाथाद्धं ऊनं विय दिस्सति] ''चितके करीयमाने, नानागन्धे समाहते।

पसन्नचित्तो सुमनो, गन्धमुट्ठिमपूजयिं॥980॥

''सतसहस्सितो कप्पे, चितकं यं अपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, चितपूजायिदं फलं॥981॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥982॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥983॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥978॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥979॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सप्तपर्णीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''चितके करीयमाने, नानागन्धे समाहिते।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, गन्धमुष्टिमपूजयम्॥980॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, चितकं यत् अपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, चितपूजाया इदं फलम्॥981॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥982॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥983॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्या को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥978॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥979॥

इस प्रकार आयुष्मान् सप्तपर्णीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

विविध गन्धों से समाहित करते हुए चिता की मैंने प्रसन्नचित्त, सुन्दर-मन से मुट्ठि भर गन्ध द्वारा पूजा की॥980॥

यहाँ से सौ हजारवें कल्प में मैंने जो चिता की पूजा की थी यह उस चिता-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥981॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विहरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥982॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥983॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥984॥
इत्थं सुदं आयस्मा गन्धमुट्ठियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
गन्धमुट्ठियत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. चितकपूजकत्थेरअपदानं

''परिनिब्बुते भगवति, जलजुत्तमनामके।
आरोपितम्हि चितके, सालपुप्फमपूजयिं॥985॥
''सतसहस्सितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, चितपूजायिदं फलं॥986॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥987॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥988॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥989॥
इत्थं सुदं आयस्मा चितकपूजको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
चितकपूजकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥984॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् गन्धमुष्टीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''परिनिर्वृते भगवति, जलजोत्तमनामके।
आरोपिते चितके, शालपुष्पमपूजयम्॥985॥
''शतसहस्र इतः कल्पे, यत् पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, चितपूजाया इदं फलम्॥986॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥987॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥988॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥989॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् चितकपूजकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥984॥
इस प्रकार आयुष्मान् गन्धमुष्टीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।
जलजोत्तर नामक भगवान् के निर्वाण प्राप्त कर लेने पर मैंने उनकी चिता पर शालपुष्प अर्पित कर पूजा की॥985॥
यहाँ से सौ हजार कल्प में जो पुष्प अर्पित किया था, यह उस चितापूजा का हि सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥986॥
मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विहरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विहरण कर रहा हूँ॥987॥
मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥988॥
चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥989॥
इस प्रकार आयुष्मान् चितकपूजक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

8. सुमनतालवण्टियत्थेरअपदानं

''सिद्धत्थस्स भगवतो, तालवण्टमदासहं।
सुमनेहि पटिच्छन्नं, धारयामि महारहं॥990॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, तालवण्टमदासहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, तालवण्टस्सिदं फलं॥991॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥992॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥993॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥994॥
इत्थं सुदं आयस्मा सुमनतालवण्टियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सुमनतालवण्टियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. सुमनदामियत्थेरअपदानं

''सिद्धत्थस्स भगवतो, न्हातकस्स तपस्सिनो।
कत्वान सुमनदामं, धारयिं पुरतो ठितो॥995॥

''सिद्धार्थाय भगवते, तालवृन्तमदामहम्।
सुमनैः प्रतिच्छन्नम्, धारयामि महार्घम्॥990॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, तालवृन्तमदामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, तालवृन्तस्येदं फलम्॥991॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥992॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥993॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥994॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सुमनतालवृन्त्यस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सिद्धार्थाय भगवते, स्नातकाय तपश्विने।
कृत्वा सुमनदामम्, अधारयं पुरतः स्थितः॥995॥

पुष्पों से आच्छादित अत्यन्त मूल्यवान् तालवृन्त का छत्र मैंने सिद्धार्थ भगवान् को प्रदान कर धारण कराया॥990॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो तालवृन्त प्रदान किया था, यह उस तालवृन्त का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥991॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विहरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥992॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्या को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥993॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥994॥

इस प्रकार आयुष्मान् सुमनतालवृन्त्यस्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

सामने स्थित स्नान करते हुए सिद्धार्थ भगवान् को मैंने पुष्पों की माला बनाकर धारण कराया॥995॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दामं धारयिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सुमनधारणे फलं॥996॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥997॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥998॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥999॥
इत्थं सुदं आयस्मा सुमनदामियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सुमनदामियत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. कासुमारिफलदायकत्थेरअपदानं

''कणिकारंव जोतन्तं, निसिन्नं पब्बतन्तरे।
अद्दसं विरजं बुद्धं, लोकजेट्ठं नरासभं॥1000॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, सिरे कत्वान अञ्जलिं।
कासुमारिफलं गय्ह, बुद्धसेट्ठस्सदासहं॥1001॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दाममधारयं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, सुमनधारणे फलम्॥996॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥997॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥998॥
''प्रतिसंविदश्तस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥999॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सुमनदामियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''कर्णिकारमिव द्योतन्तम्, निषण्णं पर्वतान्तरे।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, लोकज्येष्ठं नरर्षभम्॥1000॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, शिरसि कृत्वा अञ्जलिम्।
कार्षुमारिफलं गृहीत्वा, बुद्धश्रेष्ठायादामहम्॥1001॥

यहाँ से 94 वें कल्प में जो माला का दान किया था, यह उस सुमन धारण कराने की ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥996॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता है मैं भी अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥997॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥998॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥999॥

इस प्रकार आयुष्मान् सुमनदामिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

कणिकार के समान प्रकाशमान् लोकज्येष्ठ, नरर्षभ निर्मल बुद्ध को मैंने पर्वत के मध्य में बैठा देखा॥1000॥

अत्यधिक प्रसन्नचित्त और सौमनस्य पूर्वक अञ्जलि को शिर से करके कार्षुमारि (फलविशेष) को ग्रहण कर मैंने बुद्ध श्रेष्ठ को प्रदान किया॥1001॥

''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं फलमददिं अहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1002॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1003॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1004॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1005॥
इत्थं सुदं आयस्मा कासुमारिफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
कासुमारिफलदायकत्थेरस्सापदानं दसमं।
बोधिवन्दनवग्गो अट्ठतिंसतिमो।

तस्सुद्दानं –
बोधि पाटलि उप्पली, पट्टि च सत्तपण्णियो।
गन्धमुट्ठि च चितको, तालं सुमनदामको।
कासुमारिफली चेव, गाथा एकूनसट्ठिका॥

''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् फलमददामहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1002॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1003॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1004॥
''प्रतिसंविदश्तस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1005॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कार्षुमारिफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
तस्योदानम् –
बोधि पाटलि उत्पली, पट्टि च सप्तपर्णीयः।
गन्धमुष्टिश्च चितकः, तालं सुमनदामकः।
कार्षुमारिफली चैव, गाथा एकूनषष्टिका॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो फल का दान किया था, यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1002॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विहरण कर रहा हूँ॥1003॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1004॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1005॥

इस प्रकार आयुष्मान् कार्षुमारिफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उनके उदान- बोधि, पाटलि, उप्पली, पट्टि, सत्तपर्ण्णी, गन्धमुट्ठिय, चितक, ताल, सुमनदामक, कासुमारिफली इस प्रकार इस वग्ग में 58 गाथाएँ हैं।

39. अवटफलवग्गो

1. अवटफलदायकत्थेरअपदानं

पालि- ‘‘सतरंसि नाम भगवा, सयम्भू अपराजितो।
विवेककामो सम्बुद्धो, गोचरायाभिनिक्खमि॥1006॥
‘‘फलहत्थो अहं दिस्वा, उपगच्छिं नरासभं।
पसन्नचित्तो सुमनो, अवटं [अवण्टं (सी॰), अम्बटं (स्या॰)] अददिं फलं॥1007॥
‘‘चतुन्नवुतितो कप्पे, यं फलमददिं अहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1008॥
‘‘किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥1009॥
‘‘स्वागतं वत मे आसि, मम बुद्धस्स सन्तिके।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥1010॥

संस्कृत- ‘‘शतरश्मी नाम भगवान्, स्वयम्भू अपराजितः।
विवेककामः सम्बुद्धः, गोचरायाभिनिरक्रमीत्॥1006॥
‘‘फलहस्तोऽहं दृष्ट्वा, उपागच्छं नरर्षभम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, अवटम्/ अम्बटम् अददां फलम्॥1007॥
‘‘चतुर्णवतितमे कल्पे, यत् फलमददाम् अहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1008॥
‘‘क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥1009॥
‘‘स्वागतं वत मे आसीत्, मम बुद्धस्य अन्तिके।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1010॥

हिन्दी- शतरश्मि नाम के स्वयम्भू, अपराजित सम्बुद्ध एकान्त की कामना से भिक्षाटन के लिए निकले... ॥1006॥

फल को हाथ में देखकर मैं नरर्षभ के समीप गया और प्रसन्नचित्त, सुन्दरमन से उन्हें ताड़ के फल को प्रदान किया॥1007॥

यहाँ से 94 वें कल्प में मैंने जो फल प्रदान किया था यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1008॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1009॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1010॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥1011॥
इत्थं सुदं आयस्मा अवटफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
अवटफलदायकत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. लबुजदायकत्थेरअपदानं

''नगरे बन्धुमतिया, आसिं आरामिको तदा।
अद्दसं विरजं बुद्धं, गच्छन्तं अनिलञ्जसे॥1012॥
''लबुजस्स फलं गय्ह, बुद्धसेट्ठस्सदासहं।
आकासे ठितको सन्तो, पटिगण्हि महायसो॥1013॥
''वित्तिसञ्जननं मय्हं, दिट्ठधम्मसुखावहं।
फलं बुद्धस्स दत्वान, विप्पसन्नेन चेतसा॥1014॥
''अधिगच्छिं तदा पीतिं, विपुलञ्च सुखुत्तमं।
उप्पज्जतेव रतनं, निब्बत्तस्स तहिं तहिं॥1015॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1011॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् अवटफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''नगर्यां बन्धुमत्याम्, आसम् आरामिकस्तदा।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, गच्छन्तम् अनिलञ्जसे॥1012॥
''लबुजस्य फलं गृहीत्वा, बुद्धश्रेष्ठायादामहम्।
आकाशे स्थितकः शान्तः, प्रागृह्णात् महायशः॥1013॥
''वित्तिसञ्जाननं मह्यम्, दृष्टधर्मसुखावहम्।
फलं बुद्धाय दत्वा, विप्रसन्नेन चेतसा॥1014॥
''अध्यगच्छं तदा प्रीतिम्, विपुलञ्च सुखोत्तमम्।
उतपद्यतीव रत्नम्, निर्वर्त्तस्य तत्र तत्र॥1015॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1011॥

इस प्रकार आयुष्मान् अवटफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

उस समय बन्धुमती नगर में मैं विहार-सेवक था। तब मैंने आकाश मार्ग से निर्मल बुद्ध को जाते हुए देखा॥1012॥

लबुज (कटहल) फल को ग्रहण कर बुद्ध श्रेष्ठ को प्रदान किया तब शान्त आकाश में स्थित महायश ने उसे ग्रहण किया॥1013॥

तब सुख प्रदान करने वाले धर्म का साक्षात्कार कर मुझमें प्रीति उत्पन्न हुई, तब अत्यधिक प्रसन्नचित्त से मैंने बुद्ध को फल प्रदान किया॥1014॥

तब मुझे विपुल प्रीति और उत्तम सुख प्राप्त हुआ, मैं जहाँ उत्पन्न हुआ वहाँ वहाँ रत्न उत्पन्न हुआ॥1015॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1016॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1017॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1018॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1019॥
इत्थं सुदं आयस्मा लबुजदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
लबुजदायकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. उदुम्बरफलदायकत्थेरअपदानं

''विनतानदिया तीरे, विहासि पुरिसुत्तमो।
अद्दसं विरजं बुद्धं, एकग्गं सुसमाहितं॥1020॥
''तस्मिं पसन्नमानसो, किलेसमलधोवने।
उदुम्बरफलं गय्ह, बुद्धसेट्ठस्सदासहं॥1021॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1016॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1017॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1018॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः ...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1019॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् लबुजदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''विनतानद्यास्तीरे, व्यहार्षीत् पुरुषोत्तमः।
अद्राक्षं विरजं बुद्धम्, एकाग्रं सुसमाहितम्॥1020॥
''तस्मिन् प्रसन्नमानसः, क्लेशमलधोवने।
उदुम्बरफलं गृहीत्वा, बुद्धश्रेष्ठायादामहम्॥1021॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो फल प्रदान किया था, यह उस फल दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1016॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विचरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1017॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्ध शासन को पूर्ण किया॥1018॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1019॥

इस प्रकार आयुष्मान् लबुजदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

विनतानदी के तट पर पुरुषोत्तम ने वास किया, तब मैंने एकाग्र, सुसमाहित तथा निर्मल बुद्ध को देखा॥1020॥

क्लेशमल को धोने वाले उन बुद्ध-श्रेष्ठ को प्रसन्नमन मैंने उदुम्बरफल (गुलर का फल) ग्रहण कर प्रदान किया॥1021॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1022॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1023॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1024॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1025॥
इत्थं सदं आयस्मा उदुम्बरफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उदुम्बरफलदायकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. पिलक्खफलदायकत्थेरअपदानं

''वनन्तरे बुद्धं दिस्वा, अत्थदस्सिं महायसं।
पसन्नचित्तो सुमनो, पिलक्खस्सादददिं फलं [पिलक्खस्स फलं अदं (सी०)]॥1026॥
''अट्ठारसे कप्पसते, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1027॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1028॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1022॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1023॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1024॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1025॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उदुम्बरफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''वनान्तरे बुद्धं दृष्ट्वा, अर्थदर्शिं महायशम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, प्लक्षस्य अददां फलम्॥1026॥
''अष्टादशे कल्पशते, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1027॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1028॥

यहाँ से 91 वें कल्प में जो फल का दान किया था, यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1022॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, वैसे मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1023॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्ध शासन को पूर्ण किया॥1024॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1025॥

इस प्रकार आयुष्मान् उदुम्बरफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

वन के मध्य महान् यश वाले अर्थदर्शी बुद्ध को देखा और अत्यधिक प्रसन्नमन एवं सुन्दरमन से उन्हें पिलक्ख (अंजीर) का फल प्रदान किया॥1026॥

यहाँ से 18 वें कल्प में जो फल का दान किया था, यह उस फल-दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1027॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1028॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1029॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1030॥
इत्थं सुदं आयस्मा पिलक्खफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पिलक्खफलदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. फारुसफलदायकत्थेरअपदानं

''सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं, आहुतीनं पटिग्गहं।
रथियं पटिपज्जन्तं, फारुसफलमदासहं॥1031॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं फलमददिं अहं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1032॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1033॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1034॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1035॥
इत्थं सुदं आयस्मा फारुसफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
फारुसफलदायकत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1029॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1030॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् प्लक्षफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''सुवर्णवर्णं सम्बुद्धम्, आहुतीनां प्रतिग्रहम्।
रथीदं प्रतिपद्यमानम्, पारुषफलमदामहम्॥1031॥
''एकनवतितमे कल्पे, यत फलमददाम् अहम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1032॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1033॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1034॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1035॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पारुषफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1029॥
चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1030॥
इस प्रकार आयुष्मान् प्लक्षफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।
रथ पर आरूढ़, आहुतिओं के ग्रहणकर्ता स्वर्ण वर्ण वाले सम्बुद्ध को मैंने फारुस (फालसा) फल प्रदान किया॥1031॥
यहाँ से 91 वें कल्प में मैंने जो फल का दान किया था, यह उस फल-दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1032॥
मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1033॥
मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1034॥
चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1035॥
इस प्रकार आयुष्मान् फारुषफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

6. वल्लिफलदायकत्थेरअपदानं

''सब्बे जना समागम्म, अगमिंसु वनं तदा।
फलमन्वेसमाना ते, अलभिंसु फलं तदा॥1036॥
''तत्थद्दसासिं सम्बुद्धं, सयम्भुं अपराजितं।
पसन्नचित्तो सुमनो, वल्लिफलमदासहं॥1037॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1038॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1039॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1040॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1041॥
इत्थं सुदं आयस्मा वल्लिफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

वल्लिफलदायकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

''सर्वे जनाः समागम्य, अगच्छन् वनं तदा।
फलमन्वेषमाणास्ते, अलभन्त फलं तदा॥1036॥
''तत्राद्राक्षं सम्बुद्धम्, स्वयम्भुवम् अपराजितम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, वल्लिफलमदामहम्॥1037॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1038॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1039॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1040॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1041॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् वल्लिफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उस समय फल का अन्वेषण करते हुए सभी लोग वन परिसर में गये और तब उन्होंने फल को प्राप्त किया॥1036॥

वहाँ मैंने स्वयम्भू, अपराजित, सम्बुद्ध को देखा और उन्हें प्रसन्नचित्त, सुन्दरमन से वल्लिफल को प्रदान किया॥1037॥

यहाँ से 31 वें कल्प में जो फल का दान किया था, यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1038॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं, जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1039॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1040॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1041॥

इस प्रकार आयुष्मान् वल्लिफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

7. कदलिफलदायकत्थेरअपदानं

''कणिकारंव जलितं, पुण्णमायेव [पुण्णमासेव (सी॰ क॰)] चन्दिमं।
जलन्तं दीपरुक्खंव, अद्दसं लोकनायकं॥1042॥
''कदलिफलं पग्गय्ह, अदासिं सत्थुनो अहं।
पसन्नचित्तो सुमनो, वन्दित्वान अपक्कमिं॥1043॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1044॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1045॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1046॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1047॥
इत्थं सुदं आयस्मा कदलिफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

कदलिफलदायकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

''कणिकारमिव ज्वलितम्, पौर्णमासेव **चन्द्रमाः**।
ज्वलन्तं दीपवृक्षमिव, अद्राक्षं लोकनायकम्॥1042॥
''कदलीफलं प्रगृह्य, अददाम् शास्त्रे अहम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, वन्दित्वा अपाक्रामम्॥1043॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1044॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1045॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1046॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1047॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् कदलीफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

मैंने कर्णिकारपुष्प और पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान प्रकाशित तथा दीपवृक्ष के समान प्रज्वलित लोकनायक को देखा॥1042॥

कदली (केला) फल को ग्रहण कर मैंने शास्ता को प्रदान किया और प्रसन्नचित्त, सुन्दरमन से वन्दना कर चला गया॥1043॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो फल प्रदान किया था, यह उस फलदान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1044॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विचरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1045॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1046॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1047॥

इस प्रकार आयुष्मान् कदलीफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

8. पनसफलदायकत्थेरअपदानं

''अज्जुनो नाम सम्बुद्धो, हिमवन्ते वसी तदा।
चरणेन च सम्पन्नो, समाधिकुसलो मुनि॥1048॥
''कुम्भमत्तं गहेत्वान, पनसं जीवजीवकं [देवगन्धिकं (४१ वग्गे, ५ अपदाने)]।
छत्तपण्णे ठपेत्वान, अदासिं सत्थुनो अहं॥1049॥
''एकत्तिंसे इतो कप्पे, यं फलमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्सिदं फलं॥1050॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1051॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1052॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1053॥
इत्थं सुदं आयस्मा पनसफलदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पनसफलदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

''अर्जुनो नाम सम्बुद्धः, हिमवति अवसत् तदा।
चरणेन च सम्पन्नः, समाधिकुशलो मुनिः॥1048॥
''कुम्भमात्रं गृहीत्वा, पनसं जीवजीवकम्।
छत्रपर्णे स्थापयित्वा, अददां शास्त्रे अहम्॥1049॥
''एकत्रिंशे इतः कल्पे, यत् फलमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, फलदानस्येदं फलम्॥1050॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1051॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1052॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1053॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पनसफलदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

उस समय अर्जुन नाम के आचरण से सम्पन्न, समाधि में कुशल सम्बुद्ध मुनि हिमवन्त में वास कर रहे थे॥1048॥

उस समय मैंने कटहल पर जीवन जीने वाले शास्ता को कुम्भमात्र ग्रहण कर उसे छत्रपर्ण पर रखकर प्रदान किया॥1049॥

यहाँ से 31 वें कल्प में मैंने जो फल प्रदान किया था, यह उस फल-दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1050॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1051॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1052॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1053॥

इस प्रकार आयुष्मान् पनसफलदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

9. सोणकोटिवीसत्थेरअपदानं

''विपस्सिनो पावचने, एकं लेणं मया कतं।
चातुद्दिसस्स सङ्घस्स, बन्धुमाराजधानिया॥1054॥
''दुस्सेहि भूमिं लेणस्स, सन्थरित्वा परिच्चजिं।
उदग्गचित्तो सुमनो, अकासिं पणिधिं तदा॥1055॥
''आराधयेय्यं सम्बुद्धं, पब्बज्जञ्च लभेय्यहं।
अनुत्तरञ्च निब्बानं, फुसेय्यं सन्तिमुत्तमं॥1056॥
''तेनेव सुक्कमूलेन, कप्पे [कप्पं (सी॰), कप्प (क॰)] नवुति संसरिं।
देवभूतो मनुस्सो च, कतपुञ्ञो विरोचहं॥1057॥
''ततो कम्मावसेसेन, इध पच्छिमके भवे।
चम्पायं अग्गसेट्ठिस्स, जातोम्हि एकपुत्तको॥1058॥

''विपश्यिनः प्रवचने, एकं लयनं मया कृतम्।
चातुर्दिशः सङ्घस्य, बन्धुमाराजधान्याम्॥1054॥
''दूष्यैः भूमिं लयनस्य, सन्स्तीर्य पर्यत्यजम्।
उदग्रचित्तः सुमनाः, अकार्षं प्रणिधिं तदा॥1055॥
''**आराधयेयं** सम्बुद्धम्, प्रव्रज्याञ्च लभेयाहम्।
अनुत्तरञ्च निर्वाणम्, स्पृषेयं शान्तिमुत्तमाम्॥1056॥
''तेनैव शुक्लमूलेन, कल्पे नवति समस्मरम्।
देवभूतो मनुष्यश्च, कृतपुण्यो व्यरोचमहम्॥1057॥
''ततः कर्मावशेषेन, इह पश्चिमके भवे।
चम्पायाम् अग्रश्रेष्ठिनः, जातोस्मि एकपुत्रकः॥1058॥

बन्धुमा राजधानी की चारों दिशाओं के संघ के लिए मेरे द्वारा बुद्धोपदेश अनुरूप एक आवास का निर्माण किया गया॥1054॥

तब पर वस्त्र को आवास की भूमि फैला कर मैंने परित्याग किया और प्रसन्नचित्त एवं सौमनस्य पूर्वक एक निश्चय किया कि॥1055॥

सम्बुद्ध मेरे आराध्य हों, मुझे प्रव्रज्या का लाभ प्राप्त हो और अनुत्तर निर्वाण को प्राप्त कर मैं उत्तम शान्ति का स्पर्श करूँ॥1056॥

90 वें कल्प में कुशल कर्मों के उदित होने पर मैं मनुष्यों में और देवों में संसरण करता हूँ, और किये गये पुण्यों के कारण मैं प्रकाशित होता हूँ॥1057॥

उस कर्म के कारण मैं यहाँ के चम्पा देश के पश्चिम में श्रेष्ठ व्यापारी के यहाँ एक पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ॥1058॥

''जातमत्तस्स मे सुत्वा, पितु छन्दो अयं अहु।
ददामहं कुमारस्स, वीसकोटी अनूनका॥1059॥
''चतुरङ्गुला च मे लोमा, जाता पादतले उभो।
सुखुमा मुदुसम्फस्सा, तूलापिचुसमा सुभा॥1060॥
''अतीता नवुति कप्पा, अयं एको च उत्तरि।
नाभिजानामि निक्खित्ते, पादे भूम्या असन्थते॥1061॥
''आराधितो मे सम्बुद्धो, पब्बजिं अनगारियं।
अरहत्तञ्च मे पत्तं, सीतिभूतोम्हि निब्बुतो॥1062॥
''अग्गो आरद्धवीरियानं, निद्दिट्ठो सब्बदस्सिना।
खीणासवोम्हि अरहा, छळभिञ्ञो महिद्धिको॥1063॥

''जातमात्रस्य मे श्रुत्वा, पितुः छन्दोऽयम् अभूत्।
ददाम्यहं कुमारस्य, विंशत्कोटि अनूनकाः॥1059॥
''चतुरङ्गुलाश्च मे लोमाः, जाता पादतले उभौ।
सूक्ष्माः मृदुसंस्पर्शाः, तूला अपि च ऊष्माः शुभाः॥1060॥
''अतीता नवति कल्पाः, अयम् एकश्च **उत्तरि**।
नाभिजानामि निक्षिप्ते, पादौ भूम्याम् असंस्तृते॥1061॥
''आराधितो मे सम्बुद्धः, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
अर्हत्वञ्च मे प्राप्तम्, शीतिभूतोस्मि निर्वृतः॥1062॥
''अग्र आरब्धवीर्याणाम्, निर्दिष्टः सर्वदर्शिना।
क्षीणास्रवोस्मि **अर्हत्**, षडभिज्ञो महर्द्धिकः॥1063॥

'मेरा जन्म हुआ' ये सुनकर पिता की कामना पूर्ण हुई थी और मेरे कुमार अवस्था में जाने पर पिता ने 20 करोड़ की सम्पत्ति प्रदान की॥1059॥

मेरे दोनों पैरों तले चार अंगुल भर लोम उत्तपन्न थे, जो सूक्ष्म मृदुस्पर्शी और कपास की भांति शुभ थे॥1060॥

बीते हुए 90 वें कल्प में एक उत्तरीय वस्त्र प्राप्त हुआ और मैं भूमि पर पैर रख कर चलना भी नहीं जानता था॥1061॥

'सम्बुद्ध मेरे आराध्य हों' इस कामना से मैंने गृह का त्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण की और अर्हत्व प्राप्त कर शान्तिभूत हो निर्वाण को प्राप्त किया॥1062॥

आगे अपने परिश्रम से मैंने सर्वदर्शी के निर्देशो का पालन किया और महान षडभिज्ञा को प्राप्त कर क्षीणास्रव हो अर्हत्व को प्राप्त किया॥1063॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, लेणदानस्सिदं फलं॥1064॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1065॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1066॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1067॥

''थेरो कोटिवीसो [कोटिविसो (स्या॰ क॰), कोळिविसो (अञ्ञट्ठानेसु)] सोणो,
भिक्खुसङ्घस्स अग्गतो।
पञ्हं पुट्ठो वियाकासि, अनोतत्ते महासरे''ति॥1068॥

इत्थं सुदं आयस्मा सोणो कोटिवीसो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सोणकोटिवीसत्थेरस्सापदानं नवमं।

''एकनवतितमे कल्पे, यद् दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, लयनदानस्येदं फलम्॥1064॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1065॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1066॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1067॥

''स्थविरः कोटिविंशः श्रोणः, भिक्षुसङ्घस्य अग्रतः।
प्रश्नं पृष्टो व्याकार्षीत्, अनवतप्ते महासरे''ति॥1068॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् श्रोणः कोटिविंशस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

यहाँ से 91 वें कल्प में जो दान दिया था, यह उस लेण (गुफा) दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1064॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विचरण करता है वैसे मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1065॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन प्रकार की विद्याओं को प्राप्त कर बुद्ध शासन को पूर्ण किया॥1066॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1067॥

अनवतप्त महासागर के तट पर स्थित भिक्षुसंघ से कोलिविस श्रोण स्थविर ने एक प्रश्न पूछा... ॥1068॥
इस प्रकार आयुष्मान् कोटिविंश स्थविर ने इन गाथाओं को कहा।

10. पुब्बकम्मपिलोतिकबुद्धअपदानं

''अनोतत्तसरासन्ने, रमणीये सिलातले।

नानारतनपज्जोते, नानागन्धवनन्तरे॥1069॥

''महता भिक्खुसङ्घेन, परेतो [उपेतो (उदानट्ठकथायं ४ वग्गे, ८ सुत्ते)] लोकनायको।

आसीनो ब्याकरी तत्थ, पुब्बकम्मानि अत्तनो॥1070॥

''सुणाथ भिक्खवो मय्हं, यं कम्मं पकतं मया।

पिलोतिकस्स कम्मस्स, बुद्धत्तेपि विपच्चति॥1071॥

''मुनाळि नामहं धुत्तो, पुब्बे अञ्ञासु जातिसु [अञ्ञाय जातिया (उदान अट्ठ॰)]।

पच्चेकबुद्धं सुरभिं [सरभुं (सी॰)], अब्भाचिक्खिं अदूसकं॥1072॥

''तेन कम्मविपाकेन, निरये संसरिं चिरं।

बहूवस्ससहस्सानि, दुक्खं वेदेसि वेदनं॥1073॥

''अनवतप्तसरासन्ने, रमणीये शिलातले।

नानारत्नप्रद्योते, नानागन्धावनन्तरे॥1069॥

''महान् भिक्खुसङ्घेन, **परेतो** लोकनायकः।

आसीनो व्याकुर्यात् तत्र, पूर्वकर्माणि आत्मनः॥1070॥

''शृणुत भिक्षवो मह्यम्, यत् कर्म प्रकृतं मया।

प्लोतकस्य कर्मस्य, बुद्धत्वेऽपि विपच्यति॥1071॥

''मुनालि नाम्नोऽहं धूर्तः, पूर्वे **अन्यतरेषु** जातिषु।

प्रत्येकबुद्धं सुरभीम्, अभ्याचक्षम् अदूषकम्॥1072॥

''तेन कर्मविपाकेन, निरये समस्मरं चिरम्।

बहुवर्षसहस्राणि, दुःखम् अवेदीत् वेदनाम्॥1073॥

अनोतत्त सरोवर के समीप आसन बनाया जो विविध रत्नों से प्रकाशित और विविध गन्ध से युक्त था॥1069॥

लोकनायक ने महान् भिक्षुसंघ से युक्त वहाँ बैठे हुए अपने पूर्व कर्म की व्याख्या की॥1070॥

भिक्षुओं मैं पूर्व कर्मों की जो व्याख्या करता हूँ, उसे तुम ध्यान पूर्वक सुनो। मैंने (उस समय) अरण्य में एक भिक्षु देखा और देखकर उसको खण्डवस्त्र दान में दिया, वस्त्रदान के फलस्वरूप (आगे चलकर) मुझे बुद्धत्त्व का लाभ हुआ॥1071॥

पूर्व के अन्य जन्मों में मैं मुनालि नाम का धूर्त था तब सुगन्धित, अदोष प्रत्येकबुद्ध पर दोष लगाया॥1072॥

उस कर्म के परिणामस्वरूप अनेक हजार वर्षों तक दुःख को अनुभव करते हुए मैंने चिरकाल तक नरक में संसरण किया॥1073॥

''तेन कम्मावसेसेन, इध पच्छिमके भवे।
अब्भक्खानं मया लद्धं, सुन्दरिकाय कारणा॥1074॥
''सब्बाभिभुस्स बुद्धस्स, नन्दो नामासि सावको।
तं अब्भक्खाय निरये, चिरं संसरितं मया॥1075॥
''दसवस्ससहस्सानि, निरये संसरिं चिरं।
मनुस्सभावं लद्धाहं, अब्भक्खानं बहुं लभिं॥1076॥
''तेन कम्मावसेसेन, चिञ्चमानविका ममं।
अब्भाचिक्खि अभूतेन, जनकायस्स अग्गतो॥1077॥
''ब्राह्मणो सुतवा आसिं, अहं सक्कतपूजितो।
महावने पञ्चसते, मन्ते वाचेमि माणवे॥1078॥

''तेन कर्मावशेषेण, इह पश्चिमके भवे।
अभ्याख्यानां मया लब्धम्, सुन्दरिकया कारणात्॥1074॥
''सर्वाभिभुवः बुद्धाय, नन्दो नामासीत् श्रावकः।
तम् अभ्याख्याय निरये, चिरं संसरितं मया॥1075॥
''दशवर्षसहस्राणि, निरये समस्मरं चिरम्।
मनुष्यभावं लब्ध्वाहम्, अभ्याख्यानं बहूनि अलभे॥1076॥
''तेन कर्मावशेषेन, चिञ्चमानविका माम्।
अभ्याचक्षदभूतेन, जनकायास्य अग्रतः॥1077॥
''ब्राह्मणः श्रुतवान् आसम्, अहं सत्कृतपूजितः।
महावने पञ्चशते, **मन्त्रान्** वाचयामि माणवान्॥1078॥

उस कर्म के अवशेष रह जाने पर मैं इस लोक के पश्चिम भव में उत्पन्न हुआ और कोसल जनपद के नदी तट पर मैंने वास करते हुए मिथ्यादोषारोपण को प्राप्त किया॥1074॥

सर्वाभिभू बुद्ध का नन्द नाम का श्रावक था, उस मिथ्यादोषारोपण के कारण चिर काल तक मैंने नरक में संसरण किया॥1075॥

दश हजार वर्ष चिर काल तक नरक में संसरण किया और मनुष्यभाव को प्राप्त कर मैंने बहुत मिथ्यादोषारोपण को पाया॥1076॥

उस समय मैं चिञ्चमानविका नाम की महिला थी और अवशेष कर्मों के कारण जनसमूह के सामने दोषारोपित हुई थी॥1077॥

उस समय मैं लोगों के द्वारा सत्कृत एवं पूजित एक बहुश्रुत (विख्यात) ब्राह्मण था तब महावन में मैंने पाँच सौ माणवों को मन्त्र का वाचन किया॥1078॥

''तत्थागतो [तमागतो (क॰)] इसि भीमो, पञ्चाभिञ्ञो महिद्धिको।
तं चाहं आगतं दिस्वा, अब्भाचिक्खिं अदूसकं॥1079॥
''ततोहं अवचं सिस्से, कामभोगी अयं इसि।
मय्हम्पि भासमानस्स, अनुमोदिंसु माणवा॥1080॥
''ततो माणवका सब्बे, भिक्खमानं कुले कुले।
महाजनस्स आहंसु, कामभोगी अयं इसि॥1081॥
''तेन कम्मविपाकेन, पञ्च भिक्खुसता इमे।
अब्भक्खानं लभुं सब्बे, सुन्दरिकाय कारणा॥1082॥
''वेमातुभातरं पुब्बे, धनहेतु हनिं अहं।
पक्खिपिं गिरिदुग्गस्मिं, सिलाय च अपिंसयिं॥1083॥

''तत्रागतः ऋषिः भीमः, पञ्चाभिज्ञो महर्द्धिकः।
तञ्चाऽहम् आगतं दृष्ट्वा, अभ्याचक्षम् अदूषकम्॥1079॥
''ततोऽहम् अवचं शिष्यान्, कामभोगी अयं ऋषिः।
मह्यमपि भाषमाणस्य, **अन्वमोदिषत** माणवकाः॥1080॥
''ततो माणवकाः सर्वे, भिक्षमाणं कुले कुले।
महाजनाय अब्रुवन्, कामभोगी अयं ऋषिः॥1081॥
''तेन कर्मविपाकेन, पञ्च भिक्षुशता इमे।
अभ्याख्यानम् **अलभन्त** सर्वे, सुन्दरिकया कारणा॥1082॥
''वैमातृभ्रातरं पूर्वे, धनहेतुर्हनमहम्।
प्राक्षिपं गिरिदुर्गे, शिलया च अपिंशयम्॥1083॥

वहाँ भीम ऋषि पञ्चाभिज्ञ महर्द्धिक को आता देखकर मैंने उन निर्दोष पर मिथ्या दोषारोपण किया॥1079॥

तब मैंने शिष्यों को कहा कि ये ऋषि कामभोगी हैं और मेरे कहे गए कथन का माणवकों ने भी अनुमोदन किया॥1080॥

उस कारण से सभी माणवकों ने कुल-कुल भीक्षा मागते हुए महाजनों को यह कहा कि यह ऋषि कामभोगी है॥1081॥

उस कर्म के कारण इन सभी पाँच सौ भिक्षुओं ने कोसल जनपद की सुन्दरिका नदी तट पर यातना भोगते हुए मिथ्यादोषारोपण को पाया॥1082॥

पूर्व में मैंने अपने सौतेले भाई की धन के कारण हत्या कर दी थी, पर्वत के दुर्ग से शिला को फेंका जिससे वह पिस गया॥1083॥

''तेन कम्मविपाकेन, देवदत्तो सिलं खिपि।
अङ्गुट्ठं पिंसयी पादे, मम पासाणसक्खरा॥1084॥
''पुरेहं दारको हुत्वा, कीळमानो महापथे।
पच्चेकबुद्धं दिस्वान, मग्गे सकलिकं [सक्खलिकं (क॰)] खिपिं [दहिं (स्या॰)]॥1085॥
''तेन कम्मविपाकेन, इध पच्छिमके भवे।
वधत्थं मं देवदत्तो, अभिमारे पयोजयि॥1086॥
''हत्थारोहो पुरे आसिं, पच्चेकमुनिमुत्तमं।
पिण्डाय विचरन्तं तं, आसादेसिं गजेनहं॥1087॥
''तेन कम्मविपाकेन, भन्तो [दन्तो (क॰)] नाळागिरी गजो।
गिरिब्बजे पुरवरे, दारुणो समुपागमि [मं उपागमि (सी॰)]॥1088॥

''तेन कर्मविपाकेन, देवदत्तः शिलामक्षिपत्।
अङ्गुष्ठामपिनट् पादे, मम पाषाणशर्करा॥1084॥
''पुरेऽहं दारको भूत्वा, क्रीडमानो महापथे।
प्रत्येकबुद्धं दृष्ट्वा, मार्गे शष्कुलिकमक्षिपम्॥1085॥
''तेन कर्मविपाकेन, इह पश्चिमके भवे।
वधर्थं मां देवदत्तः, अभिमारान् प्रयोजयत्॥1086॥
''हस्त्यारोहः पुरे आसम्, प्रत्येकमुनिमुत्तमम्।
पिण्डाय विचरन् तम्, आसादयं गजेनाहम्॥1087॥
''तेन कर्मविपाकेन, दान्तो नालागिरी गजः।
गिरिव्रजे पुरवरे, दारुणः समुपागमत्॥1088॥

उस कर्म के परिणामस्वरूप देवदत्त ने शिला खण्ड फेंका और मेरे पैर का अंगूठा उस पाषाण से दब कर पिस गया॥1084॥

पूर्व में मैं बालक था, मार्ग में क्रीडा कर रहा था तब प्रत्येकबुद्ध को आता हुआ देखकर मैंने मार्ग पर कुछ पत्थर फेंका॥1085॥

इस कर्म के परिणामस्वरूप यहाँ से अगले जन्म में देवदत्त ने मेरा वध करने की योजना बनाई॥1086॥

पूर्व में मैं हाथी का महावत था तब मैंने भिक्षाटन के लिए विचरण करने वाले उन उत्तम प्रत्येकबुद्ध का अपमान किया॥1087॥

उस कर्म के परिणामस्वरूप मैं नालागिरि नाम का हाथी हुआ और गिरिव्रज राज्य में कठिनता से जीवन-यापन किया॥1088॥

"राजाहं पत्थिवो [पत्तिको (स्या॰ क॰), खत्तियो (उदान अट्ठ॰)] आसिं, सत्तिया पुरिसं हनिं।
तेन कम्मविपाकेन, निरये पच्चिसं भुसं॥1089॥

"कम्मुनो तस्स सेसेन, इदानि सकलं मम।
पादे छविं पकप्पेसि [पकोपेसि (सी॰)], न हि कम्मं विनस्सति॥1090॥

"अहं केवट्टगामस्मिं, अहुं केवट्टदारको।
मच्छके घातिते दिस्वा, जनयिं सोमनस्सकं [सोमनस्सहं (उदान अट्ठ॰)]॥1091॥

"तेन कम्मविपाकेन, सीसदुक्खं अहू मम।
सब्बे सक्का च हञ्ञिसु, यदा हनि विटटूभो [विटटुभो (स्या॰ क॰)]॥1092॥

"फुस्सस्साहं पावचने, सावके परिभासयिं।
यवं खादथ भुञ्जथ, मा च भुञ्जथ सालयो॥1093॥

"राजाऽहं प्राप्तिक आसम्, शक्त्या पुरुषम् अहनम्।
तेन कर्मविपाकेन, निरये अपाक्षिषं भृषम्॥1089॥

"कर्मणः तस्य शेषेन, इदानि सकलं मम।
पादे छविं प्राकल्पयत्, न हि कर्म विनश्यति॥1090॥

"अहं कैवर्तग्रामे, अभूवं कैवर्तदारकः।
मत्स्यकान् **घातितान्** दृष्ट्वा, अ**जाये/अजनिषि** सौमनस्यकम्॥1091॥

"तेन कर्मविपाकेन, शीर्षदुःखम् अभूत् मम।
सर्वे शाक्याश्च अघ्नन्, यदा अहन् विटटूभः॥1092॥

"स्पर्शस्याहं प्रावचने, श्रावकान् पर्यभाषयम्।
यवं खादत भुङ्क्त, मा च भुङ्क्त शालीः॥1093॥

उस समय मैं क्षत्रिय राजा था, तब मैं बर्छी से लोगों को हानि पहुँचाता था, उस कर्म के परिणामस्वरूप लम्बे समय तक मैं नरक में पकता रहा॥1089॥

उस कर्म के अवशिष्ट (फल) से मेरे पैरों में छवि (रोग) उत्पन्न हो गया, कर्म कभी नष्ट नहीं होते॥1090॥

उस समय केवट्ट ग्राम में मैं केवट्ट युवक हुआ और मछलियों का बध देखकर मुझे ग्लानि-भाव उत्पन्न हुआ॥1091॥

जब विट्टुभ के साथ मैंने सभी शाक्यों का वध किया था उस कर्म के परिणामस्वरूप मुझे अत्यधिक शिरो वेदना हुई॥1092॥

उस समय श्रावकों को प्रवचन में मैंने फुस्स के लिए मिथ्याप्रवचन किया कि यव खाना चाहिए शालि नहीं॥1093॥

'तेन कम्मविपाकेन, तेमासं खादितं यवं।
निमन्तितो ब्राह्मणेन, वेरञ्जायं वसिं तदा॥1094॥
''निब्बुद्धे वत्तमानम्हि, मल्लपुत्तं निहेठयिं [निसेधयिं (स्या॰ क॰)]।
तेन कम्मविपाकेन, पिट्ठिदुक्खं अहू मम॥1095॥
''तिकिच्छको अहं आसिं, सेट्ठिपुत्तं विरेचयिं।
तेन कम्मविपाकेन, होति पक्खन्दिका मम॥1096॥
''अवचाहं जोतिपालो, सुगतं कस्सपं तदा।
कुतो नु बोधि मुण्डस्स, बोधि परमदुल्लभा॥1097॥
''तेन कम्मविपाकेन, अचरिं दुक्करं बहुं।
छब्बस्सानुरुवेळायं, ततो बोधिमपापुणिं॥1098॥

'तेन कर्मविपाकेन, त्रिमासं खादितं यवः।
निमन्त्रितः ब्राह्मणेन, वेरञ्जनायाम् अवसं तदा॥1094॥
''निर्बुद्धेः वर्त्तमाने, मल्लपुत्रं न्यषेधयम्।
तेन कर्मविपाकेन, पृष्टदुःखम् अभूत् मम॥1095॥
''चिकित्सकोऽहम् आसम्, श्रेष्ठिपुत्रं व्यरचयम्।
तेन कर्मविपाकेन, भवति प्रस्कन्दिका मम॥1096॥
''अवचाहं ज्योतिपालः, सुगतं कश्यपं तदा।
कुत्र नु बोधि मुण्डस्य, बोधि परमदुर्लभाः॥1097॥
''तेन कर्मविपाकेन, अचरं दुष्करं बहूनि।
षट्वर्षाणि उरुवेलायाम्, ततो बोधिमप्राप्नवम्॥1098॥

उस कर्म के परिणामस्वरूप मुझे तीन मास तक यव खाने को मिला और ब्राह्मणों के निमन्त्रण पर वेरञ्जना नदी के तट पर वास किया॥1094॥

पूर्व जन्म में मैंने मल्लपुत्र को मल्लयुद्ध से रोका था, इस कारण मुझे वर्तमान में अत्यधिक पीठ दर्द उत्पन्न हुआ॥1095॥

उस समय मैं चिकित्सक था, तब श्रेष्ठि-पुत्र का उपचार किया। उस कर्म के परिणाणस्वरूप मुझे अतिसार का रोग हुआ॥1096॥

उस समय मेरा नाम ज्योतिपाल था, तब मैंने सुगत काश्यप के बारे में अपशब्द कहा कि इस सिरमुण्डे को बोधि होगी? बोधि तो परम दुर्लभ है॥1097॥

उस कर्म के विपाक से मैंने छः वर्षों तक बहुत दुष्कर विचरण किया उसके पश्चात् उत्तम बोधि को प्राप्त किया॥1098॥

''नाहं एतेन मग्गेन, पापुणिं बोधिमुत्तमं।

कुम्मग्गेन गवेसिस्सं, पुब्बकम्मेन वारितो॥1099॥

''पुञ्ञपापपरिक्खीणो, सब्बसन्तापवज्जितो।

असोको अनुपायासो, निब्बायिस्समनासवो॥1100॥

''एवं जिनो वियाकासि, भिक्खुसङ्घस्स अग्गतो।

सब्बाभिञ्ञाबलप्पत्तो, अनोतत्ते महासरे''ति॥1101॥

इत्थं सुदं भगवा अत्तनो पुब्बचरितं कम्मपिलोतिकं नाम बुद्धापदानधम्मपरियायं अभासित्थाति।

पुब्बकम्मपिलोतिकं नाम बुद्धापदानं दसमं।

अवटफलवग्गो एकूनचत्तालीसमो।

''नाऽहं एतेन मार्गेन, प्राप्नवं बोधिमुत्तमाम्।

कुमार्गेन गवेषिष्यम्, पूर्वकर्मणा वारितः॥1099॥

''पुण्यपापपरिक्षीणः, सर्वसन्तापवर्जितः।

अशोक अनुपायासः, निर्वायिष्यमनास्रवः॥1100॥

''एवं जिनो व्याकार्षीत्, भिक्षुसङ्घाय अग्रतः।

सर्वाभिज्ञानबलप्राप्तः, अनवतप्ते महासरे''इति॥1101॥

इत्थं स्विद् भगवान् आत्मनः पूर्वचरितं कर्मपिलोतिकं नाम बुद्धापदानधर्मपर्यायम् अभाषिष्टेति।

चुद्दसमं भाणवारं।

न मैंने इस मार्ग से और न ही कुमार्ग के द्वारा उत्तम बोधि को प्राप्त किया बल्कि पूर्वकर्म को रोक कर मैंने उत्तमबोधि को प्राप्त किया॥1099॥

पाप को क्षीण किये हुए, पुण्य को पाये हुए, सभी सन्तापों को छोड़कर शोकरहित, चिन्तारहित, आश्रवों को हटा कर निर्वाण प्राप्ति में लगे हुए.... ॥1100॥

इस प्रकार उन सर्वाभिज्ञाबल प्राप्त जिन ने भिक्षुसंघ के आगे अनोतत्त महासागर के तट पर व्याख्यान किया॥1101॥

इस प्रकार कर्मपिलोतिक नाम के भगवान् ने अपने पूर्व चरित बुद्धापदान धर्म के पर्याय को कहा।

तस्सुद्दानं –

अवटं लबुजञ्चेव, उदुम्बरपिलक्खु च।
फारु वल्ली च कदली, पनसो कोटिवीसको॥
पुब्बकम्मपिलोति च, अपदानं महेसिनो।
गाथायो एकनवुति, गणितायो विभाविभि॥

तस्योदानम् –

अवटं लबुजञ्चैव, उदुम्बरप्लाक्षश्च।
पारु वल्ली च कदली, पनसः कोटिविंशकः॥
पूर्वकर्मपिलोति च, अपदानं महर्षिणः।
गाथा एकनवति, गणिता विभाविभिः॥

उनके उदान- अवट, लबुज, उदुम्बर, पिलक्ख, फारुस, वल्लि, कदली, पनस, कोटिवीस और पुब्बकम्मपिलोतिक दश महर्षियों के अपदान हैं। इस प्रकार यहाँ पर 91 गाथाओं का विभागवार वर्णन हैं।

40. पिलिन्दवच्छवग्गो

1. पिलिन्दवच्छत्थेरअपदानं

पालि- ‘‘नगरे हंसवतिया, आसिं दोवारिको अहं।
अक्खोभं अमितं भोगं, घरे सन्निचितं मम॥1102॥
‘‘रहोगतो निसीदित्वा, पहंसित्वान मानसं [सम्पहंसित्व मानसं (सी॰)]।
निसज्ज पासादवरे, एवं चिन्तेसहं तदा॥1103॥
‘‘‘बहू मेधिगता भोगा, फीतं अन्तेपुरं मम।
राजापि [राजिसि (क॰)] सन्निमन्तेसि, आनन्दो पथविस्सरो॥1104॥
‘‘‘अयञ्च बुद्धो उप्पन्नो, अधिच्चुप्पत्तिको मुनि।
संविज्जन्ति च मे भोगा, दानं दस्सामि सत्थुनो॥1105॥
‘‘‘पदुमेन राजपुत्तेन, दिन्नं दानवरं जिने।
हत्थिनागे च पल्लङ्के, अपस्सेनञ्चनप्पकं॥1106॥

संस्कृत- ‘‘नगर्यां हंसवत्याम्, आसं दौवारिकोऽहम्।
अक्षोभम् अमितं भोगम्, गृहे **सन्निचितं** मम॥1102॥
‘‘रहोगतो निसीद्य, प्रहर्ष्य मानसम्।
निसीद्य प्रासादवरे, एवमचिन्तयमहं तदा॥1103॥
‘‘‘बहू मेऽधिगता भोगाः, स्फीतम् अन्तेपुरं मम।
राजाऽपि सन्न्यमन्त्रयत्, आनन्दः पृथ्वीश्वरः॥1104॥
‘‘‘अयञ्च बुद्ध उत्पन्नः, अधीत्योत्पत्तिको मुनिः।
संविद्यन्ति च मे भोगाः, दानं दास्यामि शास्त्रे॥1105॥
‘‘‘पद्मेन राजपुत्रेण, दत्तं दानवरं जिनम्।
हस्तिनागान् च पर्यङ्कान्, अपाश्रयेणाञ्चानल्पकम्॥1106॥

हिन्दी- हंसवती नामक नगर में मैं द्वारपाल था। तब मैंने अपने घर में अक्षोभ (लम्बे समय तक चलने वाला) असीमित भोग को संग्रहित किया॥1102॥

श्रेष्ठ प्रासाद के एकान्त स्थान पर अत्यधिक प्रसन्नमन से बैठ कर तब मैंने इस प्रकार का चिन्तन किया कि-॥1103॥

मैंने अपने अन्तः पुर को दीर्घ समय तक चलने वाले भोगों से समृद्ध कर लिया है और आनन्द नामक पृथ्वी के स्वामी (राजा) ने भी मन्त्रणा करने हेतु मुझे निमन्त्रण दिया है॥1104॥

यह जो बुद्ध उत्पन्न हुए हैं, आकस्मिक उत्पत्ति वाले मुनि हैं, मैं भी संचित भोग का दान उन शास्ता को करूँगा॥1105॥

राजा ने कमलपुष्प के साथ जिन को हाथी, पलंग, रेशमी चादर जो कि अल्प ना हो, ऐसा श्रेष्ठ दान किया॥1106॥

‘‘‘अहम्पि दानं दस्सामि, सङ्घे गणवरुत्तमे।
अदिन्नपुब्बमञ्ञेसं, भविस्सं आदिकम्मिको॥1107॥
‘‘‘चिन्तेत्वाहं बहुविधं, यागे यस्स सुखंफलं।
परिक्खारदानमद्दक्खिं, मम सङ्कप्पपूरणं॥1108॥
‘‘‘परिक्खारानि दस्सामि, सङ्घे गणवरुत्तमे।
अदिन्नपुब्बमञ्ञेसं, भविस्सं आदिकम्मिको’॥1109॥
‘‘नळकारे उपागम्म, छत्तं कारेसि तावदे।
छत्तसतसहस्सानि, एकतो सन्निपातयिं॥1110॥
‘‘दुस्ससतसहस्सानि, एकतो सन्निपातयिं।
पत्तसतसहस्सानि, एकतो सन्निपातयिं॥1111॥

‘‘‘अहमपि दानं दास्यामि, सङ्घाय गणवरुत्तमाय।
अदत्तपूर्वमन्येषाम्, भविष्यम् आदिकर्मिकः॥1107॥
‘‘‘चिन्तयित्वाऽहं बहुविधम्, यागे यस्य सुखंफलम्।
परिष्कारदानमद्राक्षम्, मम सङ्कल्पपूरणम्॥1108॥
‘‘‘परिष्काराणि दास्यामि, सङ्घाय गणवरुत्तमाय।
अदत्तपूर्वमन्येषाम्, भविष्यम् आदिकर्मिकः’॥1109॥
‘‘नडाकारे उपागम्य, छत्रमकारयत् तावत्।
छत्रशतसहस्राणि, एकतः सन्न्यपातयम्॥1110॥
‘‘दूष्यशतसहस्राणि, एकतः सन्न्यपातयम्।
पत्रशतसहस्राणि, एकतः सन्न्यपातयम्॥1111॥

गणों में उत्तम गणसंघ को मैं भी दान दूँगा जो इससे पहले किसी ने ऐसा दान न दिया हो और भविष्य में दान करने वाले भी नहीं॥1107॥

मैं विविध प्रकार से चिन्तन करता हूँ कि यह यज्ञ सुख फल देने वाला हो और इस परिष्कार दान से मेरा सङ्कल्प पूर्ण होता है, ऐसा मैं देखता हूँ॥1108॥

गणों में उत्तम गणसंघ को मैं आवश्यकता की वस्तुएँ दान दूँगा जो पूर्व में न दिया गया हो और भविष्य में किसी ने आरम्भ न किया हो॥1109॥

तब मैं टोकरी बनाने वाले के समीप गया और छत्र बनवाया। सौ हजार छत्र बनवाकर एक ओर व्यवस्थित कर रखा॥1110॥

सौ हजार वस्त्र भी एक ओर व्यवस्थित कर रखा तथा सौ हजार भिक्षा पात्र भी एक ओर व्यवस्थित कर रखा॥1111॥

''वासियो सत्थके चापि, सूचियो नखछेदने।
हेट्ठाछत्ते ठपापेसिं, कारेत्वा तदनुच्छवे॥1112॥
''विधूपने तालवण्टे, मोरहत्थे च चामरे।
परिस्सावने तेलधारे [तेलधरे (सी॰)], कारयिं तदनुच्छवे॥1113॥
''सूचिघरे अंसबद्धे, अथोपि कायबन्धने।
आधारके च सुकते, कारयिं तदनुच्छवे॥1114॥
''परिभोगभाजने च, अथोपि लोहथालके।
भेसज्जे पूरयित्वान, हेट्ठाछत्ते ठपेसहं॥1115॥
''वचं उसीरं लट्ठिमधुं, पिप्फली मरिचानि च।
हरीतकिं सिङ्गीवेरं, सब्बं पूरेसि भाजने॥1116॥

''वासीन् शस्त्रकान् चाऽपि, सूचीन् नखछेदनान्।
अधस्ताच्छत्रे अस्थापयम्, कारयित्वा तदनुच्छवे॥1112॥
''विधूपनानि तालवृण्तानि, मोरहस्तान् च चामरान्।
परिश्रावणान् तैलधरानि, अकारयं तदनुच्छवे॥1113॥
''सूचिगृहाणि अंसबन्धान्, अथाऽपि कायबन्धनान्।
आधारकान् च सुकृतानि, अकारयं तदनुच्छवे॥1114॥
''परिभोगभाजने च, अथाऽपि लौहस्थालके।
भैषज्यानि पूरयित्वा, अधस्ताच्छत्रे अस्थापयमहम्॥1115॥
''वचम् उशीरं यष्टिमधु, पिप्पलानि मरीचानि च।
हरीतकीं शृङ्गवेरम्, सर्वमपूरयत् भाजने॥1116॥

वासी (कुल्हाड़ी), सुई, छुरी और नख काटने वाला भी छत्र के नीचे व्यवस्थित रूप से रख दिया॥1112॥

डंठल वाला पंखा और मोरपंख से निर्मित चामर, पानी छानने का कपड़ा, स्थापित किया॥1113॥

सुई रखने वाला पात्र, कंधे पर टाँगने वाला झोला और कायबन्ध (कमर की पट्टी) भी उस छत्र के नीचे सुकृत रूप से व्यवस्थित कर स्थापित किया॥1114॥

परिभोग की सामग्री और लोहे की थाली, औषधि को पूरित कर छत्र के नीचे मैंने व्यवस्थित रूप से स्थापित किया॥1115॥

वच, उसीर (खस) लट्ठिमधु, पिप्पली, मरिच, हरीत (हरड़) और सिङ्गीवेर (अदरक) इन सभी से पात्र को पूरित कर दिया॥1116॥

''उपाहना पादुकायो, अथो उदकपुञ्छने।
कत्तरदण्डे सुकते, कारयिं तदनुच्छवे॥1117॥
''ओसधञ्जननाळी च [ओसधं अञ्जनापिच (स्या॰)], सलाका धम्मकुत्तरा।
कुञ्चिका पञ्चवण्णेहि, सिब्बिते कुञ्चिकाघरे॥1118॥
''आयोगे धूमनेत्ते च, अथोपि दीपधारके।
तुम्बके च करण्डे च, कारयिं तदनुच्छवे॥1119॥
''सण्डासे पिप्फले चेव, अथोपि मलहारके।
भेसज्जथविके चेव, कारयिं तदनुच्छवे॥1120॥
''आसन्दियो पीठके च, पल्लङ्के चतुरोमये।
तदनुच्छवे कारयित्वा, हेट्ठाछत्ते ठपेसहं॥1121॥

''**उपानहः पादुकाः**, अथो उदकप्रौञ्छनानि।
कर्तृदण्डानि सुकृतानि, अकारयं तदनुच्छवे॥1117॥
''औषधाञ्जननाडीः च, शलाकाः धर्मकोत्तराः।
कुञ्चिकाः पञ्चवर्णैः, सीव्यते कुञ्चिकागृहे॥1118॥
''आयोगानि धूमनेत्राणि च, अथाऽपि दीपधारकानि।
तुम्बकानि च करण्डानि च, अकारयं तदनुच्छवे॥1119॥
''सण्डिशान् पिप्पलीन् चैव, अथाऽपि मलहारकान्।
भैषज्यस्तविकाः चैव, अकारयं तदनुच्छवे॥1120॥
''आसन्दिकाः पीठकान् च, पर्यङ्कान् **चतुर्मयान्**।
तदनुच्छवे कारयित्वा, अधस्ताच्छत्रे अस्थापयमहम्॥1121॥

उनकी छवि के अनुरूप मैंने उपाहन (जूता), पादुका (खड़ाऊँ), पैर पोछने का वस्त्र और सैर करने की लाठी का निर्माण करवाया॥1117॥

औषधि, काजल लगाने की छोटी शलाका और धर्मानुकूल निर्मित सलाका, पाँच वर्ण की कुञ्चिका, कुञ्चिका रखने का सिला हुआ बैग..... ॥1118॥

धूआँ निकलने का साधन, दीपकधारक, लोटा और एक बड़े बर्तन का निर्माण मैंने उनकी छवि के अनुरूप करवाया॥1119॥

सँडसी, पिप्फली और मल का हरण करने वाली औषधि की एक कपड़े की पोटली का निर्माण उनकी छवि के अनुरूप करवाया॥1120॥

उनकी छवि के अनुसार मैंने चौकी, बैठने का पीढ़ा और चार प्रकार के पलंग का निर्माण कराकर छत्र के नीचे स्थापित किया॥1121॥

''उण्णाभिसी तूलभिसी, अथोपि पीठिकाभिसी [पीठकाभिसी (स्या॰ क॰)]।
बिम्बोहने [बिब्बोहने (स्या॰ क॰)] च सुकते, कारयिं तदनुच्छवे॥1122॥
''कुरुविन्दे मधुसित्थे, तेलं हत्थप्पतापकं।
सिपाटिफलके सुची, मञ्चं अत्थरणेन च॥1123॥
''सेनासने पादपुञ्छे, सयनासनदण्डके।
दन्तपोणे च आटली [कथलिं (स्या॰)], सीसालेपनगन्धके॥1124॥
''अरणी फलपीठे [पलालपीठे (सी॰)] च, पत्तपिधानथालके।
उदकस्स कटच्छू च, चुण्णकं रजनम्बणं [रजनम्मणं (सी॰)]॥1125॥
''सम्मज्जनं [सम्मुञ्जनं (स्या॰), सम्मज्जनिं, सम्मुञ्जनिं (?)] उदपत्तं, तथा
वस्सिकसाटिकं।
निसीदनं कण्डुच्छादि, अथ अन्तरवासकं॥1126॥

''ऊर्णाबृशीः तूलबृशीः, अथाऽपि पीठिकाबृशीः।
बिम्बोहनान् च सुकृतान्, अकारयं तदनुच्छवे॥1122॥
''कुरुविन्दान् मधुसिक्तकानि, तैलं हस्तप्रतापकम्।
स्त्रीपाटिफलकानि सूचीन्, मञ्चम् आस्तरणेन च॥1123॥
''शयनासनानि पादप्रौञ्छनानि, शययनासनदण्डकान्।
दन्तप्रवणानि च आटलीः, शीशालेपनगन्धकान्॥1124॥
''अरणीः फलपीठानि च, पत्रापिधानस्थालकानि।
उदकस्य कटच्छू च, चूर्णकं रजनम्बणम्॥1125॥
''सम्मार्जनीम् उदपत्रम्, तथा वार्षिकशाटीकम्।
निसीदनं कण्डुच्छादि, अथ अन्तरवासकम्॥1126॥

बालों का गद्दा, कपास का गद्दा, पीठिका (मशलन) और भली प्रकार से निर्मित तकिया भी वहाँ पर स्थापित किया॥1122॥

लालमणि (विशेष पत्थर), मधुपात्र, हाथ गरम करने वाला तेल, छोटा सन्दूक, सुई, मचिया और चादर..... ॥1123॥

सोने के लिए स्थान, पैर पोछने का कपड़ा, शयनासन के समीप रखने का दण्ड, दाँत की सफाई करने वाली वस्तु, आटली (छोटा थैला) और सर पर लेपन करने वाला गन्धक.... ॥1124॥

रगड़कर आग उत्पन्न करने के लिए लकड़ी का एक टुकड़ा सरकण्डो से बनी छोटी चौकी और पात्र को ढकने के लिए छोटी थाली, उदक से जल निकालने हेतु कड़छी स्थापित कर वहाँ रजचूर्ण से एक माँद का निर्माण किया॥1125॥

झाड़ू, जल निकालने का पात्र तथा वर्षा ऋतु में पहनने वाली साड़ी, बैठने का आसन, घाव को बाँधने की पट्टी और अन्दर पहनने का वस्त्र भी स्थापित किया॥1126॥

''उत्तरासङ्गसङ्घाटी, नत्थुकं मुखसोधनं।
बिळङ्गलोणं पहूतञ्च [लोणभूतञ्च (क॰)], मधुञ्च दधिपानकं॥1127॥
''धूपं [धूमं (क॰)] सित्थं पिलोतिञ्च, मुखपुञ्छनसुत्तकं।
दातब्बं नाम यं अत्थि, यञ्च कप्पति सत्थुनो॥1128॥
''सब्बमेतं समानेत्वा, आनन्दं उपसङ्कमिं।
उपसङ्कम्म राजानं, जनेतारं महेसिनो [महेसिनं (सी॰), महायसं (स्या॰), महिस्सरं (क॰)]।
सिरसा अभिवादेत्वा, इदं वचनमब्रविं॥1129॥
'''एकतो जातसंवद्धा, उभिन्नं एकतो मनं [यसो (स्या॰), मनो (?)]।
साधारणा सुखदुक्खे, उभो च अनुवत्तका॥1130॥
'''अत्थि चेतसिकं दुक्खं, तवाधेय्यं अरिन्दम।
यदि सक्कोसि तं दुक्खं, विनोदेय्यासि खत्तिय॥1131॥

''उत्तरासङ्गसङ्घाटी, **नस्तुकं** मुखशोधनम्।
बिडङ्गलवणं प्रभूतञ्च, मधु च दधिपानकम्॥1127॥
''धूपं सित्तं **प्लोतञ्च**, मुखप्रोञ्छनसुत्तकम्।
दातव्यं नाम यदस्ति, यच्च कल्पते शास्तृणः॥1128॥
''सर्वमेतद् समानीय, आनन्दम् उपसमाक्रामम्।
उपसङ्क्रम्य राजानाम्, जनेतारं महर्षिणे।
शिरसा अभिवाद्य, इदं वचनमब्रवीम्॥1129॥
'''एकतः जातसंवर्द्धाः, उभयम् एकतः मनम्।
साधारणा सुखदुःखे, उभौ च अनुवर्त्तकाः॥1130॥
'''अस्ति चैतसिकं दुःखम्, तवाधेयम् अरिन्दम।
यदि शक्नोसि तद्दुःखम्, विनुदेः क्षत्रिय॥1131॥

उत्तरासङ्ग सङ्घाटि, नाक, मुख साफ करने का वस्त्र, स्नान करने का चूर्ण, कढ़ी और लस्सी को भरपूर मात्रा में स्थापित किया॥1127॥

धूप, कपूर और मुख पोछने योग्य वस्त्र आदि ये जो कल्प में होने वाले शास्ता होंगे, मेरे द्वारा उनको देय है॥1128॥

ये जो सभी वस्तुएँ प्रसन्नतापूर्वक लेकर मैं जनता के पालन करने वाले राजा के समीप लेकर गया और वहाँ जाकर सर से अभिवादन करके महर्षि को यह वचन को कहा..... ॥1129॥

एक तो जन्म से सम्बद्ध है और (दोनों में से) दूसरा मन से सम्बद्ध है। साधारणतया सुख-दुःख दोनों एक दूसरे के अनुवर्तक है॥1130॥

ये जो चैतसिक दुःख है, हे अरिदम! तुम्हारे अधीन है। यदि तुम इस पर विजय प्राप्त कर सकते हो तो क्षत्रिय कहलाओगे॥1131॥

‘‘‘तव दुक्खं मम दुक्खं, उभिन्नं एकतो मनो [मनं (सी॰ स्या॰)]।
निट्ठितन्ति विजानाहि, ममाधेय्यं सचे तुवं॥1132॥
‘‘‘जानाहि खो महाराज, दुक्खं मे दुब्बिनोदयं।
पहु समानो गज्जसु, एकं ते दुच्चजं वरं॥1133॥
‘‘‘यावता विजिते अत्थि, यावता मम जीवितं।
एतेहि यदि ते अत्थो, दस्सामि अविकम्पितो॥1134॥
‘‘‘गज्जितं खो तया देव, मिच्छा तं बहु गज्जितं।
जानिस्सामि तुवं अज्ज, सब्बधम्मे [सच्चधम्मे (?)] पतिट्ठितं॥1135॥
‘‘‘अतिबाळ्हं निपीळेसि, ददमानस्स मे सतो।
किं ते मे पीळितेनत्थो, पत्थितं ते कथेहि मे॥1136॥

‘‘‘तव दुःखं मम दुःखम्, उभयम् एकतो मनः।
निष्ठितम् इति विजानैः/विजानीहि, ममाधेयं स चेत् त्वम्॥1132॥
‘‘‘जानीहि खलु महाराज, दुःखं मे दुर्व्यनुदम्।
प्रभूत् समानः **गर्जस्व**, एकं ते दुस्त्यजं वरम्॥1133॥
‘‘‘यावद् विजिते अस्ति, यावन्मम जीवितम्।
एतैः यदि ते अर्थः, दास्यामि अविकम्पितः॥1134॥
‘‘‘गर्जितं खलु त्वया देव, मिथ्या तद् बहु गर्जितम्।
ज्ञास्यामि त्वाम् अद्य, सर्वधर्मे प्रतिष्ठितम्॥1135॥
‘‘‘अतिबाढं न्यपीडयत्, ददमानस्य मे सतः।
कस्ते मे पीडितेनार्थः, प्रार्थितं ते कथय माम्॥1136॥

तेरा दुःख मेरा दुःख है, दोनों मन से ही उत्पन्न हैं, इनको सम्पूर्ण रूप से जानो। जैसे मैंने जाना वैसे तुम भी जानो॥1132॥

निश्चय ही महाराज मैं दुःख से मुक्ति पाने में समर्थ नहीं हूँ, ऐसा जानिए और आप भी ऐसी ही एक श्रेष्ठ घोषणा करिए॥1133॥

जब तक विजयी हूँ तब तक मैं जीवित हूँ, यदि ये ऐसा अर्थ है तो मैं स्थिर चित्त वाला हूँ॥1134॥

हे देव! आप ऐसी घोषणा करते हैं। मैंने आपके समक्ष बहुत गर्जना की आज मैं ऐसा जानूँगा कि आप सभी धर्मों में प्रतिष्ठित हैं॥1135॥

मेरे द्वारा स्मृतिपूर्वक प्रदान करते हुये भी अत्यधिक पीड़ित कर रहे हो। मुझे पीड़ा से तुम्हारा क्या प्रयोजन? अपनी इच्छा बताओ॥1136॥

‘‘‘इच्छामहं महाराज, बुद्धसेट्ठं अनुत्तरं।
भोजयिस्सामि सम्बुद्धं, वज्जं [वञ्चुं (?)] मे माहु जीवितं॥1137॥
‘‘‘अञ्ञं तेहं वरं दम्मि, मा याचित्थो तथागतं [अयाचितो तथागतो (स्या॰ क॰)]।
अदेय्यो कस्सचि बुद्धो, मणि जोतिरसो यथा॥1138॥
‘‘‘ननु ते गज्जितं देव, याव जीवितमत्तनो [विजितमत्थितं (क॰), जीवितमत्थिकं (स्या॰)]।
जीवितं ददमानेन, युत्तं दातुं तथागतं॥1139॥
‘‘‘ठपनीयो महावीरो, अदेय्यो कस्सचि जिनो।
न मे पटिस्सुतो बुद्धो, वरस्सु अमितं धनं॥1140॥
‘‘‘विनिच्छयं पापुणाम, पुच्छिस्साम विनिच्छये।
यथासण्ठं कथेस्सन्ति, पटिपुच्छाम तं तथा॥1141॥

‘‘‘इच्छाम्यहं महाराज, बुद्धश्रेष्ठम् अनुत्तरम्।
भोजयिष्यामि सम्बुद्धम्, वञ्चितमाह जीवितम्॥1137॥
‘‘‘अन्यं तेऽहं वरं **दद्याम्**, मा याचस्व तथागतम्।
अदेयः कस्यचिद् बुद्धः, मणिर्ज्योतिरसो यथा॥1138॥
‘‘‘ननु ते गर्जितं देव, यावज्जीवितमात्मनः।
जीवितं ददमानेन, युक्तं दातुं तथागतम्॥1139॥
‘‘‘स्थापनीयो महावीरः, अदेयः कस्यचिज्जिनः।
न मे प्रतिश्रुतो बुद्धः, वृणुस्व अमितं धनम्॥1140॥
‘‘‘विनिश्चयं प्राप्नवम्, प्रक्ष्यामः विनिश्चये।
यथाशान्तं कथयिष्यन्ति, प्रतिप्रक्ष्यामस्तांस्तथा॥1141॥

महाराज मेरी इच्छा है कि मैं अनुत्तर बुद्धश्रेष्ठ, सम्बुद्ध को भोजन कराऊँ। मेरा जीवन कहीं व्यर्थ न हो जाय॥1137॥

मैं तुम्हें अन्य वर देता हूँ। तथागत की याचना मत करो। ज्योतिरस मणि के समान बुद्ध अदेय है॥1138॥

जब तक जीवित हैं, निश्चय ही वे देव घोषणा करेगें, तथागत न्याय पूर्वक जीवन दान देंगे॥1139॥

क्या देव! आपकी यह घोषणा नहीं है कि, अपने जीवन पर्यन्त तथा अन्त में जीवन का दान करने से तथागत को देना युक्त होगा? ॥1140॥

निश्चय ही हम वहाँ पहुचेगें, निश्चय ही प्रश्न पूछेगें। जैसा शान्त कहेगें उनसे वैसा ही हम पूछेंगे॥1141॥

‘‘‘रञ्ञो हत्थे गहेत्वान, अगमासिं विनिच्छयं।
पुरतो अक्खदस्सानं, इदं वचनमब्रविं॥1142॥
‘‘‘सुणन्तु मे अक्खदस्सा, राजा वरमदासि मे।
न किञ्चि ठपयित्वान, जीवितम्पि पवारयि॥1143॥
‘‘‘तस्स मे वरदिन्नस्स, बुद्धसेट्ठं वरिं अहं।
सुदिन्नो होति मे बुद्धो, छिन्दथ संसयं मम॥1144॥
‘‘‘सोस्साम तव वचनं, भूमिपालस्स राजिनो।
उभिन्नं वचनं सुत्वा, छिन्दिस्सामेत्थ संसयं॥1145॥
‘‘‘सब्बं देव तया दिन्नं, इमस्स सब्बगाहिकं।
न किञ्चि ठपयित्वान, जीवितम्पि पवारयि॥1146॥

‘‘‘राज्ञो हस्तौ गृहीत्वा, अगमं विनिश्चयम्।
पुरतः अक्षदर्शिणम्, इदं वचनमब्रवम्॥1142॥
‘‘‘शृण्वन्तु मे **अक्षदर्शिणः**, राजा वरमददात् मे।
न किञ्चित् स्थापयित्वा, जीवितमपि प्रावारयत्॥1143॥
‘‘‘तस्य मे **वरदत्तस्य**, बुद्धश्रेष्ठं वरम् अहम्।
सुदत्तो भवति मे बुद्धः, **छिन्द्यात** संशयं मम॥1144॥
‘‘‘श्रोष्यामः तव वचनम्, भूमिपालस्य राज्ञः।
उभयोः वचनं श्रुत्वा, **छेत्स्याम अत्र** संशयम्॥1145॥
‘‘‘सर्वं देव त्वया दत्तम्, **एषां** सर्वग्राहिकम्।
न किञ्चित् स्थापयित्वा, जीवितमपि प्रावारयत्॥1146॥

राजा द्वारा ग्रहण कर वहाँ जाने का निश्चय किया और निर्णायक को सामने देखकर ऐसे वचनों को कहा॥1142॥

सुनिये! निर्णायक राजा ने मुझे ऐसा वरदान दिया कि कुछ भी न छोड़कर जीवन को भी त्याग दिया॥1143॥

उन श्रेष्ठ बुद्ध ने हमें वर दिया कि तुम अपने सभी संशय भली प्रकार नष्ट कर बुद्ध होगे॥1144॥

आप और भूमिपालक राजा दोनों के वचनों को सुनकर हमारे संशय कट गये॥1145॥

हे देव! आपने सब कुछ दिया है, इसमें सब ग्रहण करने योग्य है। कुछ भी बिना छोड़े जीवन को भी छोड़ा॥1146॥

‘‘‘किच्छप्पत्तोव हुत्वान, याची वरमनुत्तरं [यावजीवमनुत्तरं (स्या॰ क॰)]।
इमं सुदुक्खितं ञत्वा, अदासिं सब्बगाहिकं॥1147॥
‘‘‘पराजयो तुवं [तवं (सी॰)] देव, अस्स देय्यो तथागतो।
उभिन्नं संसयो छिन्नो, यथासण्ठम्हि [यथासन्तम्हि (सी॰)] तिट्ठथ॥1148॥
‘‘‘राजा तत्थेव ठत्वान, अक्खदस्सेतदब्रवि।
सम्मा मय्हम्पि देय्याथ, पुन बुद्धं लभामहं॥1149॥
‘‘‘पूरेत्वा तव सङ्कप्पं, भोजयित्वा तथागतं।
पुन देय्यासि [देय्याथ (क॰)] सम्बुद्धं, आनन्दस्स यसस्सिनो’’॥1150॥
‘‘अक्खदस्सेभिवादेत्वा, आनन्दञ्चापि खत्तियं।
तुट्ठो पमुदितो हुत्वा, सम्बुद्धमुपसङ्कमिं॥1151॥

‘‘‘कृच्छ्रप्राप्त इव भूत्वा, अयाचद् वरमनुत्तरम्।
इमं सुदुःखितं ज्ञात्वा, अददां सर्वग्राहिकम्॥1147॥
‘‘‘पराजयः तव देव, अस्य देयस्तथागतः।
उभयं संशयच्छिन्नः, यथाशान्तं तिष्ठत॥1148॥
‘‘‘राजा तत्रैव स्थित्वा, अक्षदर्शिनम् एतदब्रवीत्।
सम्यग् मह्यमपि **ददस्व**, पुनः बुद्धं लभे अहम्॥1149॥
‘‘‘पूरयित्वा तव सङ्कल्पम्, भोजयित्वा तथागतम्।
पुनः **ददस्व** सम्बुद्धाय, आनन्दाय यशस्विने’’॥1150॥
‘‘अक्षदर्शिनमभिवाद्य, आनन्दञ्चापि क्षत्रियम्।
तुष्टः प्रमुदितो भूत्वा, सम्बुद्धमुपसमक्रमिषम्॥1151॥

कष्ट का अनुभव करते हुए मैंने उत्तम व श्रेष्ठ की याचना की और इसे दुःखित जानकर सब कुछ सर्वग्राही को दे दिया॥1147॥

हे देव! तुम्हारी पराजय और इसके लिये तथागत की देयता। आपके दोनों संशय छिन्न होने से शान्तचित्त बैठो॥1148॥

राजा ने वहीं पर स्थित होकर न्यायाधीश से कहा, मुझे भी सम्यक् रूप से दान करो। पुनः मैं बुद्ध को प्राप्त करूँ॥1149॥

अपना संकल्प पूर्ण कर तथागत को भोजन करा कर पुनः यशस्वी आनन्द को सम्बुद्ध को दान दे दो॥1150॥

न्यायाधीश और क्षत्रिय आनन्द को अभिवादन करके सन्तुष्ट तथा अतिप्रसन्न होकर मैं सम्बुद्ध के समीप गया॥1151॥

''उपसङ्कम्म सम्बुद्धं, ओघतिण्णमनासवं।
सिरसा अभिवादेत्वा, इदं वचनमब्रविं॥1152॥
'वसीसतसहस्सेहि, अधिवासेहि चक्खुम।
हासयन्तो मम चित्तं, निवेसनमुपेहि मे'॥1153॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
मम सङ्कप्पमञ्ञाय, अधिवासेसि चक्खुमा॥1154॥
''अधिवासनमञ्ञाय, अभिवादिय सत्थुनो।
हट्ठो उदग्गचित्तोहं, निवेसनमुपागमिं॥1155॥
''मित्तामच्चे समानेत्वा, इदं वचनमब्रविं।
'सुदुल्लभो मया लद्धो, मणि जोतिरसो यथा॥1156॥

''उपसङ्क्रम्य सम्बुद्धम्, ओघतीर्णमनास्रवम्।
शिरसा अभिवाद्य, इदं वचनमब्रवम्॥1152॥
'वर्षशतसहस्रैः, अधिवासैश्चक्षुष्मन्।
हासयन् मम चित्तम्, निवेशनमुपेहि मे'॥1153॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
मम सङ्कल्पमाज्ञाय, अध्यवासयच्चक्षुष्मान्॥1154॥
''अधिवासनमाज्ञाय, अभिवाद्य शास्त्रे।
हृष्टः उदग्रचित्तोऽहम्, निवेशनमुपागमम्॥1155॥
''मित्रामात्यौ समानीय, इदं वचनमब्रवम्।
'सुदुर्लभो मया लब्धः, मणिर्ज्योतीरसो यथा॥1156॥

(भव रूपी) बाढ़ को पार करने वाले अनास्रव सम्बुद्ध के पास पहुँचकर सिर से प्रणाम कर ऐसा कहा-॥1152॥

20 लाख भिक्षुओं के साथ वास करते हुए चक्षुमान् मेरे चित्त को प्रसन्न करते हुए मेरे निवास पर आएँ और अधिवास करें॥1153॥

पद्मोत्तर, लोकविद्, आहुतियों के ग्रहणकर्ता चक्षुमान् ने मेरे संकल्प को जानकर वहाँ वास किया॥1154॥

मैंने शास्ता को वास करता हुआ जानकर अभिवादन किया और अत्यधिक प्रसन्न हृदय से उनके समीप गया॥1155॥

मित्र और आमात्य को लाकर मैंने कहा – मुझे ज्योतिरस मणि के समान दुर्लभ का लाभ प्राप्त हुआ है॥1156॥

‘‘‘केन तं पूजयिस्साम, अप्पमेय्यो अनूपमो।
अतुलो असमो धीरो, जिनो अप्पटिपुग्गलो॥1157॥
‘‘‘तथासमसमो चेव, अदुतियो नरासभो।
दुक्करं अधिकारञ्हि, बुद्धानुच्छविकं मया॥1158॥
‘‘‘नानापुप्फे समानेत्वा, करोम पुप्फमण्डपं।
बुद्धानुच्छविकं एतं, सब्बपूजा भविस्सति’॥1159॥
‘‘उप्पलं पदुमं वापि, वस्सिकं अधिमुत्तकं [अतिमुत्तकं (?)]।
चम्पकं [चन्दनं (क॰)] नागपुप्फञ्च, मण्डपं कारयिं अहं॥1160॥
‘‘सतासनसहस्सानि, छत्तच्छायाय पञ्ञपिं।
पच्छिमं आसनं मय्हं, अधिकं सतमग्घति॥1161॥

‘‘‘केन त्वं पूजयिष्याम, अप्रमेय अनूपमः।
अतुलः असमः धीरः, जिनो अप्रतिपुद्गलः॥1157॥
‘‘‘तथासमःसमश्चैव, अद्वितीयो नरर्षभः।
दुष्करम् अधिकारं हि, बुद्धानुच्छविकं मया॥1158॥
‘‘‘नानापुष्पाणि समानीय, अकरवम् पुष्पमण्डपम्।
बुद्धानुच्छविकम् एतम्, सर्वपूजा भविष्यति’॥1159॥
‘‘उत्पलं पद्मं वाऽपि, वार्षिकम् अधिमुक्तकम्।
चम्पकं नागपुष्पञ्च, मण्डपम् अकारयम् अहम्॥1160॥
‘‘शतासनसहस्राणि, **छत्रच्छायायै** प्राज्ञापयम्।
पश्चिमम् आसनं मम, अधिकं शतमर्घति॥1161॥

जो अप्रमेय, अनुपम (अद्वितीय) अतुल, असम, धीर, जिन अप्रतिपुद्गल हैं, हम आपकी कैसे पूजा करें॥1157॥

अद्वितीय नरर्षभ बुद्ध के समान बनूँ यह मेरे लिए दुष्कर है और मैं इसका अधिकारी नहीं हूँ॥1158॥

विविध पुष्पों को लाकर पुष्पमण्डप का निर्माण कराया ये सब पूजा बुद्ध के योग्य है॥1159॥

नीलकमल, रक्तकमल, चमेली और अजमोथा, चम्पक, नागपुष्प को लाकर मैंने मण्डप का निर्माण किया॥1160॥

सौ हजार छाया प्रदान करने वाले छत्रों से युक्त आसन का वहाँ निर्माण कराया। सबसे पीछे वाला संख्या में सौ की कीमत वाला आसन मेरा है॥1161॥

''सतासनसहस्सानि, छत्तच्छायाय पञ्जपिं।
पटियादेत्वा अन्नपानं, कालं आरोचयिं अहं॥1162॥
''आरोचितम्हि कालम्हि, पदुमुत्तरो महामुनि।
वसीसतसहस्सेहि, निवेसनमुपेसि मे॥1163॥
''धारेन्तं उपरिच्छत्तं [धारेन्तमुपरिच्छत्ते (सी॰)], सुफुल्लपुप्फमण्डपे।
वसीसतसहस्सेहि, निसीदि पुरिसुत्तमो॥1164॥
'''छत्तसतसहस्सानि, सतसहस्समासनं।
कप्पियं अनवज्जञ्च, पटिगण्हाहि चक्खुम'॥1165॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
ममं तारेतुकामो सो, सम्पटिच्छि महामुनि॥1166॥

''शतासनसहस्राणि, छत्रच्छायायाः प्राज्ञापयम्।
प्रत्याद्य अन्नपानम्, कालम् आरोचयम् अहम्॥1162॥
''आरोचिते काले, पद्मोत्तरो महामुनिः।
वशीशतसहस्रैः/सहस्रेभिः, निवेशनमुपायात् मे॥1163॥
''धारयन्तम् उपरिच्छत्रम्, सुफुल्लपुष्पमण्डपे।
वशीशतसहस्रैः, न्यसीदत् पुरुषोत्तमः॥1164॥
'''छत्रशतसहस्राणि, शतसहस्रमासनम्।
कल्प्यम् अनवद्यञ्च, प्रागृह्णाद्धि चक्षुष्मान्'॥1165॥
''पद्मोत्तरो लोकविदुः, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
मां तारयितुकामः सः, समप्रत्यैच्छन्महामुनिः॥1166॥

वहाँ सौ हजार छाया प्रदान करने वाले छत्रों से युक्त आसन का निर्माण कराया और वहाँ पर अन्नपान की व्यवस्था कर 'भोजन का उचित समय है' ऐसा सूचित किया॥1162॥

काल की सूचना देने पर पद्मोत्तर महामुनि 100 हजार शिष्यों के साथ मेरे रहने के स्थान पर पहुँच गये॥1163॥

भली प्रकार से पुष्पित मण्डप में ऊपर छत्र धारण करते हुए 100 हजार शिष्यों के साथ पुरुषोत्तम ने वास किया॥1164॥

100 हजार छत्र और 100 हजार अनिन्दनीय (प्रशंसनीय) आसन चक्षुष्मान् ने ग्रहण किया॥1165॥

पद्मोत्तर, लोकविद् और आहुतियों के ग्रहणकर्ता महामुनि मुझे तारने की कामना से वहाँ पहुँचे॥1166॥

''भिक्खुनो एकमेकस्स, पच्चेकं पत्तमदासहं।

जहिंसु सुम्भकं [पुब्बकं (सी॰), सम्भतं (स्या॰), मत्तिकं (?)] पत्तं, लोहपत्तं अधारयुं॥1167॥

''सत्तरत्तिन्दिवं बुद्धो, निसीदि पुप्फमण्डपे।

बोधयन्तो बहू सत्ते, धम्मचक्कं पवत्तयि॥1168॥

''धम्मचक्कं पवत्तेन्तो, हेट्ठतो पुप्फमण्डपे।

चुल्लासीतिसहस्सानं , धम्माभिसमयो अहु॥1169॥

''सत्तमे दिवसे पत्ते, पदुमुत्तरो महामुनि।

छत्तच्छायायमासीनो, इमा गाथा अभासथ॥1170॥

'''अनूनकं दानवरं, यो मे पादासि माणवो।

तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1171॥

''भिक्षवे एकैकस्मै, प्रत्येकं पत्रमदामहम्।

अजहन् शुम्भकं पत्रम्, लौहपत्रम् अधारयम्॥1167॥

''**सप्तरात्रिन्दिवं** बुद्धः, न्यसीदत् पुष्पमण्डपे।

बोधयन् बहुसत्त्वानि, धर्मचक्रं प्रावर्त्तयत्॥1168॥

''धर्मचक्रं प्रवर्त्तयन्, अधस्तात् पुष्पमण्डपे।

चतुरशीतिसहस्राणाम् , धर्माभिसमयोऽभूत्॥1169॥

''सप्तमे दिवसे प्राप्ते, पद्मोत्तरो महामुनिः।

छत्रच्छायायामासीनः, इमां गाथाम् अभाषत॥1170॥

'''अन्यूनकं दानवरम्, यो मे प्रादात् माणवः।

तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1171॥

उनमें से एक-एक भिक्षु में से प्रत्येक को मैंने पात्र दिया और सोने के पात्र का त्याग कर मैंने लोहे का पात्र धारण किया॥1167॥

सात सप्ताह तक बुद्ध ने पुष्पमण्डप में बैठकर बहुत से सत्त्वों को बोध कराते हुए धर्म-चक्र का प्रवर्तन किया॥1168॥

पुष्पमण्डप के नीचे बैठकर धर्मचक्र-प्रवर्त्तन करते हुए 84 हजार शिष्यों का धर्माभिसमय हुआ॥1169॥

सातवें दिन छत्रच्छाया में आसीन पद्मोत्तर महामुनि ने इन गाथाओं को कहा-॥1170॥

ये सम्पूर्ण श्रेष्ठदान जिस ब्रह्मचारी ने मुझे किया है, मैं उसकी कीर्ति का गान करूँगा, मेरे ऐसे वचनों को सुनो॥1171॥

‘‘‘हत्थी अस्सा रथा पत्ती, सेना च चतुरङ्गिनी।
परिवारेस्सन्तिमं [तं (स्या॰)] निच्चं, सब्बदानस्सिदं फलं॥1172॥
‘‘‘हत्थियानं अस्सयानं, सिविका सन्दमानिका।
उपट्ठिस्सन्तिमं निच्चं, सब्बदानस्सिदं फलं॥1173॥
‘‘‘सट्ठि रथसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, सब्बदानस्सिदं फलं॥1174॥
‘‘‘सट्ठि तूरियसहस्सानि, भेरियो समलङ्कता।
वज्जयिस्सन्तिमं निच्चं, सब्बदानस्सिदं फलं॥1175॥
‘‘‘छळासीतिसहस्सानि, नारियो समलङ्कता।
विचित्तवत्थाभरणा, आमुक्कमणिकुण्डला [आमुत्तमणिकुण्डला (सी॰ स्या॰)]॥1176॥

‘‘‘हस्ती अश्वाः रथाः पत्ती, सेना च चतुरङ्गिणी।
परिवारयिष्यन्तीमं नित्यम्, सर्वदानस्येदं फलम्॥1172॥
‘‘‘हस्तियानम् अश्वयानम्, शिविका स्यन्दमानिकाः।
उपस्थास्यन्तीमं नित्यम्, सर्वदानस्येदं फलम्॥1173॥
‘‘‘षष्टिरथसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषितानि।
परिवारयिष्यन्तीमं नित्यम्, सर्वदानस्येदं फलम्॥1174॥
‘‘‘षष्टि तूर्यसहस्राणि, भेर्यः समलङ्कृताः।
वादयिष्यन्तीमं नित्यम्, सर्वदानस्येदं फलम्॥1175॥
‘‘‘षडशीतिसहस्राणि, नार्यः समलङ्कृताः।
विचित्रवस्त्राभरणाः, आमुक्तमणिकुण्डलाः॥1176॥

हाथी, अश्व, रथ, पैदल और चतुरंगिणी सेना ये सदैव इसे परिवारित किये रहेंगे, ये सब दान का ही सुपरिणाम है॥1172॥

हस्तियान, अश्वयान, घनी छाया से युक्त पालकी सदैव उपस्थित रहेंगे, ये सब दान का ही सुपरिणाम है॥1173॥

सभी अलंकारों से अलंकृत साठ हजार रथ सदैव इसे घेरे रहेंगे, ये सब दान का ही सुपरिणाम है॥1174॥

इसके लिए सम्यक् रूप से अलंकृत साठ हजार तूर् वाद्य और ढोल सदैव बजते रहेगें, ये सब दान का ही सुपरिणाम है॥1175॥

विचित्र वस्त्रों को धारण किये हुए आमुक्त-मणि- कुण्डल से युक्त 86 हजार अलंकृत नारियाँ.... ॥1176॥

‘‘‘अळारपम्हा हसुला, सुसञ्ञा तनुमज्झिमा।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, सब्बदानस्सिदं फलं॥1177॥
‘‘‘तिंसकप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति॥1178॥
‘‘‘सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥1179॥
‘‘‘देवलोके वसन्तस्स, पुञ्ञकम्मसमङ्गिनो।
देवलोकपरियन्तं, रतनछत्तं धरिस्सति॥1180॥
‘‘‘इच्छिस्सति यदा छायं [यदा वायं (स्या॰ क॰)], छदनं दुस्सपुप्फजं।
इमस्स चित्तमञ्ञाय, निबद्धं छादयिस्सति॥1181॥

‘‘‘उदारपक्ष्मा **हसला**, सुसंज्ञास्तनुमध्यमाः।
परिवारयिष्यन्तीमं नित्यम्, सर्वदानस्येदं फलम्॥1177॥
‘‘‘त्रिंशत्कल्पसहस्राणि, देवलोके रंस्यते/रमिष्यति।
सहस्रकृत्वो देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति॥1178॥
‘‘‘सहस्रकृत्वो राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्यकम्॥1179॥
‘‘‘देवलोके वसतस्तस्य, पुण्यकर्मसमङ्गिनः।
देवलोकपर्यन्तम्, रत्नच्छत्रं धरिष्यति॥1180॥
‘‘‘एषिष्यति यदा छायाम्, छदनं दूष्यपुष्पजम्।
अस्य चित्तमाज्ञाय, निबद्धं **छादयिष्यति**॥1181॥

तिरछी बरौनियों वाली, सुन्दर नामों वाली, तनुमध्या (पतली कमरवाली) नारियाँ सदैव इसे घेरे रहेंगी। ये सभी दान का ही सुपरिणाम है॥1177॥

तीस हजार कल्पों तक वह देवलोक में रमण करेगा और हजार बार देवेन्द्र होकर देवलोक में राज्य करेगा॥1178॥

हजार बार चक्रवर्ती राजा होगा और उसका राज्य विपुल तथा गणना में असंख्य होगा॥1179॥

पुण्यकर्मों से युक्त वह देवलोक में वास करेगा, देवलोकपर्यन्त रत्नछत्र को धारण करेगा॥1180॥

जब वह छाया की इच्छा करेगा तो इसके चित्त को जानकर पुष्प-वस्त्र इसे आच्छादित कर देंगे॥1181॥

‘‘‘देवलोका चवित्वान, सुक्कमूलेन चोदितो।
पुञ्ञकम्मेन संयुत्तो, ब्रह्मबन्धु भविस्सति॥1182॥
‘‘‘कप्पसतसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन [नामेन (सब्बत्थ) एवमुपरिपि। अट्ठथायं पन पुब्बे गोत्तेनातिपदं वण्णितं], सत्था लोके भविस्सति॥1183॥
‘‘‘सब्बमेतं अभिञ्ञाय, गोतमो सक्यपुङ्गवो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, एतदग्गे ठपेस्सति॥1184॥
‘‘‘पिलिन्दवच्छनामेन [पिलिन्दिवच्छनामेन (सी॰)], हेस्सति सत्थुसावको।
देवानं असुरानञ्च, गन्धब्बानञ्च सक्कतो॥1185॥
‘‘‘भिक्खूनं भिक्खुनीनञ्च, गिहीनञ्च तथेव सो।
पियो हुत्वान सब्बेसं, विहरिस्सतिनासवो’’॥1186॥

‘‘‘देवलोकात् **च्युत्वा**, शुक्लमूलेन चोदितः।
पुण्यकर्मणा संयुक्तः, ब्रह्मबन्धुर्भविष्यति॥1182॥
‘‘‘कल्पशतसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1183॥
‘‘‘सर्वमेतद् अभिज्ञाय, गौतमः शाक्यपुङ्गवः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, एतदग्रे स्थापयिष्यति॥1184॥
‘‘‘पिलिन्दवत्सनाम्ना, भविष्यति शास्तुश्रावकः।
देवानाम् असुराणाञ्च, गन्धर्वाणाञ्च सत्कृतः॥1185॥
‘‘‘भिक्षूणां भिक्षुणीनाञ्च, गृहीणाञ्च तथैव सः।
प्रियो भूत्वा सर्वेषाम्, विहरिष्यत्यनास्रवः’’॥1186॥

कुशल कर्मों के उदित होने पर वह देवलोक से च्युत होकर पुण्यकर्म से युक्त ब्रह्मबन्धु होगा॥1182॥

असंख्य कल्प में गौतम नाम के गोत्र से इक्ष्वाकुकुल में उत्पन्न लोक में शास्ता के रूप में इसका उद्भव होगा॥1183॥

शाक्यवंश में उत्पन्न शाक्यपुङ्गव गौतम ये सब जानकर भिक्षुसंघ में बैठकर इसे आगे स्थापित करेंगे॥1184॥

पिलिन्दवच्छ नामक यह शास्ता का श्रावक होगा और देवों, असुरों तथा गन्धर्वों में सम्मानित होगा॥1185॥

वह भिक्षु-भिक्षुणियों एवं गृहस्थ जनों का प्रिय होकर, आस्रवरहित होकर विचरण करेगा॥1186॥

''सतसहस्से कतं कम्मं, फलं दस्सेसि मे इध।
सुमुत्तो सरवेगोव, किलेसे झापयी मम [झापयिस्सति (सी॰ क॰), झापयिं अहं (स्या॰)]॥1187॥
''अहो मे सुकतं कम्मं, पुञ्ञक्खेत्ते अनुत्तरे।
यत्थ कारं करित्वान, पत्तोम्हि अचलं पदं॥1188॥
''अनूनकं दानवरं, अदासि यो [सो (क॰)] हि माणवो।
आदिपुब्बङ्गमो आसि, तस्स दानस्सिदं फलं॥1189॥
''छत्ते च सुगते दत्वा [छत्ते सुगते दत्वान (सी॰ स्या॰)], सङ्घे गणवरुत्तमे।
अट्ठानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1190॥
''सीतं उण्हं न जानामि, रजोजल्लं न लिम्पति।
अनुपद्दवो अनीति च, होमि अपचितो सदा॥1191॥

''शतसहस्रे कृतं कर्म, फलम् अदर्शयन्मे इह।
सुमुक्तः शरवेग इव, क्लेशान् अध्मापयन्मम॥1187॥
''अहो मे सुकृतं कर्म, पुण्यक्षेत्रे अनुत्तरे।
यत्र कार्यं कृत्वा, प्राप्तोऽस्मि अचलं पदम्॥1188॥
''अन्यूनकं दानवरम्, अददाद् यो हि माणवः।
आदिपूर्वङ्गमः आसीत्, तस्य दानस्येदं फलम्॥1189॥
''छत्रे च सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
अष्टानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1190॥
''शीतम् उष्णं न जानामि, रजोज्वल्यं न लिम्पति।
अनुपद्रवो अनीतिश्च, भवाम्यपचितः सदा॥1191॥

असंख्य कृत कर्मों के फल को मैंने इस लोक में देखा और तीर के वेग के समान मेरे सभी क्लेशों का नाश हो गया॥1187॥

अनुत्तर पुण्यक्षेत्र में ये जो मेरा सर्वोत्तम कर्म है, जहाँ उस कर्म को करके मैं अचलपद को प्राप्त हूँ॥1188॥

जो ब्रह्मचारी द्वारा पर्याप्त एवं श्रेष्ठदान दिया गया, वह आरम्भ में पूर्वगामी है तथा यह उसी दान का फल है॥1189॥

गणों में उत्तम संघ के नायक सुगत को मैं छत्र देकर योग्यकर्म के अनुसार आठ गुणों का अनुभव करता हूँ॥1190॥

मैं शीत, ऊष्ण को नहीं जानता हूँ, कीचड़ मुझे लिप्त नहीं करता अतः मैं उपद्रवहानि- रहित हो सदा सम्मानित होता हूँ॥1191॥

''सुखुमच्छविको होमि, विसदं होति मानसं।
छत्तसतसहस्सानि, भवे संसरतो मम॥1192॥
''सब्बालङ्कारयुत्तानि, तस्स कम्मस्स वाहसा।
इमं जातिं ठपेत्वान, मत्थके धारयन्ति मे॥1193॥
''कस्मा [तस्मा (स्या॰ क॰)] इमाय जातिया, नत्थि मे छत्तधारणा।
मम सब्बं कतं कम्मं, विमुत्तिछत्तपत्तिया॥1194॥
''दुस्सानि सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
अट्ठानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1195॥
''सुवण्णवण्णो विरजो, सप्पभासो पतापवा।
सिनिद्धं होति मे गत्तं, भवे संसरतो मम॥1196॥

''सूक्ष्मच्छविको भवामि, विशदं भवति मानसम्।
छत्रशतसहस्राणि, भवे संसरन् मम॥1192॥
''सर्वालङ्कारयुक्तानि, तस्य कर्मणो वाहसा।
इमां जातिं स्थापयित्वा, मस्तके धारयन्ति मे॥1193॥
''कस्माद् अस्याः जात्याम्, नास्ति मे छत्रधारणा।
मया सर्वं कृतं कर्म, विमुक्तिच्छत्रप्राप्तये॥1194॥
''दूष्यानि सुगतेभ्यो दत्वा, सङ्घे गणवरोत्तमे।
अष्टानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1195॥
''सुवर्णवर्णो विरजः, सप्रभासः प्रतापवान्।
स्निग्धं भवति मे गात्रम्, भवे संसरतो मम॥1196॥

मैं सूक्ष्म छवि वाला एवं साफ मन वाला होता हूँ तथा भव में संसरण करते हुए असंख्य छत्रों को धारण करता हूँ॥1192॥

उस कर्म के कारण सभी अलंकारो से युक्त छत्र इस जन्म को छोड़ कर अन्य जन्मों में मेरे मस्तक पर धारण होते हैं॥1193॥

किस कारण से मैं इस जाति (जन्म) में छत्र को धारण नहीं कर पा रहा हूँ, किन्तु विमुक्ति-छत्र को प्राप्त करने हेतु मैंने सभी करणीय कर्मों को किया॥1194॥

गणों में उत्तम संघ के सुगत को वस्त्र देकर मैं योग्यकर्म के कारण आठ अनृशंसाओं का अनुभव करता हूँ॥1195॥

भवों में संसरण करते हुए मेरा शरीर स्वर्णवर्ण, विरज, आभावान्, प्रतापवान् तथा स्निग्ध होता है॥1196॥

''दुस्ससतसहस्सानि, सेता पीता च लोहिता।
धारेन्ति मत्थके मय्हं, दुस्सदानस्सिदं फलं॥1197॥
''कोसेय्यकम्बलियानि, खोमकप्पासिकानि च।
सब्बत्थ पटिलभामि, तेसं निस्सन्दतो अहं॥1198॥
''पत्ते सुगते दत्वान, सङ्घे गणवरुत्तमे।
दसानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1199॥
''सुवण्णथाले मणिथाले, रजतेपि च थालके।
लोहितङ्गमये थाले, परिभुञ्जामि सब्बदा॥1200॥
''अनुपद्दवो अनीति च, होमि अपचितो सदा।
लाभी अन्नस्स पानस्स, वत्थस्स सयनस्स च॥1201॥

''दूष्यशतसहस्राणि, श्वेताः पीताश्च लोहिताः।
धारयन्ति मस्तके मम, दूष्यदानस्येदं फलम्॥1197॥
''कौशेयकम्बलीयानि, क्षौमकार्पासिकानि च।
सर्वत्र प्रतिलभे, तेषां निष्यन्दतो अहम्॥1198॥
''पात्राणि सुगतेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
दशानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1199॥
''सुवर्णस्थाले मणिस्थाले, रजतेऽपि च स्थालके।
लोहिताङ्गमये स्थाले, परिभुञ्जे सर्वदा॥1200॥
''अनुपद्रवोऽनीति च, भवाम्यपचितः सदा।
लाभी अन्नस्य पानस्य, वस्त्रस्य शयनस्य च॥1201॥

श्वेत, पीत और लाल रंग के असंख्य वस्त्रों को मैं मस्तक पर धारण करता हूँ, वस्त्रदान का ही ये सुपरिणाम है॥1197॥

कौशेय (रेशम) का कम्बल और क्षोम कपास से निर्मित कम्बल जहाँ भी मैं वास करता हूँ, सभी स्थान पर प्राप्त करता हूँ॥1198॥

गणों में उत्तम संघ के सुगत को पात्र का दान देकर मैं योग्य कर्म के कारण दस अनृशंसा का अनुभव करता हूँ॥1199॥

सोने की थाली, मणि की थाली और चाँदी की थाली और लाल रंग की थाली में मैं सदा भोजन करता हूँ॥1200॥

मैं उपद्रव रहित और सत्कारित हूँ और अन्न, पेय, पदार्थ, वस्त्र, शयन का लाभी हूँ॥1201॥

''न विनस्सन्ति मे भोगा, ठितचित्तो भवामहं।
धम्मकामो सदा होमि, अप्पक्लेसो अनासवो॥1202॥
''देवलोके मनुस्से वा, अनुबन्धा इमे गुणा।
छाया यथापि रुक्खस्स, सब्बत्थ न जहन्ति मं॥1203॥
''चित्तबन्धनसम्बद्धा [चित्तबन्धनसम्पन्ना (क॰)], सुकता वासियो बहू।
दत्वान बुद्धसेट्ठस्स, सङ्घस्स च तथेवहं॥1204॥
''अट्ठानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम।
सूरो होमविसारी च, वेसारज्जेसु पारमी॥1205॥
''धितिवीरियवा होमि, पग्गहीतमनो सदा।
किलेसच्छेदनं ञाणं, सुखुमं अतुलं सुचिं।
सब्बत्थ पटिलभामि, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1206॥

''न विनश्यन्ति मे भोगाः, स्थितचित्तो भवाम्यहम्।
धर्मकामः सदा भवामि, अल्पक्लेशो अनास्रवः॥1202॥
''देवलोके मनुष्ये वा, अनुबन्धा इमे गुणाः।
छाया यथापि वृक्षस्य, सर्वत्र न जहति माम्॥1203॥
''चित्तबन्धनसम्बद्धान्, सुकृतान् वासीन् बहून्।
दत्वा बुद्धश्रेष्ठाय, सङ्घाय च तथैवाहम्॥1204॥
''अष्टानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम।
शूरो भवामविसारी च, वैशारद्येषु पारमी॥1205॥
''धृतिवीर्यवान् भवामि, प्रगृहीतमनास्सदा।
क्लेशच्छेदनं ज्ञानम्, सूक्ष्मम् अतुलं शुचिम्।
सर्वत्र प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतो अहम्॥1206॥

मेरे भोग नष्ट नहीं होगें और मैं भव में स्थितचित्त हूँ तथा सदा मैं धर्मकामी, अल्पक्लेश वाला तथा आस्रवरहित होता हूँ॥1202॥

सर्वत्र देवलोक व मनुष्यलोक में निरन्तर ये सभी गुण मुझे नहीं छोड़ते हैं, जैसे वृक्ष की छाया वृक्ष को नहीं छोड़ती॥1203॥

भली प्रकार से बँधा हुआ एवं सुकृत रूप से निर्मित बहुत सा बंसूला मैंने बुद्धश्रेष्ठ और संघ को प्रदान किया॥1204॥

कर्म की योग्यता के अनुसार मैं आठ अनृशंसा का अनुभव करता हूँ तथा शूर, संयत और वैशारद्यों में पारंगत हूँ॥1205॥

उसके परिणामवश मैं सर्वत्र सूक्ष्म, अतुल तथा पवित्र क्लेश का छेदन करने वाले ज्ञान का लाभी होता हूँ॥1206॥

''अकक्कसे अफरुसे, सुधोते सत्थके बहू।
पसन्नचित्तो दत्वान, बुद्धे सङ्घे तथेव च॥1207॥
''पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम।
कल्याणमित्तं [कल्याणचित्तं (सी॰)] वीरियं, खन्तिञ्च मेत्तसत्थकं॥1208॥
''तण्हासल्लस्स छिन्नत्ता, पञ्ञासत्थं अनुत्तरं।
वजिरेन समं ञाणं, तेसं निस्सन्दतो लभे॥1209॥
''सूचियो सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1210॥
''न संसयो कङ्खच्छेदो, अभिरूपो च भोगवा।
तिक्खपञ्ञो सदा होमि, संसरन्तो भवाभवे॥1211॥

''अकर्कशानि अपरुषानि, सुधौतानि शस्त्राणि बहूनि।
प्रसन्नचित्तो दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय तथैव च॥1207॥
''पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम।
कल्याणमित्रं वीर्यम्, क्षान्तिञ्च मित्रसार्थकम्॥1208॥
''तृष्णाशल्यस्य **छिन्नत्वात्**, प्रज्ञाशास्त्रमनुत्तरम्।
वज्रेण समं ज्ञानम्, तेषां निष्यन्दतो लभे॥1209॥
''सूचीन् सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
पञ्चानृशंसाऽनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1210॥
''न संशयः काङ्क्षाच्छेदः, अभिरूपश्च भोगवान्।
तीक्ष्णप्रज्ञः सदा भवामि, संसरन् भवाभवे॥1211॥

छोटे, कोमल, मृदु, अच्छी तरह से धोयी गयी बहुत सी छुरियाँ मैंने प्रसन्नचित्त से बुद्ध और संघ को प्रदान कर॥1207॥

स्वकृत कर्मों के योग्य ही मैं पाँच प्रकार के गुणों का, कल्याणमित्र का, वीर्य का, क्षान्ति का और सार्थक मित्र का अनुभव करता हूँ॥1208॥

उन्हीं के परिणामस्वरूप तृष्णा रूपी शूल को काटने से मैं वज्र के समान अनुत्तर प्रज्ञाशास्त्र ज्ञान प्राप्त करता हूँ॥1209॥

गणों में उत्तम संघ के सुगत को सूची (सुई) प्रदान कर मैं योग्यकर्म के अनुकूल पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1210॥

भव-अभव में संसरण करते हुए मैं सर्वदा संशयरहित, आकाङ्क्षारहित, अभिरूपी, भोगवान् तथा तीक्ष्णप्रज्ञा वाला होता हूँ॥1211॥

''गम्भीरं निपुणं ठानं, अत्थं ञाणेन पस्सयिं।
वजिरग्गसमं ञाणं, होति मे तमघातनं॥1212॥
''नखच्छेदने सुगते, दत्वा सङ्घे गणुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1213॥
''दासिदासे [दासिदास (क॰)] गवस्से च, भतके नाटके [आरक्खके (सी॰)] बहू।
न्हापिते भत्तके सूदे, सब्बत्थेव लभामहं॥1214॥
''विधूपने सुगते दत्वा, तालवण्टे च सोभणे।
अट्ठानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1215॥
''सीतं उण्हं न जानामि, परिळाहो न विज्जति।
दरथं नाभिजानामि, चित्तसन्तापनं मम॥1216॥

''गम्भीरं निपुणं स्थानम्, अर्थं ज्ञानेन अपश्यम्/अद्राक्षम्।
वज्राग्रसमं ज्ञानम्, भवति मे तमघातनम्॥1212॥
''नखच्छेदकान् सुगताय, दत्वा सङ्घाय गणोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1213॥
''दासिदासान् गवाश्वांश्च, भृतकान् नाटकान् बहून्।
स्नापितान् भक्तकान् सूदान्, सर्वत्रैव लभेऽहम्/लभाम्यहम्॥1214॥
''विधूपनं सुगताय दत्वा, तालवृन्तं च शोभनम्।
अष्टानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1215॥
''शीतम् उष्णं न जानामि, परिदाहो/ळाहो न विद्यते।
दरथं नाभिजानामि, चित्तसन्तापनं मम॥1216॥

गम्भीर, निपुणस्थान के अर्थ को ज्ञान से देखता हूँ, और वज्र के अग्र भाग के समान ज्ञान से अन्धकार को नष्ट करता हूँ॥1212॥

गणों में उत्तम संघ के सुगत को नखच्छेदन (नाखून काटने वाला) देकर योग्यकर्म के अनुकूल मैं पाँच अनृशंसा का अनुभव करता हूँ॥1213॥

मैं सर्वत्र दास-दासी, गव, भृत्य, बहुत से नाटक, स्नान का सामान, भात, रसोइया को प्राप्त करता हूँ॥1214॥

ताड़वृक्ष के सुन्दर डण्ठल वाला पंखा सुगत को प्रदान कर मैं अपने कर्म के अनुरूप आठ गुणों का अनुभव करता हूँ॥1215॥

शीत को, ऊष्ण को नहीं जानता हूँ और न ही परिदाह मुझमें विद्यमान है, चित्त के सन्ताप को और कष्ट को भी मैं नहीं जानता हूँ॥1216॥

''रागग्गि दोसमोहग्गि, मानग्गि दिट्ठिअग्गि च।
सब्बग्गी निब्बुता मय्हं, तस्स निस्सन्दतो मम॥1217॥
''मोरहत्थे चामरियो, दत्वा सङ्घे गणुत्तमे।
उपसन्तकिलेसोहं, विहरामि अनङ्गणो॥1218॥
''परिस्सावने सुगते, दत्वा धम्मकरुत्तमे [दत्वा सुकते धम्मकुत्तरे (स्या॰ क॰)]।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1219॥
''सब्बेसं समतिक्कम्म, दिब्बं आयुं लभामहं।
अप्पसय्हो सदा होमि, चोरपच्चत्थिकेहि वा॥1220॥
''सत्थेन वा विसेन वा, विहेसम्पि न कुब्बते।
अन्तरामरणं नत्थि, तेसं निस्सन्दतो मम॥1221॥

''रागाग्निः दोषमोहाग्निः, मानाग्निः दृष्ट्यग्निश्च।
सर्वाग्निः निवृत्तो मम, तस्य निष्यन्दतो मम॥1217॥
''मयूरहस्तान् चामरान्, दत्वा सङ्घाय गणोत्तमाय।
उपशान्तक्लेशोऽहम्, विहरामि अनङ्गणः॥1218॥
''**परिस्रावणान्** सुगताय, दत्वा धर्मकरोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1219॥
''सर्वेषां समतिक्रम्य, दिव्यमायुर्लभेऽहम्।
अप्रसह्यः सदा भवामि, चौरप्रत्यर्थिकैर्वा॥1220॥
''शस्त्रेण वा विषेण वा, विहिंसामपि न कुर्वते।
अन्तरामरणं नास्ति, तेषां निष्यन्दतो मम॥1221॥

मेरी रागाग्नि, द्वेषाग्नि, मोहाग्नि, मानाग्नि और दृष्टि-अग्नि आदि सभी निर्वृत्त हो गयी हैं, यह मेरे उस तालवृन्तदान का ही परिणाम है॥1217॥

मैंने गणों में उत्तम संघ को हाथ में धारण करने वाला मोरपंख और चाँवर प्रदान किया तथा शान्तचित्त क्लेशरहित मैं रागमुक्त हो विहरण करता हूँ॥1218॥

उत्तमधर्म को करने वाले सुगत को पानी छानने वाला साधन (वस्त्र) देकर मैं अपने कर्म के अनुरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1219॥

सभी सीमाओं को लाँघकर मुझे दिव्यायु का लाभ होगा और निश्चय ही सदा मैं चोरों (शत्रुओं) से बचा रहूँगा॥1220॥

शस्त्र से, विष से और हिंसक प्राणियों मुझे हानि नहीं पहुँचती और इसके परिणामस्वरूप निश्चय ही मेरी अकालिक मृत्यु नहीं होगी॥1221॥

''तेलधारे सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1222॥
''सुचारुरूपो सुभद्दो [सुगदो (सी॰), सुवाचो (?)], सुसमुग्गतमानसो।
अविक्खित्तमनो होमि, सब्बारक्खेहि रक्खितो॥1223॥
''सूचिघरे सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1224॥
''चेतोसुखं कायसुखं, इरियापथजं सुखं।
इमे गुणे पटिलभे, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1225॥
''अंसबद्धे जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1226॥

''तैलाधारान् सुगतेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1222॥
''सुचारुरूपः सुभद्रः, सुसमुद्गतमानसः।
अविक्षिप्तमना भवामि, सर्वारक्षैः/सर्वारक्षेभि रक्षितः॥1223॥
''सूचिगृहाणि सुगतेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
तिस्र आनृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1224॥
''चेतःसुखं कायसुखम्, ईर्यापथजं सुखम्।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतोऽहम्॥1225॥
''अंसबद्धान् जिनाय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
तिस्र आनृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविकाः मम॥1226॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को तेल रखने का पात्र प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1222॥

मैं सभी रक्षणों के द्वारा संरक्षित, सुन्दर रूप वाला, भली प्रकार सीखा हुआ मन वाला अविक्षिप्त (चित्त के बिखराव से रहित) मन वाला हूँ॥1223॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को सुई रखने की डिबिया प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप तीन गुणों का अनुभव करता हूँ॥1224॥

चित्त का सुख, काय का सुख और अंग संचालन का सुख इस कर्म के परिणामस्वरूप मैं इन गुणों का लाभ प्राप्त करता हूँ॥1225॥

गणों में उत्तम संघ एवं जिन को कन्धे पर रखने वाला पटुका प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप तीन पुण्यों का अनुभव करता हूँ॥1226॥

''सद्धम्मे गाधं [चेतोञाणं च (सी॰)] विन्दामि, सरामि दुतियं भवं।
सब्बत्थ सुच्छवी होमि, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1227॥
''कायबन्धे जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
छानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1228॥
''समाधीसु न कम्पामि, वसी होमि समाधिसु।
अभेज्जपरिसो होमि, आदेय्यवचनो सदा॥1229॥
''उपट्ठितसति होमि, तासो मय्हं न विज्जति।
देवलोके मनुस्से वा, अनुबन्धा इमे गुणा॥1230॥
''आधारके जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
पञ्चवण्णेहि दायादो [पञ्चवण्णे भयाभावो (स्या॰)], अचलो होमि केनचि॥1231॥

''सद्धर्मे गाधं **विन्दामि,** स्मरामि द्वितीयं भवम्।
सर्वत्र सुच्छविर्भवामि, तस्य निष्यन्दतोऽहम्॥1227॥
''कायबन्धान् जिनेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
षडानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1228॥
''समाधिषु न कम्पे/कम्पामि, वशी भवामि समाधिषु।
अभेद्यपरिषद् भवामि, आदेयवचनः सदा॥1229॥
''उपस्थितस्मृतिर्भवामि, त्रासो मम न विद्यते।
देवलोके मनुष्ये वा, अनुबन्धा इमे गुणाः॥1230॥
''आधारकान् जिनाय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
पञ्चवर्णैर्दायादः, अचलो भवामि केनचित्॥1231॥

सद्धर्म की वन्दना करता हूँ, द्वितीय भव का स्मरण करता हूँ, इसके परिणामस्वरूप मैं सभी जगह सुन्दर छवि वाला होता हूँ॥1227॥

गणों में उत्तम संघ के जिन को कायबन्ध (कमरबन्द) प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप छः पुण्यों का अनुभव करता हूँ॥1228॥

समाधि में जाने से मैं कम्पित नहीं होता हूँ, समाधि के अधीन होता हूँ तथा सदैव आदेयवचन (स्वागत वाला) और अभेद्य परिषद वाला होता हूँ॥1229॥

इन गुणों के अनुबन्ध से मैं देवलोक व मनुष्य लोक में उपस्थित स्मृति वाला हूँ तथा मुझमें भय विद्यमान नहीं है॥1230॥

गणों में उत्तम संघ एवं जिन को आधारक (पैर रखने वाला पीढ़ा) प्रदान कर इस कारण से पाँच वर्णों से उत्तराधिकारी और अचल हूँ॥1231॥

''ये केचि मे सुता धम्मा, सतिञाणप्पबोधना।
धता [ठिता (क॰)] मे न विनस्सन्ति, भवन्ति सुविनिच्छिता॥1232॥
''भाजने परिभोगे च, दत्वा बुद्धे गणुत्तमे।
तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1233॥
''सोण्णमये मणिमये, अथोपि फलिकामये।
लोहितङ्गमये चेव, लभामि भाजने अहं॥1234॥
''भरिया दासदासी [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति] च, हत्थिस्सरथपत्तिके।
इत्थी पतिब्बता चेव, परिभोगानि सब्बदा॥1235॥
''विज्जा मन्तपदे चेव, विविधे आगमे बहू।
सब्बं सिप्पं निसामेमि, परिभोगानि सब्बदा॥1236॥

''ये केचिन्मे श्रुताः धर्माः, स्मृतिर्ज्ञानप्रबोधनाः।
स्थिताः मे न विनश्यन्ति, भवन्ति सुविनिश्चिताः॥1232॥
''भाजनानि परिभोगनि च, दत्वा बुद्धाय गणोत्तमाय।
तिस्र आनृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1233॥
''सौवर्णमयानि मणिर्मयान्, अथो अपि फलिकामयानि/स्फटिकामयानि।
लोहिताङ्गमयानि चैव, लभे भाजने अहम्॥1234॥
''भार्याः दासदासीश्च, **हस्त्यश्वरथप्रातिकाः**।
स्त्रियः पतिव्रताश्चैव, परिभोगाः सर्वदा॥1235॥
''विद्याः मन्त्रपदान् चैव, विविधागमान् बहून्।
सर्वं शिल्पं निशामयामि, परिभोगान् सर्वदा॥1236॥

मैंने स्मृति, ज्ञान और प्रबोधन से ये जो कुछ भी धर्म सुना है, उसका भविष्य में कभी विनाश नहीं होगा, ये सुनिश्चित हो गया है॥1232॥

गणों में उत्तम बुद्ध को भोग्य सामग्री हेतु पात्र प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप तीन गुणों का अनुभव करता हूँ॥1233॥

मैं स्वर्णमय, मणिमय, फलिकामय (बहुमूल्य स्फटिक) तथा लोहितमय भाजन (पात्र) प्राप्त करता हूँ॥1234॥

भार्या, दास-दासी, हाथी, रथ और पैदल चलने वाला सैनिक और पतिव्रता स्त्री का मैं सदैव भोग करता हूँ॥1235॥

इसी प्रकार विद्या, मन्त्रपद और विविध आगम, सभी शिल्पों को सुनता हूँ और इन सभी का सदैव भोग करता हूँ॥1236॥

''थालके सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1237॥
''सोण्णमये मणिमये, अथोपि फलिकामये।
लोहितङ्गमये चेव, लभामि थालके अहं॥1238॥
''असत्थके [असत्थके (सी॰), अस्सट्ठके (स्या॰)] फलमये, अथो पोक्खरपत्तके।
मधुपानकसङ्खे च, लभामि थालके अहं॥1239॥
''वत्ते गुणे पटिपत्ति, आचारकिरियासु च।
इमे गुणे पटिलभे, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1240॥
''भेसज्जं सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
दसानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1241॥

''स्थालकानि सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
तिस्र आनृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविकाः मम॥1237॥
''सौवर्णमयानि मणिमयानि, अथो अपि फलिकामयानि।
लोहिताङ्गमयानि चैव, लभे स्थालकानि अहम्॥1238॥
''अशस्त्रकान् फलमयानि, अथो पुष्करपत्रकाणि।
मधुपानकशङ्खानि च, लभे स्थालकानि अहम्॥1239॥
''वर्त्तते गुणे प्रतिपत्तिः, आचारक्रियासु च।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतो अहम्॥1240॥
''भैषज्यं सुगतेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
दशानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1241॥

गणों में उत्तम संघ तथा सुगत को थालक (छोटा भाजन) प्रदान कर मैं इस कर्म के अनुरूप तीन गुणों का अनुभव करता हूं॥1237॥

स्वर्णमय, मणिमय, फलिकामय (बहुमूल्य स्फटिक) और लोहितमय थालि भी मै प्राप्त करता हूँ॥1238॥

फल काटने की छोटी छुरी, कमल-पत्र और मधुपान करने हेतु शंख का बना पात्र और थाली मैं प्राप्त करता हूँ॥1239॥

सेवा-कार्य और आचार क्रियाओं (धार्मिक क्रिया) में लगे रहने के परिणामस्वरूप मैं इन गुणों को प्राप्त करता हूँ॥1240॥

गणों में उत्तम संघ तथा सुगत को भैषज्य प्रदान कर मैं इस कर्म के अनुरूप दश गुणों का अनुभव करता हूँ॥1241॥

''आयुवा बलवा धीरो, वण्णवा यसवा सुखी।
अनुपद्दवो अनीति च, होमि अपचितो सदा।
न मे पियवियोगत्थि, तस्स निस्सन्दतो मम॥1242॥
''उपाहने जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1243॥
''हत्थियानं अस्सयानं, सिविका सन्दमानिका।
सट्ठिसतसहस्सानि, परिवारेन्ति मं सदा॥1244॥
''मणिमया तम्बमया [कम्बलिका (सी॰ क॰)], सोण्णरजतपादुका।
निब्बत्तन्ति पदुद्धारे, भवे संसरतो मम॥1245॥
''नियामं सति धावन्ति [नियमं पटिधावन्ती (सी॰), नियामं पटिधावन्ति (स्या॰)],
आगुआचारसोधनं [आचारगुणसोधनं (सी॰ स्या॰)]।
इमे गुणे पटिलभे, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1246॥

''आयुर्वान् बलवान् धीरः, वर्णवान् यशवान् सुखी।
अनुपद्रवो अनीतिश्च, भवाम्यपचितः सदा।
न मे प्रियवियोगोस्ति, तस्य निष्यन्दतो मम॥1242॥
''उपानहौ जिनेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
तिस्र आनृशंसाः अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1243॥
''हस्तियानम् अश्वयानम्, शिविका स्यन्दमानिकाः।
षष्टिशतसहस्राणि, परिवारयन्ति मां सदा॥1244॥
''मणिमयी ताम्रयी, स्वर्णरजतपादुका।
निर्वर्त्तन्ति **पदुद्धारे**, भवे संसरतो मम॥1245॥
''नियामे स्मृतिः धावन्ति, आग-आचारशोधनम्।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतोऽहम्॥1246॥

मैं आयुवान्, बलवान्, बुद्धिमान्, वर्णवान्, यशवान्, सुखी, उपद्रव से रहित, आकस्मिक रोगमुक्त और सदा सम्मानित होता हूँ। इसके परिणामस्वरूप मेरा अपने प्रिय से वियोग नहीं होता है॥1242॥

गणों में उत्तम संघ एवं जिन को उपाहन् (जूता) प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप तीन गुणों का अनुभव करता हूँ॥1243॥

60 लाख हस्तियान, अश्वयान और घनी छाया से युक्त पालकी सदा मुझे घेरे रहती है॥1244॥

भव में संसरण करते हुए मेरे पद के उद्धार के लिए मुझे मणिमीय, ताम्रमयी, स्वर्णमय तथा रजतमयी पादुका प्राप्त होती हैं॥1245॥

मैं स्मृति के अनुकूल हो आचरण करता हुआ अपराध व्यवहार का शोधन करता हूँ, उसके परिणामस्वरूप मैं इन गुणों का लाभ प्राप्त करता हूँ॥1246॥

''पादुके सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
इद्धिपादुकमारुय्ह, विहरामि यदिच्छकं॥1247॥
''उदकपुच्छनचोळे, दत्वा बुद्धे गणुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1248॥
''सुवण्णवण्णो विरजो, सप्पभासो पतापवा।
सिनिद्धं होति मे गत्तं, रजोजल्लं न लिम्पति।
इमे गुणे पटिलभे, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1249॥
''कत्तरदण्डे सुगते, दत्वा सङ्घे गणुत्तमे।
छानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1250॥
''पुत्ता मय्हं बहू होन्ति, तासो मय्हं न विज्जति।
अप्पसय्हो सदा होमि, सब्बारक्खेहि रक्खितो।
खलितम्पि [खलितं मं (सी॰ क॰)] न जानामि, अभन्तं मानसं मम॥1251॥

''पादुके सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
ऋद्धिपादुकामारुह्य, विहरामि यादृच्छकम्॥1247॥
''उदकप्रौञ्छनचोलान्, दत्वा बुद्धाय गणोत्तमे।
पञ्चानृशंसाः अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1248॥
''सुवर्णवर्णो विरजः, सप्रभासः प्रतापवान्।
स्निग्धं भवति मे गात्रम्, रजोजालं न लिम्पति।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतोऽहम्॥1249॥
''कर्तृदण्डानि सुगताय, दत्वा सङ्घाय गणोत्तमाय।
षडानृशंसाः अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1250॥
''पुत्राः मम बहवः भवन्ति, त्रासो मम न विद्यते।
अप्रसह्यः सदा भवामि, सर्वारक्षैः रक्षितः।
स्खलितमपि न जानामि, **अभ्रान्तं** मानसं मम॥1251॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को पादुका प्रदान कर ऋद्धि पादुका पर आरूढ़ हो मैं जहाँ इच्छा हो वहाँ विहरण करता हूँ॥1247॥

गणों में उत्तम बुद्ध को पानी पोछने का वस्त्र प्रदानकर मैं कर्म के अनुरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1248॥

उसके परिणामस्वरूप मैं इन गुणों को प्राप्त करता हूँ- मैं सुनहरे रंग वाला, निर्मल, प्रभा से युक्त, प्रतापवान्, स्निग्ध शरीर वाला होता हूँ और मुझे कीचड़ भी नहीं लिम्पित करता है॥1249॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को सैर करने की लाठी प्रदान कर मैं कर्म के अनुरूप छः गुणों का अनुभव करता हूँ॥1250॥

मुझे बहुत से पुत्र प्राप्त होते हैं और मुझे भय नहीं होता। सभी रक्षितों के द्वारा संरक्षित मैं सदा अडिग होता हूँ तथा मेरा अभ्रान्त मन कभी भी स्खलित नहीं होता॥1251॥

''ओसधं अञ्जनं दत्वा, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
अट्ठानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1252॥
''विसालनयनो होमि, सेतपीतो च लोहितो।
अनाविलपसन्नक्खो, सब्बरोगविवज्जितो॥1253॥
''लभामि दिब्बनयनं, पञ्ञाचक्खुं अनुत्तरं।
इमे गुणे पटिलभे, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1254॥
''कुञ्चिके सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
धम्मद्वारविवरणं, लभामि ञाणकुञ्चिकं॥1255॥
''कुञ्चिकानं घरे दत्वा, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
द्वानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम।
अप्पकोधो अनायासो, संसरन्तो भवे अहं॥1256॥

''औषधम् अञ्जनं दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
अष्टानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1252॥
''विशालनयनो भवामि, श्वेतपीतश्च लोहितः।
अनाविलप्रसन्नाक्षः, सर्वरोगविवर्जितः॥1253॥
''लभे दिव्यनयनम्, प्रज्ञाचक्षुः अनुत्तरम्।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतो अहम्॥1254॥
''कुञ्चिकाः सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
धर्मद्वारविवरणम्, लभे ज्ञानकुञ्चिकाम्॥1255॥
''कुञ्चिका गृहे दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
द्वयनृशंसे अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम।
अल्पक्रोधो अनायासः, संसरन् भवे अहम्॥1256॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को औषधि और सुरमा (अञ्जन) प्रदान कर मैं कर्म के अनुरूप आठ गुणों का अनुभव करता हूँ॥1252॥

विशाल नयन वाला, श्वेत, पीत, लाल वर्ण का, स्वच्छ, प्रसन्न और सभी रोगों से दूर-॥1253॥

दिव्यनेत्र और अनुत्तर प्रज्ञाचक्षु प्राप्त करता हूँ तथा इसके परिणामस्वरूप मैं इन गुणों को प्राप्त करता हूँ॥1254॥

गुणों में उत्तम संघ एवं सुगत को कुञ्चिका प्रदान किया जिसके परिणामस्वरूप ज्ञान कुञ्चिका और धर्मद्वार का उद्घाटन प्राप्त करता हूँ॥1255॥

गणों में उत्तम संघ के बुद्ध को चाबी का घर (डिबिया) देकर अल्पक्रोधी तथा बाधारहित मैं भव में संसरण करता हुआ अपने कर्म के अनुरूप दो गुणों का अनुभव करता हूँ ॥1256॥

''आयोगे सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।

पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1257॥

''समाधीसु न कम्पामि, वसी होमि समाधिसु।

अभेज्जपरिसो होमि, आदेय्यवचनो सदा।

जायति भोगसम्पत्ति, भवे संसरतो मम॥1258॥

''धूमनेत्ते जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।

तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1259॥

''सति मे उजुका होति, सुसम्बन्धा च न्हारवो।

लभामि दिब्बनयनं [दिब्बसयनं (स्या॰)], तस्स निस्सन्दतो अहं॥1260॥

''दीपधारे [दीपट्ठाने (सी॰), दीपदाने (स्या॰), दीपट्ठापे (क॰)] जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।

तीणानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1261॥

''आयोगं सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।

पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1257॥

''समाधिषु न कम्पे/कम्पामि, वशी भवामि समाधिषु।

अभेद्यपरिषदो भवामि, आदेयवचनः सदा।

जायते भोगसम्पत्तिः, भवे संसरतो मम॥1258॥

''धूम्रनेत्राणि जिनाय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।

तिस्रः आनृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1259॥

''स्मृतिर्मे ऋजुका भवति, सुसम्बन्धाश्च स्नायवः।

लभे दिव्यनयनम्, तस्य निष्यन्दतो अहम्॥1260॥

''दीपाधारान् जिनाय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।

तिस्रः आनृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1261॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को गद्देदार आसन प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1257॥

समाधि में जाने से मैं कम्पित नहीं होता हूँ, समाधि के अधीन होता हुआ सदैव आदेयवचन (स्वागत वाला) और अभेद्यपरिषद वाला होता हूँ। भव में संसरण करते हुए मेरे लिए भोग सम्पत्ति उत्पन्न होती है॥1258॥

गणों में उत्तम संघ एवं जिन को धुआँ निकलने का रास्ता प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप तीन गुणों का अनुभव करता हूँ॥1259॥

मेरी स्मृति सरल है और मेरी सरलता मेरे स्वभाव में अच्छी तरह से समाहित है। इसके परिणामस्वरूप मैं दिव्यनेत्र प्राप्त करता हूँ॥1260॥

गणों में उत्तम संघ एवं जिन को दीपक रखने का आधार प्रदान कर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप तीन गुणों का अनुभव करता हूँ॥1261॥

''जातिमा अङ्गसम्पन्नो, पञ्ञवा बुद्धसम्मतो [बुद्धिसम्मतो (सी॰ क॰)]।
इमे गुणे पटिलभे, तस्स निस्सन्दतो अहं॥1262॥
''तुम्बके च करण्डे च, दत्वा बुद्धे गणुत्तमे।
दसानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1263॥
''सुगुत्तो [सदागुत्तो (सी॰ स्या॰) संगुत्तो (क॰)] सुखसमङ्गी, महायसो तथागति।
विपत्तिविगतो [विभत्तिगत्तो (स्या॰)] सुखुमालो, सब्बीतिपरिवज्जितो॥1264॥
''विपुले च गुणे लाभी, समाव चलना मम।
सुविवज्जितउब्बेगो, तुम्बके च करण्डके॥1265॥
''लभामि चतुरो वण्णे, हत्थिस्सरतनानि च।
तानि मे न विनस्सन्ति, तुम्बदाने इदं फलं॥1266॥

''जातिमान् अङ्गसम्पन्नः, प्रज्ञावान् बुद्धसम्मतः।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, तस्य निष्यन्दतो अहम्॥1262॥
''तुम्बकांश्च करण्डकांश्च, दत्वा बुद्धाय गणोत्तमाय।
दशानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1263॥
''सुगुप्तः सुखसमङ्गी, महायशास्तथागतः।
विपत्तिविगतः सुकुमारः, सर्वेतिपरिवर्जितः॥1264॥
''विपुलांश्च गुणान् लाभी, समेव चलना मम।
सुविवर्जितोद्वेगः, तुम्बकांश्च करण्डकान्॥1265॥
''लभे चतुरो वर्णान्, हस्त्यश्वरत्नानि च।
तानि मे न विनश्यन्ति, तुम्बदानस्य इदं फलम्॥1266॥

उसके परिणामस्वरूप मैं कुलवान्, अङ्गसम्पन्न तथा बुद्धसम्मत प्रज्ञावान् आदि गुणों को प्राप्त करता हूँ॥1262॥

गणों में उत्तम बुद्ध को तुमड़ी और टोकरी प्रदान कर मैं इस कर्म के अनुरूप दश गुणों का अनुभव करता हूँ॥1263॥

सुरक्षित, सुख से युक्त, महान्, यशस्वी, तथागत, विपत्ति से विरत, सुकुमार सभी से विरत ... ॥1264॥

मैं विपुल गुण का लाभी हूँ। मेरी गति सामान्य है। उद्वेग (व्याकुलता) से रहित हूँ, यह तुमड़ी एवं टोकरी प्रदान का ही परिणाम है॥1265॥

मैं चारों वर्ण का, हस्ती और अश्वरत्न का लाभी हूँ, मेरे इन सबका विनाश नहीं होता, यह तुम्बकदान का ही सुपरिणाम है॥1266॥

''मलहरणियो [अञ्जननाळियो (सी॰), हत्थलिलङ्गके (स्या॰ पी॰), हत्थलिलङ्गते (क॰)] दत्वा, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1267॥
''सब्बलक्खणसम्पन्नो, आयुपञ्ञासमाहितो।
सब्बायासविनिमुत्तो, कायो मे होति सब्बदा॥1268॥
''तणुधारे सुनिसिते, सङ्घे दत्वान पिप्फले।
किलेसकन्तनं ञाणं, लभामि अतुलं सुचिं॥1269॥
''सण्डासे सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
किलेसभञ्जनं [किलेसलुञ्चनं (सी॰ स्या॰ पी॰)] ञाणं, लभामि अतुलं सुचिं॥1270॥
''नत्थुके [थविके (?) भेसज्जथविकेति हि पुब्बे वुत्तं] सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
अट्ठानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1271॥

''मलहारिणी दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1267॥
''सर्वलक्षणसम्पन्नः, आयुःप्रज्ञासमाहितः।
सर्वायासविनिर्मुक्तः, कायो मे भवति सर्वदा॥1268॥
''तनुधारे सुनिसृते, सङ्घाय दत्वा पिप्पलानि।
क्लेशकान्तकं ज्ञानम्, लभे अतुलं शुचिम्॥1269॥
''सण्डिशान् सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
क्लेशभञ्जनं ज्ञानम्, लभे अतुलं शुचिम्॥1270॥
''**नस्तुकं** सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
अष्टानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1271॥

गणों में उत्तम संघ एवं बुद्ध को मल का हरण करने वाली डिबिया प्रदान कर मैं इस कर्म के अनुरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1267॥

मैं सदा सभी लक्षणों से सम्पन्न, आयु, प्रज्ञा से युक्त तथा सभी कष्टों से मुक्त शरीर वाला होता हूँ॥1268॥

छोटी कैंची को भली प्रकार से तेज कर संघ को प्रदान कर मैं अतुल और पवित्र तथा क्लेश का अन्त करने वाले ज्ञान का लाभी होता हूँ॥1269॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को सँडसी देकर मैं पवित्र, अतुल और क्लेश को नष्ट करने वाले ज्ञान को प्राप्त करता हूँ॥1270॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को नत्थु (औषधी से युक्त पोटली) देकर मैं इस कर्म के अनुरूप आठ गुणों का अनुभव करता हूँ॥1271॥

''सद्धं सीलं हिरिञ्चापि, अथ ओत्तप्पियं गुणं।
सुतं चागञ्च खन्तिञ्च, पञ्ञं मे अट्ठमं गुणं॥1272॥
''पीठके सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1273॥
''उच्चे कुले पजायामि, महाभोगो भवामहं।
सब्बे मं अपचायन्ति, कित्ति अब्भुग्गता मम॥1274॥
''कप्पसतसहस्सानि, पल्लङ्का चतुरस्सका।
परिवारेन्ति मं निच्चं, संविभागरतो अहं॥1275॥
''भिसियो सुगते दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
छानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1276॥

''श्रद्धा शीलं ह्रीयञ्चापि, अथ अवतप्यं गुणम्।
श्रुतं त्यागश्च क्षान्तिश्च, प्रज्ञा मे अष्टमो गुणम्॥1272॥
''पीठिका सुगताय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1273॥
''उच्चे कुले प्रजायामि, महाभोगो भवाम्यहम्।
सर्वे मम अपचायन्ति, कीर्त्तिरभ्युद्गता मम॥1274॥
''कल्पशतसहस्राणि, पर्यङ्काः चतुरस्रकाः।
परिवारयन्ति मां नित्यम्, संविभागरतो अहम्॥1275॥
''बृशीः सुगताय दत्वा, सङ्घा गणवरोत्तमाय।
षडानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1276॥

श्रद्धा, शील, लज्जा, पाप-भीरूता मेरे गुण हैं और श्रुत, त्याग, सहनशीलता तथा प्रज्ञा ये मेरे आठ गुण हैं॥1272॥

गणों में उत्तम संघ वाले सुगत को बैठने का पीढ़ा देकर मैं इस कर्म के अनुरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1273॥

महाभोगों को भोगने वाला मैं उच्च कुल में उत्पन्न होता हूँ, मेरी कीर्ति चारों ओर फैली है और सभी मेरा सम्मान करते हैं॥1274॥

सौ हजार कल्पों तक चार कोनों से युक्त पलंग मुझे घेरे रहते हैं, और मैं उनको बाँटने में लगा रहता हूँ॥1275॥

गणों में उत्तम संघ वाले सुगत को भिसि (गद्दा) देकर मैं अपने कर्म के अनुरूप छः गुणों का अनुभव करता हूँ॥1276॥

''समसुगत्तोपचितो, मुदुको चारुदस्सनो।
लभामि ञाणपरिवारं, भिसिदानस्सिदं फलं॥1277॥
''तूलिका विकतिकायो, कट्टिस्सा [कट्ठिस्सा (सी॰), कुट्टका (क॰)] चित्तका बहू।
वरपोत्थके कम्बले च, लभामि विविधे अहं॥1278॥
''पावारिके च मुदुके, मुदुकाजिनवेणियो।
लभामि विविधत्थारे [विविधट्ठाने (स्या॰ क॰)], भिसिदानस्सिदं फलं॥1279॥
''यतो सरामि अत्तानं, यतो पत्तोस्मि विञ्ञुतं।
अतुच्छो ज्ञानमञ्चोम्हि, भिसिदानस्सिदं फलं॥1280॥
''बिब्बोहने जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
छानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1281॥

''समसुगात्रोपचितः, मृदुकः चारुदर्शनः।
लभे ज्ञानपरिवारम्, बृशिदानस्येदं फलम्॥1277॥
''तूलिकाः विकटिकाः, **कोट्टकाः** चित्रकाः बह्वः।
वरपुस्तकानि कम्बलानि च, लभे विविधानि अहम्॥1278॥
''प्रावारिकांश्च मृदुकान्, मृदुकाजिनवेणीः।
लभे विविधास्तराः, बृशिदानस्येदं फलम्॥1279॥
''यतो स्मरामि आत्मानाम्, यतः प्राप्तोस्मि विज्ञतम्।
अतुच्छो ध्यानमञ्चोस्मि, बृशिदानस्येदं फलम्॥1280॥
''**बिम्बोहनानि** जिनेभ्यो दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
षडानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविका मम॥1281॥

मैं भली प्रकार से निर्मित, कोमल, सुन्दर और अनुकूल ज्ञान को प्राप्त करता हूँ, यह बृशी (गद्दे) - दान का ही सुपरिणाम है॥1277॥

विविध प्रकार के गद्दे, बहुत से चित्रों से चित्रित कढ़ी हुई चादरें और श्रेष्ठ चित्रों से चित्रित नाना प्रकार के कम्बल प्राप्त करता हूँ॥1278॥

मैं कोमल चीते के खाल के रंग की वेणी से युक्त कोमल चोगा विविध स्थानों पर प्राप्त करता हूँ, यह बृशी (गद्दे)-दान का ही सुपरिणाम है॥1279॥

जहाँ से अपना स्मरण करता हूँ, वहाँ से विवेक को प्राप्त करता हूँ और अपने ध्यानमंच पर बैठकर शून्यध्यान को प्राप्त कर लिया यह बृशी दान का ही सुपरिणाम है॥1280॥

गणों में उत्तम संघ वाले जिन को तकिया देकर मैं इस कर्म के अनुरूप छः गुणों का अनुभव करता हूँ॥1281॥

''उण्णिके पदुमके च, अथो लोहितचन्दने।

बिब्बोहने उपाधेमि, उत्तमङ्गं सदा मम॥1282॥

''अट्ठङ्गिके मग्गवरे, सामञ्ञे चतुरो फले।

तेसु ञाणं उप्पादेत्वा [उपनेत्वा (सी॰)], विहरे निच्चकालिकं॥1283॥

''दाने दमे संयमे च, अप्पमञ्ञासु रूपिसु।

तेसु ञाणं उप्पादेत्वा [उपनेत्वा (सी॰)], विहरे सब्बकालिकं॥1284॥

''वत्ते गुणे पटिपत्ति, आचारकिरियासु च।

तेसु ञाणं उप्पादेत्वा [ञाणं उपदहित्वान (सी॰)], विहरे सब्बदा अहं॥1285॥

''चङ्कमे वा पधाने वा, वीरिये बोधिपक्खिये।

तेसु ञाणं उप्पादेत्वा, विहरामि यदिच्छकं॥1286॥

''ऊर्णकान् पद्मकांश्च, अथ लोहितचन्दनानि।

बिम्बोहनानि उपादधामि, उत्तमाङ्गं सदा मम॥1282॥

''अष्टाङ्गिके मार्गावरे, श्रामण्ये चत्वारि फलानि।

तेषु ज्ञानम् उत्पाद्य, विहरेत् नित्यकालिकम्॥1283॥

''दाने दमे संयमे च, अप्रामाण्यासु रूपीषु।

तेषु ज्ञानम् उत्पाद्य, विहरेत् सर्वकालिकम्॥1284॥

''वर्त्ते गुणे प्रतिपत्तिः, आचारक्रियाषु च।

तेषु ज्ञानम् उत्पाद्य, विहरेत् सर्वदा अहम्॥1285॥

''चङ्क्रमे वा प्रधाने वा, वीर्ये बोधिपाक्षिके।

तेषु ज्ञानम् उत्पाद्य, विहरामि यथेच्छम्॥1286॥

कमलचित्रों से चित्रित और रक्तवर्ण के चन्दन के समान ऊन की तकिया मैं सदा अपने उत्तम अंग (अर्थात् सर) के नीचे लगाता हूँ॥1282॥

श्रेष्ठ आष्टांगिक मार्ग और श्रमण जीवन के फल से उत्पन्न जो ज्ञान है, उसके परिणामस्वरूप मैं सदैव विहरण करता हूँ॥1283॥

दान में, दमन में, संयम में और रूप की चार भावनाओं में (मैत्री, करुणा, मुदिता तथा उपेक्षा) से उत्पन्न जो ज्ञान है, उसके परिणामस्वरूप मैं सदैव विहरण करता हूँ॥1284॥

सेवा-कार्य और आचार-क्रिया (धार्मिक क्रिया) से उत्पन्न जो ज्ञान है, उसके परिणामस्वरूप मैं सदैव विहरण करता हूँ॥1285॥

चंक्रमण भूमि में, योगाभ्यास में, वीर्य में अथवा बोधिपक्षीय धर्म में जो उत्पन्न ज्ञान है, इसके परिणामस्वरूप मैं सदैव इच्छा-अनुरूप विहरण करता हूँ॥1286॥

''सीलं समाधि पञ्ञा च, विमुत्ति च अनुत्तरा।
तेसु ञाणं उप्पादेत्वा [ञाणं उपदहित्वान (सी॰)], विहरामि सुखं अहं॥1287॥
''फलपीठे [पलालपीठे (सी॰)] जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
द्वानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1288॥
''सोण्णमये मणिमये, दन्तसारमये बहू।
पल्लङ्कसेट्ठे विन्दामि, फलपीठस्सिदं फलं॥1289॥
''पादपीठे जिने दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
द्वानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम।
लभामि बहुके याने, पादपीठस्सिदं फलं॥1290॥
''दासी दासा च भरिया, ये चञ्ञे अनुजीविनो।
सम्मा परिचरन्ते मं, पादपीठस्सिदं फलं॥1291॥

''शीलं समाधि प्रज्ञा च, विमुक्तिश्च अनुत्तराः।
तेषु ज्ञानम् उत्पाद्य, विहरामि सुखम् अहम्॥1287॥
''फलपीठान् जिनाय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
द्वानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1288॥
''सौवर्णमये मणिमये, दन्तसारमये बहवः।
पर्यङ्कश्रेष्ठे विन्दामि, फलपीठस्येदं फलम्॥1289॥
''पादपीठान् जिनाय दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
द्वानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम।
लभे बहुकानि यानानि, पादपीठस्येदं फलम्॥1290॥
''दासी दासा च भर्या, ये चान्ये अनुजीविनः।
सम्यक् **परिचरन्ति** मम, पादपीठस्येदम् फलम्॥1291॥

शील, समाधि, प्रज्ञा, विमुक्ति और अनुत्तर से उत्पन्न जो ज्ञान है इसके परिणामस्वरूप मैं सुख से विहरण करता हूँ॥1287॥

गणों में उत्तम संघ वाले जिन को पुलाल का आसन देकर मैं इस कर्म के अनुरूप दस गुणों का अनुभव करता हूँ॥1288॥

स्वर्णमय, मणिमय और बहुत से दन्तसार से निर्मित श्रेष्ठ पलंग का मैं अनुभव करता हूँ, यह पुलाल-आसन के दान का ही सुपरिणाम है॥1289॥

गणों में उत्तम संघ वाले जिन को पाँव रखने का आसन प्रदान कर मैं इस कर्म के अनुरूप दो गुणों का अनुभव करता हूँ और मैं बहुत सा यान प्राप्त करता हूँ, यह पादपीठ-दान का ही सुपरिणाम है॥1290॥

दास-दासी-भार्या और जो अन्य उपजीवी हैं, सम्यक् रूप से मेरी सेवा करते है, यह पाद-पीठ के दान का ही सुपरिणाम है॥1291॥

''तेलअब्भञ्जने [तेलानब्भञ्जने (सी॰)] दत्वा, सङ्घे गणवरुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1292॥
''अब्याधिता रूपवता, खिप्पं धम्मनिसन्तिता।
लाभिता अन्नपानस्स, आयुपञ्चमकं मम॥1293॥
''सप्पितेलञ्च दत्वान, सङ्घे गणवरुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1294॥
''थामवा रूपसम्पन्नो, पहट्ठतनुजो सदा।
अब्याधि विसदो होमि, सप्पितेलस्सिदं फलं॥1295॥
''मुखसोधनकं दत्वा, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1296॥

''तैलाभ्राञ्जने दत्वा, सङ्घे गणवरोत्तमे।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1292॥
''अव्याधिता रूपवता, क्षिप्रं **धर्मनिशान्तिता**।
लाभिता अन्नपानस्य, आयुपञ्चमकं मम॥1293॥
''सर्पिष्तैलञ्च दत्वा, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1294॥
''स्थामवान् रूपसम्पन्नः, प्रहृष्टतनुजः सदा।
अव्याधिः विषदो भवामि, सर्पिष्तैलस्येदं फलम्॥1295॥
''मुखशोधनकं दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
पञ्चानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1296॥

गणों में उत्तम संघ को शरीर में लगाने के लिए तेल देकर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1292॥

ब्याधि से रहित, रूपवान्, शीघ्र धर्म के प्रति जागरूक, अन्न-पान और पाँच प्रकार की आयु का मैं लाभी होता हूँ॥1293॥

गणों में उत्तम संघ को घी और तेल देकर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1294॥

मैं सदा सामर्थ्यवान्, रूपसम्पन्न, अत्यन्त प्रसन्नचित्त, दुबला शरीर वाला ब्याधिरहित, स्पष्ट होता हूँ, यह घी और तेल-दान का ही सुपरिणाम है॥1295॥

गणों में उत्तम संघ के बुद्ध को मुखशोधन देकर मैं इस कर्म के परिणामस्वरूप पाँच गुणों का अनुभव करता हूँ॥1296॥

''विसुद्धकण्ठो मधुरस्सरो, कासससविवज्जितो।
उप्पलगन्धो मुखतो, उपवायति मे सदा॥1297॥
''दधिं दत्वान सम्पन्नं, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
भुञ्जामि अमतं भत्तं [वित्तं (सी॰ क॰)], वरं कायगतासतिं॥1298॥
''वण्णगन्धरसोपेतं, मधुं दत्वा जिने गणे।
अनूपमं अतुलियं, पिवे मुत्तिरसं अहं॥1299॥
''यथाभूतं रसं दत्वा, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
चतुरो फले अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1300॥
''अन्नं पानञ्च दत्वान, बुद्धे सङ्घे गणुत्तमे।
दसानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1301॥

''विशुद्धकण्ठो मधुरस्वरः, कासससविवर्जितः।
उत्पलगन्धो मुखतः, उपवायति मे सदा॥1297॥
''दधिं दत्वा सम्पन्नम्, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
भुनज्मि अमृतं भक्तम्, वरं कायगतास्मृतिम्॥1298॥
''वर्णगन्धरसोपेतम्, मधुं दत्वा जिनाय गणाय।
अनूपमम् अतुल्यम्, पिवेत् मुक्तिरसम् अहम्॥1299॥
''यथाभूतं रसं दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
चत्वारि फलानि अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1300॥
''अन्नं पानञ्च दत्वा, बुद्धाय सङ्घाय गणोत्तमाय।
दशानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1301॥

विशुद्धकण्ठ, मधुरस्वर, कास (खाँसी) वाले साँस से रहित करकमल की गन्ध मेरे मुख से सदा प्रवाहित होती रहती है॥1297॥

गणों में उत्तम संघ एवं बुद्ध को भली प्रकार जमा हुआ दधि देकर मैं अमृत भात को खाता हूँ, श्रेष्ठ कायगत स्मृति के साथ॥1298॥

गणों के उत्तम जिन को वर्ण, गन्ध से युक्त मधु देकर मैं अनुपम और अतुल्य मुक्तिरस को पीता हूँ॥1299॥

गणों में उत्तम संघ के बुद्ध को यथार्थरूप से रस देकर मैं इस कर्म के अनुरूप चार फलों का अनुभव करता हूँ॥1300॥

गणों में उत्तम संघ के बुद्ध को अन्न और पान देकर मैं इस कर्म के अनुसार दश फलों का अनुभव करता हूँ॥1301॥

''आयुवा बलवा धीरो, वण्णवा यसवा सुखी।
लाभी अन्नस्स पानस्स, सूरो पञ्ञाणवा सदा।
इमे गुणे पटिलभे, संसरन्तो भवे अहं॥1302॥
''धूपं [धूमं (सी॰ क॰)] दत्वान सुगते, सङ्घे गणवरुत्तमे।
दसानिसंसे अनुभोमि, कम्मानुच्छविके मम॥1303॥
''सुगन्धदेहो यसवा, सीघपञ्ञो च कित्तिमा।
तिक्खपञ्ञो भूरिपञ्ञो, हासगम्भीरपञ्ञवा॥1304॥
''वेपुल्लजवनपञ्ञो, संसरन्तो भवाभवे।
तस्सेव वाहसा दानि, पत्तो सन्तिसुखं सिवं॥1305॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥1306॥

''आयुर्वान् बलवान् धीरः, वर्णवान् यषवान् सुखी।
लाभी अन्नस्य पानस्य, सूरो प्रज्ञावान् सदा।
इमान् गुणान् प्रतिलभे, संसरन् भवे अहम्॥1302॥
''धूपं दत्वा सुगताय, सङ्घाय गणवरोत्तमाय।
दशानृशंसा अनुभवामि, कर्मानुच्छविके मम॥1303॥
''सुगन्धदेहो यशवान्, शीघ्रप्राज्ञश्च कीर्त्तिमान्।
तीक्ष्णप्रज्ञो भूरिप्रज्ञः, हासगम्भीरप्रज्ञावान्॥1304॥
''वैपुल्यजवनप्रज्ञः, संसरन् भवाभवे।
तस्यैव वाहसा इदानीम्, प्राप्तः शान्तिसुखं शिवम्॥1305॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
नाग इव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥1306॥

आयुवाला, बलवान्, बुद्धिमान्, वर्णवान्, यशवान्, सुखी और शूर तथा प्रज्ञावान् मैं सदा अन्न-पान का लाभी हो भव में संसरण करते हुए इन गुणों को प्राप्त करता हूँ॥1302॥

गणों में उत्तम संघ एवं सुगत को धूप देकर मैं इस कर्म के अनुरूप दश गुणों का अनुभव करता हूँ॥1303॥

सुगन्धित शरीर वाला, यशवाला, शीघ्रप्राज्ञ और कीर्तिमान्, तीक्ष्णप्रज्ञ, भूरिप्रज्ञ, आनन्दमय गम्भीर प्रज्ञावाला..... ॥1304॥

विपुल जवनप्रज्ञ होने के कारण ही मैंने भव-अभव में संसरण करते हुए समय मंगलमय शान्ति और सुख को प्राप्त किया॥1305॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1306॥

''स्वागतं वत मे आसि, मम बुद्धस्स सन्तिके [बुद्धसेट्ठस्स सन्तिके (?) एवमुपरिपि।
एतदेव हि उपालित्थेरापदानट्ठकथायं वण्णितं]।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥1307॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥1308॥

इत्थं सुदं आयस्मा पिलिन्दवच्छो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पिलिन्दवच्छत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. सेलत्थेरअपदानं

''नगरे हंसवतिया, वीथिसामी अहोसहं।
मम ञाती समानेत्वा, इदं वचनमब्रविं॥1309॥

'''बुद्धो लोके समुप्पन्नो, पुञ्ञक्खेत्तो अनुत्तरो [पुञ्ञक्खेत्तं अनुत्तरं (सी॰)]।
आसि सो [आसीसो (सी॰), आधारो (पी॰)] सब्बलोकस्स, आहुतीनं पटिग्गहो॥1310॥

''स्वागतं वत मे आसीत्, मम बुद्धस्य अन्तिके।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1307॥

''प्रतिसम्विदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1308॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पिलिन्दवच्छस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नगर्यां हंसवत्याम्, वीथिस्वामी अभूवमहम्।
मम ज्ञाती समानीय, इदं वचनमब्रवम्॥1309॥

'''बुद्धो लोके समुत्पन्नः, पुण्यक्षेत्रम् अनुत्तरम्।
आसीत् सः सर्वलोकस्य, आहुतीनां प्रतिग्रहः॥1310॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैनें तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1307॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1308॥

इस प्रकार आयुष्मान् पिलिन्दवच्छ थेर ने इन गाथाओं को कहा।

उस समय मैं हंसवती नामक नगर में वीथि (मार्ग) का स्वामी था, तब मेरे रिश्तेदार ने मेरे पास आकर इस वचन को कहा-॥1309॥

अनुत्तर, पुण्यक्षेत्र, बुद्ध लोक में उत्पन्न हुए हैं, वे सभी लोको के आहुतियों के ग्रहणकर्ता हैं॥1310॥

‘‘‘खत्तिया नेगमा चेव, महासाला च ब्राह्मणा।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1311॥
‘‘‘हत्थारोहा अनीकट्ठा, रथिका पत्तिकारका।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1312॥
‘‘‘उग्गा च राजपुत्ता च, वेसियाना च ब्राह्मणा।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1313॥
‘‘‘आळारिका कप्पका [आळारिका च सूदा (स्या॰)] च, न्हापका मालकारका।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1314॥
‘‘‘रजका पेसकारा च, चम्मकारा च न्हापिता।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1315॥

‘‘‘क्षत्रियाः निगमाश्चैव, महाशालाश्च ब्राह्मणाः।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, **पूगधर्मम्** अकार्षुं ते॥1311॥
‘‘‘हस्त्यारोहा अनीकस्थाः, रथकाः पदातिकारकाः।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1312॥
‘‘‘उग्राश्च राजपुत्राश्च, वैश्याश्च ब्राह्मणाः।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1313॥
‘‘‘औदारिकाः कल्पकाश्च, स्नापकाः मालाकारकाः।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1314॥
‘‘‘रजकाः पेशकाराश्च, चर्मकाराश्च स्नापिता।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1315॥

नगर से सम्बन्धित क्षत्रिय, महानधनपति और ब्राह्मणों ने प्रसन्नचित्त और सुमन से एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1311॥

महावत, सेना एवं रथिक पैदल चलने वाले सैनिकों ने प्रसन्नचित्त तथा सुमन से एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1312॥

उग्र राजपुत्रों, व्यापारियों और ब्राह्मणों ने प्रसन्नचित्त और सुमन से एक धर्मपरिषद का निर्माण किया॥1313॥

रसोइए का कर्मचारी, नाई, कर्मचारी और माला बनाने वाले ने प्रसन्नचित्त तथा सुमन से एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1314॥

धोबी, बुनकर (जूलाहा) चर्म का कार्य करने वाले (चमार) और नाई ने प्रसन्नचित्त तथा सुमन से एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1315॥

‘‘‘उसुकारा भमकारा, चम्मकारा च तच्छका।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1316॥
‘‘‘कम्मारा सोण्णकारा च, तिपुलोहकरा तथा।
पसन्नचित्ता सुमना, पूगधम्मं अकंसु ते॥1317॥
‘‘‘भतका चेटका चेव, दासकम्मकरा बहू।
यथासकेन थामेन, पूगधम्मं अकंसु ते॥1318॥
‘‘‘उदहारा कट्ठहारा, कस्सका तिणहारका।
यथासकेन थामेन, पूगधम्मं अकंसु ते॥1319॥
‘‘‘पुप्फिका मालिका चेव, पण्णिका फलहारका।
यथासकेन थामेन, पूगधम्मं अकंसु ते॥1320॥

‘‘‘इषुकाराः **भ्रमकाराः**, चर्मकाराश्च तक्षकाः।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1316॥
‘‘‘कर्माराः स्वर्णकाराश्च, त्रपुलौहकराः तथा।
प्रसन्नचित्ताः सुमनसा, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1317॥
‘‘‘भृतकाश्चेटकाश्चैव, दाशकर्मकाराः बह्वः।
यथास्वकेन स्थामेन, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1318॥
‘‘‘उदहाराः काष्ठहाराः, कृषकाः तृणहारकाः।
यथास्वकेन स्थामेन, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1319॥
‘‘‘पुष्पिकाः मालिकाश्चैव, पर्णिका फलहारकाः।
यथास्वकेन स्थामेन, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1320॥

इषुकार (तीर बनाने वाले) भ्रमण कराने वाले, चर्म का कार्य करने वाले और बढ़ई ने प्रसन्नचित्त तथा सुमन से एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1316॥

लोहार, सुनार तथा शीशे और लोहे का कार्य करने वालों ने प्रसन्नचित्त और सुमन से एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1317॥

भृत्य (कुली) नौकर और बहुत से दासकर्म को करने वालों ने यथा-सम्भव अपने सामर्थ्य के अनुसार एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1318॥

पानी लाने वाले, लकड़ी ले जाने वाले, कृषक, घसियारों ने यथा-सम्भव अपने सामर्थ्य के अनुसार एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1319॥

पुष्प, माला, पत्ते और फल ले जाने वालों ने भी यथा-सम्भव अपने सामर्थ्य के अनुसार एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1320॥

‘‘‘गणिका कुम्भदासी च, पूविका [सूपिका (क॰)] मच्छिकापि च।
यथासकेन थामेन, पूगधम्मं अकंसु ते॥1321॥
‘‘‘एथ सब्बे समागन्त्वा, गणं बन्धाम एकतो।
अधिकारं करिस्साम, पुञ्ञक्खेत्ते अनुत्तरे’॥1322॥
‘‘ते मे सुत्वान वचनं, गणं बन्धिंसु तावदे।
उपट्ठानसालं सुकतं, भिक्खुसङ्घस्स कारयुं॥1323॥
‘‘निट्ठापेत्वान तं सालं, उदग्गो तुट्ठमानसो।
परेतो तेहि सब्बेहि, सम्बुद्धमुपसङ्कमिं॥1324॥
‘‘उपसङ्कम्म सम्बुद्धं, लोकनाथं नरासभं।
वन्दित्वा सत्थुनो पादे, इदं वचनमब्रविं॥1325॥

‘‘‘गणिकाः कुम्भदासीश्च, पूपिकाः मक्षिका अपि च।
यथास्वकेन स्थामेन, पूगधर्मम् अकार्षुं ते॥1321॥
‘‘‘अत्र सर्वे समागत्य, गणं अ**बध्नीम्** एकतः।
अधिकारं करिष्यामः, पुण्यक्षेत्रे अनुत्तरे’॥1322॥
‘‘ते मे श्रुत्वा वचनम्, गणं अभान्त्सुः तावदेव।
उपस्थानशालां सुकृतम्, भिक्षुसङ्घाय कुर्याम॥1323॥
‘‘निस्थाप्य तत् शालाम्, उदग्रः तुष्टमनः।
परेतः तेभिः सर्वैः, सम्बुद्धमुपसमाक्रामम्॥1324॥
‘‘उपसङ्क्रम्य सम्बुद्धम्, लोकनाथं नरर्षभम्।
वन्दित्वा शास्तुः पादौ, इदं वचनमब्रवम्॥1325॥

गणिका, पानी लाने वाली दासी, पूए बेचने वालों और मछुआरों ने भी यथा सम्भव अपने सामर्थ्य के अनुसार एक धर्मपरिषद का आयोजन किया॥1321॥

यहाँ सभी एकत्र होकर एक गण में संग्रहित और अनुत्तर पुण्यक्षेत्र में अधिकार करेगें॥1322॥

मेरे ऐसे वचन को सुनकर वे सभी एक गण में संगठित हुए और कहा कि हमें भी भली प्रकार से उपट्ठानशाला (सभा- भवन) का निर्माण कर भिक्षुसंघ को देना चाहिए॥1323॥

तब उस शाला को पूर्ण कर प्रसन्न-चित्त और अत्यधिक प्रसन्नमन मैं उन सभी के साथ सम्बुद्ध के समीप गया॥1324॥

सम्बुद्ध के समीप जाकर लोकनाथ, नरर्षभ शास्ता के पैरों की वन्दना कर मैंने यह वचन कहा॥1325॥

‘‘‘इमे तीणि सता वीर, पुरिसा एकतो गणा।
उपट्ठानसालं सुकतं, निय्यादेन्ति [निय्यातेन्ति (सी॰)] तुवं [तवं (सी॰), तव (स्या॰)] मुनि’॥1326॥
‘‘भिक्खुसङ्घस्स पुरतो, सम्पटिच्छत्व चक्खुमा।
तिण्णं सतानं पुरतो, इमा गाथा अभासथ॥1327॥
‘‘‘तिसतापि च जेट्ठो च, अनुवत्तिंसु एकतो।
सम्पत्तिञ्हि [सम्पत्तीहि (स्या॰ क॰)] करित्वान, सब्बे अनुभविस्सथ॥1328॥
‘‘‘पच्छिमे भवे सम्पत्ते, सीतिभावमनुत्तरं।
अजरं अमतं सन्तं, निब्बानं फस्सयिस्सथ’॥1329॥
‘‘एवं बुद्धो वियाकासि, सब्बञ्ञू समणुत्तरो।
बुद्धस्स वचनं सुत्वा, सोमनस्सं पवेदयिं॥1330॥

‘‘‘इमे त्रिशतं वीर, पुरुषा एकतो गणाः।
उपस्थानशालां सुकृतम्, निर्यातयन्ति तुभ्यं मुनि’॥1326॥
‘‘भिक्षुसङ्घस्य पुरतः, सम्प्रतिच्छत्व चक्षुष्मान्।
त्रयाणां सत्वानां पुरतः, इमां गाथाम् अभाषत॥1327॥
‘‘‘त्रिशतापि च ज्येष्ठश्च, अन्ववर्त्तन् एकतः।
सम्पत्तिं हि कृत्वा, सर्वे अनुभविष्यत॥1328॥
‘‘‘पच्छिमे भवे सम्प्राप्ते, शीतिभावमनुत्तरम्।
अजरम् अमृतं शान्तम्, निर्वाणं **स्प्रक्ष्यथ**’॥1329॥
‘‘एवं बुद्धो व्याकार्षीत्, सर्वज्ञ श्रमणोत्तरः।
बुद्धस्य वचनं श्रुत्वा, सौमनस्यं प्रावेदयम्॥1330॥

इस उपट्ठानशाला को तीन सौ वीर पुरूषों के गण द्वारा आप मुनि को समर्पित करने के लिए भली प्रकार बनाया गया है॥1326॥

चक्षुमान् भिक्षुसंघ को सामने प्राप्त करके तीन सत्त्वों ने इन गाथाओं को कहा-॥1327॥

तीन सौ श्रेष्ठ अनुवर्तकों ने जो एकसाथ मेरा अनुवर्तन किया है, शील रूपी सम्पत्ति का लाभ करके सभी अनुभव करोगे॥1328॥

अन्तिम भव में प्राप्त होने पर तुम अनुत्तर शान्ति भाव और अजर (जरा रहित) अमृत, शान्त निर्वाण का स्पर्श करोगे ॥1329॥

इस प्रकार सर्वज्ञ श्रमणों में अनुत्तर बुद्ध द्वारा व्याख्या की गई और बुद्ध के वचनों को सुनकर सौमनस्य उत्पन्न हुआ॥1330॥

''तिंस कप्पसहस्सानि, देवलोके रमिं अहं।
देवाधिपो पञ्चसतं, देवरज्जमकारयिं॥1331॥
''सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती अहोसहं।
देवरज्जं करोन्तस्स, महादेवा अवन्दिसुं॥1332॥
''इध मानुसके रज्जं [रज्जे (सी॰)], परिसा होन्ति बन्धवा।
पच्छिमे भवे सम्पत्ते, वासेट्ठो नाम ब्राह्मणो॥1333॥
''असीतिकोटि निचयो, तस्स पुत्तो अहोसहं।
सेलो इति मम नामं, छळङ्गे पारं गतः॥1334॥
''जङ्घाविहारं विचरं, ससिस्सेहि पुरक्खतो।
जटाभारिकभरितं, केणियं नाम तापसं॥1335॥

''त्रिंशत् कल्पसहस्राणि, देवलोके रमे अहम्।
देवाधिपः पञ्चशतम्, देवराज्यमकारयम्॥1331॥
''सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती अभवमहम्।
देवराज्यं **कुर्वतः**, महादेवा **अवन्दिषम्**॥1332॥
''इह मानुसके राज्ये, परिषद् भवन्ति बन्धवाः।
पच्छिमे भवे सम्प्राप्ते, वासिष्ठो नाम ब्राह्मणः॥1333॥
''अशीतिकोटि निचयः, तस्य पुत्र अभवमहम्।
शैल इति मम नामम्, षडाङ्गानि पारं गतः॥1334॥
''जङ्घाविहारं व्यचरम्, सशिष्यैः पुरस्कृतः।
जटाभारिकभरितम्, केणिकं नाम तापसम्॥1335॥

अब से तीस हजार कल्पों में मैंने देवलोक में रमण किया और पाँच सौ बार देवों का अधिपति बन देवों पर राज्य किया॥1331॥

हजार बार मैं चक्रवर्ती राजा हुआ और देवों में राज्य करते हुए महादेव की वन्दना की॥1332॥

यहाँ मनुष्यों के राज्य में बान्धवों की परिषद होती है और अन्तिम भव को प्राप्त मैं वासिष्ठ नाम का ब्राह्मण हुआ॥1333॥

अस्सी करोड़ धन का संग्रह करने वाले का मैं पुत्र हुआ और छः अंगों (पारमिताओं) को पार किए हुए मेरा नाम शैल था॥1334॥

शिष्यों से पुरस्कृत मैंने सैर किया तब जटा के भार से युक्त केणिय नामक तपस्वी से ..... ॥1335॥

''पटियत्ताहुतिं दिस्वा, इदं वचनमब्रविं।
'आवाहो वा विवाहो वा, राजा वा ते निमन्तितो'॥1336॥
''आहुतिं [नाहुतिं (?)] यिट्ठुकामोहं, ब्राह्मणे देवसम्मते।
न निमन्तेमि राजानं, आहुती मे न विज्जति॥1337॥
''न चत्थि मय्हमावाहो, विवाहो मे न विज्जति।
सक्यानं नन्दिजननो, सेट्ठो लोके सदेवके॥1338॥
''सब्बलोकहितत्थाय, सब्बसत्तसुखावहो।
सो मे निमन्तितो अज्ज, तस्सेतं पटियादनं॥1339॥
''तिम्बरूसकवण्णाभो, अप्पमेय्यो अनूपमो।
रूपेनासदिसो बुद्धो, स्वातनाय निमन्तितो॥1340॥

''प्रत्यात्माहुतिं दृष्ट्वा, इदं वचनमब्रवम्।
'आवाहो वा विवाहो वा, राजा वा ते निमन्त्रितः'॥1336॥
''आहुतिं इष्टकामोऽहम्, ब्राह्मणान् देवसम्मतान्।
न निमन्त्रयामि राजानाम्, आहुती मे न विद्यते॥1337॥
''न चास्ति मह्यमावाहः, विवाहो मे न विद्यते।
शाक्यानां नन्दिजननः, श्रेष्ठो लोके सदेवके॥1338॥
''सर्वलोकहितार्थाय, सर्वसत्वसुखावहः।
सो मे निमन्त्रित अद्य, तस्येतद् **प्रत्यादनम्**॥1339॥
''तिम्बरूषकवर्णाभः, अप्रमेय अनूपमः।
रूपेनासदृशः बुद्धः, **श्वस्तनाय** निमन्त्रितः॥1340॥

आहुति की व्यवस्था को देखकर मैंने यह वचन कहा कि क्या आवाह और विवाह है, या राजा को निमन्त्रण है? ॥1336॥

देवताओं के समान ब्राह्मण को मैं आहुति देने की कामना करता हूँ, राजा को निमन्त्रित नहीं करता और मेरे पास आहुति भी विद्यमान नहीं है॥1337॥

न तो मेरे यहाँ आवाह है न विवाह। इस लोक में शाक्यों को प्रसन्नता प्रदान करने वाले देवताओं सहित लोक में श्रेष्ठ भगवान्-॥1338॥

समस्त लोक के हित के लिए, सभी सत्त्वों के सुख के वाहक आज मेरे द्वारा निमन्त्रित हैं, उन्हीं के लिए यह व्यवस्था है॥1339॥

तिंदुक वृक्ष की आभा के समान, अप्रमेय तथा अनुपम बुद्ध को कल के लिए निमन्त्रित कर दिया है॥1340॥

''उक्कामुखपहट्ठोव, खदिरङ्गारसन्निभो।
विज्जूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1341॥
''पब्बतग्गे यथा अच्चि, पुण्णमायेव चन्दिमा।
नळग्गिवण्णसङ्कासो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1342॥
''असम्भीतो भयातीतो, भवन्तकरणो मुनि।
सीहूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1343॥
''कुसलो बुद्धधम्मेहि, अपसय्हो परेहि सो।
नागूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1344॥
''सद्धम्माचारकुसलो, बुद्धनागो असादिसो।
उसभूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1345॥

''उल्कामुखप्रहृष्ट इव, खदिरङ्गारसन्निभः।
विद्योपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1341॥
''पर्वताग्रे यथा अर्चिः, पूर्णिमा इव चन्द्रमाः।
नडाग्निर्वर्णसङ्काशः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1342॥
''असम्भीतो भयातीतः, भवान्तकरणो मुनिः।
सिंहोपमो महावीरः, सो मे बुद्ध निमन्त्रितः॥1343॥
''कुशलः बुद्धधर्मैः, अप्रसह्यः परैः सः।
नागोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1344॥
''सद्धर्माचारकुशलः, बुद्धनाग असादृश्यः।
वृषभोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1345॥

प्रज्जवलित मशाल के समान प्रसन्न और बबूल की लकड़ी के अँगारे के सदृश तथा चमकती हुई बिजली के समान महावीर बुद्ध मेरे द्वारा निमन्त्रित हैं॥1341॥

पर्वतशिखर में आग के समान, पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान और सरकण्डे में लगी अग्नि के वर्ण के समान बुद्ध मेरे द्वारा निमन्त्रित हैं॥1342॥

भय से मुक्त, जिसका भय अतीत में चला गया है, भव के अन्त तक पहुँचे हुए मुनि (कल्याणकारी) सिंह के समान महावीर बुद्ध मेरे द्वारा निमन्त्रित है॥1343॥

अन्यों के द्वारा दुष्कर बुद्धधर्मों में कुशल और जिसको हाथी के समान उपमा दी गई है एसे कुशल महावीर भगवान् हैं जिनको मैंने आमन्त्रित किया॥1344॥

सद्धर्म के व्यवहार में कुशल, असदृश, बुद्धश्रेष्ठ तथा वृषभोपम महावीर भगवान् मेरे द्वारा निमन्त्रित हैं॥1345॥

''अनन्तवण्णो अमितयसो, विचित्तसब्बलक्खणो।
सक्कूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1346॥
''वसी गणी पतापी च, तेजस्सी च दुरासदो।
ब्रह्मूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1347॥
''पत्तधम्मो दसबलो, बलातिबलपारगो।
धरणूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1348॥
''सीलवीचिसमाकिण्णो, धम्मविञ्ञाणखोभितो।
उदधूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1349॥
''दुरासदो दुप्पसहो, अचलो उग्गतो ब्रहा।
नेरूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1350॥

''अनन्तवर्ण अमितयशः, विचित्रसर्वलक्षणः।
शक्रोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1346॥
''वशी गणी प्रतापी च, तेजस्वी च दुरासदः।
ब्रह्मोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1347॥
''प्राप्तधर्मो दशबलः, बलातिबलपारगः।
धारणोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1348॥
''शीलवीचिसमाकीर्णः, धर्मविज्ञानक्षोभितः।
उदधोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1349॥
''दुरासदो दुष्प्रसहः, अचलोद्गतः **बृहत्**।
निरूपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1350॥

अनन्तवर्ण, अमितयश वाले, लक्ष्णों से अलंकृत शक्र के समान महावीर भगवान् हैं जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1346॥

तेजस्वी, शक्तिशाली, प्रतापी और दुरासद (जिसके समीप पहुँचना कठिन है) तथा ब्रह्मोपम महावीर भगवान् बुद्ध हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1347॥

प्राप्तधर्म, दशबल से युक्त बलातिबल को पार किये हुए पृथ्वी के समान उपमाप्राप्त भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1348॥

सदाचार की लहर को एकत्र किये हुए धर्मविज्ञान से क्षोभित समुद्र के समान उपमा प्राप्त भगवान् महावीर हैं जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1349॥

जिनके पास पहुँचना कठिन है, अजेय, स्थिर विशाल रूप से ऊपर उठे हुए पर्वत के समान तथा निरूपम भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1350॥

''अनन्तञाणो असमसमो, अतुलो अग्गतं गतो।
गगनूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1351॥
''पतिट्ठा भयभीतानं, ताणो सरणगामिनं।
अस्सासको महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1352॥
''आसयो बुद्धिमन्तानं, पुञ्ञक्खेत्तं सुखेसिनं।
रतनाकरो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1353॥
''अस्सासको वेदकरो, सामञ्ञफलदायको।
मेघूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1354॥
''लोकचक्खु महातेजो, सब्बतमविनोदनो।
सूरियूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1355॥

''अनन्तज्ञान असमसमः, अतुल अग्रतं गतः।
गगनोपमो महावीरः, सो मे बुद्धो निमन्त्रितः॥1351॥
''प्रतिष्ठा भयभीतानाम्, त्राणः शरणगामिनाम्।
आश्वासको महावीरः, स मे बुद्धो निमन्त्रितः॥1352॥
''आशयः बुद्धिमन्तानाम्, पुण्यक्षेत्रं सुखेषिणम्।
रत्नाकरो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1353॥
''आश्वासको वेदकरः, श्रामण्यफलदायकः।
मेघोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1354॥
''लोकचक्षुः महातेजः, सर्वतमविनोदनः।
सूर्योपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1355॥

अनन्तज्ञान, अतुलनीय, अद्वितीय आगे गये हुए, आकाश के समान उपमा प्राप्त भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1351॥

भयभीतों के आश्रय-स्थान, शरण में आये हुए को तारने वाले, धीरज बँधाने वाले, भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1352॥

बुद्धिमानों के जो आश्रय हैं, सुख की कामना करने वालों के जो पुण्यक्षेत्र हैं तथा रत्नाकर महावीर हैं, जिनकों मैंने आमन्त्रित किया है॥1353॥

श्रामण्यफलदायक, आश्वासक और अनुभावक मेघ की उपमा प्राप्त भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1354॥

संसार के नेत्र स्वरूप, महातेजस्वी और सभी प्रकार के अन्धकार को दूर करने वाले सूर्य की उपमाप्राप्त भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1355॥

''आरम्मणविमुत्तीसु, सभावदस्सनो मुनि।
चन्दूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1356॥
''बुद्धो समुस्सितो लोके, लक्खणेहि अलङ्कतो।
अप्पमेय्यो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1357॥
''यस्स ञाणं अप्पमेय्यं, सीलं यस्स अनूपमं।
विमुत्ति असदिसा यस्स, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1358॥
''यस्स धीति असदिसा, थामो यस्स अचिन्तियो।
यस्स परक्कमो जेट्ठो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1359॥
''रागो दोसो च मोहो च, विसा सब्बे समूहता।
अगदूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1360॥

''आरम्मणविमुक्तीषु, स्वभावदर्शनो मुनिः।
चन्द्रोपमो महावीरः, स मे बुद्धो निमन्त्रितः॥1356॥
''बुद्धो समुच्छ्रितो लोके, लक्षणैरलङ्कृतः।
अप्रमेयो महावीरः, स मे बुद्धो निमन्त्रितः॥1357॥
''यस्य ज्ञानम् अप्रमेयम्, शीलं यस्य अनूपमम्।
विमुक्ति **असदृशः** यस्य, सो मे बुद्धो निमन्त्रितः॥1358॥
''यस्य धृति **असदृशः**, स्थामः यस्य अचिन्त्यः।
यस्य पराक्रमः ज्येष्ठः, सो मे बुद्धो निमन्त्रितः॥1359॥
''रागः दोषश्च मोहश्च, विषाः सर्वे **समुद्धृताः**।
अगदोपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1360॥

रूप आदि आलम्बनों के प्रति राग से मुक्त स्वभाव और अन्तःप्रेरणा से युक्त मुनि चन्द्र के समान उपमाप्राप्त भगवान् महावीर हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1356॥

लोक में ऊपर उठे हुए, लक्षणों से अलंकृत अप्रमेय भगवान् महावीर बुद्ध हैं, जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1357॥

जिसका ज्ञान अप्रमेय है, जिसका शील अनुपम है, जिसकी विमुक्ति अनुपम है, ऐसे भगवान् महावीर को मैंने आमन्त्रित किया है॥1358॥

जिसकी बुद्धिमानी अद्वितीय है, जिसका सामर्थ्य अविचारणीय है तथा जिसका पराक्रम श्रेष्ठ है ऐसे महावीर भगवान् को मैंने आमन्त्रित किया है॥1359॥

राग, दोष और मोह, ये सभी विष के समूह हैं तथा भगवान् महावीर औषधि के समान उपमाप्राप्त हैं, ऐसे महावीर भगवान् को मैंने आमन्त्रित किया है॥1360॥

''क्लेसब्याधिबहुदुक्ख सब्बतमविनोदनो [विनोदको (सी॰ स्या॰)]।
वेज्जूपमो महावीरो, सो मे बुद्धो निमन्तितो॥1361॥
''बुद्धोति भो यं वदेसि, घोसोपेसो सुदुल्लभो।
बुद्धो बुद्धोति सुत्वान, पीति मे उदपज्जथ॥1362॥
''अब्भन्तरं अगण्हन्तं, पीति मे बहि निच्छरे।
सोहं पीतिमनो सन्तो, इदं वचनमब्रविं॥1363॥
'''कहं नु खो सो भगवा, लोकजेट्ठो नरासभो।
तत्थ गन्त्वा नमस्सिस्सं, सामञ्ञफलदायकं'॥1364॥
'''पग्गय्ह दक्खिणं बाहुं, वेदजातो कतञ्जली।
आचिक्खि मे धम्मराजं, सोकसल्लविनोदनं॥1365॥

''क्लेशव्याधिबहुदुःख सर्वतमविनोदनः।
वैद्योपमो महावीरः, सो मे बुद्धः निमन्त्रितः॥1361॥
''बुद्ध इति भो यम् अवदत्, **घोष एषः** सुदुर्लभः।
बुद्ध बुद्ध इति श्रुत्वा, प्रीतिर्मे उदपद्यत॥1362॥
''आभ्यन्तरम् अगृह्णन्तम्, प्रीतिर्मे बहि निश्चरेत्।
सोऽहं प्रीतिमनाः शान्तः, इदं वचनमब्रवम्॥1363॥
'''कुत्र नु खलु सो भगवान्, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
तत्र गत्वा अनंस्यम्, श्रामण्यफलदायकम्'॥1364॥
'''प्रगृह्य दक्षिणं **बाहुम्**, वेदजातः कृताञ्जलिः।
आचष्ट मे धर्मराजम्, शोकशल्यविनोदनम्॥1365॥

क्लेश, व्याधि, अनेक दुःख और सभी प्रकार के अन्धकार को दूर करने वाले वैद्य की उपमाप्राप्त भगवान् महावीर हैं जिनको मैंने आमन्त्रित किया है॥1361॥

बुद्ध! ऐसा जो कहा गया, ऐसा घोष अत्यन्त दुर्लभ है। बुद्ध, बुद्ध ऐसा सुनकर मुझ में भी प्रसन्नता उत्पन्न हुई॥1362॥

मेरी प्रसन्नता अन्दर ग्रहण न करते हुए कहीं बाहर न निकल जाए, इसलिए शान्त तथा प्रसन्नचित्त मैंने यह वचन कहा॥1363॥

वह भगवान् लोकज्येष्ठ नरर्षभ कहाँ हैं? वहाँ जाकर उन श्रमण जीवन का फल प्रदान करने वाले को नमस्कार करूँगा ॥1364॥

तब दाहिने बाँह को पकड़कर दोनों हाथ जोड़कर आनन्दित हो मैंने शोकशूल को दूर करने वाले धर्मराज को कहा-॥1365॥

‘‘‘उदेन्तंव महामेघं, नीलं अञ्जनसन्निभं।
सागरं विय दिस्सन्तं, पस्ससेतं महावनं॥1366॥
‘‘‘एत्थ सो वसते बुद्धो, अदन्तदमको मुनि।
विनयन्तो च वेनेय्ये, बोधेन्तो बोधिपक्खिये॥1367॥
‘‘‘पिपासितोव उदकं, भोजनंव जिघच्छितो।
गावी यथा वच्छगिद्धा, एवाहं विचिनिं जिनं॥1368॥
‘‘‘आचारउपचारञ्ञू, धम्मानुच्छविसंवरं।
सिक्खापेमि सके सिस्से, गच्छन्ते जिनसन्तिकं॥1369॥
‘‘‘दुरासदा भगवन्तो, सीहाव एकचारिनो।
पदे पदं निक्खिपन्ता, आगच्छेय्याथ माणवा॥1370॥

‘‘‘उदयन्निव महामेघम्, नीलम् अञ्जनसन्निभम्।
सागरमिव दृश्यन्तम्, **पश्यसि** एतद् महावनम्॥1366॥
‘‘‘अत्र सो वसते बुद्धः, अदान्तदमको मुनिः।
विनयन्तश्च **विनयेयुः**, बोधयन्तः **बोधिपाक्षिकान्**॥1367॥
‘‘‘पिपासित इव उदकम्, भोजनमिव जिघत्सितः/**बुभुक्षितः**।
गावी यथा **वच्छगृधाः**, एवमहं व्यचिनं जिनम्॥1368॥
‘‘‘आचारउपचारज्ञ, धर्मानुच्छविसंवरम्।
शिक्षापयामि स्वकान् शिष्यान्, गच्छन्ते जिनसान्तिकम्॥1369॥
‘‘‘दुरासदाः भगवन्तः, सिंह इव एकचारिणः।
पदे पदं निक्षिपन्, आगच्छेत माणवाः॥1370॥

नीलापन लिए हुए काले घुमड़ते हुए महामेघ तथा सागर के समान दिखाई देनेवाले इस महावन को देखो॥1366॥

संयमित, इन्द्रिय को वश में किये हुए और विनेय जनों को विनीत करते तथा बोधिपाक्षिक (धर्मों) का बोध कराते हुये बुद्ध मुनि यहाँ वास करते हैं- ॥1367॥

जिस प्रकार प्यासा जल की इच्छा करता है, भूखा भोजन की इच्छा करता है और जैसे गाय बछड़े के लिए लालायित रहती है, उसी प्रकार मैंने जिन का चुनाव किया॥1368॥

आचार-व्यवहार कुशल, धर्मानुसार संयमित मैं जिन के समीप जाते हुए अपने शिष्यों को पढ़ाता हूँ॥1369॥

जिस प्रकार अकेले सिंह को खोज पाना मुस्किल है, उसी प्रकार भगवान् बुद्ध के समीप पहुँचना कठिन है, परन्तु जिज्ञासा से युक्त ब्रह्मचारी एक-एक कदम रखते हुए बुद्ध के समीप पहुँचते हैं॥1370॥

‘‘‘आसीविसो यथा घोरो, मिगराजाव केसरी।
मत्तोव कुञ्जरो दन्ती, एवं बुद्धा दुरासदा॥1371॥
‘‘‘उक्कासितञ्च खिपितं, अज्झुपेक्खिय माणवा।
पदे पदं निक्खिपन्ता, उपेथ बुद्धसन्तिकं॥1372॥
‘‘‘पटिसल्लानगरुका, अप्पसद्दा दुरासदा।
दुरूपसङ्कमा बुद्धा, गरू होन्ति सदेवके॥1373॥
‘‘‘यदाहं पञ्हं पुच्छामि, पटिसम्मोदयामि वा।
अप्पसद्दा तदा होथ, मुनिभूताव तिट्ठथ॥1374॥
‘‘‘यं सो देसेति सम्बुद्धो [सद्धम्मं (सी॰ स्या॰)], खेमं निब्बानपत्तिया।
तमेवत्थं निसामेथ, सद्धम्मसवनं सुखं’॥1375॥

‘‘‘आशीविषो यथा घोरः, मृगराज इव केशरी।
मत्त इव कुञ्जरः दन्ती, एवं बुद्धाः दुरासदाः॥1371॥
‘‘‘उल्कासितञ्च क्षिपितम्, अध्युपेक्ष्य माणवाः।
पदे पदं निक्षिपन्तः, उपेत बुद्धान्तिकम्॥1372॥
‘‘‘प्रतिसंलयनगुरुकाः, अल्पशब्दाः दुरासदाः।
दुरूपसङ्क्रमाः बुद्धाः, गुरवः भवन्ति सदेवकान्॥1373॥
‘‘‘यदाऽहं प्रश्नं पृच्छामि, प्रतिसम्मोदयामि वा।
अल्पशब्दाः तदा भवत, मुनिभूता इव तिष्ठत॥1374॥
‘‘‘यं सः देशयति सम्बुद्धः, क्षेमं निर्वाणप्राप्त्या।
तमेवार्थं **निशामयेत्**, सद्धर्मश्रवणं सुखम्’॥1375॥

जैसे भयानक सर्प, जंगली जानवरों के राजा सिंह और नशे से युक्त हाथी के समीप पहुँचना कठिन है, उसी प्रकार बुद्ध के समीप पहुँचना कठिन है॥1371॥

खाँसकर फेंकते हुए की तरह माणवों की उपेक्षा कर एक कदम रखते हुए बुद्ध के समीप पहुँचते हैं॥1372॥

एकान्त जीवी, गम्भीर, अल्पशब्द वाले दुर्लभ जिन और बुद्ध के समीप पहुचना कठिन है, ये देवताओं में महनीय होते हैं॥1373॥

मैत्रीपूर्ण बातचीत कर जब हम प्रश्न पूछेगें तब सब अल्पशब्द हो जाते हैं और मुनिभूत हो बैठें॥1374॥

वे शान्तिरूपी निर्वाण की प्राप्ति के लिए जो वह सम्बुद्ध उपदेश देते हैं, उस सुखद सद्धर्मश्रवण को सुनें॥1375॥

''उपसङ्कम्म सम्बुद्धं, सम्मोदिं मुनिना अहं।
तं कथं वीतिसारेत्वा, लक्खणे उपधारयिं॥1376॥
''लक्खणे द्वे च कङ्खामि, पस्सामि तिंसलक्खणे।
कोसोहितवत्थगुय्हं, इद्धिया दस्सयी मुनि॥1377॥
''जिव्हं निन्नामयित्वान, कण्णसोते च नासिके।
पटिमसि नलाटन्तं, केवलं छादयी जिनो॥1378॥
''तस्साहं लक्खणे दिस्वा, परिपुण्णे सब्यञ्जने।
बुद्धोति निट्ठं गन्त्वान, सह सिस्सेहि पब्बजिं॥1379॥
''सतेहि तीहि सहितो, पब्बजिं अनगारियं।
अद्धमासे असम्पत्ते, सब्बे पत्ताम्ह निब्बुतिं॥1380॥

''उपसङ्क्रम्य सम्बुद्धम्, सममोदे मुनिना अहम्।
तं कथं व्यतिसार्य, लक्षणानि उपधारयम्॥1376॥
''लक्षणे द्वे च काङ्क्षे, पश्यामि त्रिंशत्लक्षणानि।
कोशावहितवस्तुगुह्यम्, ऋद्ध्या अपश्यत् मुनिः॥1377॥
''जिह्वां **निम्नामय**, कर्णस्रोते च नासिके।
प्रत्यमृषत् ललाटन्तम्, केवलम् अच्छादयत् जिनः॥1378॥
''तस्याऽहं लक्षणानि दृष्ट्वा, परिपूर्णानि सर्वव्यञ्जनानि।
बुद्ध इति निष्ठां गत्वा, सह शिष्यैः प्राव्रजम्॥1379॥
''शतैः त्रिभिर्सहितः, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
अर्द्धमासे असम्प्राप्ते, सर्वे प्राप्तास्म निर्वृतिम्॥1380॥

सम्बुद्ध के समीप पहुँच कर मैं मुनि से अत्यन्त प्रसन्नता हुआ। समय व्यतीत कर कैसे मैंने उन लक्षणों को धारण किया॥1376॥

मैं दो लक्षणों की कामना करता हूँ तो तीस लक्षणों को देखता हूँ। जैसे अण्डकोश से ढका हुआ गुह्य स्थान हो उसी प्रकार ऋद्धिबल से मुनि देखते हैं॥1377॥

जिव्हा को झुका कर कान, नाक और ललाट को स्पर्शकर जिन ने समस्त को आच्छादित कर दिया॥1378॥

उनके परिपूर्ण लक्षणों और सर्वव्यञ्जनों को देखकर मैं शिष्यों के साथ निष्ठापूर्वक बुद्ध के समीप जाकर प्रव्रजित हुआ॥1379॥

तीन सौ के साथ अनागारिक हो प्रव्रजित हुआ और अर्धमास पूर्ण होते-होते ही हम सभी नें शान्ति को प्राप्त कर लिया॥1380॥

''एकतो कम्मं कत्वान, पुञ्ञक्खेत्ते अनुत्तरे।
एकतो संसरित्वान, एकतो विनिवत्तयुं॥1381॥
''गोपानसियो दत्वान, पूगधम्मे वसिं अहं।
तेन कम्मेन सुकतेन, अट्ठ हेतू लभामहं॥1382॥
''दिसासु पूजितो होमि, भोगा च अमिता मम।
पतिट्ठा होमि सब्बेसं, तासो मम न विज्जति॥1383॥
''ब्याधयो मे न विज्जन्ति, दीघायुं पालयामि च।
सुखुमच्छविको होमि, आवासे पत्थिते वसे [आवासे पत्ते वस्से (स्या॰), आवासेव ठिते वसे (क॰)]॥1384॥
''अट्ठ गोपानसी दत्वा, पूगधम्मे वसिं अहं।
पटिसम्भिदारहत्तञ्च, एतं मे अपरट्ठमं॥1385॥

''एकतः कर्म कृत्वा, पुण्यक्षेत्रे अनुत्तरे।
एकतः संसृत्य, एकतो **विन्यवर्त्तयम्**॥1381॥
''**<u>गोपानसीः</u>** दत्वा, पूगधर्मे अवसम् अहम्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, अष्ट हेतून् लभेऽहम्॥1382॥
''दिक्षु पूजितो भवामि, भोगाश्च अमिता मम।
प्रतिष्ठा भवामि सर्वेषाम्, त्रासो मम न विद्यते॥1383॥
''व्याधयो मे न विद्यन्ति, दीर्घायुं पालयामि च।
सूक्ष्मच्छविको भवामि, आवासे प्रार्थिते वसेत्॥1384॥
''अष्ट गोपानसीः दत्वा, पूगधर्मे अवसम् अहम्।
प्रतिसंविदर्हत्वञ्च, एतन्मे अपरष्टमम्॥1385॥

अनुत्तर पुण्यक्षेत्र में एकसाथ कर्म करके, एकसाथ संसरण कर हम एकसाथ उत्पन्न हो हुए॥1381॥

गोपानस (कड़ियों) को प्रदान कर मैं धर्मपरिषद में वास किया और उस सुकृतकर्म के कारण आठ हेतुओं को प्राप्त किया॥1382॥

मैं दशों दिशाओं में पूजित होता हूँ और मेरा भोग अमित (अल्प नहीं) है। सभी में मेरी प्रतिष्ठा है और मुझमें त्रास भी विद्यमान नहीं है॥1383॥

मुझमें व्याधि विद्यमान नहीं है और मैंने दीर्घ आयु को प्राप्त कर लिया है। अच्छी मुख छबी वाला हूँ और इच्छित आवास में रहता हूँ॥1384॥

आठ कड़ियों को देकर मैंने सद्धर्मपरिषद में वास किया। चार पटिसम्भिदाओं, अर्हत्व और अन्य आठ हेतुओं को प्राप्त किया॥1385॥

''सब्बवोसितवोसानो, कतकिच्चो अनासवो।
अट्ठगोपानसी नाम, तव पुत्तो महामुनि॥1386॥
''पञ्च थम्भानि दत्वान, पूगधम्मे वसिं अहं।
तेन कम्मेन सुकतेन, पञ्च हेतू लभामहं॥1387॥
''अचलो होमि मेत्ताय, अनूनङ्गो भवामहं।
आदेय्यवचनो होमि, न धंसेमि यथा अहं॥1388॥
''अभन्तं होति मे चित्तं, अखिलो होमि कस्सचि।
तेन कम्मेन सुकतेन, विमलो होमि सासने॥1389॥
''सगारवो सप्पतिस्सो, कतकिच्चो अनासवो।
सावको ते महावीर, भिक्खु तं वन्दते मुनि॥1390॥

''**सर्वव्युषितावसानः**, कृतकृत्य अनास्रवः।
अष्टगोपानसी नाम, तव पुत्रो महामुनि॥1386॥
''पञ्च स्तम्भानि दत्वा, पूगधर्मे अवसम् अहम्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, पञ्च हेतून् लभेऽहम्॥1387॥
''अचलो भवामि **मित्राय**, अनूनाङ्गो भवाम्यहम्।
आदेयवचनो भवामि, न ध्वंसे यथा अहम्॥1388॥
''अभ्रान्तं भवति मे चित्तम्, अखिलो भवामि कस्यचित्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, विमलो भवामि शासने॥1389॥
''सगौरवः **सप्रतीशः**, कृतकृत्य अनास्रवः।
श्रावकस्ते महावीर, भिक्षु त्वां वन्दते मुनि॥1390॥

सभी कर्मों को पूरा कर कृत-कृत्य हो अनास्रव हो गया। हे महामुनि अष्ठगोपानसी नाम का तापस आपका पुत्र है॥1386॥

पाँच स्तम्भों को देकर मैंने सद्धर्मपरिषद में वास किया। उस सुकृतकर्म के कारण मैंने पाँच हेतुओं का लाभ किया॥1387॥

मैं मैत्री में अचल हूँ और मैं सम्पूर्ण अंगों वाला हूँ। स्वागत वचनों वाला हूँ। अतः विनष्ट नहीं होता॥1388॥

मेरा चित्त अभ्रान्त हो गया है, मैं सम्पूर्ण हूँ, उस भली प्रकार किये गये कर्म के कारण मैं संघ में निर्मल हो गया हूँ॥1389॥

गौरव के साथ, सम्मानजनक, कृत-कृत्य, अनास्रव हो महावीर श्रावक मुनि! भिक्षु आपकी वन्दना करता है॥1390॥

''कत्वा सुकतपल्लङ्कं, सालायं पञ्ञपेसहं।
तेन कम्मेन सुकतेन, पञ्च हेतू लभामहं॥1391॥
''उच्चे कुले पजायित्वा, महाभोगो भवामहं।
सब्बसम्पत्तिको होमि, मच्छेरं मे न विज्जति॥1392॥
''गमने पत्थिते मय्हं, पल्लङ्को उपतिट्ठति।
सह पल्लङ्कसेट्ठेन, गच्छामि मम पत्थितं॥1393॥
''तेन पल्लङ्कदानेन, तमं सब्बं विनोदयिं।
सब्बाभिञ्ञाबलप्पत्तो, थेरो [सेलो (?)] वन्दति तं मुनि॥1394॥
''परकिच्चत्तकिच्चानि, सब्बकिच्चानि साधयिं।
तेन कम्मेन सुकतेन, पाविसिं अभयं पुरं॥1395॥

''कृत्वा सुकृतपर्यङ्कम्, शालायां प्रज्ञपेषहम्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, पञ्च हेतून् लभेऽहम्॥1391॥
''उच्चे कुले प्रजाय, महाभोगो भवाम्यहम्।
सर्वसम्पत्तिको भवामि, मात्सर्यं मे न विद्यति॥1392॥
''गमने प्रार्थिते मह्यम, पर्यङ्क उपतिष्ठति।
सह पर्यङ्कश्रेष्ठेन, गच्छामि मम प्रार्थितम्॥1393॥
''तेन पर्यङ्कदानेन, तमं सर्वं व्यनोदयम्।
सर्वाभिज्ञाबलप्राप्तः, स्थविरो वन्दति त्वां मुनि॥1394॥
''परकृत्यात्मकृत्यानि, सर्वकृत्यानि साधयम्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, प्राविशम् अभयं पुरम्॥1395॥

भली प्रकार से पल्लंग का निर्माण कर मैंने शाला में व्यवस्थित किया। उस भली प्रकार किये गये कर्म के कारण मैं पाँच हेतुओं का लाभ प्राप्त करता हूँ॥1391॥

मैं उच्च कुल में उत्पन्न हो महाभोगो को प्राप्त होता हूँ, सभी प्रकार की सम्पतियों को प्राप्त हूँ और मुझमें मात्सर्य (कंजूसपन) विद्यमान नहीं होता॥1392॥

गमन करते समय मेरी इच्छा मात्र से मेरे लिए श्रेष्ठ पलंग उपस्थित हो जाता है और मैं उस पलंग के साथ ही अपने प्रार्थित स्थान पर जाता हूँ॥1393॥

उस पलंग-दान के कारण मैं सभी प्रकार के अन्धकार को दूर करता हूँ और सभी अभिज्ञाबल को प्राप्त कर उन स्थविर मुनि की वन्दना करता हूँ॥1394॥

मैंने परकृत्यों, आत्मकृत्यों तथा सर्वकृत्यों को सम्पन्न किया। उन सुकृतकर्म के परिणाम स्वरूप मैंने अभयपुर (निर्वाणनगर) में प्रवेश किया॥1395॥

''परिनिट्ठितसालम्हि, परिभोगमदासहं।
तेन कम्मेन सुकतेन, सेट्ठत्तं अज्झुपागतो॥1396॥
''ये केचि दमका लोके, हत्थिअस्से दमेन्ति ये।
करित्वा कारणा नाना, दारुणेन दमेन्ति ते॥1397॥
''न हेवं त्वं महावीर, दमेसि नरनारियो।
अदण्डेन असत्थेन, दमेसि उत्तमे दमे॥1398॥
''दानस्स वण्णे कित्तेन्तो, देसनाकुसलो मुनि।
एकपञ्हं कथेन्तोव, बोधेसि तिसते मुनि॥1399॥
''दन्ता मयं सारथिना, सुविमुत्ता अनासवा।
सब्बाभिञ्ञाबलपत्ता, निब्बुता उपधिक्खये॥1400॥

''परिनिष्ठितशालायाम्, परिभोगमदामहम्।
तेन कर्मणा सुकृतेन, श्रेष्ठत्वम् अध्युपागतः॥1396॥
''ये केचिद् दमकाः लोके, हस्त्याश्वान् दमयन्ति ये।
कृत्वा कारणात् नाना, दारुणेन दमयन्ति ते॥1397॥
''न ह्येवं त्वं महावीर, अ**दमत्** नरनार्यः।
अदण्डेन अशस्त्रेण, अ**दमत्** उत्तमे दमे॥1398॥
''दानस्य वर्णान् कीर्त्तयन्, देशनाकुशलो मुनिः।
एकप्रश्नं कथयन्निव, अबोधीत् त्रिशतान् मुनिः॥1399॥
''दान्ताः वयं सारथिना, सुविमुक्ता अनास्रवाः।
सर्वाभिज्ञाबलप्राप्ता, निर्वृता उपाधिक्षयेत्॥1400॥

चारों ओर से सम्पूर्ण रूप से निर्मित शाल में मैंने परिभोग का दान दिया। इस सुकृतकर्म के परिणाम-स्वरूप श्रेष्ठत्व को प्राप्त किया॥1396॥

जो कुछ हस्ति और अश्व को संयत करने वाले हैं तथा उनका दमन करते है, उनको नाना प्रकार से कठोरता से संयत किया जाता है॥1397॥

हे महावीर! आप नर-नारियों को इस प्रकार संयत नहीं किया है। दण्डरहित, शस्त्ररहित हो उत्तम दम से ही संयमित किया है॥1398॥

उपदेशकुशल मुनि दान की कीर्ति का वर्णन करते हैं और वे एक प्रश्न को इस प्रकार कहते हैं कि तीन सौ मुनि उसका बोधन करते हैं॥1399॥

हमारा सारथी संयमित, सुविमुक्त, अनास्रव, सर्वभिज्ञाबल प्राप्त उपाधियों का क्षय करके निर्वाण प्राप्त है॥1400॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
अतिक्कन्ता भया सब्बे, सालादानस्सिदं फलं॥1401॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1402॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1403॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1404॥
इत्थं सुदं आयस्मा सेलो सपरिसो भगवतो सन्तिके इमा गाथायो अभासित्थाति।
सेलत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. सब्बकित्तिकत्थेरअपदानं

''कणिकारंव जलितं [जोतन्तं (सी०)], दीपरुक्खंव उज्जलं [जोतितं (स्या०)]।
ओसधिंव विरोचन्तं, विज्जुतं गगने यथा॥1405॥
''असम्भीतं अनुत्तासिं, मिगराजंव केसरिं।
ञाणालोकं पकासेन्तं, मद्दन्तं तित्थिये गणे॥1406॥

''शतसहस्र इतः कल्पे, यद् दानमददां तदा।
अतिक्रान्तः भयात् सर्वे, शालादानस्येदं फलम्॥1401॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1402॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1403॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1404॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् शैलः सपरिषदो भगवतः सान्तिके इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''कणिकारमिव ज्वलितम्, दीपवृक्षमिव उज्ज्वलम्।
ओसधिमिव विरोचन्तम्, विद्युतं गगने यथा॥1405॥
''असम्भीतम् अनुत्रासम्, मृगराजमिव केशरिम्।
ज्ञानालोकं प्रकाशयन्, मर्दन्तं तैर्थिकान् गणान्॥1406॥

सात हजारवें कल्प में जो मैंने दान दिया था उसके परिणामस्वरूप मैंने सभी प्रकार के भय को नष्ट कर दिया, यह शाला दान का ही सुपरिणाम है॥1401॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता है मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1402॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1403॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्ध शासन को पूर्ण किया॥1404॥

इस प्रकार आयुष्मान् शैल ने सपरिषद भगवान् के समीप इन गाथाओं को कहा-

कणिकार (फूलदार-वृक्ष) वृक्ष के समान चमकदार, दीपवृक्ष के समान उज्जवलित, औषधि के समान प्रकाशमान् और आकाश में चमकती हुई बिजली के समान॥1405॥

भय से मुक्त, निर्भीक मृगराज केसरी के समान अपने ज्ञान से लोक को प्रकाशित करने वाले भगवान् अन्य (दूसरे) मत के संस्थापक को रौदते हैं॥1406॥

''उद्धरन्तं इमं लोकं, छिद्दन्तं सब्बसंसयं।
गज्जन्तं [असम्भीतं (स्या॰), गच्छन्तं (क॰)] मिगराजंव, अद्दसं लोकनायकं॥1407॥
''जटाजिनधरो आसिं, ब्रह्मा उजु पतापवा।
वाकचीरं गहेत्वान, पादमूले अपत्थरिं॥1408॥
''काळानुसारियं गय्ह, अनुलिम्पिं तथागतं।
सम्बुद्धमनुलिम्पेत्वा, सन्थविं लोकनायकं॥1409॥
''समुद्धरसिमं लोकं, ओघतिण्ण [ओघतिण्णो (स्या॰ क॰)] महामुनि।
ञाणालोकेन जोतेसि, नावटं [पवरं (स्या॰), वजिर (पी॰)] ञाणमुत्तमं॥1410॥
''धम्मचक्कं [तुवं चक्कं (क॰)] पवत्तेसि, मद्दसे परतित्थिये।
उसभो जितसङ्गामो, सम्पकम्पेसि मेदनिं॥1411॥

''उद्धरन्तम् इमं लोकम्, छिन्दन्तं सर्वसंशयम्।
गर्जन्तं मृगराजमिव, अद्राक्षं लोकनायकम्॥1407॥
''जटाजिनधर आसम्, ब्रह्मा ऋजु प्रतापवान्।
वाकचीरं गृहीत्वा, पादमूले **अप्रास्तार्षम्**॥1408॥
''कालानुसार इयं गृह्य, **अन्वलिपं** तथागतम्।
सम्बुद्धमनुलिम्प्य, समतुस्तोमं लोकनायकम्॥1409॥
''**समुदधरत्** इमं लोकम्, ओघतीर्णो महामुनिः।
ज्ञानालोकेन अद्योतत्, नावटं/प्रवरं ज्ञानमुत्तमम्॥1410॥
''धर्मचक्रं प्रावर्त्तयत्, मर्द्दसे परतैर्थिकान्।
वृषभः जितसङ्ग्रामः, सम्प्राकम्पयत् मेदनीम्॥1411॥

इस लोक के उद्धार के लिए, सब प्रकार के संशय को नष्ट करने वाले और मृगराज के सदृश गर्जना करने वाले लोकनायक को देखा॥1407॥

जटाधारी, विशाल, सीधा, प्रतापवान्, वल्कल चीवर को धारण कर चरणों तक आच्छादित किए हुए हैं॥1408॥

काल के अनुसार तथागत को अभिसिञ्चित किया और सम्बुद्ध को अभिसिञ्चित कर तथागत का स्तवन किया॥1409॥

लोक में ऊपर उठे हुए, आसक्ति रूपी बाढ़ को पार किये हुए महामुनि अपने श्रेष्ठ उत्तम ज्ञान से लोक को प्रकाशित करते हैं॥1410॥

धर्मचक्र का प्रवर्तन किया, अन्य सम्प्रदाय के लोगों का मर्दन किया, संग्राम को जीतने वाले श्रेष्ठ ने सम्पूर्ण पृथ्वी कँपित किया॥1411॥

''महासमुद्दे ऊमियो, वेलन्तम्हि पभिज्जरे।

तथेव तव ञाणम्हि, सब्बदिट्ठी पभिज्जरे॥1412॥

''सुखुमच्छिकजालेन, सरम्हि सम्पतानिते।

अन्तोजालिकता [जालगता (सी॰)] पाणा, पीळिता होन्ति तावदे॥1413॥

''तथेव तित्थिया लोके, पुथुपासण्डनिस्सिता [मूळ्हा सच्चविनिस्सटा (स्या॰), मुट्ठसच्चविनिस्सटा (क॰)]।

अन्तोञाणवरे तुय्हं, परिवत्तन्ति मारिस॥1414॥

''पतिट्ठा वुय्हतं ओघे, त्वञ्हि नाथो अबन्धुनं।

भयट्टितानं सरणं, मुत्तित्थीनं परायणं॥1415॥

''एकवीरो असदिसो, मेत्ताकरुणसञ्चयो [सञ्ञुतो (स्या॰)]।

असमो सुसमो सन्तो [सुसीलो असमो सन्तो (सी॰), पञ्ञवा युत्तचागो च (स्या॰)], वसी तादी जितञ्जयो॥1416॥

''महासमुद्रे ऊर्मयः, **वेलान्ते** प्रभिद्यते।

तथैव तव ज्ञाने, सर्वदृष्टिः प्रभिद्यते॥1412॥

''सूक्ष्ममक्षिकजालेन, सरे सम्प्रतानिते।

अन्तर्जालगता प्राणाः, पीडिता भवन्ति तावदेव॥1413॥

''तथैव तैर्थिकाः लोके, प्रथुपाषण्डनिश्रिताः।

अन्तर्ज्ञानवरे तुभ्यम्, परिवर्त्तन्ति मार्ष॥1414॥

''प्रतिष्ठा **वहन्** ओघे, त्वं हि नाथ अबन्धूनाम्।

भयार्दितानां शरणम्, मुक्तस्त्रीणां परायणम्॥1415॥

''एकवीर असदृशः, मैत्रीकरुणसञ्चयः।

असमः सुसमः शान्तः, अवसत् तादृक् जितञ्जयः॥1416॥

जिस प्रकार महासमुद्र में लहरें अपनी समयसीमा पर आकर नष्ट हो जाती हैं उसी प्रकार आपके ज्ञान में समस्त मिथ्यादृष्टि नष्ट हो जाती है॥1412॥

जिस प्रकार मछली पकड़ने वाले सूक्ष्म जाल से फैलाए सरोवर में उस जाल में पड़ने पर प्राणी पीड़ित होते हैं॥1413॥

उसी प्रकार लोक में पृथक-पृथक धर्म पर आश्रित अन्य अनुयायी हैं। हे मान्यवर तुम्हारे श्रेष्ठज्ञान से अपने अन्तर्जाल को परिवर्तित करते हैं॥1414॥

बाढ़ से निकालकर किनारे पर प्रतिष्ठित करने वाले नाथ, बन्धुमान् आप ही हैं, भयदर्शी लोगों के शरणागत और स्त्रियों को मुक्त करने में तत्पर आप ही हैं॥1415॥

तब एकवीर, अनुपम, मैत्री और करुणा के सञ्चय, अप्रतिम, सुमन, शान्त, इन्द्रियों को वस में किये हुए तायि जितञ्जय वहाँ वास कर रहे थे॥1416॥

''धीरो विगतसम्मोहो, अनेजो अकथंकथी।
तुसितो [वुसितो (सी॰)] वन्तदोसोसि, निम्मलो संयतो सुचि॥1417॥
''सङ्गातिगो हतमदो [गतमदो (स्या॰), तमनुदो (क॰)], तेविज्जो तिभवन्तगो।
सीमातिगो धम्मगरु, गतत्थो हितवब्भुतो [हितवप्पथो (सी॰ स्या॰)]॥1418॥
''तारको त्वं यथा नावा, निधीवस्सासकारको।
असम्भीतो यथा सीहो, गजराजाव दप्पितो॥1419॥
''थोमेत्वा दसगाथाहि, पदुमुत्तरं महायसं।
वन्दित्वा सत्थुनो पादे, तुण्ही अट्ठासहं तदा॥1420॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
भिक्खुसङ्घे ठितो सत्था, इमा गाथा अभासथ॥1421॥

''धीरो विगतसम्मोहः, अनेज अकथंकथी।
तुषितो वमितदोषोऽसि, निर्मलः संयतः शुचिः॥1417॥
''सङ्गातिगो हतमदः, त्रैविद्यः त्रिभवान्तगः।
सीमातिगः धर्मगुरुः, गतार्थो **हितावद्भुतः**॥1418॥
''तारकस्त्वं यथा नावा, निधीरिवाश्वासकारकः।
असम्भीतो यथा सिहः, गजराज इव दर्पितः॥1419॥
''स्तुत्वा दशगाथाभिः, पद्मोत्तरं महायशम्।
वन्दित्वा शास्त्रे पादौ, तूष्णीम् अस्थामहं तदा॥1420॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
भिक्षुसङ्घे स्थितः शास्ता, इमा गाथा अभाषत॥1421॥

धीर, मोह-माया से मुक्त, तृष्णा-विहीन, सन्देहों से मुक्त, सन्तुष्ट, दोषपरित्यक्त, निर्मल, संयत, शुचि हो॥1417॥

संगायन करने वाला, मदों का मर्दन करने वाला, तीन विद्याओं को जानने वाला, तीन भवों को पार किया, सीमा को लांघ चुका, धर्म गुरु और अर्थ को प्राप्त किया हुआ॥1418॥

तुम नाव से पार कराने वाले जैसे हो, निधियों के समान आश्वस्त कराने वाले हो, निर्भय सिंह के समान तथा मदमत्त गजराज हो॥1419॥

महान् यशस्वी, पद्मोत्तर की दश गाथाओं से स्तुति की और शास्ता को दोनों पैरों की वन्दना कर मैं वहीं चुप हो स्थित हो गया॥1420॥

पद्मोत्तर, लोकविद्, आहुतियों के ग्रहणकर्ता शास्ता ने भिक्षुसंघ में स्थित हो इन गाथाओं को कहा-॥1421॥

‘‘‘यो मे सीलञ्च आणञ्च, सद्धम्मञ्चापि वण्णयि [धम्मञ्चापि पकित्तयि (सी॰ स्या॰)]।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1422॥
‘‘‘सट्ठि कप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
अञ्ञे देवेभिभवित्वा, इस्सरं कारयिस्सति॥1423॥
‘‘‘सो पच्छा पब्बजित्वान, सुक्कमूलेन चोदितो।
गोतमस्स भगवतो, सासने पब्बजिस्सति॥1424॥
‘‘‘पब्बजित्वान कायेन, पापकम्मं विवज्जिय।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो’॥1425॥
‘‘यथापि मेघो थनयं, तप्पेति मेदिनिं इमं।
तथेव त्वं महावीर, धम्मेन तप्पयी ममं॥1426॥

‘‘‘यो मे शीलञ्च ज्ञानञ्च, सद्धर्मञ्चापि अवर्णयत्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1422॥
‘‘‘षष्टि कल्पसहस्राणि, देवलोके रंस्यति।
अन्यान् **देवान् अभिभूय**, ऐश्वर्यं कारयिष्यति॥1423॥
‘‘‘सः पश्चात् प्रव्रज्य, शुक्लमूलेन चोदितः।
गौतमस्य भगवतः, शासने प्रव्रजिष्यति॥1424॥
‘‘‘प्रव्रज्य कायेन, पापकर्म विवर्ज्य।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः’॥1425॥
‘‘यथापि मेघः स्तनयम्, तर्पयति मेदिनीम् इमाम्।
तथैव त्वं महावीर, धर्मेन अतर्पयत् माम्॥1426॥

जिसने मेरे शील, ज्ञान और सद्धर्म का वर्णन किया है, मैं उसकी कीर्ति का गान करुँगा, मेरे एसे वचनों को सुनो॥1422॥

साठ हजार कल्पों तक वह देवलोक में रमण करेगा और अन्य देवताओं को अभिभूत कर उनका स्वामी होगा॥1423॥

वह बाद में शुक्लमूल के (कुशलकर्मों) उदित होने पर प्रव्रजित होकर भगवान् गौतम के शासन में प्रव्रजित होगा॥1424॥

प्रव्रजित होकर काय के पाप कर्म को त्यागकर सभी आस्रवों को जान कर अनास्रव हो निर्वाण को प्राप्त करेगा॥1425॥

जिस प्रकार मेघ गरजता है और पृथ्वी सन्तुष्ट होती है, उसी प्रकार हे महावीर आपने मुझे धर्म से सन्तुष्ट किया॥1426॥

''सीलं पञ्ञञ्च धम्मञ्च, थवित्वा लोकनायकं।
पत्तोम्हि परमं सन्तिं, निब्बानं पदमच्चुतं॥1427॥
''अहो नून स भगवा, चिरं तिट्ठेय्य चक्खुमा।
अञ्ञातञ्च विजानेय्युं, फुसेय्युं [अञ्ञातञ्चापि जानेय्य, पस्सेय्य (क॰)] अमतं पदं॥1428॥
''अयं मे पच्छिमा जाति, भवा सब्बे समूहता।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥1429॥
''सतसहस्सितो कप्पे, यं बुद्धमभिथोमयिं
दुग्गतिं नाभिजानामि, कित्तनाय इदं फलं॥1430॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1431॥

''शीलं प्रज्ञाञ्च धर्मञ्च, स्तुत्वा लोकनायकम्।
प्राप्तोस्मि परमं शान्तिम्, निर्वाणं पदमच्युतम्॥1427॥
''अहो नून स भगवान्, चिरं तिष्ठेत् चक्षुष्मान्।
अज्ञातञ्च विजानीयुः, **स्पृशेयुः** अमृतं पदम्॥1428॥
''अयं मे पच्छिमा जातिः, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥1429॥
''शतसहस्र इतः कल्पे, यं बुद्धमभ्यतुस्तोममयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, कीर्त्तनस्य इदं फलम्॥1430॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
सर्वास्रवाः परिक्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1431॥

शील से, प्रज्ञा से, और धर्म से लोकनायक की स्तुति कर परम शान्ति रूपी अच्युतपद निर्वाण को प्राप्त किया॥1427॥

निश्चय ही वह चक्षुमान् भगवान् चिरकाल तक यहाँ ठहरे और अज्ञात को जानकर अमृत पद का स्पर्श किया॥1428॥

सभी भव-समूह में यह मेरा अन्तिम जन्म है और मैं सभी आस्रवों का ज्ञान प्राप्त कर अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥1429॥

सौ हजारवें कल्प में जो मैंने बुद्ध की स्तुति की थी यह उस कीर्ति-गान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1430॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1431॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1432॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1433॥

इत्थं सुदं आयस्मा सब्बकित्तिको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सब्बकित्तिकत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. मधुदायकत्थेरअपदानं

''सिन्धुया नदिया तीरे, सुकतो अस्समो मम।

तत्थ वाचेमहं सिस्से, इतिहासं सलक्खणं॥1434॥

''धम्मकामा विनीता ते, सोतुकामा सुसासनं।

छळङ्गे पारमिप्पत्ता, सिन्धुकूले वसन्ति ते॥1435॥

''उप्पातगमने चेव, लक्खणेसु च कोविदा।

उत्तमत्थं गवेसन्ता, वसन्ति विपिने तदा॥1436॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1432॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1433॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सर्वकीर्त्तिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''सिन्धोः नद्यास्तीरे, सुकृत आश्रमः मम।

तत्र वाचयाम्यहं शिष्यान्, इतिहासं सलक्षणम्॥1434॥

''धर्मकामाः विनीताः ते, श्रोतुकामाः सुशासनम्।

षडङ्गे पारमिप्राप्ताः, सिन्धुकूले वसन्ति ते॥1435॥

''उत्पातगमने चैव, लक्षणेषु च कोविदाः।

उत्तमार्थं **गवेषन्तः**, वसन्ति विपिने तदा॥1436॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1432॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1433॥

इस प्रकार आयुष्मान सर्वकीर्तिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

सिन्धु नदी के तट पर सुकृत रूप से बना हुआ मेरा आश्रम था, वहाँ पर मैं अपने शिष्यों को लक्षण सहित इतिहास का वाचन करता था॥1434॥

वे धर्मप्रिय, नियमित जीवन के अभ्यस्त, सुशासन को सुनने की इच्छा वाले, पारमिता के छः अंगों को प्राप्त किये हुए वे सिन्धु नदी के तट पर वास करते हैं॥1435॥

तब ऊपर गमन करने में, लक्षणों में नैपुण्य को प्राप्त वे उत्तम अर्थ की गवेषणा करते हुए वन में वास कर रह थे॥1436॥

''सुमेधो नाम सम्बुद्धो, लोके उप्पज्जि तावदे।
अम्हाकं अनुकम्पन्तो, उपागच्छि विनायको॥1437॥
''उपागतं महावीरं, सुमेधं लोकनायकं।
तिणसन्थारकं कत्वा, लोकजेट्ठस्सदासहं॥1438॥
''विपिनातो मधुं गय्ह, बुद्धसेट्ठस्सदासहं।
सम्बुद्धो परिभुञ्जित्वा, इदं वचनमब्रवि॥1439॥
'''यो तं अदासि मधुं मे, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1440॥
'''इमिना मधुदानेन, तिणसन्थारकेन च।
तिंस कप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति॥1441॥

''सुमेधो नाम सम्बुद्धः, लोके उपपद्यत् तावदेव।
अस्माकम् अनुकम्पन्, उपागच्छद् विनायकः॥1437॥
''उपागतं महावीरम्, सुमेधं लोकनायकम्।
तृणसंस्तारकं कृत्वा, लोकज्येष्ठायादामहम्॥1438॥
''विपिनतो मधु ग्रह्य, बुद्धश्रेष्ठायादामहम्।
सम्बुद्धः परिभुज्य, इदं वचनमब्रवीत्॥1439॥
'''यस्त्वम् अदासीः मधु मे, प्रसन्नः स्वाभ्याम् पाणिभ्याम्।
त्वामहं कीर्त्तयिष्यामि, श्रृणत मम भाषमाणस्य॥1440॥
'''अनेन मधुदानेन, तृणसंस्तारकेन च।
त्रिंश कल्पसहस्राणि, देवलोके रमिष्यति/रंस्यति॥1441॥

उस समय लोक में सुमेध नाम के सम्बुद्ध उत्पन्न हुए, तब हमारे ऊपर अनुकम्पा करते हुए विनायक हमारे समीप आए॥1437॥

मैंने समीप आये हुए सुमेध, लोकनायक महावीर के लिए तिनके का बिछौना बनाकर लोकज्येष्ठ को दिया॥1438॥

मैंने जंगल से मधु को ग्रहण कर बुद्धश्रेष्ठ को प्रदान किया, तब सम्बुद्ध ने उसका उपभोग कर यह वचन को कहा-॥1439॥

ये जो तुमने प्रसन्नमन से दोनों हाथों से मुझे मधु प्रदान किया है, मैं तुम्हारी कीर्ति का गान करूँगा मेरे एसे वचनों को सुनो॥1440॥

इस मधु और तिनके का बिछौना दान देने के कारण वह तीस हजार कल्पों तक देवलोक में वास करेगा॥1441॥

‘‘‘तिंस कप्पसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1442॥
‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो॥1443॥
‘‘‘देवलोका इधागन्त्वा, मातुकुच्छिं उपागते।
मधुवस्सं पवस्सित्थ, छादयं मधुना महिं’॥1444॥
‘‘मयि निक्खन्तमत्तम्हि, कुच्छिया च सुदुत्तरा।
तत्रापि मधुवस्सं मे, वस्सते निच्चकालिकं॥1445॥
‘‘अगारा अभिनिक्खम्म, पब्बजिं अनगारियं।
लाभी अन्नस्स पानस्स, मधुदानस्सिदं फलं॥1446॥

‘‘‘त्रिंश कल्पसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1442॥
‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः॥1443॥
‘‘‘देवलोकात् इहागत्य, मातृकुक्षिम् उपागते।
मधुवर्षां **प्रावर्षिष्ट**, **अच्छादयिषं** मधुना महिम्’॥1444॥
‘‘मयि निष्क्रान्तमात्रे, कुक्ष्या च सुदुस्तराः।
तत्रापि मधुवर्षाम् मे, वर्षते नित्यकालिकम्॥1445॥
‘‘आगारात् अभिनिष्क्रम्य, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
लाभी अन्नस्य पानस्य, मधुदानस्येदं फलम्॥1446॥

तीस हजार कल्प में इक्ष्वाककुल में उत्पन्न हो कर गौतम नाम के गोत्र से लोक में शास्ता होगा॥1442॥

उनके धर्म में उत्तराधिकारी, धर्म के निमित्त औरस पुत्र सभी आस्रवों का ज्ञान प्राप्त कर अनास्रव हो निर्वाण को प्राप्त करेगा॥1443॥

देवलोक से इस लोक में आकर माता के गर्भ के समीप जाने पर मधु की वर्षा हुई और सम्पूर्ण पृथ्वी को मधु से आच्छादित कर लिया॥1444॥

बड़ी कठिनाई से माता के गर्भ से निकलने के साथ ही वहाँ पर भी मेरे लिए नित्यकालिक (देरतक) मधु-वर्षा हुई॥1445॥

घर से निकलकर मैं बेघर हो प्रव्रजित हुआ और अन्न का पानी का लाभी हुआ। यह मधु-दान का ही सुपरिणाम है॥1446॥

''सब्बकामसमिद्धोहं, भवित्वा देवमानुसे।
तेनेव मधुदानेन, पत्तोम्हि आसवक्खयं॥1447॥
''वुट्ठम्हि देवे चतुरङ्गुले तिणे, सम्पुप्फिते [सुपुप्फिते (स्या॰)] धरणीरुहे सञ्छन्ने [वप्पदेसे (स्या॰)]।
सुञ्ञे घरे मण्डपरुक्खमूलके, वसामि निच्चं सुखितो अनासवो॥1448॥
''मज्झे महन्ते हीने च [मज्झे मय्हं भवा अस्सु (स्या॰ पी॰ क॰)], भवे सब्बे अतिक्कमिं [ये भवे समतिक्कमिं (स्या॰ क॰), यो भवेसु पकित्तयि (क॰)]।
अज्ज मे आसवा खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1449॥
''तिंसकप्पसहस्सम्हि, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, मधुदानस्सिदं फलं॥1450॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1451॥

''सर्वकामसमृद्धोऽहम्, भूत्वा देवमानुषे।
तेनैव मधुदानेन, प्राप्तोस्मि आस्रवक्षयम्॥1447॥
''व्युत्तिष्ठे देवे चतुरङ्गुले तृणे, सम्पुष्पिते धरणीरुहे सञ्छन्ने।
शून्ये गृहे मण्डपवृक्षमूलके, वसामि नित्यं सुखित अनास्रवः॥1448॥
''मध्ये महान्ते हीने च, भवान् सर्वान् अत्यक्राम्यम्।
अद्य मे आस्रवाः क्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1449॥
''त्रिंशत्कल्पसहस्रे, यत् दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, मधुदानस्येदं फलम्॥1450॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
सर्वास्रवाः परिक्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1451॥

मैंने देव-मनुष्यों सभी कामों को सिद्ध कर लिया। ये उस मधु दान का ही फल है कि मैंने आस्रव-क्षय को प्राप्त किया॥1447॥

वर्षा के समय पुष्पित चार अङ्गुल तृण पृथ्वी को आच्छादित किये है। वृक्ष मूल के मण्डप में शून्य गृह में मैंने अनास्रव हो सुखपूर्वक नित्य वास किया॥1448॥

मध्य,उत्तम और हीन सभी भवों का मैंने अतिक्रमण कर लिया और आज मेरा आस्रव क्षीण हो गया है अब मेरा पुर्नजन्म नहीं होगा॥1449॥

तीस हजार कल्प में जो दान दिया था, तब मैं दुर्गति को नहीं जानता यह मधु- दान का ही सुपरिणाम है॥1450॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और मेरा समस्त भव जड़ से उखाड़ दिया गया है तथा सर्वास्रवों से परिक्षीण मेरे लिए अब कोई पुनर्भव शेष नहीं॥1451॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1452॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1453॥

इत्थं सुदं आयस्मा मधुदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

मधुदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. पदुमकूटागारियत्थेरअपदानं

''पियदस्सी नाम भगवा, सयम्भू लोकनायको।

विवेककामो सम्बुद्धो, समाधिकुसलो मुनि॥1454॥

''वनसण्डं समोगय्ह, पियदस्सी महामुनि।

पंसुकूलं पत्थरित्वा, निसीदि पुरिसुत्तमो॥1455॥

''मिगलुद्दो पुरे आसिं, अरञ्ञे [विपिने (सी०), इरिने (स्या० क०)] कानने अहं।

पसदं मिगमेसन्तो, आहिण्डामि अहं तदा॥1456॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1452॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1453॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् मधुदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''प्रियदर्शी नाम भगवान्, स्वयम्भू लोकनायकः।

विवेककामः सम्बुद्धः, समाधिकुशलो मुनिः॥1454॥

''वनषण्डं समवगाह्य, प्रियदर्शी महामुनिः।

पांशुकूलं प्रस्तार्य, न्यसीदत् पुरुषोत्तमः॥1455॥

''मृगलुब्धः पुरे आसम्, अरण्ये कानने अहम्।

पृषन्त मृगमेषमाणः, आहिण्डामि अहं तदा॥1456॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1452॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1453॥

इस प्रकार आयुष्मान् मधुदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

प्रियदर्शी नामक एकान्तप्रिय, समाधिकुशल, लोकनायक, मुनि, सयम्भू, तथा सम्बुद्ध भगवान् हुए॥1454॥

प्रियदर्शी, महामुनि श्रेष्ठ मनुष्य गहरे वन में जाकर अपने चीवर को फैलकर वहाँ बैठे॥1455॥

पूर्व में मैं घने जंगल में शिकारी था तब मैं मृगविशेष और भेड़ की खोज में इधर-उधर घूमता था॥1456॥

''तत्थद्दसासिं सम्बुद्धं, ओघतिण्णमनासवं।
पुप्फितं सालराजंव, सतरंसिंव उग्गतं॥1457॥
''दिस्वानहं देवदेवं, पियदस्सिं महायसं।
जातस्सरं समोगय्ह, पदुमं आहरिं तदा॥1458॥
''आहरित्वान पदुमं, सतपत्तं मनोरमं।
कूटागारं करित्वान, छादयिं पदुमेनहं॥1459॥
''अनुकम्पको कारुणिको, पियदस्सी महामुनि।
सत्तरत्तिन्दिवं बुद्धो, कूटागारे वसी जिनो॥1460॥
''पुराणं छड्डयित्वान, नवेन छादयिं अहं।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, अट्ठासिं तावदे अहं॥1461॥

''तत्राद्राक्षं सम्बुद्धम्, ओघतीर्णमनास्रवम्।
पुष्पितं शालराजमिव, सप्तरश्मीव उद्गतम्॥1457॥
''दृष्ट्वाहं देवदेवम्, प्रियदर्शिनं महायशम्।
जातस्वरं समवगाह्य, पद्मम् आहरं तदा॥1458॥
''आहित्य पद्मम्, शतपत्रं मनोरमम्।
कूटागारं कृत्वा, **अचिच्छादयं** पद्मेनाहम्॥1459॥
''अनुकम्पकः कारुणिकः, प्रियदर्शी महामुनिः।
सप्तरात्रिन्दिवं बुद्धः, कूटागारे अवसत् जिनः॥1460॥
''पुराणं छर्दयित्वा, नवेन अच्छादयिषम् अहम्।
अञ्जलिं प्रगृह्य, अस्थां **तावदेव** अहम्॥1461॥

(आस्रवों की) बाढ़ पार गये, अनास्रव पुष्पित शालराज वृक्ष के सदृश और सप्तरश्मि (सूर्य) के समान उदित हुए सम्बुद्ध को वहाँ मैंने देखा॥1457॥

तब देवों के देव महान् यशस्वी, प्रियदर्शी को देखकर मैंने जातसर (प्राकृतिक झील) से पद्म लाया..॥1458॥

तब शतपत्र (कमल) के मनोरम पुष्पों को लाकर तथा कूटागार का निर्माण कर मैंने पद्म से उसका छादन किया॥1459॥

अनुकम्पा करने वाले, कारुणिक, प्रियदर्शी महामुनि जिन बुद्ध ने सात दिन और रात कूटागार में वास किया॥1460॥

पुराने को छोड़कर मैंने नवीन पुष्पों द्वारा छादन किया और मैं अञ्जलिबद्ध होकर उनके सामने खड़ा हो गया॥1461॥

''वुट्ठहित्वा समाधिम्हा, पियदस्सी महामुनि।
दिसं अनुविलोकेन्तो, निसीदि लोकनायको॥1462॥
''तदा सुदस्सनो नाम, उपट्ठाको महिद्धिको।
चित्तमञ्ञाय बुद्धस्स, पियदस्सिस्स सत्थुनो॥1463॥
''असीतिया सहस्सेहि, भिक्खूहि परिवारितो।
वनन्ते सुखमासीनं, उपेसि लोकनायकं॥1464॥
''यावता वनसण्डम्हि, अधिवत्था च देवता।
बुद्धस्स चित्तमञ्ञाय, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1465॥
''समागतेसु यक्खेसु, कुम्भण्डे सहरक्खसे।
भिक्खुसङ्घे च सम्पत्ते, गाथा पब्याहरी [सब्याहरी (स्या॰), माब्याहरी (सी॰)]
जिनो॥1466॥

''व्युत्थाय समाधेः, प्रियदर्शी महामुनिः।
दिशम् अनुविलोकयन्, न्यसीदत् लोकनायकः॥1462॥
''तदा सुदर्शनो नाम, उपस्थाको महर्द्धिकः।
चित्तमाज्ञाय बुद्धस्य, प्रियदर्शिनः शास्त्रे॥1463॥
''असीत्या सहस्रैः, भिक्षुभिः परिवारितः।
वनान्ते सुखमासीनम्, उपायात् लोकनायकम्॥1464॥
''यावत् वनसण्डे, **अधिवक्त्राश्च** देवताः।
बुद्धस्य चित्तमाज्ञाय, सर्वे **सन्न्यपतंस्त**दा॥1465॥
''समागतेषु यक्षेषु, **कुम्भाण्डे सहराक्षसे**।
भिक्षुसङ्घे च सम्प्राप्ते, गाथा प्राव्याहरत् जिनः॥1466॥

लोकनायक, प्रियदर्शी महामुनि समाधि से उठकर दिशाओं का अवलोकन कर बैठ गये॥1462॥

तब सुदर्शन नाम का महाऋद्धिवान् सेवक प्रियदर्शी, शास्ता बुद्ध के चित्त को जानकर.... ॥1463॥

अस्सी हजार भिक्षुओं से परिवारित वन के मध्य में सुखपूर्वक आसीन लोकनायक के समीप पहुँचा॥1464॥

तब सम्पूर्ण वनखण्ड में रहने वाले सभी देवता बुद्ध के चित्त को जानकर वहाँ पर एकत्रित हुए॥1465॥

उसमें यक्ष, राक्षस, कुम्भण्ड लोग एकत्रित हुए और उन भिक्षुसंघ को प्राप्त जनों को जिन ने गाथाएँ कहीं॥1466॥

‘‘‘यो मं सत्ताहं पूजेसि, आवासञ्च अकासि मे।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1467॥
‘‘‘सुदुद्दसं सुनिपुणं, गम्भीरं सुप्पकासितं।
ञाणेन कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1468॥
‘‘‘चतुद्दसानि कप्पानि, देवरज्जं करिस्सति।
कूटागारं महन्तस्स [ब्रहं तस्स (सी॰ स्या॰)], पद्मपुप्फेहि छादितं॥1469॥
‘‘‘आकासे धारयिस्सति, पुप्फकम्मस्सिदं [पुब्बकम्मस्सिदं (स्या॰)] फलं।
चतुब्बीसे [चतुद्दसे (स्या॰)] कप्पसते, वोकिण्णं संसरिस्सति॥1470॥
‘‘‘तत्थ पुप्फमयं ब्यम्हं, आकासे धारयिस्सति।
यथा पदुमपत्तम्हि, तोयं न उपलिम्पति॥1471॥

‘‘‘यो मां सप्ताहम् अपूजयत्, आवासञ्च अकार्षीत् मे।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1467॥
‘‘‘सुदुर्दशं सुनिपुणम्, गम्भीरं सुप्रकाशितम्।
ज्ञानेन कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणसस्य॥1468॥
‘‘‘चतुर्दशानि कल्पानि, देवराज्यं करिष्यति।
कूटागारं महान्तस्य, पद्मपुष्पैः छादितम्॥1469॥
‘‘‘आकाशे धारयिष्यति, पुष्पकर्मणा इदं फलम्।
चतुर्विंशे कल्पशते, व्याकीर्णं संसरिष्यति॥1470॥
‘‘‘तत्र पुष्पमयं विमानम्, आकाशे धारयिष्यति।
यथा पद्मपत्रे, तोयं न उपलिम्पति॥1471॥

जिसने सप्ताह भर मेरी पूजा की और मेरे लिए आवास का निर्माण कराया, मैं उसकी कीर्ति का गान करूँगा, मेरे एसे वचनो को सुनो॥1467॥

कठिनाई से देखा जाने वाला, निपुण, गम्भीर, अच्छी तरह प्रकाशित ज्ञान की कीर्ति को मैं बतलाउँगा। मेरे एसे वचनों को सुनो॥1468॥

चौदह कल्पों तक वह देवताओं में राज्य करेगा और वह पद्मपुष्प से आच्छादित विशाल कूटागार को॥1469॥

आकाश में धारण करेगा और चौबीस सौवें कल्प में वह अन्य भव में संसरण करेगा, यह पुष्पकर्म का ही सुपरिणाम है॥1470॥

वहाँ वह आकाश में पुष्पमय विमान को धारण करेगा और जैसे कमलपत्र पर जल लिम्पित नहीं होता॥1471॥

‘‘‘तथेवीमस्स ञाणम्हि, किलेसा नोपलिम्परे।
मनसा विनिवट्टेत्वा, पञ्च नीवरणे अयं॥1472॥
‘‘‘चित्तं जनेत्वा नेक्खम्मे, अगारा पब्बजिस्सति।
ततो पुप्फमये ब्यम्हे, धारेन्ते [पुप्फमयं ब्यम्हं, धारेन्तं (स्या॰ क॰)]
निक्खमिस्सति॥1473॥
‘‘‘रुक्खमूले वसन्तस्स, निपकस्स सतीमतो।
तत्थ पुप्फमयं ब्यम्हं, मत्थके धारयिस्सति॥1474॥
‘‘‘चीवरं पिण्डपातञ्च, पच्चयं सयनासनं।
दत्वान भिक्खुसङ्घस्स, निब्बायिस्सतिनासवो’॥1475॥
‘‘कूटागारेन चरता [चरणा (सी॰ पी॰ क॰), चरिते (स्या॰)], पब्बज्जं अभिनिक्खमिं।
रुक्खमूले वसन्तम्पि [वसन्तम्हि (सी॰), वसतोपि (?)], कूटागारं धरीयति॥1476॥

‘‘‘तथैव अस्य याने, क्लेशाः नोपलिम्प्यते।
मनसा विनिवर्त्य, पञ्च नीवरणानि अयम्॥1472॥
‘‘‘चित्तं जनयित्वा नैष्कर्म्ये, आगारात् प्रव्रजिष्यति।
ततो पुष्पमये विमाने, धारयन्तं निष्क्रमिष्यति॥1473॥
‘‘‘वृक्षमूले वसतः, न्यपकस्य स्मृतीमतः।
तत्र पुष्पमयं विमानम्, मस्तके धारयिष्यति॥1474॥
‘‘‘चीवरं पिण्डपातञ्च, प्रत्ययं शयनासनम्।
दत्वा भिक्षुसङ्घाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः’॥1475॥
‘‘कूटागारेन च रताः, प्रव्रज्याम् अभिन्याक्रामम्।
वृक्षमूले वसन्तमपि, कूटागारं धारयति॥1476॥

वैसे ही इस विमान में उसे क्लेश लिम्पित नहीं करते। तब मन से पाँच नीवरणों को हँटाकर यह॥1472॥

चित्त को संसार त्याग में लगाकर घर से बेघर हो प्रव्रजित होगा। भावना उत्पन्न करके घर छोड़कर प्रव्रजित होगा। वहाँ से पुष्पमय विमान को धारण कर निकल जायेगा॥1473॥

वहाँ वृक्ष के मूल में वास करते हुए, बुद्धिमान्, स्मृतिमान पुष्पमय विमान को मस्तक पर धारण करेगा॥1474॥

चीवर, पिण्डपात और शयनासन सभी आवश्यकता की वस्तुओं को भिक्षुसंघ को प्रदान कर अनास्रव हो निवृत हो जायेगा॥1475॥

कूटागार से निकलकर गृहत्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण की और वृक्ष मूल में वास करते हुए भी वह कूटागार को धारण करता है॥1476॥

''चीवरे पिण्डपाते च, चेतना मे न विज्जति।
पुञ्ञकम्मेन संयुत्तो, लभामि परिनिट्ठितं॥1477॥
''गणनातो असङ्खेय्या, कप्पकोटी बहू मम।
रित्तका ते अतिक्कन्ता, पमुत्ता लोकनायका॥1478॥
''अट्ठारसे कप्पसते, पियदस्सी विनायको।
तमहं पयिरुपासित्वा, इमं योनिं उपागतो॥1479॥
''इध पस्सामि [इधद्दसासिं (सी॰)] सम्बुद्धं, अनोमं नाम चक्खुमं।
तमहं उपगन्त्वान, पब्बजिं अनगारियं॥1480॥
''दुक्खस्सन्तकरो बुद्धो, मग्गं मे देसयी जिनो।
तस्स धम्मं सुणित्वान, पत्तोम्हि अचलं पदं॥1481॥

''चीवरे पिण्डपात्रे च, चेतना मे न विद्यति।
पुण्यकर्मणा संयुक्तः, लभे परिनिष्ठितम्॥1477॥
''गणनात असङ्ख्येया, कल्पकोटि बहु मम।
रिक्तकास्ते अतिक्रान्ता, प्रमुक्ताः लोकनायकाः॥1478॥
''अष्टादशे कल्पशते, प्रियदर्शी विनायकः।
तमहं पर्युपास्य, अस्याः योनिम् उपागतः॥1479॥
''इह पश्यामि सम्बुद्धम्, अनोमं नाम चक्षुमान्।
तमहम् उपगत्य, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥1480॥
''दुःखस्यान्तकरः बुद्धः, मार्गं मे अदेशयत् जिनः।
तस्य धर्म श्रुत्वा, प्रसोस्मि अचलं पदम्॥1481॥

चीवर और पिण्डपात का लोभ मेरी चेतना में विद्यमान नहीं है और पुण्यकर्म के संयुक्त होने पर मैंने ब्रह्मचर्य की पूर्णता को प्राप्त कर लिया॥1477॥

गणना में असंख्य, बहुत से कल्प कोटि में रिक्तता को पार किये हुये मुक्त लोकनायक.... ॥1478॥

अट्ठार सौवें कल्प में विनायक प्रियदर्शी की परिचर्या कर मैं इस योनि में उत्पन्न हुआ हूँ॥1479॥

अनोमा नाम के चक्षुमान् सम्बुद्ध को यहाँ देखा और उनके समीप जाकर गृह का त्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण की॥1480॥

दुःखों का अन्त करने वाले बुद्ध जिन ने मुझे मार्ग-सत्य का उपदेश दिया। उस धर्म को सुनकर मैंने अचल पद को प्राप्त किया॥1481॥

''तोसयित्वान सम्बुद्धं, गोतमं सक्यपुङ्गवं।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥1482॥
''अट्ठारसे कप्पसते, यं बुद्धमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥1483॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1484॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं॥1485॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे°... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1486॥
इत्थं सुदं आयस्मा पदुमकूटागारियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पदुमकूटागारियत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. बाकुलत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, सोभितो नाम पब्बतो।
अस्समो सुकतो मय्हं, सकसिस्सेहि मापितो॥1487॥

''तोसयित्वा सम्बुद्धम्, गौतमं शाक्यपुङ्गवम्।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥1482॥
''अष्टादशे कल्पशते, यं बुद्धमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1483॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समूहता।
सर्वास्रवाः परिक्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1484॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1485॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे°... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1486॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पद्मकूटागारिकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''हिमवत अविदूरे, शोभितो नाम पर्वतः।
आश्रमः सुकृतो मम, स्वकशिष्यैः मापितः॥1487॥

शाक्य कुलोत्पन्न श्रेष्ठ गौतम सम्बुद्ध को सन्तुष्ट करके मैं सभी आस्रवों का ज्ञान प्राप्त कर अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥1482॥

अब से अट्ठारह सौ कल्प पहले मैंने जो बुद्ध-पूजा की थी यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1483॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1484॥

मेरा बुद्ध के समीप में स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1485॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1486॥

इस प्रकार आयुष्मान पद्म कूटागारिक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय पर्वत से कुछ दूरी पर एक सोभित नामक पर्वत था जिसपर स्वशिष्यों द्वारा सुनिर्मित मेरा एक आश्रम था॥1487॥

''मण्डपा च बहू तत्थ, पुप्फिता सिन्दुवारका।
कपित्था च बहू तत्थ, पुप्फिता जीवजीवका [चम्पका नागकेतका (स्या॰)]॥1488॥
''निग्गुण्डियो बहू तत्थ, बदरामलकानि च।
फारुसका अलाबू च, पुण्डरीका च पुप्फिता॥1489॥
''आळका [अळक्का (स्या॰)] बेलुवा तत्थ, कदली मातुलुङ्गका।
महानामा बहू तत्थ, अज्जुना च पियङ्गुका॥1490॥
''कोसम्बा सळला निम्बा [नीपा (सी॰)], निग्रोधा च कपित्थना।
एदिसो अस्समो मय्हं, ससिस्सोहं तहिं वसिं॥1491॥
''अनोमदस्सी भगवा, सयम्भू लोकनायको।
गवेसं पटिसल्लानं, ममस्समुपागमि॥1492॥

''मण्डपाश्च बहवः तत्र, पुष्पिता सिन्दुवारकाः।
कपित्थाश्च बहवः तत्र, पुष्पिता जीवजीवकाः॥1488॥
''निर्गुण्डियः बहवः तत्र, बदरामलकानि च।
पारुषका अलाबू च, पुण्डरीकाश्च पुष्पिता॥1489॥
''आरका बेलुवा तत्र, कदली मातुलुङ्गका।
महानामा बहवः तत्र, अर्जुनाश्च प्रियङ्गुका॥1490॥
''कोसम्बा सरला निम्बा, न्यग्रोधाश्च कपित्थना।
ईदृश आश्रमो मह्यम्, सशिष्योऽहं तत्र अवसम्॥1491॥
''अनवमदर्शी भगवान्, स्वयम्भू लोकनायकः।
गवेषं प्रतिशल्यानाम्, ममाश्रममुपागमत्॥1492॥

वहाँ पर मण्डप आकार के छायादार वृक्ष थे और सिन्दुवारक नामक पुष्प, कैथे का वृक्ष, चम्पक तथा नागकेतक नामक पुष्प पुष्पित थे॥1488॥

उस स्थान पर बहुत से निग्गुण्डिया (जड़ी-बूटि विशेष) बेर (कपास) और आँवला, फालसा, लौकी और बहुत से कमलपुष्प आदि पुष्पित थे॥1489॥

उस स्थान पर आरक, बेल और केले के वृक्ष थे। वहाँ पर बहुत से महानाम, अर्जुन और दवाई में काम आने वाले पियङ्गुका नामक वृक्ष भी थे॥1490॥

कोसम्बा, सरला (एक वृक्ष विशेष) नीम का वृक्ष, बरगद का वृक्ष और कैथे का वृक्ष इन सब से घिरा हमारा इस प्रकार का आश्रम था, वहाँ मैंने अपने शिष्यों के साथ वास किया॥1491॥

अनोमदर्शी, भगवान् स्वयम्भू, लोकनायक एकान्त जीवन की गवेषणा में मेरे आश्रम के समीप आए॥1492॥

''उपेतम्हि महावीरे, अनोमदस्सिमहायसे।
खणेन लोकनाथस्स, वाताबाधो समुट्ठहि॥1493॥
''विचरन्तो अरञ्ञम्हि, अद्दसं लोकनायकं।
उपगन्त्वान सम्बुद्धं, चक्खुमन्तं महायसं॥1494॥
''इरियञ्चापि दिस्वान, उपलक्खेसहं तदा।
असंसयञ्हि बुद्धस्स, ब्याधि नो उदपज्जथ॥1495॥
''खिप्पं अस्समागच्छिं, मम सिस्सान सन्तिके।
भेसज्जं कत्तुकामोहं, सिस्से आमन्तयिं तदा॥1496॥
''पटिस्सुणित्वान मे वाक्यं, सिस्सा सब्बे सगारवा।
एकज्झं सन्निपतिंसु, सत्थुगारवता मम॥1497॥

''उपेते महावीरे, अनवमदर्शीमहायशे।
क्षणेन लोकनाथस्य, वाताबाधः समुपस्थात्॥1493॥
''विचरन् अरण्ये, अद्राक्षं लोकनायकम्।
उपगत्य सम्बुद्धम्, चक्षुष्मन्तं महायशम्॥1494॥
''ईर्यञ्चापि दृष्ट्वा, उपलक्षेऽहं तदा।
असंशये बुद्धस्य, ब्याधि नो उदपद्यत॥1495॥
''क्षिप्रम् आश्रममागच्छम्, मम शिष्यानां अन्तिके।
भैषज्यं कर्त्तुकामोऽहम्, शिष्यान् आमन्त्रयं तदा॥1496॥
''प्रतिश्रुत्य मे वाक्यम्, शिष्याः सर्वे सगौरवाः।
एकध्यं सन्न्यपद्यन्, **शास्तृगौरवता** मम॥1497॥

समीप आये हुए महावीर, अनोमदर्शी, महान् यशस्वी लोकनायक को उसी क्षण वायु के कारण होने वाली बीमारी उत्पन्न हुई॥1493॥

मैंने घने जंगल में विचरण करते हुए लोकनायक को देखा और चक्षुष्मान्, महायशस्वी सम्बुद्ध के समीप गया॥1494॥

हलचल को देखकर तब मुझे अनुमान हुआ कि बुद्ध को अवश्य ही कोई व्याधि तो नहीं उत्पन्न हो गई है॥1495॥

मैं शीघ्र ही आश्रम में अपने शिष्यों के समीप आ गया और तब भैषज्य तैयार करने की कामना से मैंने शिष्यों को आमन्त्रित किया॥1496॥

गौरव के साथ सभी शिष्य मेरे वाक्य को भली प्रकार सुनकर एक स्थान पर एकत्रित (सम्मलित) हुए और शास्ता मेरा गौरव हैं-॥1497॥

''खिप्पं पब्बतमारुय्ह, सब्बोसधमहासहं [मकासहं (स्या॰ क॰)]।
पानीययोगं [पानीययोग्गं (सी॰)] कत्वान, बुद्धसेट्ठस्सदासहं॥1498॥
''परिभुत्ते महावीरे, सब्बञ्ञुलोकनायके।
खिप्पं वातो वूपसमि, सुगतस्स महेसिनो॥1499॥
''पस्सद्धं दरथं दिस्वा, अनोमदस्सी महायसो।
सकासने निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1500॥
'''यो मे पादासि भेसज्जं, ब्याधिञ्च समयी मम।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1501॥
'''कप्पसतसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
वादिते तूरिये तत्थ, मोदिस्सति सदा अयं॥1502॥

''क्षिप्रं पर्वतमारुह्य, सर्वौषधमकार्षमहम्।
पानीययोग्यं कृत्वा, बुद्धश्रेष्ठाय अदामहम्॥1498॥
''परिभुङ्क्ते महावीरान्, सर्वज्ञलोकनायकान्।
क्षिप्रं वातो व्युपाशाम्यत्, सुगतस्य महर्षेः॥1499॥
''प्रश्रब्धं दरथं दृष्ट्वा, अनवमदर्शी महायशः।
स्वकासने निसीद्य, इमा गाथा अभाषत॥1500॥
'''यो मे प्रादात् भैषज्यम्, व्याधिञ्च **अशाम्यत्/अशमत्** मम।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1501॥
'''कल्पशतसहस्राणि, देवलोके रंस्यति।
वादिते तूर्ये तत्र, मोदयिष्यति सदा अयम्॥1502॥

शीघ्र ही मैं पर्वत पर चढ़कर सभी औषधियों को ले आया और पीने योग्य बनाकर उसे बुद्धश्रेष्ठ को प्रदान किया॥1498॥

सर्वज्ञ महावीर, लोकनायक ने उसका परिभोग किया और शीघ्र ही वे सुगत महर्षि वात-रोग से मुक्त हो गये॥1499॥

अनोमदर्शी व महान् यशस्वी ने मुझे विश्वस्त एवं दुःख से शान्त देखकर अपने आसन पर बैठकर इन गाथाओं को कहा-॥1500॥

व्याधि के समय वो जिसने मुझे औषधि प्रदान किया है, मैं उसकी कीर्ति का गान करूँगा, मेरे ऐसे वचनों को सुनो॥1501॥

100 हजार कल्पों तक वह देवलोक में रमण करेगा और वहाँ बजते हुए तूर्यवाद्य में यह सदैव प्रसन्न (आनन्दित) रहेगा॥1502॥

‘‘‘मनुस्सलोकमागन्त्वा, सुक्कमूलेन चोदितो।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1503॥
‘‘‘पञ्चपञ्ञासकप्पम्हि, अनोमो नाम खत्तियो।
चातुरन्तो विजितावी, जम्बुमण्डस्स [जम्बुदीपस्स (स्या॰)] इस्सरो॥1504॥
‘‘‘सत्तरतनसम्पन्नो, चक्कवत्ती महब्बलो।
तावतिंसेपि खोभेत्वा, इस्सरं कारयिस्सति॥1505॥
‘‘‘देवभूतो मनुस्सो वा, अप्पाबाधो भविस्सति।
परिग्गहं विवज्जेत्वा, ब्याधिं लोके तरिस्सति॥1506॥
‘‘‘अप्परिमेय्ये इतो कप्पे, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1507॥

‘‘‘मनुष्यलोकमागत्य, शुक्लमूलेन चोदितः।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1503॥
‘‘‘पञ्चपञ्चाशत्कल्पे, अनोमो नाम क्षत्रियः।
चातुरन्तो विजितावी, जम्बुमण्डस्य ईश्वरः॥1504॥
‘‘‘सप्तरत्नसम्पन्नः, चक्रवर्त्ती महाबलः।
त्रायस्त्रिंशेऽपि क्षोभयित्वा, ईश्वरं कारयिष्यति॥1505॥
‘‘‘देवभूतो मनुष्यो वा, अल्पाबाधो भविष्यति।
परिग्रहं विवर्ज्य, व्याधिं लोके तरिष्यति॥1506॥
‘‘‘अप्रमेये इतः कल्पे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1507॥

कुशल कर्मों के उदित होने पर वह मनुष्यलोक में आयेगा और हजार बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1503॥

55 वें कल्प में अनोम नाम का क्षत्रिय होगा और चारों दिशाओं को जीतकर जम्बुमण्डल का ईश्वर होगा॥1504॥

सप्तरत्न-सम्पन्न, चक्रवर्ती, महाबलशाली वह त्रायस्त्रिंश लोक का भी स्वामी होगा॥1505॥

देवभूत हो या मनुष्य, रोग रहित होगा और परिग्रह को छोड़कर लोक में व्याधि को पार करेगा॥1506॥

यहाँ से अप्रमेय कल्प में गौतम नाम के गोत्र से इक्ष्वाककुल में उत्पन वह लोक में शास्ता होगा॥1507॥

‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो॥1508॥
‘‘‘किलेसे झापयित्वान, तण्हासोतं तरिस्सति।
बाकुलो [बक्कुलो (सी॰ स्या॰)] नाम नामेन, हेस्सति सत्थु सावको॥1509॥
‘‘‘इदं सब्बं अभिञ्ञाय, गोतमो सक्यपुङ्गवो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, एतदग्गे ठपेस्सति’॥1510॥
‘‘अनोमदस्सी भगवा, सयम्भू लोकनायको।
विवेकानुविलोकेन्तो, ममस्समुपागमि॥1511॥
‘‘उपागतं महावीरं, सब्बञ्ञुं लोकनायकं।
सब्बोसधेन तप्पेसिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥1512॥

‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः॥1508॥
‘‘‘क्लेशान् ध्मापयित्वा, तृष्णास्रोतं तरिष्यति।
बाकुलो नाम नाम्ना, भविष्यति शास्तुः श्रावकः॥1509॥
‘‘‘इदं सर्वम् अभिज्ञाय, गौतमः शाक्यपुङ्गवः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, एतदग्रे स्थापयिष्यति’॥1510॥
‘‘अनवमदर्शी भगवान्, स्वयम्भू लोकनायकः।
विवेकानुविलोकयन्, ममाश्रममुपागमत्॥1511॥
‘‘उपागतं महावीरम्, सर्वज्ञं लोकनायकम्।
सर्वौषध्या अतर्पयम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥1512॥

उनके स्वकीय धर्म में दीक्षित वह उनका वास्तविक उत्तराधिकारी होगा और सभी आस्रवों का ज्ञान प्राप्त कर अनास्रव हो निर्वाण को प्राप्त करेगा॥1508॥

क्लेशों को नष्ट कर वह तृष्णा के स्रोत को पार करेगा और बाकुल नाम से शास्ता का श्रावक होगा॥1509॥

यह सब जानकर शाक्यश्रेष्ठ गौतम भिक्षुसंघ में बैठकर इसे आगे स्थापित करेंगे॥1510॥

अनोमदर्शी भगवान्, स्वयम्भू लोकनायक मुझे अकेले में देखकर मेरे आश्रम के समीप आए॥1511॥

समीप आये हुए सर्वज्ञ लोकनायक महावीर को प्रसन्नमन से मैंने अपने दोनों हाथों से सभी औषधियों से सन्तुष्ट किया॥1512॥

''तस्स मे सुकतं कम्मं, सुखेत्ते बीजसम्पदा।
खेपेतुं नेव सक्कोमि, तदा हि सुकतं मम॥1513॥
''लाभा मम सुलद्धं मे, योहं अद्दक्खि नायकं।
तेन कम्मावसेसेन, पत्तोम्हि अचलं पदं॥1514॥
''सब्बमेतं अभिञ्ञाय, गोतमो सक्यपुङ्गवो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, एतदग्गे ठपेसि मं॥1515॥
''अपरिमेय्ये इतो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, भेसज्जस्स इदं फलं॥1516॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1517॥

''तस्य मे सुकृतं कर्मम्, सुक्षेत्रे बीजसम्पदा।
क्षेपयितुं नैव शक्नोमि, तदा हि सुकृतं मम॥1513॥
''लाभा मम सुलब्धं मे, योऽहम् अद्राक्षीत् नायकम्।
तेन कर्मावशेषेन, प्राप्तोस्मि अचलं पदम्॥1514॥
''सर्वमेतम् अभिज्ञाय, गौतमो शाक्यपुङ्गवः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, एतदग्रे स्थापयत् माम्॥1515॥
''अप्रमेये इतः कल्पे, यत् कर्ममकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, भैषज्यस्य इदं फलम्॥1516॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समूहता।
सर्वास्रवात् परिक्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1517॥

उस सुकृत कर्म को मैंने अच्छे क्षेत्र में बीजारोपित कर दिया, इधर-उधर फेंका नहीं। निश्चय ही यह मेरा सुकृत कर्म है॥1513॥

मुझे कितना लाभ अथवा सुलाभ हुआ जो मैंने नायक को देखा, उस कर्म के कारण मैंने अचल पद को प्राप्त किया॥1514॥

शाक्यकुलोत्पन्न गौतम श्रेष्ठ ने ये सब जानकर भिक्षुसंघ में बैठकर मुझे उनके आगे स्थापित किया॥1515॥

यहाँ से अपरिमेय (असंख्य) कल्पों में मैंने जो कर्म किया था, उसके कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह उस भैषज्य-दान का ही सुपरिणाम है॥1516॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं, सभी आस्रवों को समाप्त कर दिये गये हैं, अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा॥1517॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1518॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1519॥

इत्थं सुदं आयस्मा बाकुलो [बक्कुलो (सी० स्या०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

बाकुलत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. गिरिमानन्दत्थेरअपदानं

''भरिया मे कालङ्कता, पुत्तो सीवथिकं गतो।

माता पिता मता भाता, एकचितम्हि [माता पिता च भाता च, एकचितकम्हि (सी० स्या०)] डय्हरे॥1520॥

''तेन सोकेन सन्तत्तो, किसो पण्डु अहोसहं।

चित्तक्खेपो च मे आसि, तेन सोकेन अट्टितो॥1521॥

''सोकसल्लपरेतोहं, वनन्तमुपसङ्कमिं।

पवत्तफलं भुञ्जित्वा, रुक्खमूले वसामहं॥1522॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1518॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1519॥

इत्थं स्विद् आयुस्मान् बाकुलस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''भार्या मे कालकृता, पुत्रः शीवनस्थिकां गतः।

माता पिता मृता भ्राता, एकचिते दहन्ति॥1520॥

''तेन शोकेन सन्तप्तः, कृशः पाण्डु अभूवमहम्।

चित्तक्षेपश्च मे आसीत्, तेन शोकेन आर्दितः॥1521॥

''शोकशल्यपरेतोऽहम्, वनान्तमुपसमाक्रामम्।

प्रवर्त्तफलं भुक्त्वा, वृक्षमूले वसाम्यहम्॥1522॥

मेरा बुद्ध के समीप में स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1518॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1519॥

इस प्रकार आयुष्मान् बाकुल स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

मेरी भार्या मृत्यु को प्राप्त हो गई, पुत्र श्मशान को चला गया। मैंने माता-पिता और मृत भाई को एक ही चिता पर जलाया॥1520॥

उस शोक के सन्ताप से मैं कृश और पीले वर्ण का हो गया हूँ और उससे अस्थिर मेरा मन विक्षिप्त हो गया था॥1521॥

शोक शूल से युक्त मैं वन के समीप पहुंच गया और नीचे गिरे हुए फल को खाकर वृक्षमूल में वास किया॥1522॥

''सुमेधो नाम सम्बुद्धो, दुक्खस्सन्तकरो जिनो।
ममुद्धरितुकामो सो, आगञ्छि मम सन्तिकं॥1523॥
''पदसद्दं सुणित्वान, सुमेधस्स महेसिनो।
पग्गहेत्वानहं सीसं, उल्लोकेसिं महामुनिं॥1524॥
''उपागते महावीरे, पीति मे उदपज्जथ।
तदासिमेकग्गमनो, दिस्वा तं लोकनायकं॥1525॥
''सतिं पटिलभित्वान, पण्णमुट्ठिमदासहं।
निसीदि भगवा तत्थ, अनुकम्पाय चक्खुमा॥1526॥
''निसज्ज तत्थ भगवा, सुमेधो लोकनायको।
धम्मं मे कथयी बुद्धो, सोकसल्लविनोदनं॥1527॥

''सुमेधो नाम सम्बुद्धः, दुःखस्यान्तकरो जिनः।
ममुद्धर्तुकामः सः, आगच्छत् मम सान्तिकम्॥1523॥
''पदशब्दं श्रुत्वा, सुमेधस्य महर्षेः।
प्रगृह्य अहं शीर्षम्, उललोके महामुनिम्॥1524॥
''उपागते महावीरे, प्रीतिर्मे उदपद्यत।
तदासीत् मे एकाग्रमनः, दृष्ट्वा तं लोकनायकम्॥1525॥
''स्मृतिं प्रतिलभ्य, पर्णमुष्टिमदामहम्।
न्यसदत् भगवान् तत्र, अनुकम्पायै चक्षुष्मान्॥1526॥
''निसीद्य तत्र भगवान्, सुमेधो लोकनायकः।
धर्मं मे अकथयत् बुद्धः, शोकशल्यविनोदनम्॥1527॥

दुःखों का अन्त करने वाले सुमेध नाम के जिन सम्बुद्ध मेरे उद्धार की कामना से मेरे समीप आ गये॥1523॥

सुमेध महर्षि के कदमों की आहट सुनकर मैंने अपना सिर पकड़कर लोकनायक महामुनि को देखा॥1524॥

महावीर के समीप पहुँच कर मुझमें प्रसन्नता उत्पन्न हुई, तब मन को एकाग्र करके मैंने उन लोकनायक को देखा॥1525॥

स्मृति का लाभ प्राप्त कर अनुकम्पक चक्षुष्मान् भगवान् जहाँ बैठे थे वहाँ मैंने मुट्ठि भर पत्ते प्रदान किये॥1526॥

वहाँ सुमेध, लोकनायक, भगवान् बुद्ध ने बैठकर शोकशल्य को दूर करने वाला धर्म मुझे कहा-॥1527॥

‘‘‘अनव्हिता ततो आगुं, अननुञ्ञाता इतो गता।
यथागता तथा गता, तत्थ का परिदेवना॥1528॥
‘‘‘यथापि पथिका सत्ता, वस्समानाय वुट्ठिया।
सभण्डा उपगच्छन्ति, वस्सस्सापतनाय ते॥1529॥
‘‘‘वस्से च ते ओरमिते, सम्पयन्ति यदिच्छकं।
एवं माता पिता तुय्हं, तत्थ का परिदेवना॥1530॥
‘‘‘आगन्तुका पाहुनका, चलितेरितकम्पिता।
एवं माता पिता तुय्हं, तत्थ का परिदेवना॥1531॥
‘‘‘यथापि उरगो जिण्णं, हित्वा गच्छति सं तचं [संतनुं (स्या॰ क॰)]।
एवं माता पिता तुय्हं, सं तनुं इध हीयरे’॥1532॥

‘‘‘अनाह्वयिता ततो **आगः**, अननुज्ञाता इतो गता।
यथागता तथा गता, तत्र का परिदेवना॥1528॥
‘‘‘यथापि पथिका सत्वाः, वर्षमानया वृष्ट्याः।
सभण्डा उपागच्छन्ति, वर्षास्यापतनया ते॥1529॥
‘‘‘वर्षे च ते अवरमिते, सम्प्रयान्ति यदिच्छकम्।
एवं माता पिता तुभ्यम्, तत्र का परिदेवना॥1530॥
‘‘‘आगन्तुकाः पाहुनकाः, चलितेरितकम्पिताः।
एवं माता पिता तुभ्यम्, तत्र का परिदेवना॥1531॥
‘‘‘यथापि उरगो जीर्णम्, हित्वा गच्छति सतनुम्।
एवं माता पिता तुभ्यम्, सतनुम् इह जहीतः’॥1532॥

वहाँ से बिना आमन्त्रित किये हुए गया है और यहाँ से बिना अनुमति के वहाँ से गया। जैसे आया था वैसे ही चला गया, वहाँ पर कैसा रोना-पीटना॥1528॥

जैसै पथिक सत्व वर्षा के समय अपना पात्र लेकर जहाँ वर्षा नहीं होती, वहाँ चले जाते हैं.....॥1529॥

और वर्षा के समाप्त होते ही अपनी इच्छा अनुसार प्रस्थान कर जाते हैं, उसी प्रकार तुम्हारे माता-पिता भी चले गये। वहाँ पर कैसा रोना-पीटना॥1530॥

जैसे आगन्तुक, अतिथि, चलते, कम्पित होते आते हैं और चले जाते है वैसे ही तुम्हारे माता-पिता। उसमें रोने दुःखी होने की क्या बात है॥1531॥

जैसै सर्प अपनी पुरानी खाल को छोड़कर चला जाता है वैसे ही तुम्हारे माता-पिता इस जीर्ण शरीर को छोड़कर चले गये॥1532॥

''बुद्धस्स गिरमञ्ञाय, सोकसल्लं विवज्जयिं।
पामोज्जं जनयित्वान, बुद्धसेट्ठं अवन्दहं॥1533॥
''वन्दित्वान महानागं, पूजयिं गिरिमञ्जरिं।
दिब्बगन्धं सम्पवन्तं [दिब्बगन्धेन सम्पन्नं (सी॰ स्या॰)], सुमेधं लोकनायकं॥1534॥
''पूजयित्वान सम्बुद्धं, सिरे कत्वान अञ्जलिं।
अनुस्सरं गुणग्गानि, सन्थविं लोकनायकं॥1535॥
''नित्तिण्णोसि, वितिण्णोसि (स्या॰) महावीर, सब्बञ्ञु लोकनायक।
सब्बे सत्ते उद्धरसि, ञाणेन त्वं महामुने॥1536॥
''विमतिं द्वेळ्हकं वापि, सञ्छिन्दसि महामुने।
पटिपादेसि मे मग्गं, तव ञाणेन चक्खुम॥1537॥

''बुद्धस्य गिरमाज्ञाय, शोकशल्यं व्यवर्जयम्।
प्रामोद्यं जनयित्वा, बुद्धश्रेष्ठम् अवन्देऽहम्॥1533॥
''वन्दित्वा महानागम्, अपूपुजं गिरिमञ्जरिम्।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तम्, सुमेधं लोकनायकम्॥1534॥
''पूजयित्वा सम्बुद्धम्, शिरसि कृत्वा अञ्जलिम्।
अन्वस्मरं **गुणाग्राणि**, समतुस्तोमं लोकनायकम्॥1535॥
''निस्तीर्णोऽसि महावीर, सर्वज्ञ लोकनायक।
सर्वान् सत्वान् उदधरत्, ज्ञानेन त्वं महामुने॥1536॥
''विमतिं द्वेडकं वापि, समच्छिन्दत् महामुने।
प्रत्यपादयत् मे मार्गम्, तव ज्ञानेन चक्षुष्मन्॥1537॥

बुद्ध की वाणी को जानकर शोक-शूल से दूर हुआ तथा बुद्धश्रेष्ठ को प्रसन्न जानकर मैंने उनकी वन्दना की॥1533॥

मैंने लोकनायक दिव्यगन्ध महानाग सुमेध की वन्दना करके पुष्प-गुच्छों से पूजा की॥1534॥

शिर से अञ्जलि करके सम्बुद्ध की पूजा की और गुणों का अनुस्मरण कर लोकनाय की स्तुति की॥1535॥

हे महामुनि! सर्वज्ञ लोकनायक महावीर आप निस्तीर्ण हैं। आपने अपने ज्ञान से सभी सत्वों का उद्धार किया है॥1536॥

सन्देह और शक को नष्ट कर देने वाले हे महामुनि चक्षुष्मन्! आपने अपने ज्ञान से मुझे मार्ग-सत्य का प्रतिपादन किया॥1537॥

''अरहा वसिपत्ता [सिध्दिपत्ता (सी॰ स्या॰)] च, छळभिञ्ञा महिद्धिका।
अन्तलिक्खचरा धीरा, परिवारेन्ति तावदे॥1538॥
''पटिपन्ना च सेखा च, फलट्ठा सन्ति सावका।
सूरोदयेव पदुमा, पुप्फन्ति तव सावका॥1539॥
''महासमुद्दोवक्खोभो, अतुलोपि [यथा समुद्दो अक्खोभो, अतुलो च (सी॰)] दुरुत्तरो।
एवं ञाणेन सम्पन्नो, अप्पमेय्योसि चक्खुम॥1540॥
''वन्दित्वाहं लोकजिनं, चक्खुमन्तं महायसं।
पुथु दिसा नमस्सन्तो, पटिकुटिको अगञ्छहं॥1541॥
''देवलोका चवित्वान, सम्पजानो पतिस्सतो।
ओक्कमिं मातुया कुच्छिं, सन्धावन्तो भवाभवे॥1542॥

''अर्हद् वसिप्राप्ताश्च, षडभिज्ञाः महर्द्धिकाः।
अन्तरिक्षचराः धीराः, परिवारयन्ति तावदेव॥1538॥
''प्रतिपन्नाश्च शैक्ष्याश्च, फलस्थात् सन्ति श्रावकाः।
सूरोदय इव पद्माः, पुष्पन्ति तव श्रावकाः॥1539॥
''महासमुद्र इवाक्षोभः, अतुलोऽपि दुरुत्तरः।
एवं ज्ञानेन सम्पन्नः, अप्रमेयोऽसि चक्षुष्मन्॥1540॥
''वन्दित्वा लोकजिनम् चक्षुष्मन्तं महायशम्।
पृथग् दिशः **नमन्**, प्रतिकुटिकः अगममहम् ॥1541॥
''देवलोकात् च्युत्वा, सम्प्रजानः प्रतिस्मृतः।
अवाक्रामं मातरि कुक्षे, सन्धावन्तो भवाभवे॥1542॥

षडभिज्ञा प्राप्त महान् ऋद्धिवान् अर्हत्, और अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले धीर सदैव परिवारित किये रहते हैं॥1538॥

शिक्षा ग्रहण करने वाले मार्गारूढ श्रावक अपने फल में स्थित हैं तथा जैसे सूर्य- उदय के समय पद्मपुष्प पुष्पित होते हैं वैसे ही वे श्रावक ध्यान साधना से अपने को पुष्पित करते हैं॥1539॥

हे चक्षुष्मन्! आप महासमुद्र के समान अक्षोभ तथा अतुलनीय हैं तथा कठिनाई से प्राप्त होने वाले अप्रमेय ज्ञान से सम्पन्न हैं॥1540॥

लोकजिन्, चक्षुष्मान् महानयशस्वी की वन्दना करके और पृथ्क-पृथ्क दिशा को नमस्कार करके मैं अपनी कुटि को आ गया॥1541॥

विचारवान् हो जानबूझ कर देवलोक से च्युत होकर मैं माता के गर्भ में प्रवेश कर इस जन्म से उस जन्म में संसरण करने लगा॥1542॥

''अगारा अभिनिक्खम्म, पब्बजिं अनगारियं।
आतापी निपको झायी, पटिसल्लानगोचरो॥1543॥
''पधानं पदहित्वान, तोसयित्वा महामुनिं।
चन्दोवब्भघना मुत्तो, विचरामि अहं सदा॥1544॥
''विवेकमनुयुत्तोम्हि, उपसन्तो निरूपधि।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥1545॥
''तिंसकप्पसहस्सम्हि, यं बुद्धमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥1546॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1547॥

''आगारात् अभिनिष्क्रम्य, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
आतापी निपको ध्यायी, प्रतिशल्यानगोचरः॥1543॥
''प्रधानं प्रधाय, तोषयित्वा महामुनिम्।
चन्द्रिवाभ्रघनात् मुक्तः, विचरामि अहं सदा॥1544॥
''विवेकमनुयुक्तोऽस्मि, उपशान्तः **निरुपधिः**।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥1545॥
''त्रिंशकल्पसहस्रे, यं बुद्धमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1546॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समूहता।
सर्वास्रवात् परिक्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1547॥

प्रयत्नशील, दक्ष, ध्यान लगाने वाला मैं घर से निकलकर प्रव्रजित हुआ और मैंने एकान्त जीवन के लिए स्थान की गवेषणा की॥1543॥

घर से निकलकर, महामुनि को सन्तुष्ट कर, घने बादलों से मुक्त हुए चन्द्रमा के समान मैं सदा विचरण करता हूँ॥1544॥

विवेकयुक्त, एकान्तवासी, शान्तचित्त, आसक्ति-रहित, राग-रहित तथा सभी आस्रवों का पूर्ण रूप से ज्ञान कर मैं अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1545॥

तीस हजार कल्पों में जो मैंने बुद्ध-पूजा की थी यह उस बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1546॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और सभी आस्रवों को समाप्त कर दिया गया है, अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा॥1547॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1548॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1549॥

इत्थं सुदं आयस्मा गिरिमानन्दो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

गिरिमानन्दत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. सळलमण्डपियत्थेरअपदानं

''निब्बुते ककुसन्धम्हि, ब्राह्मणम्हि वुसीमति।

गहेत्वा सळलं मालं, मण्डपं कारयिं अहं॥1550॥

''तावतिंसगतो सन्तो, लभामि ब्यम्हमुत्तमं।

अञ्ञे देवेतिरोचामि, पुञ्ञकम्मस्सिदं फलं॥1551॥

''दिवा वा यदि वा रत्तिं, चङ्कमन्तो ठितो चहं।

छन्नो सळलपुप्फेहि, पुञ्ञकम्मस्सिदं फलं॥1552॥

''इमस्मिंयेव कप्पम्हि, यं बुद्धमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥1553॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1548॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1549॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् गिरिमानन्दस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''निर्वृते ककुसन्धे, ब्राह्मणे **व्युषितमतिः**।

गृहीत्वा सरलां मालाम्, मण्डपमकारयमहम्॥1550॥

''त्रायस्त्रिंशगतः शान्तः, लभे विमानमुत्तमम्।

अन्यान् देवान् अतिरोचे, पुण्यकर्मण इदं फलम्॥1551॥

''दिवा वा यदि वा रात्रौ, चङ्क्रमन्तो स्थितश्चाऽहम्।

छन्नः सरलपुष्पैः, पुण्यकर्मण इदं फलम्॥1552॥

''अस्मिन्नेव कल्पे, यं बुद्धमभ्यपूजयम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1553॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1548॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1549॥

इस प्रकार आयुष्मान् गिरिमानन्द स्थविर ने इन गाथओं को कहा-

ककुसन्ध भगवान् के निवृत हो जाने पर मैं विलक्षण बुद्धि वाला ब्राह्मण हो गया और सरला की माला को ग्रहण कर मण्डप का निर्माण किया॥1550॥

शान्त त्रायस्त्रिंशलोक में जाने पर मुझे उत्तम विमान का लाभ हुआ और मैं अन्य देवताओं को भी रुचिकर लगता हूँ, यह पुण्यकर्म का ही सुपरिणाम है॥1551॥

दिन हो या रात हो चङ्क्रमण करूँ या स्थित रहूँ, सरलपुष्पों से मैं सदैव आच्छादित रहता हूँ, यह पुण्य-कर्म का ही सुपरिणाम है॥1552॥

इस कल्प में जो मैंने बुद्ध-पूजा की थी यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1553॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1554॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1555॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1556॥

इत्थं सुदं आयस्मा सळलमण्डपियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

सळलमण्डपियत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. सब्बदायकत्थेरअपदानं

''महासमुद्दं ओगय्ह, भवनं मे सुनिम्मितं।

सुनिम्मिता पोक्खरणी, चक्कवाकपकूजिता॥1557॥

''मन्दालकेहि सञ्छन्ना, पदुमुप्पलकेहि च।

नदी च सन्दते तत्थ, सुपतित्था मनोरमा॥1558॥

''मच्छकच्छपसञ्छन्ना, नानादिजसमोत्थता।

मयूरकोञ्चाभिरुदा, कोकिलादीहि वग्गुहि॥1559॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1554॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1555॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1556॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् सरलमण्डपीयस्थविर इमा गाथा अभाशिष्टेति।

''महासमुद्रम् अवगाह्य, भवनं मे सुनिर्मितम्।

सुनिर्मिता पौष्करणी, चक्रवाकप्रकूजिता॥1557॥

''मन्दारकैः सञ्छन्नाः, पद्मोत्पलकैश्च।

नदी च स्यन्दते तत्र, सुप्रतिष्ठा मनोरमा॥1558॥

''मत्स्यकच्छपसञ्छन्नाः, **नानाद्विजसमास्तृताः**।

मयूरक्रौञ्चाभिरुदा, कोकिलादिभिः वल्गुभिः॥1559॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1554॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1555॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1556॥

इस प्रकार आयुष्मान् सरलमण्डपीय स्थविर ने इन गाथओं को कहा-

महासमुद्र में जाकर मैंने भली प्रकार से भवन को निर्मित किया, जिसमें चकवा पक्षियों से प्रकूजित एक सुनिर्मित तालाब भी था॥1557॥

वहाँ मन्दारपुष्प और कमल से ढँकी हुई सुन्दर और सुप्रतिष्ठित नदी प्रवाहित हो रही थी॥1558॥

वह नदी मछली, कछुआ से युक्त है और उसमें विविध प्रकार के पक्षी विहरते है। उसमें मयूर, सारस, कोयल और बगुलों के स्वर गुञ्जायमान है॥1559॥

''पारेवता रविहंसा च, चक्कवाका नदीचरा।
दिन्दिभा साळिका चेत्थ, पम्मका [पम्पका (सी॰), चप्पका (स्या॰)]
जीवजीवका॥1560॥
''हंसा कोञ्चापि नदिता [कोञ्चाभिनदिता (सी॰ स्या॰)], कोसिया पिङ्गला बहू।
सत्तरतनसम्पन्ना, मणिमुत्तिकवालुका॥1561॥
''सब्बसोण्णमया रुक्खा, नानागन्धसमेरिता।
उज्जोतेन्ति दिवारत्तिं, भवनं सब्बकालिकं॥1562॥
''सट्ठि तूरियसहस्सानि, सायं पातो पवज्जरे।
सोळसित्थिसहस्सानि, परिवारेट्ति मं सदा॥1563॥
''अभिनिक्खम्म भवना, सुमेधं लोकनायकं।
पसन्नचित्तो सुमनो, वन्दयिं तं महायसं॥1564॥

''पारेवता रविहंसाश्च, चक्रवाकाः नदीचराः।
दिन्दिभाः शालिकाश्चात्र, पम्पकाः जीवजीवकाः॥1560॥
''हंसाः क्रौञ्चापि नदिता, कौशिकाः पिङ्गला बह्वः।
सप्तरत्नसम्पन्नाः, मणिमुक्तिकवालुका॥1561॥
''सर्वसौवर्णमयाः वृक्षाः, नानागन्धसमेरिता।
उद्योतयन्ति दिवारात्रौ, भवनं सर्वकालिकम्॥1562॥
''षष्टिः तूर्यसहस्राणि, सायं प्रातः प्रवद्यते।
षोडशीस्त्रिसहस्राणि, परिवारयति मां सदा॥1563॥
''अभिनिष्क्रम्य भवनात्, सुमेधं लोकनायकम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, अ**वन्दे** तं महायशम्॥1564॥

कबूतर, रविहंस (पक्षी विशेष) चकवा, नदी में रहने वाले जीव टिटिहरी तथा सालिक छिपकली जैसे जीव जीविका हेतु वहाँ रहते हैं॥1560॥

वहाँ हंस, सारस, ताम्रवर्ण के बहुत से कौए गर्जना करते हैं, वह नदी सप्तरत्नसम्पन्न मुक्तक मणि और बालू कणों से युक्त है॥1561॥

सम्पूर्ण रूप से स्वर्णिम वृक्ष विविध प्रकार के गन्ध को प्रवाहित करते हुए दिन और रात हर समय भवन को प्रकाशित करते रहते हैं॥1562॥

साठ हजार तूर्यवाद्य शाम से प्रातः तक बजते हैं और सोलह हजार स्त्रियाँ मुझे सदैव परिवारित किये रहती हैं॥1563॥

भवन से निकल कर उन यशस्वी सुमेध लोकनायक की प्रसन्नचित्त और सुमन से मैंने वन्दना की॥1564॥

''सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, ससङ्घं तं निमन्तयिं।
अधिवासेसि सो धीरो, सुमेधो लोकनायको॥1565॥
''मम धम्मकथं कत्वा, उय्योजेसि महामुनि।
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, भवनं मे उपागमिं॥1566॥
''आमन्तयिं परिजनं, सब्बे सन्निपताथ [सन्निपतत्थ (क॰)] वो।
पुब्बण्हसमयं बुद्धो, भवनं आगमिस्सति॥1567॥
''लाभा अम्हं सुलद्धं नो, ये वसाम तवन्तिके।
मयम्पि बुद्धसेट्ठस्स, पूजं कस्साम सत्थुनो॥1568॥
''अन्नपनं पट्ठपेत्वा, कालं आरोचयिं अहं।
वसीसतसहस्सेहि, उपेसि लोकनायको॥1569॥

''सम्बुद्धम् अभिवाद्य, ससङ्घं तं न्यमन्त्रयम्।
अध्यवासयत् सो धीरः, सुमेधो लोकनायकः॥1565॥
''मम धर्मकथं कृत्वा, **उदयूयुजत्** महामुनिः।
सम्बुद्धम् अभिवाद्य, भवनं मे उपागमम्॥1566॥
''आमन्त्रयं परिजनम्, सर्वे सन्न्यपतत्र वः।
पूर्वाह्णसमयं बुद्धः, भवनम् आगमिष्यति॥1567॥
''लाभा मह्यं सुलब्धं नो, ये वसाम तवान्तिके।
वयमपि बुद्धश्रेष्ठस्य, पूजां करिष्याम शास्त्रे॥1568॥
''**अन्नपानं** प्रस्थाप्य, कालम् आरोचयमहम्।
वसीशतसहस्रैः, उपायासीत् लोकनायकः॥1569॥

उन धीर, सहनशील, सुमेध लोकनायक सम्बुद्ध को अभिवादन कर मैंने संघ के साथ उन्हें आमन्त्रित किया॥1565॥

मुझे धर्मकथा करके महामुनि ने प्रेरित किया, तब सम्बुद्ध को अभिवादन कर मैं भवन में आ गया॥1566॥

मैंने सभी परिजनों को सम्मिलित रूप से आमन्त्रित किया कि पूर्वाहण समय में बुद्ध भवन में आयेंगे॥1567॥

उनके समीप वास करने पर हमें लाभ-सुलाभ होगा, और हम सभी बुद्धश्रेष्ठ शास्ता की पूजा करेंगे॥1568॥

मैंने अन्न और जल को स्थापित कर भोजन के समय की घोषणा की तब लोकनायक के द्वारा अनुशासित सौ हजार शिष्य क्रमबद्ध पद्धति से वहाँ पर आ गये॥1569॥

''पञ्चङ्गिकेहि तूरियेहि, पच्चुग्गमनमकासहं।
सब्बसोण्णमये पीठे, निसीदि पुरिसुत्तमो॥1570॥
''उपरिच्छदनं आसि, सब्बसोण्णमयं तदा।
बीजनियो पवायन्ति, भिक्खुसङ्घस्स अन्तरे॥1571॥
''पहूतेनन्नपानेन, भिक्खुसङ्घमतप्पयिं।
पच्चेकदुस्सयुगळे, भिक्खुसङ्घस्सदासहं॥1572॥
''यं वदन्ति सुमेधोति, लोकाहुतिपटिग्गहं।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1573॥
''यो मे अन्नेन पानेन, सब्बे इमे च तप्पयिं।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1574॥

''पञ्चङ्गिकैः तूर्यैः, प्रत्युद्गमनमकार्षमहम्।
सर्वसौवर्णमये पीठे, न्यसदत् पुरुषोत्तमः॥1570॥
''उपरिच्छदनम् आसीत्, सर्वसौवर्णमयं तदा।
वीजनयः प्रवायन्ति, भिक्षुसङ्घस्य अन्तरे॥1571॥
''प्रभूतेनान्नपानेन, भिक्षुसङ्घमतर्पयम्।
प्रत्येकदूष्ययुगले, भिक्षुसङ्घायादामहम्॥1572॥
''यं वदन्ति सुमेध इति, लोकाहुतिप्रतिग्रहम्।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमा गाथा अभाषत॥1573॥
''यो मे अन्नेन पानेन, सर्वे इमे च अतर्पयम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1574॥

पाँच अंगों से युक्त तूर्यवाद्य को मैंने उनके स्वागत में बजाया। तब स्वर्णमय पीठ पर पुरुषोत्तम बैठे॥1570॥

उस पीठ के ऊपर जो आच्छादन था वह सभी स्वर्णमय था। तब विद्यमान भिक्षुसंघ के मध्य पंखे चल रहे थे॥1571॥

अत्यधिक अन्न-पान से भिक्षुसंघ को सन्तुष्ट कर मैंने प्रत्येक को रेशमी वस्त्रों का जोड़ा प्रदान किया॥1572॥

लोक में आहुतियों के ग्रहणकर्ता जिहें लोग सुमेध कहते हैं ने भिक्षुसंघ में बैठकर इन गाथाओं को कहा॥1573॥

जिस किसी ने मुझे अन्न और जल से सभी प्रकार से सन्तुष्ट किया है, मैं उसकी कीर्ति को कहूँगा। मेरे एसे वचनों को सुनो॥1574॥

''अट्ठारसे कप्पसते, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1575॥
''उप्पज्जति [उपगच्छति (सी॰)] यं योनिं, देवत्तं अथ मानुसं।
सब्बदा सब्बसोवण्णं, छदनं धारयिस्सति॥1576॥
''तिंसकप्पसहस्सम्हि, ओक्काककुसलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1577॥
''तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो॥1578॥
'''भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, सीहनादं नदिस्सति।
चितके छत्तं धारेन्ति, हेट्ठा छत्तम्हि डय्हथ'॥1579॥

''अष्टादशे कल्पशते, देवलोके रंस्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1575॥
''उपपद्यति यां योनिम्, देवत्त्वम् अथ मानुषम्।
सर्वदा सर्वसौवर्णम्, **छदनं** धारयिष्यति॥1576॥
''त्रिंशकल्पसहस्रे, इक्ष्वाकुकुसलसम्भवः।
गोतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1577॥
''तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः॥1578॥
'''भिक्षुसङ्घे निसीद्य, सिहनादं नदिष्यति।
चितके छत्रं धारयन्ति, अधस्ताच्छत्रे दह्यत'॥1579॥

अब से अट्ठार सौवें कल्प में यह देवलोक में रमण करेगा और हजार बार राज्य कर चक्रवर्ती राजा होगा॥1575॥

यह जिस जिस योनि में उत्पन्न होगा देवयोनि हो या मनुष्य योनि, सभी में सदैव स्वर्णवर्ण का छत्र धारण करेगा॥1576॥

तीस हजारवें कल्प में इक्ष्वाककुल में गौतम नामक गोत्र से उत्पन्न वह लोक में शास्ता होगा॥1577॥

उसके धर्म में दीक्षित, धर्मनिर्मित औरस तथा सर्वास्रवों को जानकर वह निर्वाण को प्राप्त करेगा॥1578॥

भिक्षुसंघ में बैठकर सिंह की गर्जना के समान गर्जना करेगा और चिता के ऊपर छत्र को धारण कर छत्र के नीचे जलाया जायेगा॥1579॥

''सामञ्ञं मे अनुप्पत्तं, किलेसा झापिता मया।
मण्डपे रुक्खमूले वा, सन्तापो मे न विज्जति॥1580॥
''तिंसकप्पसहस्सम्हि, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, सब्बदानस्सिदं फलं॥1581॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1582॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1583॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1584॥
इत्थं सुदं आयस्मा सब्बदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
सब्बदायकत्थेरस्सापदानं नवमं।

10. अजितत्थेरअपदानं

''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।
अज्झोगाहेत्वा हिमवन्तं, निसीदि लोकनायको॥1585॥

''श्रामण्यं मे अनुप्राप्तम्, क्लेशाः ध्मापिताः मम।
मण्डपे वृक्षमूले वा, सन्तापो मे न विद्यते॥1580॥
''त्रिंशकल्पसहस्रे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, सर्वदानस्येदं फलम्॥1581॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1582॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1583॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1584॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् सर्वदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्माणां पारगः।
अध्यवगाह्य हिमवन्तम्, न्यसीदत् लोकनायकः॥1585॥

मैंने श्रामण्य-भाव प्राप्त किया मुझे क्लेश जलाता नहीं है और मण्डप या वृक्षमूल में बैठने मात्र से मेरे सन्ताप नष्ट हो जाते हैं॥1580॥

अब से तीस हजार कल्प पहले जो मैंने दान दिया था यह उस कर्म का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1581॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1582॥

बुद्ध के समीप मेरा स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1583॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1584॥

इस प्रकार आयुष्मान् सर्वदायक स्थविर ने इन गाथओं को कहा-

पद्मोत्तर नाम के लोकनायक जिन सभी धर्मों में पारंगत हो हिमालय की अत्यधिक गहराई में जाकर बैठे॥1585॥

''नाहं अद्दक्खिं [पस्सामि (?)] सम्बुद्धं, नपि सद्दं सुणोमहं।
मम भक्खं गवेसन्तो, आहिण्डामि वने अहं [तदा (सी॰)]॥1586॥
''तत्थद्दस्सासिं सम्बुद्धं, द्वत्तिंसवरलक्खणं।
दिस्वान वित्तिमापज्जिं [चित्तमापज्जि (सी॰), चित्तमापज्जिं (स्या॰)], सत्तो को नामयं भवे॥1587॥
''लक्खणानि विलोकेत्वा, मम विज्जं अनुस्सरिं।
सुतञ्हि मेतं वुड्ढानं, पण्डितानं सुभासितं॥1588॥
''तेसं यथा तं वचनं, अयं बुद्धो भविस्सति।
यंनूनाहं सक्करेय्यं, गतिं मे सोधयिस्सति॥1589॥
''खिप्पं अस्समामागन्त्वा, मधुतेलं गहिं अहं।
कोलम्बकं गहेत्वान, उपगच्छिं विनायकं [नरासभं (सी॰)]॥1590॥

''नाऽहम् अद्राक्षं सम्बुद्धम्, नाऽपि शब्दं अशृणवमहम्।
मम भक्ष्यं **गवेषयन्**, आहिण्डे वने अहम्॥1586॥
''तत्रापश्यम् सम्बुद्धम्, द्वत्रिंशद्वरलक्षणम्।
दृष्ट्वा वित्तिमापद्ये, सत्वः को नामोऽयं भवेत्॥1587॥
''लक्षणानि विलोक्य, मम विद्याम् अन्वस्मरम्।
श्रुतञ्हि मेतेषां वृद्धानाम्, पण्डितानां सुभाषितम्॥1588॥
''तेषां यथा तद्वचनम्, अयं बुद्धो भविष्यति।
यन्नूनाऽहं **सत्कुर्याम्**, गतिं मे शोधयिष्यति॥1589॥
''क्षिप्रम् आश्रममागत्य, मधुतैलम् अगृह्लम् अहम्।
कोलम्बकं गृहीत्वा, उपागच्छं विनायकम्॥1590॥

न हि मैंने सम्बुद्ध को देखा है और न ही उनके शब्द मैंने सुने हैं। मैं भोजन की गवेषणा में वन में इधर-उधर घूमता हूँ॥1586॥

मैंने तब उस स्थान पर बत्तीस लक्षणों से युक्त सम्बुद्ध को देखा और देखकर सोचा कि इस प्राणी का क्या नाम है॥1587॥

लक्षणों को देखकर मैंने ज्ञान का अनुस्मरण किया। मैंने श्रेष्ठ, वृद्ध एवं पण्डितों जनों के भी सुभाषित वचनों को सुना है॥1588॥

जैसे उनके ये वचन हैं कि यह बुद्ध भविष्य में होगें तो क्यों न मै इनका सत्कार करूँ, वे मेरी गति का शोधन कर देंगे॥1589॥

मैं शीघ्र ही आश्रम आ गया और एक बड़े पात्र में मधु तेल को ग्रहण कर विनायक के समीप गया॥1590॥

''तिदण्डके गहेत्वान, अब्भोकासे ठपेसहं।
पदीपं पज्जलित्वान, अट्ठक्खत्तुं अवन्दहं॥1591॥
''सत्तरत्तिन्दिवं बुद्धो, निसीदि पुरिसुत्तमो।
ततो रत्या विवसाने, वुट्ठासि लोकनायको॥1592॥
''पसन्नचित्तो सुमनो, सब्बरत्तिन्दिवं अहं।
दीपं बुद्धस्स पादासिं, पसन्नो सेहि पाणिभि॥1593॥
''सब्बे वना गन्धमया, पब्बते गन्धमादने।
बुद्धस्स आनुभावेन, आगच्छुं बुद्धसन्तिकं [उपगच्छुं तदा जिनं (सी॰)]॥1594॥
''ये केचि पुप्फगन्धासे, पुप्फिता धरणीरुहा।
बुद्धस्स आनुभावेन, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1595॥

''त्रिदण्डकान् गृहीत्वा, अभ्रावकाशे स्थापयमहम्।
प्रदीपं प्रज्वाल्य, अष्टकृत्व अवन्देऽहम्॥1591॥
''सप्तरात्रिन्दिवं बुद्धः, न्यसदत् पुरुषोत्तमः।
ततः रत्याः विवसाने, उदतिष्ठत् लोकनायकः॥1592॥
''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, सर्वरात्रिन्दिवम् अहम्।
दीपं बुद्धाय प्रादाम्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्॥1593॥
''सर्वे वनाः गन्धमयाः, पर्वते गन्धमादने।
बुद्धस्य आनुभावेन, आगच्छं बुद्धस्यान्तिकम्॥1594॥
''ये केचित् पुष्पगन्धासे, पुष्पिताः धरणीरुहाः।
बुद्धस्य आनुभावेन, सर्वे सन्न्यपतन् तदा॥1595॥

तिपाई को ग्रहण कर मैंने खुले आकाश में स्थापित किया और दीपक को प्रज्वलित कर आठ बार वन्दना किया॥1591॥

सात रात और दिन पुरुषोत्तम बुद्ध वहाँ बैठे और रात के बीत जाने पर लोकनायक वहाँ से चले गये॥1592॥

सभी रात और दिन मैंने प्रसन्नचित्त और सुमन से प्रसन्नता पूर्वक दोनों हाथों से बुद्ध को दीपक प्रदान किया॥1593॥

बुद्ध के प्रताप से गन्धमादन पर्वत पर सभी वन सुगन्ध-युक्त थे। जहाँ वे वास कर रहे थे, मैं उनके समीप आ गया॥1594॥

ये जो कुछ फूलों की सुगन्ध और पृथ्वी पर उगने वाले पुष्पित वृक्ष हैं, बुद्ध के प्रताप से सभी उनके सम्मुख एकत्रित हो गए॥1595॥

''यावता हिमवन्तम्हि, नागा च गरुळा उभो।
धम्मञ्च सोतुकामा ते, आगच्छुं बुद्धसन्तिकं॥1596॥

''देवलो नाम समणो, बुद्धस्स अग्गसावको।
वसीसतसहस्सेहि, बुद्धसन्तिकुपागमि॥1597॥

''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1598॥

'''यो मे दीपं पदीपेसि, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1599॥

'''सट्ठि कप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1600॥

''यावत् हिमवन्ते, नागाश्च गरुडा उभौ।
धर्मञ्च श्रोतुकामास्ते, आगच्छं बुद्धस्यान्तिकम्॥1596॥

''देवलो नाम श्रमणः, बुद्धस्य अग्रश्रावकः।
वसीशतसहस्रैः, बुद्धस्यान्तिकमुपागमत्॥1597॥

''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमा गाथा अभाषत॥1598॥

'''यो मे दीपं प्रादीपयत्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1599॥

'''षष्टिकल्पसहस्राणि, देवलोके रंस्यते।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1600॥

जहाँ तक हिमालय पर्वत है, उस पर नाग और गरुड़ दोनों धर्म सुनने की कामना से बुद्ध के समीप आ गये॥1596॥

देवल नाम के श्रमण बुद्ध के अग्रश्रावक सौ हजार संयमित शिष्य बुद्ध के समीप आ गये॥1597॥

तब आहुतियों के ग्रहणकर्ता पद्मोत्तर, लोकविद् ने भिक्षुसंघ में बैठकर इन गाथाओं को कहा॥1598॥

ये जिसने मुझे प्रसन्नतापूर्वक अपने दोनों हाथों से प्रदीप प्रदान किया है, मैं उसकी कीर्ति कहूँगा। ऐसे मेरे वचनों को सुनो॥1599॥

साठ हजार कल्पों तक वह देवलोक में रमण करेगा और हजार बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1600॥

‘‘‘छत्तिसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति।
पथवियं सत्तसतं, विपुलं रज्जं करिस्सति॥1601॥
‘‘‘पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
इमिना दीपदानेन, दिब्बचक्खु भविस्सति॥1602॥
‘‘‘समन्ततो अट्ठकोसं [अड्ढकोसं (सी॰ स्या॰)], पस्सिस्सति अयं सदा।
देवलोका चवन्तस्स, निब्बत्तन्तस्स जन्तुनो॥1603॥
‘‘‘दिवा वा यदि वा रत्तिं, पदीपं धारयिस्सति।
जायमानस्स सत्तस्स, पुञ्ञकम्मसमङ्गिनो॥1604॥
‘‘‘यावता नगरं आसि, तावता जोतयिस्सति।
उपपज्जति यं योनिं, देवत्तं अथ मानुसं॥1605॥

‘‘‘षट्त्रिंशकृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति।
पृथ्व्यां सप्तशतम्, विपुलं राज्यं करिष्यति॥1601॥
‘‘‘प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्।
अनेन दीपदानेन, दिव्यचक्षुर्भविष्यति॥1602॥
‘‘‘समन्तत अष्टकोशम्, द्रक्ष्यति अयं सदा।
देवलोकाच्च्यवान्तस्य, निर्वृत्यान्तस्य जन्तवः॥1603॥
‘‘‘दिवा वा यदि वा रात्रौ, प्रदीपं धारयिष्यति।
जायमानस्य सत्वस्य, पुण्यकर्मसमङ्गिनः॥1604॥
‘‘‘यावत् नगरम् आसीत्, तावत् द्योतयिष्यति।
उपपद्यते यां योन्याम्, देवत्वम् अथ मानुषम्॥1605॥

36 बार वह देवेन्द्र हो देवताओं में राज्य करेगा और सौ बार पृथ्वी पर विपुल राज्य करेगा॥1601॥

उसका प्रदेश राज्य विपुल और गणना में असंख्य होगा और इस प्रदीप दान से दिव्य चक्षु वाला होगा॥1602॥

चारों ओर आठ कोस तक यह देवलोक से च्युत होने वाले तथा जन्म लेने वाले जन्तुओं को सदा देखेगा॥1603॥

दिन हो या रात हो वह सदैव प्रदीप को धारण करेगा और उत्पन्न हुए सत्त्वों को पुण्यकर्म से युक्त करेगा॥1604॥

वह देवत्त्व हो अथवा मनुष्यत्व, जिस-जिस योनि में उत्पन्न होता है, वहाँ तक उसकी आभा प्रकाशित होती है॥1605॥

‘‘‘अस्सेव दीपदानस्स, [अट्ठदीपफलेन हि। उपट्ठिस्सन्तिमं जन्तुं (स्या॰), अट्ठ दीपा फलेन हि। न जहिस्सन्ति’मं जन्तुं (?)] अट्ठदीपफलेन हि।

न जयिस्सन्तिमं जन्तू [अट्ठदीपफलेन हि। उपट्ठिस्सन्तिमं जन्तुं (स्या॰), अट्ठ दीपा फलेन हि। न जहिस्सन्ति’मं जन्तुं (?)], दीपदानस्सिदं फलं॥1606॥

‘‘‘कप्पसतसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।

गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1607॥

‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।

सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो॥1608॥

‘‘‘तोसयित्वान सम्बुद्धं, गोतमं सक्यपुङ्गवं।

अजितो नाम नामेन, हेस्सति सत्थु सावको’॥1609॥

‘‘सट्ठि कप्पसहस्सानि, देवलोके रमिं अहं।

तत्रापि मे दीपसतं, जोतते निच्चकालिकं [सब्बकालिकं (सी॰)]॥1610॥

‘‘‘अस्यैव दीपदानस्स, अष्टदीपफलेन हि।

न जयिष्यान्तिमं जन्तुम्, दीपदानस्येदं फलम्॥1606॥

‘‘‘कल्पशतसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।

गोतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1607॥

‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।

सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः॥1608॥

‘‘‘तोषयित्वा सम्बुद्धम्, गोतमं शाक्यपुङ्गवम्।

अजितो नाम नाम्ना, भविष्यति शास्तुः श्रावकः’॥1609॥

‘‘षष्टिकल्पसहस्राणि, देवलोके रमे अहम्।

तत्रापि मे दीपशतम्, द्योतते नित्यकालिकम्॥1610॥

इस दीपदान का ही परिणाम है कि इसे आठ द्वीप प्राप्त होगा। आठ द्वीपों के फल इस प्राणी को नहीं छोड़ पायेंगे॥1606॥

अब से सौ हजारवें कल्प में इक्ष्वाकुकुल में उत्पन्न हो गौतम नाम के गोत्र से लोक में शास्ता होंगे॥1607॥

उनके धर्म में दीक्षित, धर्मनिर्मित औरस तथा सर्वास्रवों को जानकर वह निर्वाण को प्राप्त करेगा॥1608॥

शाक्य कुलोत्पन्न श्रेष्ठ गौतम सम्बुद्ध को सन्तुष्ट करके अजित नामक शास्ता का श्रावक होगा॥1609॥

साठ हजार कल्पो तक मैंने देवलोक में रमण किया और वहाँ पर भी मेरे लिए सौ दीपक सदैव प्रकाशित रहते हैं॥1610॥

''देवलोके मनुस्से वा, निद्धावन्ति पभा मम।
बुद्धसेट्ठं सरित्वान, भिय्यो हासं जनेसहं॥1611॥
''तुसिताहं चवित्वान, ओक्कमिं मातुकुच्छियं।
जायमानस्स सन्तस्स, आलोको विपुलो अहु॥1612॥
''अगारा अभिनिक्खम्म, पब्बजिं अनगारियं।
बावरिं उपसङ्कम्म, सिस्सत्तं अज्झुपागमिं॥1613॥
''हिमवन्ते वसन्तोहं, अस्सोसिं लोकनायकं।
उत्तमत्थं गवेसन्तो, उपगच्छिं विनायकं॥1614॥
''दन्तो बुद्धो दमेतावी, ओघतिण्णो निरूपधि।
निब्बानं कथयी बुद्धो, सब्बदुक्खप्पमोचनं॥1615॥

''देवलोके मनुष्ये वा, निर्द्धावन्ति प्रभा **मम**।
बुद्धश्रेष्ठं **स्मृत्वा**, भूयः हासम् **अजायेऽहम्**॥1611॥
''तुषितात् अहं च्युत्वा, अवाक्रामं **मातृकुक्षौ**।
जायमानस्य शान्तस्य, आलोको विपुलोऽभूत्॥1612॥
''आगारात् अभिनिष्क्रम्य, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
बावरिम् उपसंक्राम्य, शिष्यत्वम् अध्युपागमम्॥1613॥
''हिमवति वसन्तोऽहम्, अश्रौषं लोकनायकम्।
उत्तमार्थं गवेषयन्, उपागच्छं विनायकम्॥1614॥
''दान्तो बुद्धो **दमेताविन्**, ओघतीर्णः निरूपधिः।
निर्वाणं अकथयत् बुद्धः, सर्वदुःखप्रामोचनम्॥1615॥

देवलोक हो अथवा मनुष्य, मेरी आभा दूर-दूर तक नित्य फैलती है, और बुद्धश्रेष्ठ को स्मरण कर मुझमें अत्यधिक प्रसन्नता उत्पन्न हुई॥1611॥

तुषितलोक से च्युत होकर मैं माता की कुच्छि (गर्भ) में प्रवेश किया और जब उत्पन्न हुआ तो विपुल आलोक हुआ॥1612॥

घर से निकलकर मैं प्रव्रजित हुआ और बावरि के समीप जाकर उनके सहमति से शिष्यत्व को प्राप्त किया॥1613॥

हिमालय पर्वत पर बसे हुए लोकनायक को मैंने सुना और उत्तम अर्थ की खोज में विनायक के समीप गया॥1614॥

इन्द्रियों को संयमित किये हुए और पुनर्जन्म रूपी बाढ़ को पार किये हुए बुद्ध निर्वाण के विषय में बताने वाले तथा सभी दुःखों के विषय में कहने वाले हैं॥1615॥

''तं मे आगमनं सिद्धं, तोसितोहं महामुनिं।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥1616॥

''सतसहस्सितो कप्पे, यं दीपमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, दीपदानस्सिदं फलं॥1617॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1618॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1619॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1620॥

इत्थं सुदं आयस्मा अजितो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

अजितत्थेरस्सापदानं दसमं।
पिलिन्दवच्छवग्गो चत्तालीसमो।

''तन्मे आगमनं सिद्धम्, तोषितोऽहं महामुनिम्।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1616॥

''शतसहस्रेतः कल्पे, यं दीपमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, दीपदानस्येदं फलम्॥1617॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1618॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1619॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1620॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् अजितस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

मेरा आगमन सिद्ध हुआ और मैंने महामुनि को सन्तुष्ट करके तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1616॥

सौ हजारवें कल्प में मैंने जो दीपक दान दिया था, यह उस दीपक दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1617॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1618॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1619॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1620॥

इस प्रकार आयुष्मान् अजित स्थविर ने इन गाथाओं को कहा

तस्सुद्दानं –

पिलिन्दवच्छो सेलो च, सब्बकित्ती मधुंददो।
कूटागारी बाकुलो च, गिरि सळलसव्हयो॥
सब्बदो अजितो चेव, गाथायो गणिता इह।
सतानि पञ्च गाथानं, वीसति च तदुत्तरीति॥

अथ वग्गोदानं –

पदुमारक्खदो चेव, उमा गन्धोदकेन च।
एकपद्म सद्दसञ्ञी, मन्दारं बोधिवन्दको॥
अवटञ्च पिलिन्दि [एवमेव दिस्सति] च, गाथायो गणिता इह।
चतुसत्तति गाथायो, एकादस सतानि च॥

पदुमवग्गदसकं।
चतुत्थसतकं समत्तं।

तस्योदानम् –

पिलिन्दवत्सः शैलश्च, सर्वकीर्ति मधु ददः।
कूटागारी बाकुलश्च, गिरि सरलसाह्वयः॥
सर्वदाजितश्चैव, गाथा गणिता इह।
शतानि पञ्च गाथानाम्, विंशति च **तदुत्तरीति**॥

अथ वर्गोदानम् –

पद्मारक्षदश्चैव, उमा गन्धोदकेन च।
एकपद्म शब्दसंज्ञी, मन्दारं बोधिवन्दकः॥
अवटश्च **पिलिन्दि** च, गाथा गणिता इह।
चतुसप्तति गाथा, एकादश शतानि च॥

उनके उदान- पिलिन्दवच्छ सेल, सर्वकीर्ति मधुदायक कूटागारिय, बाकुल, गिरिमानन्द सळलमण्ड सर्वदायक और अजित के शीर्षक से यहाँ पर 519 गाथाओं की गणना हैं।

वर्गोदान- पद्मारक्ष, उमा, गन्धोदक, एकपद्म, शब्दसंज्ञी, मन्दार, बोधिवन्दक, अवट और पिलिन्दी, इस प्रकार यहाँ कुल 1174 गाथाएँ गणित हैं।

41. मेत्तेय्यवग्गो

1. तिस्समेत्तेय्यत्थेरअपदानं

पालि- ‘‘पब्भारकूटं निस्साय, सोभितो नाम तापसो।
पवत्तफलं भुञ्जित्वा, वसति पब्बतन्तरे॥1621॥
‘‘अग्गिं दारुं आहरित्वा, उज्जालेसिं अहं तदा।
उत्तमत्थं गवेसन्तो, ब्रह्मलोकूपपत्तिया॥1622॥
‘‘पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
ममुद्धरितुकामो सो, आगच्छि मम सन्तिके॥1623॥
‘‘किं करोसि महापुञ्ञ, देहि मे अग्गिदारुकं।
अहमग्गिं परिचरे, ततो मे सुद्धि होहिति [हेहिति (सी॰)]॥1624॥
‘‘सुभद्दको त्वं मनुजे, देवते त्वं पजानसि।
तुवं अग्गिं परिचर, हन्द ते अग्गिदारुकं॥1625॥

संस्कृत- ‘‘प्राग्भारकूटं निश्राय, शोभितो नाम तापसः।
प्रवर्त्तफलं **भुङ्क्त्वा**, वसति पर्वतान्तरे॥1621॥
‘‘अग्निं दारुम् आहृत्य, **उदजालिषम्** अहं तदा।
उत्तमार्थं गवेषयन्, ब्रह्मलोकोपप्राप्त्यै॥1622॥
‘‘पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
मामुद्धर्तुकामः सः, आगच्छन्मम अन्तिके॥1623॥
‘‘किं करोषि महापुण्यम्, देहि मे अग्निदारुकम् ।
अहमग्निं परिचरेत्, ततो मे शुद्धिः भव इति॥1624॥
‘‘सुभद्रकस्त्वं मनुजान्, देवतान्/देवान् त्वं प्रजानासि।
त्वम् अग्निं परिचर, हन्त ते अग्निदारुकम्॥1625॥

हिन्दी- हिमालय पर्वत की ढलान से निकलकर शोभित नामक तापस ने गिरे हुए फल को खाकर पर्वत के मध्य में वास किया॥1621॥

तब मैंने लकड़ी की आग लाकर उजाला किया और ब्रह्मलोक को प्राप्त करने के लिए उत्तम अर्थ की गवेषणा की॥1622॥

आहुतियों के ग्रहणकर्ता वह पद्मोत्तर लोकविद्, मेरे उद्धार की कामना से मेरे समीप आ गये॥1623॥

महापुण्य तुम क्या करते हो? ये अग्नि की लकड़ी मुझे दे दो मैं इस अग्नि की परिचर्या करें और जिससे मेरी शुद्धि हो॥1624॥

सुभद्र तुम मनुष्यों को, देवताओं को भली प्रकार से जानते हो, और तुम अग्नि-परिचर्या करो। तुम्हारे अग्नि की लकड़ी अद्भुत है॥1625॥

''ततो कट्ठं गहेत्वान, अग्गिं उज्जालयी जिनो।
न तत्थ कट्ठं पज्झायि, पाटिहेरं महेसिनो॥1626॥
''न ते अग्गि पज्जलति, आहुती ते न विज्जति।
निरत्थकं वतं तुय्हं, अग्गिं परिचरस्सु मे॥1627॥
''कीदिसो सो [ते (स्या॰ क॰)] महावीर, अग्गि तव पवुच्चति।
मय्हम्पि कथयस्सेतं, उभो परिचरामसे॥1628॥
''हेतुधम्मनिरोधाय, किलेससमणाय च।
इस्सामच्छरियं हित्वा, तयो एते ममाहुती॥1629॥
''कीदिसो त्वं महावीर, कथं गोत्तोसि मारिस।
आचारपटिपत्ति ते, बाळ्हं खो मम रुच्चति॥1630॥

''ततः काष्ठं गृहीत्वा, अग्निम् उदज्वालीत् जिनः।
न तत्र काष्ठं प्राध्मापयत्, प्रातिहार्यं महर्षेः॥1626॥
''न ते अग्निः प्रज्ज्वलति, आहुती ते न विद्यते।
निरर्थकं **वतं** तुभ्यम्, अग्निं परिचरस्व मे॥1627॥
''कीदृशः सो महावीर, अग्निः तव प्रोच्यते।
मह्यमपि **कथयस्वेतम्**, उभौ परिचरामहे॥1628॥
''हेतुधर्मनिरोधाय, क्लेशश्रमणाय च।
ईर्ष्यामात्सर्यं हित्वा, त्रय एते ममाहुतिः॥1629॥
''कीदृशस्त्वं महावीर, कथं गोत्रोऽसि मार्ष।
आचारप्रतिपत्तिस्ते, बाढं खलु मम रुच्यते॥1630॥

उस लकड़ी (मशाल) को ग्रहण कर मैंने जिन के लिए अग्नि का प्रज्ज्वलन किया। यह महर्षि का करिश्मा है कि वह लकड़ी धुआँ नहीं छोड़ती है॥1626॥

न तो तुम्हारी अग्नि जलती है और न ही वह आहुति के लिए होती है। निश्चय ही यह निर्थरक है, मेरी अग्नि की परिचर्या करो॥1627॥

हे महावीर! यह कैसी अग्नि है मुझे भी बतायें। हम दोनों परिचर्या करेंगे॥1628॥

हेतुधर्म के निरोध के लिए और क्लेश के नष्ट होने के लिये तथा ईर्ष्या-मात्सर्य को छोड़ने वाली ये महा-आहुतियाँ हैं॥1629॥

हे महावीर! तुम कैसे हो, कैसा आपका गोत्र है? वे आपके वे आचार क्रिया कलाप मुझे अत्यधिक रुचिकर हैं॥1630॥

''खत्तियम्हि कुले जातो, अभिञ्ञापारमिं गतो।
सब्बासवपरिक्खीणो, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1631॥
''यदि बुद्धोसि सब्बञ्ञू, पभङ्कर तमोनुद।
नमस्सिस्सामि तं देव, दुक्खस्सन्तकरो तुवं॥1632॥
''पत्थरित्वाजिनचम्मं, निसीदनमदासहं।
निसीद नाथ सब्बञ्ञु, उपट्ठिस्सामहं तुवं॥1633॥
''निसीदि भगवा तत्थ, अजिनम्हि सुवित्थते।
निमन्तयित्वा सम्बुद्धं, पब्बतं अगमासहं॥1634॥
''खारिभारञ्च पूरेत्वा, तिन्दुकफलमाहरिं।
मधुना योजयित्वान, फलं बुद्धस्सदासहं॥1635॥

''क्षत्रिये कुले जातः, अभिज्ञापारं गतः।
सर्वास्रवपरिक्षीणः, नास्तीदानीं पुनर्भवः॥1631॥
''यदि बुद्धोऽसि सर्वज्ञ, प्रभङ्कर तमोनुद।
नंस्यामि त्वां देव, दुःखस्यान्तकरः त्वम्॥1632॥
''प्रस्तार्यजिनचर्म, निसीदनमदामहम्।
निसीद नाथ सर्वज्ञ, **उपस्थास्याम्यहं** त्वाम्॥1633॥
''न्यसदत् भगवान् तत्र, अजिने सुविस्तृते।
निमन्त्रय्य सम्बुद्धम्, पर्वतम् अगमामहम्॥1634॥
''खारिभारञ्च पूरयित्वा, तिन्दुकफलमाहरम्।
मधुना योजयित्वा, फलं बुद्धायादामहम्॥1635॥

क्षत्रिय कुल में उत्पन्न, अभिज्ञापारमिता को पार किये हुए सभी आस्रवों को क्षीण कर चुके हैं, अब आपका पुर्नजन्म नहीं है॥1631॥

यदि आप सर्वज्ञ बुद्ध, प्रभाकर और अन्धकार को दूर करने वाले हैं तो आप दुःख का अन्त करने वाले हैं, हे देव मैं आपको नमस्कार करूँगा॥1632॥

तब चीते की खाल को फैलाकर मैंने आसन प्रदान किया। हे सर्वज्ञ नाथ आप इस आसन पर बैठें और मैं आपकी सेवा करूँगा॥1633॥

भली प्रकार से फैले हुए चीते की खाल पर भगवान् बैठे, तब मैं सम्बुद्ध को निमन्त्रण देकर पर्वत पर आ गया॥1634॥

तिन्दुक फल को लाकर मैंने टोकरी को पूरित किया और शहद से योजित कर बुद्ध को फल प्रदान किया॥1635॥

''मम निज्झायमानस्स, परिभुञ्जि तदा जिनो।
तत्थ चित्तं पसादेसिं, पेक्खन्तो लोकनायकं॥1636॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
ममस्समे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1637॥
'''यो मं फलेन तप्पेसि, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1638॥
'''पञ्चवीसतिक्खत्तुं सो, देवरज्जं करिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1639॥
'''तस्स सङ्कप्पमञ्ञाय, पुब्बकम्मसमङ्गिनो।
अन्नं पानञ्च वत्थञ्च, सयनञ्च महारहं॥1640॥

''मह्म निर्ध्यायमानाय, पर्यभुनक् तदा जिनः।
तत्र चित्तं प्रासादयम्, प्रेक्ष्यमाणः लोकनायकम्॥1636॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
ममाश्रमे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥1637॥
'''यो मां फलेन अतर्पयत्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, श्रृणुत मम भाषमाणस्य॥1638॥
'''पञ्चविंशतिकृत्वः सः, देवराज्यं करिष्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1639॥
'''तस्स सङ्कल्पमाज्ञाय, पूर्वकर्मसमङ्गिनः।
अन्नं पानञ्च वस्त्रञ्च, शयनञ्च महार्घम्॥1640॥

तब मेरे द्वारा दिए गए को ध्यानरत जिन ने भली प्रकार ग्रहण किया, तब लोकनायक देखते हुए मैंने उनमे अपने चित्त को प्रसन्न किया॥1636॥

आहुतियो को ग्रहणकर्ता पद्मोत्तर, लोकविद् ने मेरे आश्रम में बैठकर इन गाथाओं को कहा॥1637॥

प्रसन्नमन से जिसने अपने दोनों हाथों से मुझे जो फल से मुझे सन्तुष्ट किया है, मैं उसकी कीर्ति कहूँगा। मेरे ऐसे वचनों को सुनो॥1638॥

25 बार वह देवताओं पर राज्य करेगा और हजार बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1639॥

पूर्वजन्म के कर्म से युक्त उसके सङ्कल्प को जानकर अत्यन्त मूल्यवान् अन्न, जल, वस्त्र और बहुमूल्य शयन॥1640॥

‘‘‘पुञ्ञकम्मेन संयुत्ता, निब्बत्तिस्सन्ति तावदे।
सदा पमुदितो चायं, भविस्सति अनामयो॥1641॥
‘‘‘उपपज्जति यं योनिं, देवत्तं अथ मानुसं।
सब्बत्थ सुखितो हुत्वा, मनुस्सत्तं गमिस्सति॥1642॥
‘‘‘अज्झायको मन्तधरो, तिण्णं वेदान पारगू।
सम्बुद्धं उपगन्त्वान, अरहा सो भविस्सति’॥1643॥
‘‘यतो सरामि अत्तानं, यतो पत्तोस्मि विञ्ञुतं।
भोगे मे ऊनता नत्थि, फलदानस्सिदं फलं॥1644॥
‘‘वरधम्ममनुप्पत्तो, रागदोसे समूहनिं।
सब्बासवपरिक्खीणो, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1645॥

‘‘‘पुण्यकर्मणा संयुक्ताः, निर्वर्त्तयिष्यन्ति तावदेव।
सदा प्रमुदितश्चाऽयम्, भविष्यति अनामयः॥1641॥
‘‘‘उपपद्यते यां योनिम्, देवत्वम् अथ मानुषम्।
सर्वत्र सुखितो भूत्वा, मनुष्यत्वं गमिष्यति॥1642॥
‘‘‘आध्यायको मन्त्रधरः, त्रयाणां वेदानां पारगः।
सम्बुद्धम् उपगत्य, अर्हत् सो भविष्यति’॥1643॥
‘‘यतः स्मरामि आत्मानम्, यतः प्राप्तोस्मि विज्ञत्वम्।
भोगे मे ऊनता नास्ति, फलदानस्येदं फलम्॥1644॥
‘‘वरधर्ममनुप्राप्तः, रागदोषान् **समूहनिम्/समुद्धृतम्**।
सर्वास्रवपरिक्षीणः, नास्ति **इदानीं** पुनर्भवः॥1645॥

उसके पूर्वकर्म के कारण उसके लिए तुरन्त उपस्थित हो जाएँगे। वह सदैव प्रसन्न एवं रोग-मुक्त रहेगा॥1641॥

वह जिस भी योनि में जन्म ग्रहण करेगा वह देवत्व हो अथवा मनुष्यत्व, सभी जगह सुखी होगा और मनुष्यत्व को प्राप्त करेगा॥1642॥

वह तीनों विद्याओं के पारङ्गत, मन्त्रधर एवं उपाध्याय सम्बुद्ध के समीप जाकर अर्हत् होगा’॥1643॥

जहाँ तक मेरी आत्मास्मृति है और जब से मैंने विज्ञता को प्राप्त किया है तब से मेरे भोग में कोई न्यूनता नहीं है। यह फल दान का ही सुपरिणाम है॥1644॥

श्रेष्ठधर्म को प्राप्त कर राग-दोष को मूलरूप से नष्ट कर लिया है। मैंने सभी आस्रवों को नष्ट कर दिया है, अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा॥1645॥

''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समुद्धृताः।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥1646॥
''स्वागतं वत मे आसि, मम बुद्धस्स सन्तिके।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥1647॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥1648॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिस्समेत्तेय्यो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तिस्समेत्तेय्यत्थेरस्सापदानं पठमं।

2. पुण्णकत्थेरअपदानं

''पब्भारकूटं निस्साय, सयम्भू अपराजितो।
आबाधिको च सो [आबाधिको गरु (सी॰)] बुद्धो, वसति पब्बतन्तरे॥1649॥
''मम अस्समसामन्ता, पनादो आसि तावदे।
बुद्धे निब्बायमानम्हि, आलोको उदपज्जथ [आसि तावदे (स्या॰ क॰)]॥1650॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥1646॥
''स्वागतं वत मे आसीत्, मम बुद्धस्य अन्तिके।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1647॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1648॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तिष्यमैत्रेयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''प्राग्भारकूटं निस्राय, स्वयम्भू अपराजितः।
आबाधिकश्च सः बुद्धः, वसति पर्वतान्तरे॥1649॥
''मम **आश्रमसमन्ताद्, प्रनाद** आसीत् तावदेव।
बुद्धे निर्वायमाने, आलोक उदपद्यत॥1650॥

मेरे समस्त क्लेश दग्ध हो चुके हैं, मैं भवचक्रों से मुक्त हो चुका हूँ। हाथी के समान बन्धन को तोड़कर आस्रवरहित हो विहार कर रहा हूँ॥1646॥

मैं सौभाग्यशाली था कि बुद्धश्रेष्ठ के समीप पहुँचा तथा तीनों विद्याओं को प्राप्त मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1647॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1648॥

इस प्रकार आयुष्मान् तिस्रमैत्रेय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय पर्वत की ढलान से निकलकर स्वयम्भू अपराजित बुद्ध किसी रोग से ग्रस्त हो पर्वत पर वास कर रहे थे॥1649॥

जब मैं आश्रम में पहुँचा तब वहाँ पर अत्यधिक शोर था। बुद्ध के निर्वाण को प्राप्त करते ही वहाँ चारों ओर प्रकाश फैल गया॥1650॥

''यावता वनसण्डस्मिं, अच्छकोकतरच्छका।
वाळा च [ब्यग्घा (सी॰)] केसरी सब्बे, अभिगज्जिंसु तावदे॥1651॥
''उप्पातं तमहं दिस्वा, पब्भारं अगमासहं।
तत्थद्दस्सासिं सम्बुद्धं, निब्बुतं अपराजितं॥1652॥
''सुफुल्लं सालराजंव, सतरंसिंव उग्गतं।
वीतच्चिकंव अङ्गारं, निब्बुतं अपराजितं॥1653॥
''तिणं कट्ठञ्च पूरेत्वा, चितकं तत्थकासहं।
चितकं सुकतं कत्वा, सरीरं झापयिं अहं॥1654॥
''सरीरं झापयित्वान, गन्धतोयं समोकिरिं।
अन्तलिक्खे ठितो यक्खो, नाममग्गहि तावदे॥1655॥

''यावत् वनसण्डे, **अच्छकोकतरच्छकाः**।
व्याघ्राश्च केशरी सर्वे, अभ्यगर्जन् तावदेव॥1651॥
''उत्पातं तमहं दृष्ट्वा, प्राग्भारम् अगमामहम्।
तत्राद्राक्षं सम्बुद्धम्, निर्वृतम् अपराजितम्॥1652॥
''सुफुल्लं शालराजमिव, **शतरश्मिरिव** उद्गतम्।
वीतर्चिकमिव अङ्गारम्, निर्वृतम् अपराजितम्॥1653॥
''तृणं काष्ठञ्च पूरयित्वा, चितकं तत्राकार्षमहम्।
चितकं सुकृतं कृत्वा, शरीरमध्मापयम् अहम्॥1654॥
''शरीरं ध्मापयित्वा, गन्धतोयं समवाकिरम्।
अन्तरिक्षे स्थितो यक्षः, नाममग्रहीत् तावदेव॥1655॥

जहाँ तक वनखण्ड व्याप्त था, वहाँ भालू, रीछ, जंगली कुत्ते, लकडबग्घा, व्याघ्र, सिंह सभी वहाँ पर तब तक अत्यधिक गर्जना की॥1651॥

तब उल्का पात को देखकर मैं पर्वत की ढलान में आ गया और वहाँ शान्त-चित्त अपराजित सम्बुद्ध को देखा॥1652॥

सात रश्मियों से युक्त उदित सूर्य के समान, भली प्रकार पुष्पित शालराजा तथा लौरहित अङ्गार के समान निर्वृत्त अपराजित को॥1653॥

तृणकाष्ठ को इकट्ठा करके मैंने वहाँ चिता का निर्माण किया तथा सम्यक् प्रकार से चिता को बना कर (उनके) शरीर को जलाया दिया॥1654॥

शरीर को जलाकर मैंने गन्धयुक्त, जल को छिड़का, तब अन्तरिक्ष में स्थित यक्ष ने इनका नाम ग्रहण किया॥1655॥

''यं पूरितं [तं पूरितं (स्या॰), सप्पुरिस (क॰)] तया किच्चं, सयम्भुस्स महेसिनो।
पुण्णको नाम नामेन, सदा होहि तुवं [यदा होसि तुवं (स्या॰), सदा होहिति त्वं (क॰)]
मुने॥1656॥

''तम्हा काया चवित्वान, देवलोकं अगच्छहं।
तत्थ दिब्बमयो गन्धो, अन्तलिक्खा पवस्सति [अन्तलिक्खे पवायति (सी॰)]॥1657॥

''तत्रापि नामधेय्यं मे, पुण्णकोति अहू तदा।
देवभूतो मनुस्सो वा, सङ्कप्पं पूरयामहं॥1658॥

''इदं पच्छिमकं मय्हं, चरिमो वत्तते भवो।
इधापि पुण्णको नाम, नामधेय्यं पकासति॥1659॥

''तोसयित्वान सम्बुद्धं, गोतमं सक्यपुङ्गवं।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥1660॥

''यत् पूरितं त्वया कृत्यम्, स्वयम्भुवः महर्षेः।
पूर्णको नाम नाम्ना, सदा भव त्वं मुने॥1656॥

''तस्मात् कायात् च्युत्वा, देवलोकम् आगच्छाम्यहम्।
तत्र दिव्यमयो गन्धः, अन्तरिक्षात् प्रवर्षति/प्रवायति॥1657॥

''तत्रापि नामधेयं मे, पूर्णक इति अभूत् तदा।
देवभूतो मनुष्यो वा, सङ्कल्पं पूरयाम्यहम्॥1658॥

''इदं पश्चिमकं मम, चरमो वर्त्तते भवः।
इहापि पुर्णको नाम, नामधेयं प्रकाशति॥1659॥

''तोषयित्वा सम्बुद्धम्, गौतमं शाक्यपुङ्गवम्।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥1660॥

स्वयम्भू एवं महर्षि हेतु जो तुम्हारे द्वारा कृत्यकर्म पूर्ण किया गया, इसलिए हे मुने तुम सदा पुण्णक नाम वाले होओ ॥1656॥

तब उस काय से च्युत होकर मैं देवलोक में आ गया। जहाँ पर सदैव अन्तरिक्ष से दिव्यगन्ध की वर्षा होती है॥1657॥

तब वहाँ भी मैं पूर्णक नाम को धारण करने वाला हुआ और अब देवलोक अथवा मनुष्यलोक में मैं अपने संकल्प को पूर्ण करता हूँ॥1658॥

अब यह मेरा अन्तिम और चरम भव है। यहाँ भी पूर्णक नाम प्रकाशित है॥1659॥

शाक्यकुल में उत्पन्न श्रेष्ठ गौतम सम्बुद्ध को सन्तुष्ट कर तथा सभी आस्रवों को पूर्ण रूप से जानकर मैं आनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1660॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं कम्ममकरिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, तनुकिच्चस्सिदं फलं॥1661॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1662॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1663॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1664॥

इत्थं सुदं आयस्मा पुण्णको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

पुण्णकत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. मेत्तगुत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, असोको नाम पब्बतो।
तत्थासि अस्समो मय्हं, विस्सकम्मेन [विसुकम्मेन (सी॰ स्या॰ क॰)] मापितो॥1665॥

''सुमेधो नाम सम्बुद्धो, अग्गो कारुणिको मुनि।
निवासयित्वा पुब्बण्हे, पिण्डाय मे [मं (सी॰)] उपागमि॥1666॥

''एकनवतितमे कल्पे, यत् कर्माकरवं तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, **तनुकृत्यस्येदं** फलम्॥1661॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1662॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1663॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1664॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् पूर्णकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''हिमवन्तस्याविदूरे, अशोको नाम पर्वतः।
तत्रासीत् आश्रमो मम, विश्वकर्मणा मापितः॥1665॥

''सुमेधो नाम सम्बुद्धः, अग्रः कारुणिको मुनिः।
निवासय्य पूर्वाह्ले, पिण्डाय मे उपागमत्॥1666॥

अब से 91 वें कल्प में मैने जो कर्म किया था, उसी शरीरकृत्य का ही सुपरिणाम है मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1661॥

मेरे सभी क्लेश दग्ध हो चुके हैं। मैं भवचक्र से मुक्त हो चुका हूँ। हाथी के समान बन्धन को तोड़कर आस्रव रहित हो विहार कर रहा हूँ॥1662॥

मैं सौभाग्यशाली था कि बुद्धश्रेष्ठ के समीप पहुँचा तथा तीनों विद्याओं को प्राप्त कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1663॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1664॥

इस प्रकार आयुष्मान् पूर्णक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय पर्वत से कुछ दूरी पर अशोक नाम का पर्वत था। वहाँ पर व्यवस्थित रूप से निर्मित मेरा आश्रम था॥1665॥

सुमेध नाम के अग्र कारुणिक मुनि सम्बुद्ध पूर्वाह्ल के समय भिक्षाटन के लिए मेरे निवास स्थान पर आये॥1666॥

''उपागतं महावीरं, सुमेधं लोकनायकं।
पग्गय्ह सुगतपत्तं [सुगतं पत्तं (सी॰), सुभकं पत्तं (पी॰)], सप्पितेलं अपूरयिं [सप्पितेलेन पूरयिं (सी॰), सप्पितेलस्स'पूरयिं (?)]॥1667॥
''दत्वानहं बुद्धसेट्ठे, सुमेधे लोकनायके।
अञ्जलिं पग्गहेत्वान, भिय्यो [भीयो (सी॰), भीय्यो (पी॰)] हासं जनेसहं॥1668॥
''इमिना सप्पिदानेन, चेतनापणिधीहि च।
देवभूतो मनुस्सो वा, लभामि विपुलं सुखं॥1669॥
''विनिपातं विवज्जेत्वा, संसरामि भवाभवे।
तत्थ चित्तं पणिधित्वा, लभामि अचलं पदं॥1670॥
''लाभा तुय्हं सुलद्धं ते, यं मं अद्दक्खि ब्राह्मण।
मम दस्सनमागम्म, अरहत्तं भविस्सति [अरहा त्वं भविस्ससि (सी॰ पी॰), अरहत्तं गमिस्ससि (स्या॰)]॥1671॥

''उपागतं महावीरम्, सुमेधं लोकनायकम्।
प्रगृह्य सुगतपत्रम्, सर्पिष्तैलम् अपूरयम्॥1667॥
''दत्वाऽहं बुद्धश्रेष्ठाय, सुमेधाय लोकनायकाय।
अञ्जलिं प्रगृह्य, भूयः हासम् **अजनयमहम्**॥1668॥
''अनेन सर्पिष्दानेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
देवभूतो मनुष्यो वा, लभे विपुलं सुखम्॥1669॥
''विनिपातं विवर्जय, संसरामि भवाभवे।
तत्र चित्तं प्रणिधाय, लभे अचलं पदम्॥1670॥
''लाभा तुभ्यं सुलब्धं ते, यं मम् अद्राक्षीत् ब्राह्मण।
मम दर्शनमागम्य, अर्हत्वं भविष्यति॥1671॥

महावीर सुमेध लोकनायक सुगत के समीप जाकर उनके पात्र को ग्रहण कर मैंने उसे घी और स्निग्ध पदार्थ से पूरित कर दिया॥1667॥

सुमेध, लोकनायक, बुद्धश्रेष्ठ को अञ्जलिबद्ध दान देकर मैंने अत्यधिक प्रसन्नता को जाना॥1668॥

इस घी दान से और चेतना की प्रणिधि से मैं मनुष्य हो अथवा देव विपुल सुख का लाभ करता हूँ॥1669॥

विनिपात को छोड़कर भव और अभव में संसरण करता हूँ और वहाँ पर चित्त की प्रसन्नता से अचल पद को प्राप्त करता हूँ॥1670॥

बुद्ध ने कहा- ब्राह्मण वैसे तुम्हें सुलाभ हो गया कि मेरा दर्शन कर लिया, मेरा दर्शन करके तुम अर्हत्त्व प्राप्त करोगे॥1671॥

''विस्सत्थो [विस्सट्ठो (स्या॰ पी॰), विसट्ठो (क॰)] होहि मा भायि, अधिगन्त्वा महायसं।
ममञ्हि सप्पिं दत्वान, परिमोक्खसि जातिया॥1672॥

''इमिना सप्पिदानेन, चेतनापणिधीहि च।
देवभूतो मनुस्सो वा, लभसे विपुलं सुखं॥1673॥

''इमिना सप्पिदानेन, मेत्तचित्तवताय च।
अट्ठारसे कप्पसते, देवलोके रमिस्ससि॥1674॥

''अट्ठतिंसतिक्खत्तुञ्च, देवराजा भविस्ससि।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥1675॥

''एकपञ्ञासक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती भविस्ससि।
चातुरन्तो विजितावी, जम्बुमण्डस्स [जम्बुसण्डस्स (सी॰ पी॰)] इस्सरो॥1676॥

''विश्वस्तो भव मा भैषीः, अधिगत्य महायशम्।
मां हि सर्पिः दत्वा, परिमोक्षसि जात्याः॥1672॥

''अनेन सर्पिष्दानेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
देवभूतो मनुष्यो वा, लभसे विपुलं सुखम्॥1673॥

''अनेन सर्पिष्दानेन, मित्रचित्तवताय च।
अष्टादशे कल्पशते, देवलोके रंस्यते॥1674॥

''अष्टात्रिंशत्कृत्वश्च, देवराजा भविष्यसि।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनात असङ्ख्येयम्॥1675॥

''एकपञ्चाशत्कृत्वश्च, चक्रवर्त्ती भविष्यसि।
चातुरन्तो विजिताविन्, जम्बुमण्डस्य ईश्वरः॥1676॥

महायश को प्राप्त करो भव में विश्वस्त रहो भयभीत मत हो, मुझे घी का दान कर इस जाति से परिमोक्ष प्राप्त करोगे॥1672॥

इस घी-दान से और चेतना की प्रणिधि से देवों में या मनुष्यों में विपुल सुख को प्राप्त करोगे॥1673॥

इस घी-दान से तथा मेत्ता चित्त से 18 सौ वें कल्प में देव लोक में रमण करोगे॥1674॥

38 बार तुम देवों में राज्य करोगे और तुम्हारा प्रदेशराज्य गणना में असंख्य और विपुल होगा॥1675॥

51 बार तुम चक्रवर्ती होगे और चारों दिशाओं के विजेता जम्बुमण्डल के ईश्वर (राजा) होगे॥1676॥

''महासमुद्दोवक्खोभो, दुद्धरो पथवी यथा।
एवमेव च ते भोगा, अप्पमेय्या भविस्सरे॥1677॥
''सट्ठिकोटी हिरञ्ञस्स, चजित्वा [चत्वान (सी॰ क॰), दत्वान (स्या॰ पी॰)] पब्बजिं अहं।
किं कुसलं गवेसन्तो, बावरिं उपसङ्कमिं॥1678॥
''तत्थ मन्ते अधीयामि, छळङ्गं नाम लक्खणं।
तमन्धकारं विधमं, उप्पज्जि त्वं महामुनि॥1679॥
''तव दस्सनकामोहं, आगतोम्हि महामुनि।
तव धम्मं सुणित्वान, पत्तोम्हि अचलं पदं॥1680॥
''तिंसकप्पसहस्सम्हि, सप्पिं बुद्धस्सदासहं।
एत्थन्तरे नाभिजाने, सप्पिं विञ्ञापितं [विञ्ञापिता (?)] मया॥1681॥

''महासमुद्र इवाक्षोभः, दुर्धरः पृथ्वी यथा।
एवमेव च ते भोगाः, अप्रमेयाः भविष्यन्ते॥1677॥
''षष्टिकोटिः हिरण्यस्य, त्यक्त्वा प्राव्रजम् अहम्।
किं कुशलं गवेषयन्, **बावरिम्** उपसमाक्रामम्॥1678॥
''तत्र मन्त्रान् अधीये, षडाङ्गं नाम लक्षणम्।
तमान्धकारं व्यधमम्, उपपद्यत त्वं महामुने॥1679॥
''तव दर्शनकामोऽहम्, आगतोस्मि महामुने।
तव धर्मं श्रुत्वा, प्राप्तोस्मि अचलं पदम्॥1680॥
''त्रिंशकल्पसहस्रे, सर्पिः बुद्धायादामहम्।
अत्रान्तरे नाभिजाने, सर्पिं विज्ञापितं मया॥1681॥

जैसे महासमुद्र धीर-गम्भीर और पृथ्वी दुर्धर्ष है, उसी प्रकार ये भोग भी तुम्हारे लिए अप्रमेय होंगे॥1677॥

मेत्तगु ने कहा-

साठ कोटि हिरण्य को त्याग कर मैं प्रव्रजित हुआ। 'क्या कुशल है' की गवेषणा करने मैं बावरि के समीप गया॥1678॥

हे! महामुनि तुम मन्त्र, षडाङ्ग नाम और लक्षण का अध्ययन और उस अन्धकार को नष्ट कर उत्पन्न हुये हो॥1679॥

महामुनि! मैं आपके दर्शन की कामना से यहाँ आया हुँ और आपके धर्म को सुनकर मैंने अचल पद को प्राप्त किया॥1680॥

अब से तीस हजारवें कल्प में जो मैंने घी का दान बुद्ध को किया था, ये उस घी- दान का ही सुपरिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥1681॥

''मम सङ्कप्पमञ्ञाय, उप्पज्जति यदिच्छकं।
चित्तमञ्ञाय निब्बत्तं, सब्बे सन्तप्पयामहं॥1682॥
''अहो बुद्धा अहो धम्मा [अहो बुद्धो अहो धम्मो (सी॰) थेरगा॰ २०१ थेरगाथाय तदट्ठकथाय च संसन्देतब्बं], अहो नो सत्थु सम्पदा।
थोकञ्हि सप्पिं दत्वान, अप्पमेय्यं लभामहं॥1683॥
''महासमुद्दे उदकं, यावता नेरुपस्सतो।
मम सप्पिं उपादाय, कलभागं न हेस्सति [हिस्सति (स्या॰ क॰), एस्सति (सी॰)]॥1684॥
''यावता चक्कवाळस्स, करियन्तस्स [कारयन्तस्स (स्या॰), कयिरन्तस्स (पी॰), आहरन्तस्स (क॰)] रासितो।
मम निब्बत्तवत्थानं [मया निवत्थवत्थानं (पी॰)], ओकासो सो न सम्मति॥1685॥
''पब्बतराजा हिमवा, पवरोपि सिलुच्चयो।
ममानुलित्तगन्धस्स, उपनिधिं [उपनिधं (सी॰ स्या॰ क॰), उपनीयं (पी॰)] न हेस्सति॥1686॥

''मम सङ्कल्पमाज्ञाय, उपपद्यते यदिच्छकम्।
चित्तमाज्ञाय निर्वृतम्, सर्वे सन्तर्पयाम्यहम्॥1682॥
''अहो बुद्ध अहो धर्म, अहो नो शास्तुः सम्पदा।
स्तोकञ्हि सर्पिः दत्वा, अप्रमेयं लभेऽहम्॥1683॥
''महासमुद्रे उदकम्, यावत् मेरुपश्यतः।
मम **सर्पि** उपादाय, कलभागं न भविष्यति॥1684॥
''यावत् चक्रवालस्य, **कारयतः** राशितः।
मम निर्वर्त्तवस्त्राणाम्, अवकाशः सः न शाम्यति॥1685॥
''पर्वतराजा हिमवान्, प्रवरोऽपि शिलोच्चयः।
ममानुलिप्तगन्धस्य, उपनिधिं न भविष्यति॥1686॥

मेरे संङ्कल्प को जानकर इच्छा-अनुसार उत्पन्न होते हैं और निर्वृत के चित्त को जानकर मैंने सभी को सन्तुष्ट किया॥1682॥

बुद्ध अद्भुत हैं, धर्म अद्भुत है, हमारे शास्ता की सम्पदा अद्भुत है। मैंने थोड़ा सा घी दान कर अप्रमेय लाभ को प्राप्त किया॥1683॥

महासमुद्र में जितना जल है, जितना मेरु का विस्तार है, मेरे घी के एक कला के बराबर भी नहीं होगा॥1684॥

जहाँ तक चक्रवाड से राशि आहृत हो सकती है, मेरे द्वारा धारित वस्त्रों के बराबर नहीं हो सकती॥1685॥

पर्वतराज हिमालय या ऊँचे चट्टान, मेरे अनुलिप्त गन्ध के पास भी नहीं पहुँच सकते॥1686॥

''वत्थं गन्धञ्च सप्पिञ्च, अञ्ञञ्च दिट्ठधम्मिकं।
असङ्खतञ्च निब्बानं, सप्पिदानस्सिदं फलं॥1687॥
''सतिपट्ठानसयनो, समाधिञ्झानगोचरो।
बोज्झङ्गभोजनो [... जननो (स्या॰ क॰)] अज्ज, सप्पिदानस्सिदं फलं॥1688॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1689॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1690॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1691॥
इत्थं सुदं आयस्मा मेत्तगू थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
मेत्तगुत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. धोतकत्थेरअपदानं

''गङ्गा भागीरथी नाम, हिमवन्ता पभाविता [हिमवन्तप्पभाविता (सी॰)]।
हंसवतिया द्वारेन, अनुसन्दति तावदे॥1692॥

''वस्त्रं गन्धञ्च सर्पिष्च, अन्यञ्च दृष्टधर्मिकम्।
असंस्कृतञ्च निर्वाणम्, सर्पिष्दानस्येदं फलम्॥1687॥
''स्मृतिप्रस्थानशयनः, समाधिध्यानगोचरः।
बोध्याङ्गभोजनो अद्य, सर्पिष्दानस्येदं फलम्॥1688॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1689॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1690॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1691॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् **मित्रज्ञ** स्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''गङ्गा भागीरथी नाम, **हिमवतः** प्रभाविता।
हंसवत्याः द्वारात्, अनुसन्दति **तावदेव**॥1692॥

वस्त्र, गन्ध, घी अन्य धर्म, असंस्कृत निर्वाण ये सभी घी-दान का ही सुपरिणाम हैं॥1687॥

स्मृति-उपस्थान, शयन, समाधि, ध्यान में विचरण करने वाला सात ध्यान विषय, आज ये सभी घी-दान के ही सुपरिणाम हैं॥1688॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1689॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1690॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1691॥

इस प्रकार आयुष्मान् मेत्तगू स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय हिमालय पर्वत से प्रभावित गङ्गा नामक भागीरथी (नदी) हंसवती द्वार से बह रही थी॥1692॥

''सोभितो नाम आरामो, गङ्गाकूले सुमापितो।
तत्थ पदुमुत्तरो बुद्धो, वसते लोकनायको॥1693॥
''तिदसेहि यथा इन्दो, मनुजेहि पुरक्खतो।
निसीदि तत्थ भगवा, असम्भीतोव केसरी॥1694॥
''नगरे हंसवतिया, वसामि [अहोसिं (स्या॰)] ब्राह्मणो अहं।
छळङ्गो नाम नामेन, एवंनामो महामुनि॥1695॥
''अट्ठारस सिस्ससता, परिवारेन्ति मं तदा।
तेहि सिस्सेहि समितो, गङ्गातीरं उपागमिं॥1696॥
''तत्थद्दसासिं समणे, निक्कुहे धोतपापके।
भागीरथिं तरन्तेहं [तरन्तोहं (स्या॰ पी॰)], एवं चिन्तेसि तावदे॥1697॥

''शोभितो नाम आरामः, गङ्गाकूले सुमापितः।
तत्र पद्मोत्तरः बुद्धः, वसते लोकनायकः॥1693॥
''त्रिदशैः यथा इन्द्रः, मनुजैः पुरस्कृतः।
न्यसदत् तत्र भगवान्, अस्तम्भीत इव केशरी॥1694॥
''नगर्यां हंसवत्याम्, वसामि ब्राह्मणोऽहम्।
षडङ्गो नाम नाम्ना, एवंनामो महामुनिः॥1695॥
''अष्टादश शिष्यशताः, परिवारयन्ति मां तदा।
तेभिः शिष्यैः शमितः, गङ्गातीरम् उपागमम्॥1696॥
''तत्राद्राक्षं श्रमणान्, निष्कुहे धौतपापके।
भागीरथिं **तरन्तोऽहम्**, एवमचिन्तयद् तावदेव॥1697॥

गंगा के तट पर एक सुनिर्मित शोभित नामक आराम था। वहाँ लोकनायक पद्मोत्तर बुद्ध वास कर रहे थे॥1693॥

जैसे देवताओं से पुरस्कृत इन्द्र, उसी प्रकार मनुष्यों से पुरस्कृत तथा शेर के समान निर्भय भगवान् वहाँ बैठे॥1694॥

हंसवती नगर में मैं ब्राह्मण वास करता था तब षडङ्ग नामक महामुनि भी वहाँ रह रहे थे ॥1695॥

तब मैं 18 सौ शिष्यों से सदा परिवारित रहता था। उनमें से शमित नामक शिष्य गंगा के तट पर गया॥1696॥

वहाँ श्रमण को देखकर बिना ढोंग के पापकर्म को धोने हेतु 'भागीरथी हमें तारेगी' इस प्रकार मैंने चिन्तन किया॥1697॥

''सायं पातं [सायपातं (पी॰)] तरन्तामे, बुद्धपुत्ता महायसा।
विहेसयन्ति अत्तानं, तेसं अत्ता विहञ्ञति॥1698॥
''सदेवकस्स लोकस्स, बुद्धो अग्गो पवुच्चति।
नत्थि मे दक्खिणे कारं, गतिमग्गविसोधनं॥1699॥
''यंनून बुद्धसेट्ठस्स, सेतुं गङ्गाय कारये।
कारापेत्वा इमं कम्मं [सेतुं (स्या॰)], सन्तरामि इमं भवं॥1700॥
''सतसहस्सं दत्वान, सेतुं कारापयिं अहं।
सद्दहन्तो कतं कारं, विपुलं मे भविस्सति॥1701॥
''कारापेत्वान तं सेतुं, उपेसिं लोकनायकं।
सिरसि अञ्जलिं कत्वा, इमं वचनमब्रविं॥1702॥

''सायं प्रातः **तरन्तो मे**, बुद्धपुत्राः महायशाः।
विहिंसयन्ति आत्मानम्, तेषामात्मा विहन्यते॥1698॥
''सदेवकस्य लोकस्य, बुद्ध अग्रः प्रोच्यते।
नास्ति मे दक्षिणे कारम्, गतिमार्गविशोधनम्॥1699॥
''यन्नून बुद्धश्रेष्ठाय, सेतुं गङ्गायां कारयेत्।
कारापयित्वा इदं कर्मम्, सन्तरामि इमं भवम्॥1700॥
''शतसहस्रं दत्वा, सेतुं कारापयम् अहम्।
श्रद्दधन्तः कृतं कार्यम्, विपुलं मे भविष्यति॥1701॥
''कारापयित्वा तं सेतुम्, **उपैषिषि** लोकनायकम्।
शिरसि अञ्जलिं कृत्वा, इदं वचनमब्रवम्॥1702॥

बुद्धपुत्र महायश सायं-प्रातः आत्मा को कष्ट देते हुये मुझे तारता है और उसकी आत्मा दुःखी होती है॥1698॥

'देवताओं सहित लोक में बुद्ध अग्र हैं' ऐसा कहा जाता है। मैंने उनके लिए दक्षिण में जाने के मार्ग का विशुद्धिकरण नहीं किया॥1699॥

परन्तु निश्चित ही बुद्धश्रेष्ठ के लिए गंगा पर सेतु का निर्माण किया। ये कर्म करके मैं इस भव से शीघ्रता से संचरण करता हूँ॥1700॥

सौ हजार देकर मैंने सेतु का निर्माण कराया और जो मैंने श्रद्धा का कार्य किया इससे मेरा यह विस्तार होगा॥1701॥

उस सेतु को बनाकर लोकनायक के समीप गया और सिर से अञ्जलि-बद्ध होकर इन वचनो को कहा॥1702॥

‘‘‘सतसहस्सस्स वयं [वयं सतसहस्संव (क॰)], दत्वा [कत्वा (सी॰ पी॰)] कारापितो मया।
तवत्थाय महासेतु, पटिग्गण्ह महामुने॥1703॥
‘‘‘पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1704॥
‘‘‘यो मे सेतुं अकारेसि, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1705॥
‘‘‘दरितो पब्बततो वा, रुक्खतो पतितोपियं।
चुतोपि लच्छती ठानं, सेतुदानस्सिदं फलं॥1706॥
‘‘‘विरूळ्हमूलसन्तानं, निग्रोधमिव मालुतो।
अमित्ता नप्पसहन्ति, सेतुदानस्सिदं फलं॥1707॥

‘‘‘शतसहस्रस्य वयम्, दत्वा **कारापितो** मया।
तवार्थाय महासेतुः, **प्रतिगृहाण** महामुने॥1703॥
‘‘‘पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥1704॥
‘‘‘यो मे सेतुम् अकारयत्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1705॥
‘‘‘दरितः पर्वततो वा, वृक्षतः पतितोऽपि अयम्।
च्युतोऽपि लक्ष्यते स्थानम्, सेतुदानस्येदं फलम्॥1706॥
‘‘‘विरूढमूलसन्तानाम्, न्यग्रोधमिव मारुतः।
अमित्रानि नप्रसह्यन्ति, सेतुदानस्येदं फलम्॥1707॥

सौ हजार देकर मेरे द्वारा सेतु का निर्माण किया गया तब महामुनि ने उठकर महासेतु को ग्रहण किया॥1703॥

पद्मोत्तर लोकविदू, आहुतियों के ग्रहणकर्ता ने भिक्षुसंघ में बैठकर इन गाथाओं को कहा-॥1704॥

'ये जिसने मेरे लिए सेतु का निर्माण प्रसन्नमन हो दोनों हाथों से किया था, मैं उसकी कीर्ति का गान गरूँगा। मेरे ऐसे वचनों को सुनो॥1705॥

वह दरिया से, पर्वत से, वृक्ष से पतित होने पर भी च्युतस्थान को प्राप्त नहीं होता। सेतुदान का ही सुपरिणाम है॥1706॥

उगे हुए वटवृक्ष की लम्बी-लम्बी शाखाओं को जैसे हवा नष्ट नहीं कर पाती वैसे ही अमित्र मुझे नहीं जीत पाता यह सेतुदान का ही सुपरिणाम है॥1707॥

‘‘‘नास्स चोरा पसहन्ति, नातिमञ्ञन्ति खत्तिया।
सब्बे तरिस्सतामित्ते, सेतुदानस्सिदं फलं॥1708॥
‘‘‘अब्भोकासगतं सन्तं, कठिनातपतापितं।
पुञ्ञकम्मेन संयुत्तं, न भविस्सति वेदना [तावदे (क॰)]॥1709॥
‘‘‘देवलोके मनुस्से वा, हत्थियानं सुनिम्मितं।
तस्स सङ्कप्पमञ्ञाय, निब्बत्तिस्सति तावदे॥1710॥
‘‘‘सहस्ससस्सा वातजवा, सिन्धवा सीघवाहना।
सायं पातं उपेस्सन्ति, सेतुदानस्सिदं फलं॥1711॥
‘‘‘आगन्त्वान मनुस्सत्तं, सुखितोयं भविस्सति।
वेहासं [इहापि (सी॰ स्या॰ पी॰)] मनुजस्सेव, हत्थियानं भविस्सति॥1712॥

‘‘‘नास्य चौराः प्रसह्यन्ति, नातिमन्यन्ति क्षत्रियाः।
सर्वे **तरिष्यत्यमित्रानि**, सेतुदानस्येदं फलम्॥1708॥
‘‘‘अभ्रावकाशगतं शान्तम्, कठिनतपतापितम्।
पुण्यकर्मणा संयुक्तम्, न भविष्यति वेदना॥1709॥
‘‘‘देवलोके मनुष्ये वा, हस्तियानं सुनिर्मितम्।
तस्य सङ्कल्पमाज्ञाय, निर्वर्त्तिष्यति तावदेव॥1710॥
‘‘‘सहस्राश्वाः वातजवाः, सैन्धवाः शीघ्रवाहनाः।
सायं प्रातः **उपेषिष्यन्ते**, सेतुदानस्येदं फलम्॥1711॥
‘‘‘आगत्य मनुष्यत्वम्, सुखितोऽयं भविष्यति।
वैहायशं मनुजस्यैव, हस्तियानं भविष्यति॥1712॥

न तो चोर मुझे दबाता है, न ही क्षत्रिय मुझे मारता है। सभी मुझे मित्रवत् तारते हैं, यह सेतु-दान का ही सुपरिणाम है॥1708॥

कठिन तप से तपित सन्त आकाश में जाते हैं और संयुक्त पुण्यकर्म से वे वेदना को प्राप्त नहीं होते॥1709॥

देवलोक हो या मनुष्यलोक, उसके संकल्प को जानकर उसी समय सुनिर्मित हस्तियान प्रकट होता है॥1710॥

वायु के वेग सदृश सौ हजार अश्व, सैन्धव नामक शीघ्र चलने वाला घोड़े सायं-प्रातः प्राप्त होते हैं, यह सेतु-दान का ही सुपरिणाम है॥1711॥

मनुष्य योनि में आकर यह सुखी होगा और उस मनुष्य के लिए आकाश में हस्तियान होगा॥1712॥

‘‘‘कप्पसतसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1713॥
‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो’॥1714॥
‘‘अहो मे सुकतं कम्मं, जलजुत्तमनामके।
तत्थ कारं करित्वान, पत्तोहं आसवक्खयं॥1715॥
‘‘पधानं पहितत्तोम्हि, उपसन्तो निरूपधि।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥1716॥
‘‘किलेसा झापिता मय्हं…पे॰… विहरामि अनासवो॥1717॥
‘‘स्वागतं वत मे आसि…पे॰… कतं बुद्धस्स सासनं॥1718॥

‘‘‘कल्पशतसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1713॥
‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः’॥1714॥
‘‘अहो मे सुकृतं कर्म, जलजोत्तमनामके।
तत्र कार्यं कृत्वा, प्राप्तोऽहम् आस्रवक्षयम्॥1715॥
‘‘प्रधानं **प्रहितात्मास्मि**, उपशान्तः **निरुपधिः**।
नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥1716॥
‘‘क्लेशाः ध्मापिताः मम…पे॰… विहरामि अनास्रवः॥1717॥
‘‘स्वागतं वत मे आसीत्…पे॰… कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1718॥

कल्पशतसहस्र में लोक में इक्ष्वाकुकुल में उत्पन्न गोत्र से गौतम नामक शास्ता होगा॥1714॥

उनके धर्म में दीक्षित, औरस, धर्मनिर्मित तथा सर्वास्रवों को जानकर वह निर्वाण को प्राप्त करेगा॥1715॥

वहाँ जलजोत्तम नाम के (बुद्ध के) लिये मैंने कितना सुकृत कर्म किया था कि उस कार्य को करके मैंने आस्रव-क्षय को प्राप्त किया॥1716॥

कठिन तपस्या करके मैंने उपशान्त निरुपधि को प्राप्त किया और अब बन्धनमुक्त हाथी के समान अनास्रव हो मैं विहरण करता हूँ॥1717॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1718॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1713॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1719॥

इत्थं सुदं आयस्मा धोतको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

धोतकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. उपसीवत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, अनोमो नाम पब्बतो।

अस्समो सुकतो मय्हं, पण्णसाला सुमापिता॥1720॥

''नदी च सन्दती तत्थ, सुपतित्था मनोरमा।

अनूपतित्थे जायन्ति, पदुमुप्पलका बहू॥1721॥

''पाठीना पावुसा मच्छा, बलजा मुञ्जरोहिता।

मच्छकच्छपसञ्छन्ना [मच्छकच्छपसम्पन्ना (?)], नदिका सन्दते तदा॥1722॥

''तिमिरा पुप्फिता तत्थ, असोका खुद्दमालका।

पुन्नागा गिरिपुन्नागा, सम्पवन्ति ममस्समं॥1723॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1719॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् धोतकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''हिमवत अविदूरे, अनोमो नाम पर्वतः।

आश्रमः सुकृतो मम, पर्णशाला सुमापिता॥1720॥

''नदी च स्यन्दते तत्र, सुप्रतिष्ठा मनोरमा।

अनुप्रतिष्ठे जायन्ते, पद्मोत्पलकाः बह्वः॥1721॥

''पाठीना प्रावृषाः मत्स्याः, बलजाः मुञ्जरोहिताः।

मत्स्यकच्छपसञ्छन्नाः, नदिकाः स्यन्दते तदा॥1722॥

''तिमिराः पुष्पितास्तत्र, अशोकाः क्षुद्रमालकाः।

पूर्णगाः गिरिपूर्णगाः, सम्प्रवान्ति ममाश्रमम्॥1723॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1719॥

इस प्रकार आयुष्मान् धोतकस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय पर्वत से कुछ दूरी पर अनोम नाम का पर्वत है वहाँ पर सुकृत रूप से सुनिर्मित मेरा आश्रम है॥1720॥

वहाँ पर भली प्रकार से प्रतिष्ठित मनोरम नदी प्रवाहित होती है। उसके पश्चात् उसमें बहुत से कमल उत्पन्न होते हैं-॥1721॥

पाठीन (मछली) पावुस (वर्षा ऋतु की मछली विशेष) मछली, वलजा, मुञ्जरोहिता, मच्छ, कच्छपों से व्याप्त वह नदी प्रवाहित होती है॥1722॥

वहाँ पुष्पित तिमिर, अशोक और छोटे-छोटे पुष्पों वाला पौधा पुन्नाग (जायफल का पेड़) पर्वत पर उगे जायफल आदि पुष्प मेरे आश्रम में वायु प्रावाहित करते रहते हैं॥1723॥

''कुटजा पुप्फिता तत्थ, तिणसूलवनानि च।
साला च सळला तत्थ, चम्पका पुप्फिता बहू॥1724॥
''अज्जुना अतिमुत्ता च, महानामा च पुप्फिता।
असना मधुगन्धी च, पुप्फिता ते ममस्समे॥1725॥
''उद्दालका पाटलिका, यूथिका च पियङ्गुका।
बिम्बिजालकसञ्छन्ना, समन्ता अड्ढयोजनं॥1726॥
''मातग्गारा [मातङ्गवा (सी॰), मातकरा (स्या॰), मातङ्गा वा (पी॰)] सत्तलियो, पाटली सिन्दुवारका।
अङ्कोलका बहू तत्थ, तालकुट्ठि [तालकूटा (सी॰ स्या॰), तालकुट्ठा (पी॰)] च पुप्फिता।
सेलेय्यका बहू तत्थ, पुप्फिता मम अस्समे॥1727॥
''एतेसु पुप्फजातेसु [पुप्फमानेसु (सी॰ पी॰)], सोभन्ति पादपा बहू।
समन्ता तेन गन्धेन, वायते मम अस्समो॥1728॥

''कुटजाः पुष्पितास्तत्र, तृणशूलवनानि च।
शालाश्च सरलास्तत्र, चम्पकाः पुष्पिता बहवः॥1724॥
''अर्जुना अतिमुक्ताश्च, महानामाश्च पुष्पिताः।
अशनाः मधुगन्धिनश्च, पुष्पितास्ते ममाश्रमे॥1725॥
''उद्दालकाः पाटलिकाः, यूथिकाश्च प्रियाङ्गुकाः।
बिम्बिजालकसञ्छन्नाः, समन्तादर्धयोजनम्॥1726॥
''मातग्गारा [मातङ्गवा (सी॰), मातकरा (स्या॰), मातङ्गा वा (पी॰)] सप्तलिकः, पाटलि सिन्दुवारिकाः।
अङ्कोलकाः बहवस्तत्र, तालकुष्ठी च पुष्पिताः।
शैलेयकाः बहवस्तत्र, पुष्पिताः मम आश्रमे॥1727॥
''एतेषु पुष्पजातेषु, शोभन्ते पादपाः बहवः।
समन्तात् तेन गन्धेन, वायते मम आश्रमः॥1728॥

वहाँ पर बहुत से कुटज के पुष्पित पुष्प और शूल के सदृश उगे हुए तृण, शाल, सलला, चम्पक पुष्पित हैं॥1724॥

वहाँ अर्जुन, अतिमुक्तक, महानाम, अशन (पीत शाल नाम का वृक्ष) तथा मधुगन्धी पुष्प मेरे आश्रम में पुष्पित हैं॥1725॥

उद्दालक, पाटलि, समूह में पुष्पित प्रियाङ्गुक (दवाई में काम आने वाला पौधा विशेष) वृक्ष तथा आधे योजन चारों ओर से आच्छादित बिम्बजाल फैला है॥1726॥

वहाँ पर मातग्गरा (मोगरा के पुष्प), वन-मल्लिका, पाटली, सिन्दुवारक, अङ्कोलक (पिस्ते का वृक्ष) और तालकुट्ठि आदि बहुत से शैलेयकपुष्प मेरे आश्रम में पुष्पित हैं॥1727॥

उन पुष्पसमूहों में बहुत से वृक्ष शोभायमान हो रहे हैं और उनकी सुगन्ध मेरे आश्रम के चारों ओर प्रवाहित होती है॥1728॥

''हरीतका आमलका, अम्बजम्बुविभीतका [विभिटका (सी॰)]।
कोला भल्लातका बिल्ला, फारुसकफलानि च॥1729॥
''तिन्दुका च पियाला च, मधुका कासुमारयो।
लबुजा पनसा तत्थ, कदली बदरीफला [मन्दरिफला (क॰), चन्दरीफला (स्या॰ पी॰)]॥1730॥
''अम्बाटका बहू तत्थ, वल्लिकारफलानि च।
बीजपूरसपारियो, फलिता मम अस्समे॥1731॥
''आळका इसिमुग्गा च, ततो मोदफला बहू।
अवटा पक्कभरिता [सक्करारिता (क॰)], पिलक्खुदुम्बरानि च॥1732॥
''पिप्फिली मरीचा तत्थ, निग्रोधा च कपित्थना।
उदुम्बरका बहवो, कण्डुपण्णा च हरियो [कण्डपक्का च पारियो (सी॰ स्या॰ पी॰)]॥1733॥

''हरीतका आमलका, आम्रजम्बुविभीतकाः।
कोलाः भल्लातकाः बिल्वाः, पारुषकफलानि च॥1729॥
''तिन्दुकाश्च पियालाश्च, मधुका काश्मर्याः।
लबुजाः पनसाः तत्र, कदली बदरीफलाः॥1730॥
''अम्बाटकाः बहवस्तत्र, वल्लिकारफलानि च।
बीजपूरसपार्याः, फलिताः मम आश्रमे॥1731॥
''आरका ऋषिमुद्गाश्च, ततो मोदफलाः बह्वः।
अवटाः पक्वभरिताः, प्लक्षौदुम्बरानि च॥1732॥
''पिप्पली मरीचास्तत्र, न्यग्रोधाश्च **कपित्थाः**।
उदुम्बरकाः बहवः, कण्डुपर्णाश्च हर्यः॥1733॥

हरीतका (हरड़) आमलक (आँवला) अम्ब (आम्र) जम्बु (जामुन) विभीतक (बहेड़ा) केला, भल्लातक, बिल्ब और फारुस (फालसा) के फल.... ॥1729॥

तिन्दुक, पियाल, मधुका, गंभार, लबुजा, पनसा, कदली, बदरी फल (बेर का फल)..... ॥1730॥

वहाँ पर अम्बाटक (आमड़ा का फल या वृक्ष) बल्लिकार फल और बूजपूरसपारिय (फलविशेष) मेरे आश्रम में फलित है॥1731॥

वहाँ पर बहुत से आरक, ऋषिमूग और मोदफल, अवट (ताड़) और पक कर भरे हुए पिलक्खुदुम्बर (अंजीर) के वृक्ष लगे हैं॥1732॥

वहाँ पर पिप्फिली, मरीचि, निग्रोध (वट वृक्ष) और कपित्थ (कैथ) बहुत से गूलर (उदुम्बर) कण्डपण्णा हरिय (हार्य) हैं॥1733॥

''एते चञ्ञे च बहवो, फलिता अस्समे मम।
पुप्फरुक्खापि बहवो, पुप्फिता मम अस्समे॥1734॥
''आलुवा च कळम्बा च, बिळाली तक्कलानि च।
आलका तालका चेव, विज्जन्ति अस्समे मम॥1735॥
''अस्समस्साविदूरे मे, महाजातस्सरो अहु।
अच्छोदको सीतजलो, सुपतित्थो मनोरमो॥1736॥
''पदुमुप्पला बहू तत्थ, पुण्डरीकसमायुता।
मन्दालकेहि सञ्छन्ना, नानागन्धसमेरिता॥1737॥
''गब्भं गण्हन्ति पदुमा, अञ्ञे पुप्फन्ति केसरी।
ओपुप्फपत्ता तिट्ठन्ति, पदुमाकण्णिका बहू॥1738॥

''एते चाण्याश्च बह्वः, फलिता आश्रमे मम।
पुष्पवृक्षाऽपि बहवः, पुष्पिताः मम आश्रमे॥1734॥
''आलुवाश्च कदम्बाश्च, बिडाली तक्कलानि च।
आलकाः तालकाश्चैव, विद्यन्ति आश्रमे मम॥1735॥
''आश्रमस्याविदूरे मे, महाजातसरोऽभूत्।
अच्छोदकः शीतजलः, सुप्रतिष्ठो मनोरमः॥1736॥
''पद्मोत्पलानि बहूनि तत्र, पुण्डरीकसमायुता।
मन्दारकैः सञ्छन्नाः, नानागन्धसमीरिता॥1737॥
''गर्भं गृह्णन्ति पद्माः, अन्ये पुष्पन्ति केशरी।
अवपुष्पप्राप्ताः तिष्ठन्ति, पद्माकर्णिकाः बहवः॥1738॥

मेरे आश्रम में ऐसे ही अन्य बहुत से फलित हैं और बहुत से पुष्पित वृक्ष मेरे आश्रम में हैं॥1734॥

आलुजा (जीमिकन्द) कळम्बा(कदम्ब) बिडाली, तक्काल और आलक, ताल (ताड़) का वृक्ष सभी मेरे आश्रम में विद्यमान हैं॥1735॥

मेरे आश्रम से कुछ दूरी पर महाजातसर (एक प्राकृत झील) झील स्थित था। वह मनोरम शीतलजल से आच्छादित भली प्रकार से स्थित है॥1736॥

वहाँ बहुत से पद्मोत्पल और पुण्डरीक से समायुत है और मदार से आच्छादित विविध प्रकार के गन्धों को प्रवाहित करते हैं॥1737॥

जैसे अन्य पुष्प अपने अन्दरुनी भाग में केशर के कण ग्रहण किये रहते है वैसे ही कमलपुष्प और बहुत से कमल बीज-कोष कली-भाव को प्राप्त होने के लिए वहाँ स्थित हैं॥1738॥

''मधु भिसम्हा सवति, खीरं सप्पि मुलाळिभि।
समन्ता तेन गन्धेन, नानागन्धसमेरिता॥1739॥
''कुमुदा अम्बगन्धि च, नयिता दिस्सरे बहू।
जातस्सरस्सानुकूलं, केतका पुप्फिता बहू॥1740॥
''सुफुल्ला बन्धुजीवा च, सेतवारी सुगन्धिका।
कुम्भिला सुसुमारा च, गहका तत्थ जायरे॥1741॥
''उग्गाहका अजगरा, तत्थ जातस्सरे बहू।
पाठीना पावुसा मच्छा, बलजा मुञ्जरोहिता॥1742॥
''मच्छकच्छपसञ्छन्ना, अथो पपटकाहि [पम्पटकेहि (सी॰), सपटकेहि (स्या॰), पप्पटकेहि (पी)] च।
पारेवता रविहंसा, कुकुत्था [कुक्कुत्था (स्या॰ क॰), कुत्थका (पी॰)] च नदीचरा॥1743॥

''मधु **बिसस्मात्** स्रवति, क्षीरं सर्पिः मुलालिभिः।
समन्तात् तेन गन्धेन, नानागन्धसमीरिता॥1739॥
''कुमुदा आम्रगन्धिश्च, नयिता दृश्यते बहवः।
जातसरस्यानुकूलम्, केतकाः पुष्पिता बहवः॥1740॥
''सुफुल्लाः बन्धुजीवाश्च, श्वेतवारी सुगन्धिका।
कुम्भीलाः शिंशुमाराश्च, गृहकाः तत्र जायते॥1741॥
''उद्ग्राहका अजगराः, तत्र जातसरे बहवः।
पाठीनाः प्रावृषाः मत्स्याः, बलजाः मुञ्जरोहिताः॥1742॥
''मत्स्यकच्छपसञ्छन्ना, अथो प्रपटकाभिश्च।
पारेवता रविहंसाः, कुक्कुटाश्च नदीचराः॥1743॥

कमल-नलिका से बहने वाला, शहद के समान मीठा द्रव्य है और दूध तथा घी के समान महत्त्वपूर्ण भी है। उनके गन्ध से चारों ओर विविध प्रकार की गन्ध फैल जाती है॥1739॥

बहुत से लाये हुए श्वेतकमल आम्र के गन्ध के समान दिखाई देते है। जातसर झील के अनुकूल बहुत से केतकी पुष्प हैं॥1740॥

भली प्रकार से पुष्पित बन्धुजीव सुगन्धित सेतवारी, कुम्भिला, सुसुमारा को ग्रहण करने वहाँ जाते है॥1741॥

वहाँ जातसरर झील में बहुत से अजगर और जलीय जन्तु तथा पाठीन, प्रावृषा, मत्स्या, बलजा, मुञ्जरोहित (मछलियाँ) भी हैं॥1742॥

वह नदी मच्छ, कच्छ और पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों से आच्छादित है। उसमें कबूतर, रविहंस, कुकुत्थ और नदीचर भी है॥1743॥

''दिन्दिभा [टिट्टिभा (पी॰)] चक्कवाका च, पम्पका जीवजीवका।
कलन्दका उक्कुसा च, सेनका उद्धरा बहू॥1744॥
''कोट्ठका सुकपोता च, तुलिया चमरा बहू।
कारेनियो [कासेनिया (स्या॰)] च तिलका [किलका (क॰)], उपजीवन्ति तं सरं॥1745॥
''सीहा ब्यग्घा च दीपी च, अच्छकोकतरच्छका।
वानरा किन्नरा चेव, दिस्सन्ति मम अस्समे॥1746॥
''तानि गन्धानि घायन्तो, भक्खयन्तो फलानहं।
गन्धोदकं पिवन्तो च, वसामि मम अस्समे॥1747॥
''एणीमिगा वराहा च, पसदा खुद्दरूपका।
अग्गिका जोतिका चेव, वसन्ति मम अस्समे॥1748॥

''टिट्टिभाः चक्रवाकाश्च, पम्पकाः जीवजीवकाः।
कलन्दका उत्क्रोशकाश्च, श्येनका उद्धराः बह्वः॥1744॥
''कोष्ठकाः शुकपोताश्च, **तुलिका** चमराः बह्वः।
कारेनियश्च तिलकाः, उपजीवन्ति तत् सरम्॥1745॥
''सिंहाः व्याघ्राश्च द्वीपिश्च, अच्छकोकतरच्छकाः।
वानराः किन्नराश्चैव, दृश्यन्ति मम आश्रमे॥1746॥
''तानि गन्धानि घ्रायन्तः, भक्षयन्तः फलानि अहम्।
गन्धोदकं पिवन्तश्च, वसामि मम आश्रमे॥1747॥
''एणिमृगाः वराहाश्च, पृषताः क्षुद्ररूपकाः।
अग्निकाः जोतिकाश्चैव, वसन्ति मम आश्रमे॥1748॥

दिन्दिभ (टिटिहिरी) चक्कवाक (चकवा) चम्पक (छिपकली) जीवाजीव, कलन्दक (गिलहरी) उक्कुस (मछली खाने वाला पक्षी) श्येनक (बाज-चील) उद्धरा (एक अज्ञात पक्षी विशेष) बहुत से जीवन जीने वाले स्थित हैं॥1744॥

तोता के बच्चों के छिपने का स्थान और बहुत से तुलिया (चिमगादड़) चमरा, कारेनि (पशु के भेद) तिलक ये सभी उस झील के आश्रय में जीते हैं॥1745॥

ये सभी सिंह, व्याघ्र, दीपि (चीता), भालू, रीछ तथा वानर मेरे आश्रम में दिखाई देते हैं॥1746॥

उन फलों के गन्धों को सूँघते हुए और भक्षण करते तथा सुगन्धित जल को पीते हुए मैं आश्रम में वास करता हूँ॥1747॥

एणीमिग (मृगविशेष) वराह, पसद (एक छोटे प्रकार का मृग) और अग्निका की भाँति ज्योतिका सभी मेरे आश्रम में वास करते हैं॥1748॥

''हंसा कोञ्चा मयूरा च, सालिकापि च कोकिला।
मञ्जारिका [मञ्जरिका (सी॰ स्या॰ पी॰)] बहू तत्थ, कोसिका पोट्ठसीसका॥1749॥
''पिसाचा दानवा चेव, कुम्भण्डा रक्खसा बहू।
गरुळा पन्नगा चेव, वसन्ति मम अस्समे॥1750॥
''महानुभावा इसयो, सन्तचित्ता समाहिता।
कमण्डलुधरा सब्बे, अजिनुत्तरवासना।
जटाभारभरितात्र [ते जटाभारभरिता (सी॰ पी॰), जटाभारभरिता च (स्या॰)], वसन्ति मम अस्समे॥1751॥
''युगमत्तञ्च पेक्खन्ता, निपका सन्तवुत्तिनो।
लाभालाभेन सन्तुट्ठा, वसन्ति मम अस्समे॥1752॥
''वाकचीरं धुनन्ता ते, फोटेन्ताजिनचम्मकं।
सबलेहि उपत्थद्धा, गच्छन्ति अम्बरे तदा॥1753॥

''हंसाः क्रौञ्चाः मयूराश्च, शालिका अपि च कोकिलाः।
मञ्जरिकायः बहवः तत्र, कोशिका प्रौष्ठशीर्षकाः॥1749॥
''पिशाचाः दानवाश्चैव, कुम्भाण्डाः राक्षसाः बहवः।
गरुडाः पन्नगाश्चैव, वसन्ति मम आश्रमे॥1750॥
''महानुभावा ऋषयः, शान्तचित्ताः समाहिताः।
कमण्डलुधराः सर्वे, अजिनुत्तरवासना।
जटाभारभरिता इव, वसन्ति मम आश्रमे॥1751॥
''युगमात्रञ्च प्रेक्षमाणाः, निष्पक्वाः शान्तवर्त्तिनः।
लाभालाभाभ्यां सन्तुष्टाः, वसन्ति मम आश्रमे॥1752॥
''वाकचीरं धुनन्तस्ते, स्फोटयन्तो जिनचर्मकम्।
स्वबलै **उपस्तब्धाः**, गच्छन्ति अम्बरे तदा॥1753॥

वहाँ पर बहुत से हंस, सारस, मयूर, सारिका (मैना) और कोयल, मार्जारी, उल्लू और उभरे शीर्ष वाला (सम्भवतः कठफोड़वा) ॥1749॥

बहुत से पिशाच, दानव, कुम्भण्ड राक्षस, गरुड़ और पन्नग (साँप) सभी मेरे आश्रम में वास करते हैं॥1750॥

एकाग्रचित्त, शान्तचित्त महानुभाव ऋषि सभी कमण्डल को धारण किये चीते की खाल का उत्तरीय धारण किये हुए जैसे जटा के भार से भारित हों, मेरे आश्रम में वास करते हैं॥1751॥

युग-मात्र को देखने वाले, दक्ष, बुद्धिमान्, शान्त के समान आचरण करने वाले, लाभ-अलाभ से सन्तुष्ट सभी मेरे आश्रम में वास करते हैं॥1752॥

तब वल्कल चीर को धुनते हुए और जिनचर्म को फटकते हुए स्वबल पर आश्रित वे अम्बर में चले जाते हैं॥1753॥

''न ते दकं आहरन्ति, कट्ठं वा अग्गिदारुकं।
सयञ्च उपसम्पन्ना, पाटिहीरस्सिदं फलं॥1754॥
''लोहदोणिं गहेत्वान, वनमज्झे वसन्ति ते।
कुञ्जराव महानागा, असम्भीताव केसरी॥1755॥
''अञ्ञे गच्छन्ति गोयानं, अञ्ञे पुब्बविदेहकं [पुब्बविदेहनं (स्या॰ पी॰ क॰)]।
अञ्ञे च उत्तरकुरुं, सकं बलमवस्सिता [बलमपस्सिता (स्या॰ पी॰ क॰)]॥1756॥
''ततो पिण्डं आहरित्वा, परिभुञ्जन्ति एकतो।
सब्बेसं पक्कमन्तानं, उग्गतेजान तादिनं॥1757॥
''अजिनचम्मसद्देन, वनं सद्दायते तदा।
एदिसा ते महावीर, सिस्सा उग्गतपा मम॥1758॥

''न ते उदकम् आहरन्ति, काष्ठं वा अग्निदारुकम्।
स्वयञ्च उपसम्पन्नाः, प्रातिहार्यस्येदं फलम्॥1754॥
''लौहद्रोणिं गृहीत्वा, वनमध्ये वसन्ति ते।
कुञ्जरा इव महानागाः, अस्तम्भीता इव केशरी॥1755॥
''अन्ये गच्छन्ति गोयानम्, अन्ये पूर्वविदेहकम्।
अन्ये च उत्तरकुरुम्, स्वकं **बलमपाश्रिताः**॥1756॥
''ततो पिण्डम् **आहृत्य**, परिभुञ्जन्ति एकतः।
सर्वेषां **प्रक्रमीतानाम्**, उग्रतेजानां तायिनम्॥1757॥
''अजिनचर्मशब्देन, वनं शब्दायते तदा।
ईदृशस्ते महावीर, शिष्या उग्रतपाः मम॥1758॥

न वे जल लाते है न ही काष्ठ और न लकड़ी की आग और वे स्वयं उपसम्पदा को प्राप्त है, यह प्रातिहार्य का ही फल है॥1754॥

वे लोहे का पात्र लेकर कुञ्जर नामक महानाग के सदृश और बिना भयभीत हुए सिंह के समान घने वन में वास करते हैं॥1755॥

वे सभी अपने बल से गोयान में जाते हैं, अन्यजन पूर्वविदेह और अन्य अत्तर कुरु में जाते हैं॥1756॥

वहाँ से पिण्ड लाकर वे एक साथ खाते हैं। उनमें सभी पराक्रमी हैं और उग्रतेज वाले हैं॥1757॥

तब अजिनचर्म शब्द से वन गुन्जायमान था। हे महावीर! ऐसे मेरे उग्रतप वाले शिष्य हैं॥1758॥

''परिवुतो अहं तेहि, वसामि मम अस्समे।
तोसिता सककम्मेन, विनीतापि समागता॥1759॥
''आराधयिंसु मं एते, सककम्माभिलासिनो।
सीलवन्तो च निपका, अप्पमञ्ञासु कोविदा॥1760॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
समयं संविदित्वान, उपगच्छि विनायको॥1761॥
''उपगन्त्वान सम्बुद्धो, आतापी निपको मुनि।
पत्तं पग्गय्ह सम्बुद्धो, भिक्खाय ममुपागमि॥1762॥
''उपागतं महावीरं, जलजुत्तमनायकं।
तिणसन्थरं [तिणत्थरं (स्या॰), तिणत्थतं (क॰)] पञ्ञापेत्वा, सालपुप्फेहि ओकिरिं॥1763॥

''परिवृतोऽहं तैः, वसामि मम आश्रमे।
तोषिता स्वककर्मणा, विनीताऽपि समागता॥1759॥
''आराधयन् मां एते, स्वककर्माभिलाषिणः।
शीलवन्तश्च निष्पक्वाः, अल्पमाज्ञासु कोविदाः॥1760॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
समयं संविद्य, उपागच्छद् विनायकः॥1761॥
''उपगत्य सम्बुद्धः, आतापी निपको मुनिः।
पात्रं प्रगृह्य सम्बुद्धः, भिक्षाय मामुपागमत्॥1762॥
''उपागतं महावीरम्, जलजोत्तमनायकम्।
तृणसंस्तरं **प्राज्ञाप्य**, शालपुष्पै अवाकिरम्॥1763॥

अपने कर्म से सन्तुष्ट नियमित जीवन का अभ्यास करते हुए एकत्रित उनसे घिरा हुआ मैं आश्रम में वास करता हूँ॥1759॥

अपने कर्मों के अभिलाषी शील का पालन करने वाले, बुद्धिमान् तथा मैत्री, करुणा, मुदिता तथा उपेक्षा ज्ञान में दक्ष उनके द्वारा मेरी आराधना करते समय-॥1760॥

पद्मोत्तर, लोकविद, आहुतियों के ग्रहणकर्ता विनायक भली प्रकार अवसर को जानकर मेरे समीप आए॥1761॥

तब प्रयत्नशील एवं बुद्धिमान् मुनि सम्बुद्ध भिक्षापात्र ग्रहण कर मेरे समीप आए॥1762॥

तब आए हुए महावीर जलजोत्तमनायक के लिए मैंने तृण की चटाई की व्यवस्था कर उस पर शालपुष्प को फैला दिया॥1763॥

''निसादेत्वान [निसीदेत्वान (सी॰), निसीदित्वान (स्या॰ पी॰)] सम्बुद्धं, हट्ठो संविग्गमानसो।
खिप्पं पब्बतमारुय्ह, अगळुं [अगरुं (सी॰)] अग्गहिं अहं॥1764॥
''कुम्भमत्तं गहेत्वान, पनसं देवगन्धिकं।
खन्धे आरोपयित्वान, उपगच्छिं विनायकं॥1765॥
''फलं बुद्धस्स दत्वान, अगळुं अनुलिम्पहं।
पसन्नचित्तो सुमनो, बुद्धसेट्ठं अवन्दिहं॥1766॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
इसिमज्झे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1767॥
'''यो मे फलञ्च अगळुं, आसनञ्च अदासि मे।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1768॥

''**नैसीद्य** सम्बुद्धम्, हृष्टः संविग्नमानसः।
क्षिप्रं पर्वतमारुह्य, अगरुम् अगृह्णम् अहम्॥1764॥
''कुम्भमात्रं गृहीत्वा, पनसं देवगन्धिकम्।
स्कन्धे आरोप्य, उपागच्छं विनायकम्॥1765॥
''फलं बुद्धाय दत्वा, अगरुम् **अन्वलिम्पेऽहम्**।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, बुद्धश्रेष्ठम् अवन्देऽहम्॥1766॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
ऋषिमध्ये निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥1767॥
'''यो मे फलञ्च अगरुम्, आसनञ्च अदान्मे।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1768॥

प्रसन्न एवं संविग्नमन मैं सम्बुद्ध को बैठाकर शीघ्र ही पर्वत पर गया और अगरु की लकड़ी को लाया॥1764॥

कुम्भमात्र, पनस (कटहल), देवगन्ध अपने कन्धे पर रख कर विनायक के समीप गया॥1765॥

बुद्ध को फल देकर मैंने अगरु का लेप किया और प्रसन्नचित्त सुन्दरमन से बुद्धश्रेष्ठ की वन्दना की॥1766॥

तब आहुतियों के ग्रहणकर्ता पद्मुत्तर लोकविद् ने ऋषि के मध्य बैठकर इन गाथाओं को कहा..... ॥1767॥

'ये मुझे जिसने फल, अगरु और बैठने का आसन प्रदान किया' मैं उसकी कीर्ति का गान करुँगा। मेरे ऐसे वचनों को आप सुनें-॥1768॥

‘‘‘गामे वा यदि वारञ्ञे, पब्भारेसु गुहासु वा।
इमस्स चित्तमञ्ञाय, निब्बत्तिस्सति भोजनं॥1769॥
‘‘‘देवलोके मनुस्से वा, उपपन्नो अयं नरो।
भोजनेहि च वत्थेहि, परिसं तप्पयिस्सति॥1770॥
‘‘‘उपपज्जति यं योनिं, देवत्तं अथ मानुसं।
अक्खोभभोगो हुत्वान, संसरिस्सतियं नरो॥1771॥
‘‘‘तिंसकप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1772॥
‘‘‘एकसत्ततिक्खत्तुञ्च, देवरज्जं करिस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥1773॥

‘‘‘ग्रामे वा यदि वा अरण्ये, प्राग्भारेषु गुहासु वा।
अस्य चित्तमाज्ञाय, निर्वर्त्तिष्यति भोजनम्॥1769॥
‘‘‘देवलोके मनुष्ये वा, उपपन्नोऽयं नरः।
भोजनैः च वस्त्रैः, परिषदि तर्पयिष्यति॥1770॥
‘‘‘उपपद्यते यस्मिन् योनौ, देवत्वम् अथ मानुषम्।
अक्षोभभोगो भूत्वा, संसरिष्यतीयं नरः॥1771॥
‘‘‘त्रिंशकल्पसहस्राणि, देवलोके रंस्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1772॥
‘‘‘एकसप्ततिकृत्वश्च, देवराज्यं करिष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनात असङ्ख्येयम्॥1773॥

गाँव हो या जंगल, पर्वत की ढलान हो या गुफा, उसके चित्त को जानकर ही इसके लिए भोजन उपस्थित हो जायेगा॥1769॥

देवलोक अथवा मनुष्यलोक में उत्पन्न यह नर भोजन और वस्त्रों से परिषद को सन्तृप्त करेगा॥1770॥

वह मनुष्यत्व अथवा देवत्व जिस भी योनि में उत्पन्न होगा वहाँ असीमित भोगवान् होकर संसरण करेगा॥1771॥

वह 30 हजार कल्पों तक देवलोक में रमण करेगा और 100 बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1772॥

17 बार वह देवों में राज्य करेगा और उसका प्रदेशराज्य विपुल तथा गणना में असंङ्ख्य होगा॥1773॥

‘‘‘कप्पसतसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1774॥
‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो [(उपसीवो नाम नामेन, हेस्सति सत्थु सावको) (स्या॰)]।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरिस्सतिनासवो’॥1775॥
‘‘सुलद्धलाभो लद्धो मे, योहं अद्दक्खिं नायकं।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥1776॥
‘‘गामे वा यदि वारञ्ञे, पब्भारेसु गुहासु वा।
मम सङ्कप्पमञ्ञाय, भोजनं होति मे सदा॥1777॥
‘‘किलेसा झापिता मय्हं…पे॰… विहरामि अनासवो॥1778॥
‘‘स्वागतं वत मे आसि…पे॰… कतं बुद्धस्स सासनं॥1779॥

‘‘‘कल्पशतसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1774॥
‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरिष्यत्यनास्रवः॥1775॥
‘‘सुलब्धलाभो लब्धो मे, योऽहम् अद्राक्षं नायकम्।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1776॥
‘‘ग्रामे वा यदि वा अरण्ये, प्राग्भारेषु गुहासु वा।
मम सङ्कल्पमाज्ञाय, भोजनं भवति मे सदा॥1777॥
‘‘क्लेशाः ध्मापिताः मम…पे॰… विहरामि अनास्रवः॥1778॥
‘‘स्वागतं वत मे आसीत्…पे॰… कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1779॥

100 हजारवें कल्प में इक्ष्वाकुकुल में उत्पन्न गौतम नामक गोत्र से वह लोक में शास्ता होगा॥1774॥

उनके धर्म में दीक्षित, धर्मनिर्मित औरस तथा सर्वास्रवों को जानकर वह निर्वाण को प्राप्त करेगा’॥1775॥

मुझे सुलाभ प्राप्त हुआ जो मैंने नायक को देखा और तीन विद्याओं को प्राप्त कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1776॥

गाँव हो, जंगल हो, पर्वत का ढलान हो या गुफा हो, मेरे संकल्प को जानकर वहाँ मेरे लिए सदैव भोजन उपलब्ध होता जाता है॥1777॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1778॥

मेरा बुद्ध के समीप मे स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1779॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1780॥

इत्थं सुदं आयस्मा उपसीवो [उपसिवो (क०)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

उपसीवत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. नन्दकत्थेरअपदानं

''मिगलुद्दो पुरे आसिं, अरञ्ञे कानने अहं।

पसदं मिगमेसन्तो, सयम्भुं अद्दसं अहं [जिनं (सी०)]॥1781॥

''अनुरुद्धो नाम सम्बुद्धो, सयम्भू अपराजितो।

विवेककामो सो धीरो, वनमज्झोगही तदा॥1782॥

''चतुदण्डे गहेत्वान, चतुट्ठाने ठपेसहं।

मण्डपं सुकतं कत्वा, पद्मपुप्फेहि छादयिं॥1783॥

''मण्डपं छादयित्वान, सयम्भुं अभिवादयिं।

धनुं तत्थेव निक्खिप्प, पब्बजिं अनगारियं॥1784॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1780॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् उपसिवस्थविर इमां गाथाम् अभाषिष्टेति।

''मृगलुब्धः पुरे आसम्, अरण्ये कानने अहम्।

पृषतं **मृगमेषन्तः**, स्वयम्भुवमद्राक्षमहम्॥1781॥

''अनिरुद्धो नाम सम्बुद्धः, स्यम्भू अपराजितः।

विवेककामः सो धीरः, वनमध्येऽवागाहिष्ट तदा॥1782॥

''चतुर्दण्डानि गृहीत्वा, चतुर्स्थाने स्थापयमहम्।

मण्डपं सुकृतं कृत्वा, पद्मपुष्पैः अच्छादयम्॥1783॥

''मण्डपं छादयित्वा, स्वयम्भुवम् अभ्यवादयम्।

धनुस्तत्रैव निक्षिप्य, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥1784॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1780॥

इस प्रकार आयुष्मान् उपसिव स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पूर्व में मैं घने जंगल में शिकारी था, मृग का अन्वेषण करते हुए मैंने स्वयम्भू को देखा॥1781॥

तब अनुरुद्ध नामक सयम्भू अपराजित बुद्धिमान् सम्बुद्ध ने एकान्त में वास करने की कामना से घने जंगल में वास किया॥1782॥

तब मैंने चार दण्डों को ग्रहण कर चार स्थानों पर स्थापित किया (गाड़ दिया) उससे भली प्रकार से मण्डप का निर्माण कर पद्मपुष्पों से आच्छादित कर दिया॥1783॥

मण्डप को आच्छादित कर मैंने स्वयम्भू का अभिवादन किया और धनुष को वहीं रख कर अनागारिक हो प्रव्रज्या को ग्रहण किया॥1784॥

''नचिरं पब्बजितस्स [पब्बजितस्स अचिरं (सी॰)], ब्याधि मे उदपज्जथ।
पुब्बकम्मं सरित्वान, तत्थ कालङ्कतो अहं॥1785॥

''पुब्बकम्मेन संयुत्तो, तुसितं अगमासहं।
तत्थ सोण्णमयं ब्यम्हं, निब्बत्तति यदिच्छकं॥1786॥

''सहस्सयुत्तं हयवाहिं, दिब्बयानमधिट्ठितो।
आरुहित्वान तं यानं, गच्छामहं यदिच्छकं॥1787॥

''ततो मे निय्यमानस्स, देवभूतस्स मे सतो।
समन्ता योजनसतं, मण्डपो मे धरीयति॥1788॥

''सयनेहं तुवट्टामि, अच्छन्ने [अच्चन्तं (सी॰), अच्चन्त (पी॰)] पुप्फसन्थते।
अन्तलिक्खा च पदुमा, वस्सन्ते निच्चकालिकं॥1789॥

''नाचिरं प्रव्रजितस्य, व्याधिः मे उदपद्यत।
पूर्वकर्म स्मृत्वा, तत्र कालकृतोऽहम्॥1785॥

''पूर्वकर्मणा संयुक्तः, तुषितम् अगमामहम्।
तत्र स्वर्णमयं विमानमहम्, निर्वर्त्तति यदिच्छकम्॥1786॥

''सहस्रयुक्तं हयवाहिम्, दिव्ययानमधिष्ठितः।
आरुह्य तद् याने, गच्छाम्यहं यदिच्छकम्॥1787॥

''ततो मे नीयमानस्य, देवभूतस्य मे **स्मृतः**।
समन्ताद् योजनशतम्, मण्डपो मे धरीयति॥1788॥

''शयनेऽहं **द्वन्द्वयामि**, अच्छन्ने पुष्पसंस्तृते।
अन्तरिक्षात् पद्माः, वर्षन्ते नित्यकालिकम्॥1789॥

प्रव्रजित होने के तत्काल बाद ही मुझमें व्याधि (रोग) उत्पन्न हो गया और वहीं पर अपने पूर्वकर्म का स्मरण कर मैं मृत्यु को प्राप्त हो गया॥1785॥

पूर्वजन्म के कर्म से संयुक्त मैं तुषित लोक में उत्पन्न हुआ। वहाँ मेरे इच्छामात्र से मेरे लिए स्वर्णमय विमान प्रकट हो जाता है॥1786॥

हजार घोड़ों से खीचे जाने वाले दिव्ययान में स्थित मैं उसमें बैठकर अपनी इच्छानुसार गमन करता हूँ॥1787॥

नियमन करने वाले देवभूत मेरे चारों तरफ सौ योजन तक मण्डप विद्यमान होता है॥1788॥

मैं शयन को बाटता हूँ और उसे पुष्प से ढकता नहीं हूँ, अन्तरिक्ष से सदैव पद्म की वर्षा होती है॥1789॥

''मरीचिके फन्दमाने, तप्पमाने च आतपे।
न मं तापेति आतापो, मण्डपस्स इदं फलं॥1790॥
''दुग्गतिं समतिक्कन्तो, अपाया पिहिता मम।
मण्डपे रुक्खमूले वा, सन्तापो मे न विज्जति॥1791॥
''महीसञ्ञं अधिट्ठाय, लोणतोयं तरामहं।
तस्स मे सुकतं कम्मं, बुद्धपूजायिदं फलं॥1792॥
''अपथम्पि [अब्भम्हि (स्या॰ क॰)] पथं कत्वा, गच्छामि अनिलञ्जसे।
अहो मे सुकतं कम्मं, बुद्धपूजायिदं फलं॥1793॥
''पुब्बेनिवासं जानामि, दिब्बचक्खु विसोधितं।
आसवा मे परिक्खीणा, बुद्धपूजायिदं फलं॥1794॥

''मरीचिके स्पन्दमाने, तप्यमाने च आतपे।
न मां तापयति आतापः, मण्डपस्य इदं फलम्॥1790॥
''दुर्गतिं समतिक्रान्तः, **अपायादपि हिता** मम।
मण्डपे वृक्षमूले वा, सन्तापो मे न विद्यति॥1791॥
''महीसंज्ञाम् अधिष्ठाय, लवणतोऽयं तराम्यहम्।
तस्य मे सुकृतं कर्म, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1792॥
''अपथमपि पथं कृत्वा, गच्छामि अनिलाञ्जसे।
अहो मे सुकृतं कर्म, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1793॥
''पूर्वनिवासं जानामि, दिव्यचक्षुः विशोधितम्।
आस्रवाः मे परिक्षीणाः, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1794॥

सूर्य के स्फुरित होने और धूप के तप्त होने पर भी ताप मुझे गर्म नहीं करता है। मण्डप का यह फल है॥1790॥

दुर्गति को लाघँ कर मेरे द्वारा नरक-लोक बन्द कर दिया गया। मण्डप अथवा वृक्षमूल में मेरे लिए सन्ताप विद्यमान नहीं॥1791॥

उस सुकृत कर्म के कारण मैं पृथ्वी की संज्ञा को अधिकृत किया हुआ लोणजल (नमकीन जल) को पार किया। यह बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है॥1792॥

अमार्ग को भी मार्ग करके आकाश मार्ग से जाता हूँ। आश्चर्य है ये मेरा सुकृत कर्म है, यह बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम है॥1793॥

मैं पूर्व जन्म को जानता हूँ, दिव्यचक्षु को शुद्ध करता हूँ और आश्रव को नष्ट करता हूँ यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है॥1794॥

''जहिता पुरिमा जाति, बुद्धस्स ओरसो अहं।
दायादोम्हि च सद्धम्मे, बुद्धपूजायिदं फलं॥1795॥
''आराधितोम्हि सुगतं, गोतमं सक्यपुङ्गवं।
धम्मधजो धम्मदायादो [धम्मादासो (क॰)], बुद्धपूजायिदं फलं॥1796॥
''उपट्ठित्वान सम्बुद्धं, गोतमं सक्यपुङ्गवं।
पारङ्गमनियं मग्गं, अपुच्छिं लोकनायकं॥1797॥
''अज्झिट्ठो कथयी बुद्धो, गम्भीरं निपुणं पदं।
तस्साहं धम्मं सुत्वान, पत्तोम्हि आसवक्खयं॥1798॥
''अहो मे सुकतं कम्मं, परिमुत्तोम्हि जातिया।
सब्बासवपरिक्खीणो, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1799॥

''जहिता **पुरिमा** जातिः, बुद्धस्य औरसोऽहम्।
दायादोस्मि च सद्धर्मे, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1795॥
''आराधितोस्मि सुगतम्, गौतमं शाक्यपुङ्गवम्।
धर्मध्वजो धर्मदायादः, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥1796॥
''उपस्थाप्य सम्बुद्धम्, गौतमं शाक्यपुङ्गवम्।
पारङ्गमनीयं मार्गम्, अप्राक्षं लोकनायकम्॥1797॥
''**अध्येष्ट अकथयत्** बुद्धः, गम्भीरं निपुणं पदम्।
तस्याऽहं धर्म श्रुत्वा, प्राप्तोस्मि आस्रवक्षयम्॥1798॥
''अहो मे सुकृतं कर्म, परिमुक्तोऽस्मि जात्याः।
सर्वास्रवपरिक्षीणः, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1799॥

पूर्व जन्म को त्याग कर मैं बुद्ध का स्वकीय पुत्र हुआ और उनके सद्धर्म को प्राप्त किया यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है॥1795॥

मैंने सुगत, गौतम, शाक्यकुलोत्पन्न, धर्मध्वज, धर्म का उत्तराधिकार प्राप्त किया, यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है॥1796॥

गौतम, शाक्यपुङ्गव, सम्बुद्ध के पास जाकर उस पार पहुचाँने वाले मार्ग के विषय में प्रश्न पूछा कि..॥1797॥

बुद्ध ने धर्मदेशना हेतु अभ्यर्पित गम्भीर निपुण पद को कहा। मैंने उनके धर्म को सुनकर आस्रवक्षय को प्राप्त किया॥1798॥

मैंने कितना सुकृत कर्म किया कि जाति से (पुनर्जन्म से) मुक्त हूँ और सभी आस्रवों से क्षीण हुए मेरा अब पुनर्जन्म नहीं है॥1799॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥1800॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥1801॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1802॥

इत्थं सुदं आयस्मा नन्दको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

नन्दकत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. हेमकत्थेरअपदानं

''पब्भारकूटं निस्साय, अनोमो नाम तापसो।

अस्समं सुकतं कत्वा, पण्णसाले वसी तदा॥1803॥

''सिद्धं तस्स तपो कम्मं, सिद्धिपत्तो सके बले।

सकसामञ्ञविक्कन्तो, आतापी निपको मुनि॥1804॥

''विसारदो ससमये, परवादे च कोविदो।

पट्ठो भूमन्तलिक्खम्हि, उप्पातम्हि च कोविदो॥1805॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥1800॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1801॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1802॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् नन्दकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''प्राग्भारकूटं **निःश्राय**, अनोमो नाम तापसः।

आश्रमं सुकृतं कृत्वा, पर्णशालायाम् अवसत् तदा॥1803॥

''सिद्धं तस्य तपः कर्म, सिद्धिप्राप्तः स्वके बले।

स्वकश्रामण्यविक्रान्तः, आतापी निपको मुनिः॥1804॥

''विशारदः ससमये, परवादान् च कोविदः।

प्रस्थो भूम्यन्तरिक्षे, उत्पाते च कोविदः॥1805॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1800॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1801॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1802॥

इस प्रकार आयुष्मान् नन्दक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

अनोम नामक तपस्वी ने हिमालय पर्वत की ढलान से निकलकर भली प्रकार से आश्रम का निर्माण कर उस आश्रम में निवास किया॥1803॥

उसका तपकर्म सिद्ध हुआ और अपने बल से सिद्धि को प्राप्त अपने श्रामण्य की वीरता से उस प्रयत्नशील तथा बुद्धिमान् मुनि ने.... ॥1804॥

अपने शास्त्र में विशारद, विरोधी मतों को जानने वाला पण्डित, भूमि और अन्तरिक्ष में गमन करने वाला तथा ऊर्ध्वगमन में निपुण-॥1805॥

''वीतसोको निरारम्भो, अप्पाहारो अलोलुपो।
लाभालाभेन सन्तुट्ठो, झायी झानरतो मुनि॥1806॥
''पियदस्सी नाम सम्बुद्धो, अग्गो कारुणिको मुनि।
सत्ते तारेतुकामो सो, करुणाय फरी तदा॥1807॥
''बोधनेय्यं जनं दिस्वा, पियदस्सी महामुनि।
चक्कवाळसहस्सम्पि, गन्त्वा ओवदते मुनि॥1808॥
''ममुद्धरितुकामो सो, ममस्समुपागमि।
न दिट्ठो मे जिनो पुब्बे, न सुतोपि च कस्सचि॥1809॥
''उप्पाता सुपिना मय्हं, लक्खणा सुप्पकासिता।
पट्ठो भूमन्तलिक्खम्हि, नक्खत्तपदकोविदो॥1810॥

''वीतशोको निरारम्भः, अल्पाहार अलोलुपः।
लाभालाभेन सन्तुष्टः, ध्यायी ध्यानरतो मुनिः॥1806॥
''प्रियदर्शी नाम सम्बुद्धः, अग्रः कारुणिको मुनिः।
सत्वान् तारयितुकामः सः, करुणाया **अस्फुरीत्** तदा॥1807॥
''बोधनीयं जनं दृष्ट्वा, प्रियदर्शी महामुनिः।
चक्रवाडसहस्रमपि, गत्वाऽववादते मुनिः॥1808॥
''मामुद्धर्तुकामः सः, ममाश्रममुपागमत्।
न दृष्टो मे जिनः पूर्वे, न श्रुत अपि च कश्चित्॥1809॥
''उत्पातात् स्वप्नात् मम, लक्षणाः सुप्रकाशिताः।
प्रस्थो भूम्यन्तरिक्षे, नक्षत्रपदकोविदः॥1810॥

शोक से रहित, अहिंसक, कम मात्रा में भोजन करने वाले, लोभरहित लाभ-अलाभ से सन्तुष्ट ध्यान करने वाला, ध्यान में रत मुनि..... ॥1806॥

वह प्रियदर्शी नामक सम्बुद्ध, अग्र कारुणिक, मुनि, करुणा से व्याप्त सत्त्वों को तारने की कामना से... ॥1807॥

प्रियदर्शी महामुनि ने बुद्धत्त्व लाभ प्राप्त करने वालों को देखकर हजार क्षेत्र में भी जाकर मुनि ने उपदेश किया॥1808॥

मेरे उद्धार की कामना से वह मेरे समीप आ गये तथा मैंने जिनको नहीं देखा था नहीं सुना था॥1809॥

स्वप्न में मैंने उल्कापात को देखा जिससे अच्छे लक्षण प्रकाशित हुए तथा भूमि और अन्तरिक्ष में स्थित मैं नक्षत्र-पद को जानने वाला पण्डित हूँ॥1810॥

''सोहं बुद्धस्स सुत्वान, तत्थ चित्तं पसादयिं।
तिट्ठन्तो [भुञ्जन्तो (सी॰ पी॰ क॰)] वा निसिन्नो वा, सरामि निच्चकालिकं॥1811॥
''मयि एवं सरन्तम्हि, भगवापि अनुस्सरि।
बुद्धं अनुस्सरन्तस्स, पीति मे होति तावदे॥1812॥
''कालञ्च पुनरागम्म, उपेसि मं महामुनि।
सम्पत्तेपि न जानामि, अयं बुद्धो महामुनि॥1813॥
''अनुकम्पको कारुणिको, पियदस्सी महामुनि।
सञ्जानापेसि अत्तानं, 'अहं बुद्धो सदेवके'॥1814॥
''सञ्जानित्वान सम्बुद्धं, पियदस्सिं महामुनिं।
सकं चित्तं पसादेत्वा, इदं वचनमब्रविं॥1815॥

''सोऽहं बुद्धाय श्रुत्वा, तत्र चित्तं प्रासदम्/प्रासादयम्।
तिष्ठन् वा निषण्णो वा, स्मरामि नित्यकालिकम्॥1811॥
''मयि एवं **स्मृतं हि**, भगवानपि **अन्वस्मार्षीत्/अन्वस्मरत्**।
बुद्धम् अनुस्मरन्, प्रीतिः मे भवति तावदेव॥1812॥
''कालञ्च पुनरागत्य, **उपैषीत्** मां महामुनिः।
सम्प्राप्तेऽपि न जानामि, अयं बुद्धो महामुनिः॥1813॥
''अनुकम्पकः कारुणिकः, प्रियदर्शी महामुनिः।
समज्ञासीत् आत्मानाम्, 'अहं बुद्धः सदेवकान्'॥1814॥
''संज्ञाय सम्बुद्धम्, प्रियदर्शीं महामुनिम्।
स्वकं चित्तं प्रसाद्य, इदं वचनमब्रवम्॥1815॥

मैंने बुद्ध को सुनकर वहाँ चित्त को प्रसादित किया और उठते बैठते सदैव मैं उनका स्मरण करता हूँ॥1811॥

मेरे द्वारा शरण लेने पर भगवान् ने भी अनुस्मरण किया और तब बुद्ध के द्वारा अनुस्मरण किये जाने पर मुझमें प्रीति उत्पन्न हुई॥1812॥

पुनः समय आने पर महामुनि मेरे समीप आए। मेरे निकट आने के उपरान्त भी मैं यह नहीं जान पाया कि ये महामुनि बुद्ध हैं॥1813॥

महामुनि अनुकम्पा करने वाले, कारुणिक, प्रियदर्शी बुद्ध हैं। मैंने देवताओं के साथ लोक में स्वयं को बुद्ध अनुभव किया॥1814॥

प्रियदर्शी महामुनि सम्बुद्ध को जानकर उनमें अपने चित्त को प्रसादित कर मैंने यह वचन कहा.... ॥1815॥

‘‘‘‘अञ्ञे [सब्बे (स्या॰)] पीठे च पल्लङ्के, आसन्दीसु निसीदरे।
तुवम्पि सब्बदस्सावी, निसीद रतनासने’’॥1816॥
‘‘सब्बरतनमयं पीठं, निम्मिनित्वान तावदे।
पियदस्सिस्स मुनिनो, अदासिं इद्धिनिम्मितं॥1817॥
‘‘रतने च निसिन्नस्स, पीठके इद्धिनिम्मिते।
कुम्भमत्तं जम्बुफलं, अदासिं तावदे अहं॥1818॥
‘‘मम हासं जनेत्वान, परिभुञ्जि महामुनि।
तदा चित्तं पसादेत्वा, सत्थारं अभिवादयिं॥1819॥
‘‘पियदस्सी तु भगवा, लोकजेट्ठो नरासभो।
रतनासनमासीनो, इमा गाथा अभासथ॥1820॥

‘‘‘‘अन्ये पीठे च पल्लङ्के, आसन्दीसु निसीदते।
त्वमपि सर्वदर्शी, निसीद रत्नासने’’॥1816॥
‘‘सर्वरत्नमयं पीठम्, **निर्माय** तावदेव।
प्रियदर्शेः मुनेः, अदाम् ऋद्धिनिर्मितम्॥1817॥
‘‘रत्ने च **निषण्णस्य**, पीठके ऋद्धिनिर्मिते।
कुम्भमात्रं जम्बुफलम्, अदां तावदेव अहम्॥1818॥
‘‘मम हासं ज्ञात्वा, पर्यभौक्षीत् महामुनिः।
तदा चित्तं प्रसाद्य, शास्त्रे अभ्यवादयम्॥1819॥
‘‘प्रियदर्शी तु भगवान्, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
रत्नासनमासीनः, इमां गाथाम् अभाषत॥1820॥

अन्य (बुद्ध) पीठ, पलंग और चौकी पर बैठे, अतः हे सर्वदर्शी! आप भी रत्नमय आसन पर बैठें!॥1816॥

उस समय मैंने सर्वरत्नमय पीठ को सभी ऋद्धियों के द्वारा निर्मित कर प्रियदर्शी मुनि को प्रदान किया॥1817॥

उस समय ऋद्धियों द्वारा निर्मित रत्नमयी पीठ पर बैठे हुए भगवान् को मैंने कुम्भमात्र जम्बुफल प्रदान किया॥1818॥

मेरी प्रसन्नता को जानकर महामुनि ने जम्बुफल खाया तब मैंने चित्त को प्रसादित कर शास्ता का अभिवादन किया॥1819॥

तब भगवान् प्रियदर्शी, लोकज्यष्ठ, नरर्षभ ने रत्नमय पीठ पर आसीन हो इन गाथाओं को कहा.....॥1820॥

‘‘‘यो मे रतनमयं पीठं, अमतञ्च फलं अदा।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1821॥
‘‘‘सत्तसत्तति कप्पानि, देवलोके रमिस्सति।
पञ्चसत्ततिक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1822॥
‘‘‘द्वत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥1823॥
‘‘‘सोण्णमयं रूपिमयं, पल्लङ्कं सुकतं बहुं।
लोहितङ्गमयञ्चेव, लच्छति रतनामयं॥1824॥
‘‘‘चङ्कमन्तम्पि मनुजं, पुञ्ञकम्मसमङ्गिनं।
पल्लङ्कानि अनेकानि, परिवारेस्सरे तदा॥1825॥

‘‘‘यो मे रत्नमयं पीठम्, अमृतञ्च फलमदात्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1821॥
‘‘‘सप्तसप्तति कल्पानि, देवलोके रंस्यति।
पञ्चसप्ततिकृत्वश्च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1822॥
‘‘‘द्वात्रिंशत्कृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्॥1823॥
‘‘‘स्वर्णमयं रूप्यमयम्, पर्यङ्कं सुकृतं **बह्वः**।
लोहिताङ्गमयञ्चैव, लक्ष्यते रत्नामयम्॥1824॥
‘‘‘चङ्क्रमन्तमपि मनुजम्, पुण्यकर्मसमङ्गिनम्।
पर्यङ्काः अनेकाः, परिवारयिष्यते तदा॥1825॥

जिसने मुझे ये रत्नमय पीठ और अमृतफल प्रदान किया है, मैं उसकी कीर्ति का गान करूँगा। मेरे ऐसे वचनों को सुनो... ॥1821॥

अब से 77 वें कल्प में यह देवलोक में रमण करेगा और 75 बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1822॥

32 बार देवेन्द्र हो देवलोक में राज्य करेगा और उसका प्रदेशराज्य विपुल और गणना में असंख्य होगा॥1823॥

वहाँ पर भली प्रकार से निर्मित बहुत से स्वर्णमय और रजतमय पल्लंग तथा रक्तवर्ण के रत्न से निर्मित पलंग को प्राप्त करेगा॥1824॥

पुण्यकर्म से युक्त मनुष्य होकर चङ्क्रमण करेगा तथा बहुत से पलंग उसके चारों ओर होंगे॥1825॥

‘‘‘कूटागारा च पासादा, सयनञ्च महारहं।

इमस्स चित्तमञ्ञाय, निब्बत्तिस्सन्ति तावदे॥1826॥

‘‘‘सट्ठि नागसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।

सुवण्णकच्छा मातङ्गा, हेमकप्पनवाससा [हेमकप्पनिवासना (सी॰ स्या॰), हेमकप्पनिवाससा (क॰)]॥1827॥

‘‘‘आरूळ्हा गामणीयेहि, तोमरङ्कुसपाणिभि।

इमं परिचरिस्सन्ति, रत्नपीठस्सिदं फलं॥1828॥

‘‘‘सट्ठि अस्ससहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।

आजानीयाव जातिया, सिन्धवा सीघवाहिनो॥1829॥

‘‘‘आरूळ्हा गामणीयेहि, इल्लियाचापधारिभि।

तेपिमं परिचरिस्सन्ति, रत्नपीठस्सिदं फलं॥1830॥

‘‘‘कूटागाराश्च प्रासादाः, शयनञ्च महार्घम्।

अस्य चित्तमाज्ञाय, निर्वर्तिष्यन्ति तावदेव॥1826॥

‘‘‘षष्टिः नागसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिताः।

सुवर्णकच्छाः मातङ्गाः, हैमकल्पनवाससा॥1827॥

‘‘‘**आरूढाः** ग्रामणीयैः, तोमराङ्कुशपाणिभिः।

इमं परिचरिष्यन्ति, रत्नपीठस्येदं फलम्॥1828॥

‘‘‘षष्टि अश्वसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिता।

आजानीय इव जात्या, सैन्धवाः शीघ्रवाहिनः॥1829॥

‘‘‘**आरूढाः** ग्रामणीयैः, **ईलिकाचापधारिभिः**।

तेऽपि मम परिचरिष्यन्ति, रत्नपीठस्येदं फलम्॥1830॥

उस समय उसके चित्त को जानकर वहाँ अत्यन्त मूल्यवान् कूटागार, प्रासाद और बहुमूल्य शयनाशन प्रकट हो जाएँगे। ॥1826॥

वहसभी अलंकारों से विभूषित साठ हजार नाग और सुवर्णजटित वस्त्रों से सुसज्जित हाथी भी थे॥1827॥

उस पर आरूढ़ हो हाथ में बर्छी और अंकुश लिए हुए ग्रामीण जन परिचर्या करेगें यह पीठदान का ही सुपरिणाम है॥1828॥

अच्छी नस्ल में उत्पन्न, सभी अलंकारों से विभूषित शीघ्र वाही साठ हजार घोड़े होगें॥1829॥

छोटी तलवार को धारण किये हुए ग्रामीण जन उस पर आरूढ़ मेरी परिचर्या करेगें। यह रत्नपीठ का ही सुपरिणाम है॥1830॥

‘‘‘सट्ठि रथसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।
दीपा अथोपि वेयग्घा, सन्नद्धा उस्सितद्धजा॥1831॥
‘‘‘आरूळ्हा गामणीयेहि, चापहत्थेहि वम्मिभि।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, रत्नपीठस्सिदं फलं॥1832॥
‘‘‘सट्ठि धेनुसहस्सानि, दोहञ्ञा पुङ्गवूसभे।
वच्छके जनयिस्सन्ति, रत्नपीठस्सिदं फलं॥1833॥
‘‘‘सोळसित्थिसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।
विचित्तवत्थाभरणा, आमुक्कमणिकुण्डला॥1834॥
‘‘‘अळारपम्हा हसुला, सुसञ्ञा तनुमज्झिमा।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, रत्नपीठस्सिदं फलं॥1835॥

‘‘‘षष्टि रथसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिताः।
दीपा अथोपि व्याघ्राः, सन्नद्धा उत्सितध्वजाः॥1831॥
‘‘‘आरूढाः ग्रामणीयैः, चापहस्तैः वर्मिभिः।
परिवारयिष्यन्ति इमं नित्यम्, रत्नपीठस्येदं फलम्॥1832॥
‘‘‘षष्टि धेनुसहस्राणि, दोहज्ञाः पुङ्गवृषभान्।
वच्छकान् जनयिष्यन्ति, रत्नपीठस्येदं फलम्॥1833॥
‘‘‘षोडशस्त्रीसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिताः।
विचित्रवस्त्राभरणाः, आमुक्तमणिकुण्डलाः॥1834॥
‘‘‘अरालपक्ष्माः हसुलाः, सुसंज्ञाः तनुमध्यमाः।
परिवारयिष्यन्ति मां नित्यम्, रत्नपीठस्येदं फलम्॥1835॥

चीते और व्याघ्रों से चित्रित तथा ऊपर उठी हुई ध्वजा वाले तथासभी अलंकरो से अलंकृत साठ हजार रथ तैयार होगें॥1831॥

हाथ में धनुष और कवच को धराण किये हुए रथ पर आरुढ़ ग्रामीण मुझे सदैव परिवारित किये रहेंगे, यह रत्नपीठ दान का ही सुपरिणाम है॥1832॥

साठ हजार दोहन करने योग्य गायें, श्रेष्ठ गायें बछड़े को जन्म देंगी॥1833॥

बुद्ध-पूजा का यह फल है कि विचित्र वस्त्रों-आभूषणों तथा मुक्ता मणिकुण्डलों से सुसज्जित सोलह हजार स्त्रियाँ तथा..... ॥1834॥

कुटिल पक्ष्मा, हसुला (पुलकित मुख) सुसंयत तथा सुन्दर आकार वाली स्त्रियाँ मुझे नित्य चारों ओर से घेरे रहती हैं, यह पीठ दान का ही सुपरिणाम है॥1835॥

‘‘‘अट्ठारसे कप्पसते, गोतमो नाम चक्खुमा।
तमन्धकारं विधमित्वा, बुद्धो लोके भविस्सति॥1836॥
‘‘‘तस्स दस्सनमागम्म, पब्बजिस्सतिकिञ्चनो।
तोसयित्वान सत्थारं, सासनेभिरमिस्सति॥1837॥
‘‘‘तस्स धम्मं सुणित्वान, किलेसे घातयिस्सति।
सब्बासवे परिञ्ञाय, निब्बायिस्सतिनासवो’॥1838॥
‘‘वीरियं मे धुरधोरय्हं, योगक्खेमाधिवाहनं।
उत्तमत्थं पत्थयन्तो, सासने विहरामहं॥1839॥
‘‘इदं पच्छिमकं मय्हं, चरिमो वत्तते भवो।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥1840॥

‘‘‘अष्टादशे कल्पशते, गौतमो नाम चक्षुष्मान्।
तमान्धकारं विधम्य, बुद्धो लोके भविष्यति॥1836॥
‘‘‘तस्य दर्शनमागत्य, प्रव्रजिष्यतिकिञ्चनः।
तोषयित्वा शास्तारम्, शासनेभिरंस्यति॥1837॥
‘‘‘तस्य धर्म श्रुत्वा, क्लेशान् घातयिष्यति।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, निर्वायिष्यत्यनास्रवः’॥1838॥
‘‘वीर्यं मे धुरधौरव्यम्, योगक्षेमाधिवाहनम्।
उत्तमार्थं प्रार्थयन्तः, शासने विहराम्यहम्॥1839॥
‘‘इदं पश्चिमकं मम, चरमो वर्त्तते भवः।
सर्वास्रवाः परिक्षीणा, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥1840॥

अट्ठार सौ कल्पों में गौतम नामक चक्षुमान् अन्धकार को विध्वंस कर लोक में बुद्ध उत्पन्न होंगे॥1836॥

उनके दर्शन से आकिञ्चन भाव से प्रव्रजित हो शास्ता को सन्तुष्ट कर उनके शासन में रमण करेगा॥1837॥

उनके धर्म को सुन कर अपने क्लेश नष्ट करेगा और सभी आस्रवों का ज्ञानकर अनास्रव हो निर्वाण प्राप्त करेगा॥1838॥

मेरी वीरता उत्कृष्ट है तथा कल्याण करने में सक्षम है। उत्तम अर्थ की प्रार्थना करते हुए मैं शासन में विहरण करता हूँ॥1839॥

अब यह मेरा अन्तिम और चरम भव है तथा मेरे सभी आस्रव क्षीण हो गये हैं, अब मेरा पुनः भव नहीं होगा॥1840॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1841॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1842॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1843॥

इत्थं सुदं आयस्मा हेमको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

हेमकत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

सत्तरसमं भाणवारं।

8. तोदेय्यत्थेरअपदानं

''राजा अजितञ्जयो [राजासि विजयो (सी॰ अट्ठ॰), राजा विजितजयो (स्या॰)] नाम, केतुमतीपुरुत्तमे।

सूरो विक्कमसम्पन्नो, पुरमज्झावसी तदा॥1844॥

''तस्स रञ्ञो पमत्तस्स, अटवियो समुट्ठहुं।

ओतारा [उत्तरा (स्या॰), ओचरा (पी॰)] तुण्डिका चेव, रट्ठं विद्धंसयुं तदा॥1845॥

''पच्चन्ते कुपिते खिप्पं, सन्निपातेसिरिन्दमो।

भटे चेव बलत्थे च, अरिं निग्गाहयि तदा॥1846॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1841॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1842॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1843॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् हेमकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''राजा अजितञ्जयो नाम, केतुमतीपुरोत्तमे।

शूरो विक्रमसम्पन्नः, पुरमध्यावसत् तदा॥1844॥

''तस्य राज्ञः प्रमत्तस्य, अटव्यः **समुदस्थुः**।

अवचरकाः तुण्डिलकाश्चैव, राष्ट्रं **व्यध्वंसयन्** तदा॥1845॥

''प्रत्यन्तान् कुपितान् क्षिप्रम्, **सन्यपातयत्** अरिन्दमः।

भटान् चैव बलार्थान् च, अरिं **निरग्राहीत्** तदा॥1846॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1841॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1842॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1843॥

इस प्रकार आयुष्मान् हेमक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय केतुमती नामक उत्तम नगर में उसने अजित नाम का शूर तथा विक्रम सम्पन्न राजा होकर पुर के मध्य वास किया॥1844॥

उस प्रमत्त राजा का राज्य जंगलराज हो गया। उसमें रहने वाली प्रजा कर वसूली से त्रस्त थी जिससे उसके राज्य का विध्वंस हो गाया॥1845॥

इस प्रकार शीघ्रतापूर्वक सभी कुपित प्रत्यन्तिकों को राजा ने एकत्रित कर बैठक किया और शत्रु-सैनिकों को दण्डित किया॥1846॥

''हत्थारोहा अनीकट्ठा, सूरा च चम्मयोधिनो।
धनुग्गहा च उग्गा च, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1847॥
''आळारिका च कप्पका, न्हापका मालकारका।
सूरा विजितसङ्गामा, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1848॥
''खग्गहत्था च पुरिसा, चापहत्था च वम्मिनो।
लुद्दा विजितसङ्गामा, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1849॥
''तिधापभिन्ना मातङ्गा, कुञ्जरा सट्ठिहायना।
सुवण्णकच्छालङ्कारा, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1850॥
''खमा सीतस्स उण्हस्स, उक्कारुहरणस्स च।
योधाजीवा कतकम्मा, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1851॥

''**हस्त्यारोहा** अनिकस्थाः, शूराश्च चर्मयोधिनः।
धनुर्ग्राही च उग्राश्च, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1847॥
''आरालिकाश्च कल्पकाः, स्नापकाः मालाकारकाः।
शूराः विजितसङ्ग्रामाः, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1848॥
''खड्गहस्ताश्च पुरुषाः, चापहस्ताश्च वर्मिणः।
लुब्धाः विजितसङ्ग्रामाः, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1849॥
''त्रिधाप्रभिन्नाः मातङ्गाः, कुञ्जराः षष्टिहायनाः।
सुवर्णकक्षालङ्काराः, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1850॥
''क्षमा शीतस्य ऊष्णस्य, उल्कारोहरणस्य च।
योधाजीवाः कृतकर्माः, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1851॥

महावत, योद्धा, सूर और चर्म को धारण करने वाले उग्र धनुर्धारी, सभी एकत्रित हुये॥1847॥

रसोईया, नाई, नहलाने वाले, माला बनाने वाले, सूर, संग्राम को जीतने वाले सभी एकत्रित हुये॥1848॥

हाथ में खड्ग धारण किये हुए पुरुष और धनुष कवच से युक्त, शिकारी तथा संग्राम में विजित सभी लोग॥1849॥

तीन प्रकार से भिन्न मातङ्ग हाथी, साठ वर्ष का कुञ्जर हाथी सोने से कढ़ी हुई चादर से अलंकृत सभी॥1850॥

शीत और उष्ण को सहन करने तथा मल ढोने में सक्षम स्वभाव वाले कृतकर्म योद्धा सब एकत्रित हुये॥1851॥

''सङ्खसद्दं भेरिसद्दं, अथो उतुज [उद्धव (सी॰), उद्दट (स्या॰)] सद्दकं।
एतेहि ते हासयन्ता, सब्बे सन्निपतुं तदा॥1852॥

''तिसूलकोन्तिमन्तेहि [तिसूलकोन्तमन्तेहि (सी॰), कवचेहि तोमरेहि (सी॰), धनूहि तोमरेहि (स्या॰)] च।
कोट्टेन्तानं निपातेन्ता [कोट्टयन्ता निवत्तेन्ता (स्या॰)], सब्बे सन्निपतुं तदा॥1853॥

''किमेवातिनिसामेत्वा [कवचानिवासेत्वा (स्या॰)], सराजा अजितञ्जयो [अजिनं जिनो (सी॰), अजितञ्जिनो (स्या॰)]।
सट्ठि पाणसहस्सानि, सूले उत्तासयिं तदा॥1854॥

''सद्दं मानुसकाकंसु, अहो राजा अधम्मिको।
निरये पच्चमानस्स, कदा अन्तो भविस्सति॥1855॥

''सयनेहं तुवट्टेन्तो, पस्सामि निरये तदा।
न सुपामि दिवारत्तिं, सूलेन तज्जयन्ति मं॥1856॥

''शङ्खशब्दं भेरिशब्दम्, अथो ऋतुज शब्दकम्।
एतैः ते हासयन्तः, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1852॥

''त्रिशूलकोऽन्तमन्त्रैः, धनुर्भिः तोमरैः च।
कुट्टयन्तानां निपातयन्तः, सर्वे सन्न्यपतंस्तदा॥1853॥

''किमेवातिनिशाम्य, सराजा अजितञ्जयः।
षष्टिः प्राणसहस्राणि, शूले **उदत्रासयं** तदा॥1854॥

''शब्दं मानुषकाकार्षिषुः, अहो राजा अधर्मिकः।
निरये पच्यमाणस्य, कदा अन्तो भविष्यति॥1855॥

''शयनेऽहं **द्वन्द्वयन्तः**, पश्यामि निरये तदा।
न स्वपिमि दिवारात्रौ, शूलेन तर्जयन्ति माम्॥1856॥

शङ्ख शब्द, भेरिशब्द और ऋतु से उत्पन्न शब्द इस प्रकार से वे प्रसन्न होते हुए सभी एकत्रित हुये ॥1852॥

त्रिशूल की नोकों से, कवयों से तथा भालों से आहत करने वालों को निपातित करते हुए सभी एकत्रित हुये॥1853॥

क्या सुनकर अजितञ्जय राजा ने साठ हजार प्राणियों को तब शूल से प्रताणित किया है॥1854॥

तब वहाँ के मनुष्यों ने जोर से घोष किया कि अरे! ये राजा तो अधार्मिक हो गया है, यह निश्चय ही नरक में जायेगा और इसका अन्त कब होगा॥1855॥

तब मैं शयन में करवट लेता हुआ नरक को देखता हूँ। मैं दिन-रात सो नहीं पाता। मुझे शूल से पीड़ित किया जाता है॥1856॥

''किं पमादेन रज्जेन, वाहनेन बलेन च।
न ते पहोन्ति धारेतुं, तापयन्ति [तासयन्ति (सी॰ स्या॰)] ममं सदा॥1857॥
''किं मे पुत्तेहि दारेहि, रज्जेन सकलेन च।
यंनून पब्बजेय्याहं, गतिमग्गं विसोधये॥1858॥
''सट्ठि नागसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिते।
सुवण्णकच्छे मातङ्गे, हेमकप्पनवाससे॥1859॥
''आरूळ्हे गामणीयेहि, तोमरङ्कुसपाणिभि।
सङ्गामावचरे ठाने, अनपेक्खो विहायहं।
सककम्मेन सन्तत्तो, निक्खमिं अनगारियं॥1860॥
''सट्ठि अस्ससहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिते।
आजानीयेव जातिया, सिन्धवे सीघवाहने॥1861॥

''किं प्रमादेन **राज्येन**, वाहनेन बलेन च।
न ते प्रभवन्ति धारयितुम्, तापयन्ति मां सदा॥1857॥
''किं मे पुत्रैः दारैः, राज्येन सकलेन च।
यन्नून प्रव्रजेद् अहम्, गतिमार्गं विशोधयेत्॥1858॥
''षष्टिः नागसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिते।
सुवर्णकक्षा मातङ्गान्, हैमकल्पनवाससान्॥1859॥
''**आरूढान्** ग्रामणीयैः, तोमराङ्कुशपाणिभिः।
सङ्ग्रामावचरे स्थाने, अनपेक्षो **विहायाहम्**।
स्वककर्मणा **सन्तप्तः**, निरक्रमिषम् अनागारिकम्॥1860॥
''षष्टि अश्वसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिते।
आजानीयेव जात्याः, सैन्धवे शीघ्रवाहने॥1861॥

प्रमाद के कारण, राजा वाहन और बल से मुझे धारण करने में समर्थ नहीं हो पाता है, और मुझे सदा कष्ट देता है॥1857॥

क्यों न मैं पुत्र-पत्नी और सम्पूर्ण राज्य को निश्चयपूर्वक छोड़ कर प्रव्रज्या ग्रहण कर गतिमार्ग का विशोधन करूँ॥1858॥

सभी अलंकारों से विभूषित साठ हजार नाग तथा सुवर्णजटित रेशमी वस्त्रों से सुसज्जित हाथियों को॥1859॥

हाथ में बर्छी और अंकुश को धारण किये हुए आरुढ़ ग्रामीणों के साथ युद्धभूमि पर अपेक्षा-रहित छोड़कर अपने कर्म से सन्तप्त मैंने अनागारिक हो निष्क्रमण किया॥1860॥

तब अच्छी नस्ल में उत्पन्न, सभी अलंकारों से विभूषित, साठ हजार शीघ्रवाही सैन्धव घोड़ थे॥1861॥

''आरूळ्हे गामणीयेहि, चापहत्थेहि वम्मिभि।

पहारेत्वान [पहायित्वान (सी॰ पी॰), छड्डयित्वान (स्या॰)] ते सब्बे, निक्खमिं अनगारियं॥1862॥

''सट्ठि रथसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिते।

दीपे अथोपि वेयग्घे, सन्नद्धे उस्सितद्धजे।

ते सब्बे परिहारेत्वा [परिवज्जेत्वा (स्या॰), परिहायित्वा (पी॰)], पब्बजिं अनगारियं॥1863॥

''सट्ठि धेनुसहस्सानि, सब्बा कंसूपधारणा।

तायोपि [गावियो (स्या॰), धेनुयो (क॰)] छड्डयित्वान, पब्बजिं अनगारियं॥1864॥

''सट्ठि इत्थिसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।

विचित्तवत्थाभरणा, आमुक्कमणिकुण्डला॥1865॥

''अळारपम्हा हसुला, सुसञ्ञा तनुमज्झिमा।

ता हित्वा कन्दमानायो, पब्बजिं अनगारियं॥1866॥

''आरूढे ग्रामणीयैः, **चापहस्तैः** वर्मिभिः।

प्रहारय्य तान् सर्वान्, निरक्रमिषम् अनागारिकम्॥1862॥

''षष्टिः रथसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिताः।

द्वीपिणः अथोऽपि व्याघ्रान्, सन्नद्धान् उत्सितध्वजान्।

तान् सर्वान् **परिवर्ज्य**, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥1863॥

''षष्टिः धेनुसहस्राणि, सर्वाः कांस्योपधारणाः।

तायोपि छर्दयित्वा, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥1864॥

''षष्टिः स्त्रीसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिता।

विचित्रवस्त्राभरणाः, आमुक्तमणिकुण्डलाः॥1865॥

''अलारपक्ष्मा हसुला, सुसंज्ञाः तनुमध्यमा।

ता हित्वा **क्रन्दमानाः**, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥1866॥

हाथ में धनुष और कवच को धारण किये हुए रथ पर आरुढ़ ग्रामीण थे। उन पर प्रहार करके अनागारिक हो निकल गया॥1862॥

चीतों और व्याघ्रों से चित्रित उठी हुई ध्वजा वाले और हथियारबन्द सभी अलंकारों से अलंकृत साठ हजाह रथ थे उन सब को त्यागकर अनागारिक हो प्रव्रज्या ग्रहण की॥1863॥

साठ हजार गाय जो काँसा धातु को धारण करने वाली थीं, उन सब को भी छोड़कर अनागारिक हो मैंने प्रव्रज्या ग्रहण की॥1864॥

सभी अलंकारो से सुसज्जित विचित्र वस्त्रों आभूषणों तथा आमुक्त मणिकुण्डलों से अलंकृत साठ हजार स्त्रियाँ॥1865॥

तिरछी भौहों वाली, हसुला (पुलकित मुख) सुसंयत तथा सुन्दर आकार वाली उन स्त्रियों को रोता हुआ छोड़कर अनागारिक हो मैंने प्रव्रज्या ग्रहण किया॥1866॥

''सट्ठि गामसहस्सानि, परिपुण्णानि सब्बसो।
छड्डयित्वान तं रज्जं, पब्बजिं अनगारियं॥1867॥
''नगरा निक्खमित्वान, हिमवन्तमुपागमिं।
भागीरथीनदीतीरे, अस्समं मापयिं अहं॥1868॥
''पण्णसालं करित्वान, अग्यागारं अकासहं।
आरद्धवीरियो पहितत्तो, वसामि अस्समे अहं॥1869॥
''मण्डपे रुक्खमूले वा, सुञ्ञागारे च झायतो।
न तु विज्जति तासो मे, न पस्से भयभेरवं॥1870॥
''सुमेधो नाम सम्बुद्धो, अग्गो कारुणिको मुनि।
ञाणालोकेन जोतन्तो, लोके उप्पज्जि तावदे॥1871॥

''षष्टिः ग्रामसहस्राणि, परिपूर्णानि सर्वशः।
छर्दित्वा तत् राज्यम्, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥1867॥
''नगरात् निष्क्रम्य, हिमवन्तमुपागमम्।
भागीरथीनदीतीरे, आश्रमं मापयमहम्॥1868॥
''पर्णशालां कृत्वा, अग्न्यागारम् अकार्षमहम्।
आरब्धवीर्यः प्रहितात्मः, वसामि आश्रमे अहम्॥1869॥
''मण्डपे वृक्षमूले वा, शून्यागारे च ध्यायतः।
न तु विद्यते त्रासो मे, न पश्येत् भयभैरवम्॥1870॥
''सुमेधो नाम सम्बुद्धः, अग्रः कारुणिको मुनिः।
ज्ञानालोकेन द्योतन्तः, लोके उपपद्यत् तावदेव॥1871॥

सभी प्रकार से साठ हजार ग्रामों वाले उस राज्य को छोड़कर मैंने अनागारिक प्रव्रज्या ग्रहण किया॥1867॥

नगर से निकलकर हिमालय पर्वत के समीप आ गया और भागीरथी नदी के तट पर मैंने आश्रम का निर्माण किया॥1868॥

कुटी का निर्माण कर उसमें अग्निशाला का निर्माण किया और वीर्य-आरम्भ कर प्रयत्नशील मैंने आश्रम में वास किया॥1869॥

वृक्ष के मूल में निर्मित मण्डप में और एकान्त स्थान पर ध्यानरत मुझमें त्रास विद्यमान नहीं और मैं भयानक भय को नहीं देखता हूँ॥1870॥

तब सुमेध नाम के सम्बुद्ध अग्र कारुणिक मुनि ज्ञान लोक को प्रकाशित कर लोक में उत्पन्न हुए॥1871॥

''मम अस्समसामन्ता, यक्खो आसि महिद्धिको।
बुद्धसेट्ठम्हि उप्पन्ने, आरोचेसि ममं तदा॥1872॥
''बुद्धो लोके समुप्पन्नो, सुमेधो नाम चक्खुमा।
तारेति जनतं सब्बं, तम्पि सो तारयिस्सति॥1873॥
''यक्खस्स वचनं सुत्वा, संविग्गो आसि तावदे।
बुद्धो बुद्धोति चिन्तेन्तो, अस्समं पटिसामयिं॥1874॥
''अग्गिदारुञ्च छड्डेत्वा, संसामेत्वान सन्थतं।
अस्समं अभिवन्दित्वा, निक्खमिं विपिना अहं॥1875॥
''ततो चन्दनमादाय, गामा गामं पुरा पुरं।
देवदेवं गवेसन्तो, उपगच्छिं विनायकं॥1876॥

''मम **आश्रमासमन्तात्**, यक्ष आसीत् महर्द्धिकः।
बुद्धश्रेष्ठे उत्पन्ने, आरुचत् मां तदा॥1872॥
''बुद्धो लोके समुत्पन्नः, सुमेधो नाम चक्षुष्मान्।
तारयति जनतां सर्वम्, त्वामपि सः तारयिष्यति॥1873॥
''यक्षस्य वचनं श्रुत्वा, संविग्न आसीत् तावदेव।
बुद्धो बुद्धोऽति चिन्तयन्, आश्रमं **प्रत्यशमम्**॥1874॥
''अग्निदारुञ्च छर्दयित्वा, **संशाम्य** संस्तृतम्।
आश्रमम् अभिवाद्य निरक्राम्यं विपिनात् अहम्॥1875॥
''ततः चन्दनमादाय, ग्रामात् ग्रामं पुरात् **पुरम्**।
देवदेवं गवेषन्तः, उपागच्छं विनायकम्॥1876॥

मेरे आश्रम में महानऋद्धिवान् यक्ष था तब लोक में बुद्धश्रेष्ठ उत्पन्न होने पर मुझे सूचना दी॥1872॥

लोक में सुमेध नाम के चक्षुमान् बुद्ध का उत्पाद हुआ है, वे सभी जनता को तारते हैं और तुझे भी तारेगें॥1873॥

मैं यक्ष के वचन को सुनकर उद्विग्न था तब बुद्ध-बुद्ध ऐसा चिन्तन करते हुए मैंने आश्रम की स्तुति की॥1874॥

लकड़ी की आग को छोड़कर उसको ढककर तत्पश्चात् आश्रम की अभिवादन कर मैं जंगल से निकल गया॥1875॥

वहाँ से चन्दन लगाकर गाँव-गाँव, नगर-नगर देवों के देव की गवेषणा करते हुए विनायक के समीप पहुचा॥1876॥

''भगवा तम्हि समये, सुमेधो लोकनायको।
चतुसच्चं पकासेन्तो, बोधेति जनतं बहुं॥1877॥
''अञ्जलिं पग्गहेत्वान, सीसे कत्वान चन्दनं।
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, इमा गाथा अभासहं॥1878॥
'''वस्सिके पुप्फमानम्हि, सन्तिके उपवायति।
त्वं वीर गुणगन्धेन, दिसा सब्बा पवायसि॥1879॥
'''चम्पके नागवनिके, अतिमुत्तककेतके।
सालेसु पुप्फमानेसु, अनुवातं पवायति॥1880॥
'''तव गन्धं सुणित्वान, हिमवन्ता इधागमिं।
पूजेमि तं महावीर, लोकजेट्ठ महायस'॥1881॥

''भगवान् तस्मिन् समये, सुमेधो लोकनायकः।
चतुर्सत्यं प्रकाशयन्, बोधयति जनतां बहुन्॥1877॥
''अञ्जलिं प्रगृह्य, शिरसि कृत्वा चन्दनम्।
सम्बुद्धम् अभिवाद्य, इमां गाथाम् अभाषेऽहम्॥1878॥
'''वार्षिके पुष्पमाने, सन्तिके उपवायति।
त्वं वीर गुणगन्धेन, दिशः सर्वाः प्रवायसि॥1879॥
'''चम्पके नागवनिके, अतिमुक्तककेतके।
शालेषु पुष्पमाणेषु, अनुवातं प्रवायति॥1880॥
'''तव गन्धं श्रुत्वा, हिमवन्तात् इहागमम्।
पूजयामि त्वां महावीर, लोकज्येष्ठ महायशः'॥1881॥

उस समय भगवान् सुमेध लोकनायक चार आर्यसत्य को प्रकाशित करते हुए बहुत सी जनता के ज्ञान दे रहे थे॥1877॥

तब चन्दन को अञ्जलि में ग्रहण कर सिर से लगाकर इन गाथाओं को कह कर मैंने सम्बुद्ध का अभिवादन किया॥1878॥

समीप में चमेली का पुष्प सुगन्ध को प्रवाहित करता है, उसी प्रकार हे! वीर तुम अपने गुण-गन्ध से सभी दिशाओं में प्रवाहित होते हो॥1879॥

चम्पक नागवनिका, अतिमुक्तक, केतक और शाल के पुष्प सुगन्ध को प्रवाहित करते हैं॥1880॥

आपके गन्ध को सूँघकर मैं हिमालय से यहाँ आ गया। हे लोकज्येष्ठ, महायशस्वी महावीर, मैं आपकी पूजा करता हूँ॥1881॥

''वरचन्दनेनानुलिम्पिं, सुमेधं लोकनायकं।
सकं चित्तं पसादेत्वा, तुण्ही अट्ठासि तावदे॥1882॥

''सुमेधो नाम भगवा, लोकजेट्ठो नरासभो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1883॥

'''यो मे गुणे पकित्तेसि, चन्दनञ्च अपूजयि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1884॥

'''आदेय्यवाक्यवचनो, ब्रह्मा उजु पतापवा।
पञ्चवीसतिकप्पानि, सप्पभासो भविस्सति॥1885॥

'''छब्बीसतिकप्पसते, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥1886॥

''वरचन्दनेनान्वलिपम्, सुमेधं लोकनायकम्।
स्वकं चित्तं प्रसाद्य, **तुष्णीम्** अस्थात् तावदेव॥1882॥

''सुमेधो नाम भगवान्, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥1883॥

'''यो मे गुणानि प्राकीर्त्तयत्, चन्दनञ्च अपूजयत्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1884॥

'''आदेयवाक्यवचनः, ब्रह्मा ऋजु प्रतापवान्।
पञ्चविंशतिकल्पानि, सप्रभासो भविष्यति॥1885॥

'''षडविंशतिकल्पशते, देवलोके रंस्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥1886॥

सुमेध लोकनायक को श्रेष्ठ चन्दन का लेप कर मैं अपने चित्त को प्रसादित कर उस स्थान पर शान्त भाव से खड़ा रहा॥1882॥

सुमेध नाम के भगवान्, लोकज्येष्ठ, नरर्षभ ने भिक्षुसंघ में बैठकर इन गाथाओं को कहा..... ॥1883॥

ये जिसने मेरे गुणों को प्रकाशित कर चन्दन से पूजा की है, मैं उसकी कीर्ति का गान करूँगा मेरे एसे वचनों को सुनें-॥1884॥

पच्चीस कल्पों तक स्वागत वचन बोलने वाला वह सरल एवं प्रतापी तथा प्रभावान् ब्रह्मा होगा॥1885॥

यहाँ से 26 सौवें कल्प में देवलोक में रमण करेगा और हजार बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1886॥

‘‘‘तेत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥1887॥
‘‘‘ततो चुतोयं मनुजो, मनुस्सत्तं गमिस्सति।
पुञ्ञकम्मेन संयुत्तो, ब्रह्मबन्धु भविस्सति॥1888॥
‘‘‘अज्झायको मन्तधरो, तिण्णं वेदान पारगू।
तिलक्खणेन सम्पन्नो, बावरी नाम ब्राह्मणो॥1889॥
‘‘‘तस्स सिस्सो भवित्वान, हेस्सति मन्तपारगू।
उपगन्त्वान सम्बुद्धं, गोतमं सक्यपुङ्गवं॥1890॥
‘‘‘पुच्छित्वा निपुणे पञ्हे, भावयित्वान अञ्जसं [हासयित्वान मानसं (स्या॰), भावयित्वान सञ्चयं (क॰)]।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरिस्सतिनासवो’॥1891॥

‘‘‘त्रयस्त्रिंशत्कृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्॥1887॥
‘‘‘ततस्च्युतोऽयं मनुजः, मनुष्यत्वं गमिष्यति।
पुण्यकर्मणा संयुक्तः, ब्रह्मबन्धुः भविष्यति॥1888॥
‘‘‘आध्यायको मन्त्रधरः, त्र्याणां वेदानां पारगः।
त्रिलक्षणेन सम्पन्नः, बावरी नाम ब्राह्मणः॥1889॥
‘‘‘तस्य शिष्यो भूत्वा, भविष्यति मन्त्रपारगः।
उपगत्य सम्बुद्धम्, गौतमं शाक्यपुङ्गवम्॥1890॥
‘‘‘पृष्ट्वा निपुणानि प्रश्नानि, भावयित्वा **अञ्जसम्**।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरिष्यत्यनास्रवः’॥1891॥

33 बार देवेन्द्र हो देवताओं पर राज्य करेगा और उसका प्रदेश राज्य गणना में असंख्य होगा॥1887॥

इसके पश्चात् वह मनुष्य यहाँ से च्युत होकर मनुष्यत्व योनि को प्राप्त करेगा और पुण्यकर्मों से संयुक्त हो ब्रह्मबन्धु होगा॥1888॥

वह मन्त्र धर, अध्यापक, तीनों वेदों में पारंगत और तीनों लक्षणों से सम्पन्न बावरी नाम का ब्राह्मण होगा॥1889॥

शाक्यपुङ्गव गौतम सम्बुद्ध के समीप जाकर उनका शिष्य होकर मन्त्र में पारंगत होगा॥1890॥

मार्ग की भावनाकर तथा उत्कृष्ट प्रश्न पूछकर सभी आस्रवों को जानकर वह आनस्रव हो विहरण करेगा॥1891॥

''तिविधग्गि निब्बुता मय्हं, भवा सब्बे समुद्धृताः।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥1892॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥1893॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥1894॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1895॥
इत्थं सुदं आयस्मा तोदेय्यो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
तोदेय्यत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. जतुकण्णित्थेरअपदानं

''नगरे हंसवतिया, सेट्ठिपुत्तो अहोसहं।
समप्पितो कामगुणे, परिचारेमहं तदा॥1896॥
''ततो [तयो (सी॰)] पासादमारुय्ह, महाभोगे वलञ्जको [उब्बिद्धा गेहलुञ्जका (क॰), उब्बिद्धागेहलञ्छका (सी॰)]।
तत्थ नच्चेहि गीतेहि, परिचारेमहं तदा॥1897॥

''त्रिविधाग्निः निर्वृता मम, भवाः सर्वे समुद्धृताः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥1892॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥1893॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1894॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1895॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तोदेयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''नगर्यां हंसवत्याम्, श्रेष्ठिपुत्रोऽभूवमहम्।
समर्पितः कामगुणे, पर्यचारिषमहं तदा॥1896॥
''ततो प्रासादमारुह्य, महाभोगे वलञ्जकः।
तत्र नृत्यैः गीतैः, पर्यचारिषमहं तदा॥1897॥

तीन प्रकार की अग्नियों से निर्वृत मैं भव के सभी समूहों को नष्ट कर सभी आस्रवों को जानकर अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥1892॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन-मुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1893॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1894॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1895॥

इस प्रकार आयुष्मान् तोदेयस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

हंसवती नगर में मैं सेट्ठि पुत्र हुआ और तब इन्द्रियसुख को समर्पित हो परिचर्या करने लगा॥1896॥

पश्चात् प्रासाद पर आरुढ़ महाभोगो का उपयोग करने वाला मैं नृत्य-गीतों से परिचर्या करने लगा॥1897॥

''तूरिया आहता मय्हं, सम्मताळसमाहिता।
नच्चन्ता [रञ्जन्ती (स्या॰), रज्जन्ता (क॰)] इत्थियो सब्बा, हरन्तियेव मे मनो॥1898॥
''चेलापिका [चेलावका (स्या॰), वेलामिका (पी॰)] लामणिका [वामनिका (स्या॰ पी॰)],
कुञ्जवासी तिमज्झिका [कुञ्जवा सीहिमज्झिता (स्या॰), कुज्जा वा सीहिमज्झिका (पी॰)]।
लङ्घिका सोकज्झायी च, परिवारेन्ति मं सदा॥1899॥
''वेताळिनो कुम्भथूनी, नटा च नच्चका बहू।
नटका नाटका चेव, परिवारेन्ति मं सदा॥1900॥
''कप्पका न्हापका सूदा, मालाकारा सुपासका [सुमापका (सी॰ स्या॰)]।
जल्ला मल्ला च ते सब्बे, परिवारेन्ति मं सदा॥1901॥
''एतेसु कीळमानेसु, सिक्खिते कतुपासने।
रत्तिन्दिवं न जानामि, इन्दोव तिदसङ्गणे॥1902॥

''तूर्या **आहता** मह्यम्, सम्यक्तालसमाहिता।
नृत्यन्ति स्त्रियस्सर्वाः, हरन्त्येव मे मनः॥1898॥
''चेलापिका लामणिका, कुञ्जवासी इति माध्यिका।
लाङ्घिका शोकाध्यायी च, परिवारयन्ति मं सदा॥1899॥
''वैतालिनः कुम्भथूनी, नटाश्च नर्तकाः बह्वः।
नटकाः नाटकाश्चैव, परिवारयन्ति मं सदा॥1900॥
''कल्पकाः स्नापकाः सूदाः, मालाकाराः सुपासकाः।
झल्लाः मल्लाश्च ते सर्वे, परिवारयन्ति मां सदा॥1901॥
''एतेषु **क्रीडमानेसु**, शिक्षिते कृतोपासने।
रात्रिं दिवं न जानामि, इन्द्र इव त्रिदशाङ्गणे॥1902॥

वहाँ मेरे द्वारा तूर्य (वाद्य) पीटा गया जो सम्यक्ताल से समाहित (पूर्ण) था जिस पर सभी स्त्रियाँ नृत्य करती हुई मेरे मन को हरती थी॥1898॥

चेतयिका (विशेष प्रकार का वस्त्र) लामणिक (निकृष्ट) कुञ्जवासी (घाट में रहने वाले) मध्यिका, लाङ्घिका और शोकध्यायी मुझे सदा परिवारित किये रहती थीं॥1899॥

वेतालिक (राजदरबारी कलाकार) कुम्भस्तवी नटी और बहुत से नाचने वाले नृत्यकार मुझे सदैव परिवारित किये रहते थे॥1900॥

नाई, रसोईया, मालाकार भवन का भली प्रकार से पानी वाले तथा मल्ल (पहलवान) सभी मुझे सदैव परिवारित किये रहते हैं॥1901॥

इनमें खेलते हुये ही (धनुषर्विद्या में) शिक्षित और प्रशिक्षित होते हुये देवों में इन्द्र की भाँति मै रात-दिन को नहीं जानता॥1902॥

''अद्धिका पथिका सब्बे, याचका वरका बहू।
उपगच्छन्ति ते निच्चं, भिक्खयन्ता ममं घरं॥1903॥
''समणा ब्राह्मणा चेव, पुञ्ञक्खेत्ता अनुत्तरा।
वड्ढयन्ता ममं पुञ्ञं, आगच्छन्ति ममं घरं॥1904॥
''पटगा [पटका (सी॰ स्या॰), पदका (पी॰)] लटुका [लटका (सी॰)] सब्बे, निगण्ठा पुप्फसाटका।
तेदण्डिका एकसिखा, आगच्छन्ति ममं घरं॥1905॥
''आजीवका विलुत्तावी, गोधम्मा देवधम्मिका।
रजोजल्लधरा एते, आगच्छन्ति ममं घरं॥1906॥
''परित्तका सन्तिपत्ता [परिवत्तका सिद्धिपत्ता (सी॰ स्या॰ पी॰)], कोधपुग्गनिका [कोण्डपुग्गणिका (सी॰), कोण्डपुग्गलिका (पी॰)] बहू।
तपस्सी वनचारी च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1907॥

''अद्ध्वकाः पथिकाः सर्वे, याचकाः वरकाः बह्वः।
उपगच्छन्ति ते नित्यम्, भिक्ष्यमाणः मम गृहम्॥1903॥
''श्रमणाः ब्राह्मणाश्चैव, पुण्यक्षेत्रा अनुत्तराः।
वर्धयन्तो मम पुण्यम्, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1904॥
''पटकाः लटुका सर्वे, निर्ग्रन्थाः पुष्पशाटकाः।
त्रिदण्डिका एकशिखाः, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1905॥
''आजीवकाः **विलुप्तायिन्**, गोधर्माः देवधर्मिकाः।
रजोज्वलधरा एते, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1906॥
''प्ररिक्तकाः शान्तिप्राप्ताः, क्रोधपुग्गणिकाः बह्वः।
तपस्वी वनचारी च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1907॥

राह में चलने वाले यात्री गण, धान्य विशेष को माँगने वाले, बहुत से याचक भीख माँगते मेरे घर आते थे॥1903॥

अनुत्तर पुण्यक्षेत्र वाले श्रमण ब्राह्मण मेरे पुण्य को बढ़ाने के लिए मेरे घर आते थे॥1904॥

सभी पटगा, लटुका वस्त्र वाले, निर्ग्रन्थ, तीन दण्ड धारक (त्रिदण्डी) और एक शिखा वाले भी मेरे घर आए॥1905॥

लूट-पाट कर आजीविका चलाने वाले गोधर्म-देवधर्म वाले कीचड़ को धारण किये हुए ये सभी मेरे घर आते थे॥1906॥

अल्प शान्ति को प्राप्त किये हुए, क्रोध से युक्त बहुत से पुद्गल, तपस्वी और वनचारी सभी मेरे घर आते थे॥1907॥

''ओड्डका दमिळा चेव, साकुळा मलवाळका [मलयालका (सी॰ स्या॰ पी॰)]।
सवरा योनका चेव, आगच्छन्ति ममं घरं॥1908॥

''अन्धका मुण्डका सब्बे, कोटला हनुविन्दका [कोलका सानुविन्दका (सी॰ पी॰)]।
आरावचीनरट्ठा च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1909॥

''अलसन्दका [अलसन्ता (क॰)] पल्लवका, धम्मरा निग्गमानुसा [बब्बरा भग्गकारुसा (सी॰)]।
गेहिका [रोहिता (सी॰), बाहिका (पी॰)] चेतपुत्ता च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1910॥

''माधुरका कोसलका, कलिङ्गा [कासिका (सी॰)] हत्थिपोरिका।
इसिण्डा मक्कला चेव, आगच्छन्ति ममं घरं॥1911॥

''चेलावका आरब्भा [अरम्मा (सी॰ पी॰)] च, ओघुळहा [ओक्कला (सी॰)] मेघला बहू।
खुद्दका सुद्दका चेव, आगच्छन्ति ममं घरं॥1912॥

''ओडकाः तमिलाश्चैव, साकुलाः मलयालकाः।
सवरा योनकाश्चैव, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1908॥

''अन्धकाः मुण्डकाः सर्वे, कोलकाः हनुविन्दकाः।
आरावचीनराष्ट्राश्च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1909॥

''अलसन्दका पल्लवकाः, **बब्बराः निरग्रमानुषाः**।
गृहिकाः चेतपुत्राश्च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1910॥

''माधुरकाः कोशलकाः, कलिङ्गाः हस्तिपोरिकाः।
इसिण्डाः मक्कलाश्चैव, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1911॥

''चैलावका आरब्धाश्च, औत्कलाः मेघलाः बह्वः।
क्षुद्रकाः शूद्रकाश्चैव, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1912॥

ओड्डक (उड़िया) , दमिल (दक्षिण भारत की तमिल जाति) साकुला, मलय, सवरा और योनक (पारसी) सभी मेरे घर आ जाते हैं॥1908॥

अन्धक (आन्ध्र प्रदेश का निवासी) दमिल, कोटल, हनुविन्दक और आरावचीन (सभी प्रान्त विशेष)वाले राष्ट्र सभी मेरे घर आ जाते हैं॥1909॥

अलसन्दक, पल्लव, बब्बरा निग्रमानुस गृहिक अनागारिक और चेत-पुत्र सभी मेरे घर आ जाते हैं॥1910॥

माधुरक, कोसलक, कलिङ्ग हत्थिपोरिक, इसिण्ड (दूसरों को कष्ट देने वाला एक जनजाति) और मक्कल (सभी देशविशेष) सभी मेरे घर आए॥1911॥

चैवालक, आरब्ध औत्कल और बहुत से मेघल, क्षुद्रक और शूद्रक सभी मेरे घर आए॥1912॥

''रोहणा सिन्धवा चेव, चितका एककण्णिका।

सुरट्ठा अपरन्ता च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1913॥

''सुप्पारका कुमारा [किकुमारा (सी॰ पी॰)] च, मल्लसोवण्णभूमिका [मलया सोण्णभूमिका (सी॰ स्या॰ पी॰)]।

वज्जीतङ्गा [वज्जी तारा (सी॰), वज्जीहारा (स्या॰ पी॰)] च ते सब्बे, आगच्छन्ति ममं घरं॥1914॥

''नळकारा पेसकारा, चम्मकारा च तच्छका।

कम्मारा कुम्भकारा च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1915॥

''मणिकारा लोहकारा, सोण्णकारा च दुस्सिका।

तिपुकारा च ते सब्बे, आगच्छन्ति ममं घरं॥1916॥

''उसुकारा भमकारा, पेसकारा च गन्धिका।

रजका तुन्नवाया च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1917॥

''रोहणाः सैन्धवाश्चैव, चितका एककर्णिकाः।

सुराष्ट्रा अपरान्ताश्च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1913॥

''शूर्पारकाः कुमाराश्च, मल्लसौवर्णभूमिकाः।

वज्जीतङ्गाश्च ते सर्वे, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1914॥

''नळाकाराः पेशकाराः, चर्मकाराश्च तक्षकाः।

कर्माराः कुम्भकाराश्च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1915॥

''मणिकाराः लौहकाराः, स्वर्णकाराश्च दूष्यिकाः।

त्रपुकाराश्च ते सर्वे, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1916॥

''इषुकाराः भ्रमकाराः, पेशकाराश्च गन्धिकाः।

रजकाः तूर्णवायश्च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1917॥

रोहण, सिन्धव,चितक और एककर्णिक, सुरट्ठा और अपरन्ता सभी मेरे घर आ गये॥1913॥

सुपारक, कुमार (नाविक), मल्ल, सुनार भूमिकार और वज्जी से तंग सभी मेरे घर आए॥1914॥

नलकार (टोकरी बनाने वाले), पेसकार (बुनकर), चर्मकार (चमार), और तच्छक बढ़ई. कम्मार (सोनार) और कुम्भकार सभी मेरे घर आए॥1915॥

मणिकार, लोहार, स्वर्णकार, बुनकर (वस्त्र बनाने वाला) और सीसा बनाने वाले सभी मेरे घर आए॥1916॥

इषुकार (तीर बनाने वाला), भ्रमकार (घुमाने वाले), पेसकार और सुगन्ध वाले, धोबी और दर्जी सभी मेरे घर आए॥1917॥

''तेलिका कट्ठहारा च, उदहारा च पेस्सिका।
सूपिका सूपरक्खा च, आगच्छन्ति ममं घरं॥1918॥
''दोवारिका अनीकट्ठा, बन्धिका [वन्दिका (सी॰), गन्थिका (स्या॰), सन्दिका (पी॰)]
पुप्फछड्डुका।
हत्थारुहा हत्थिपाला, आगच्छन्ति ममं घरं॥1919॥
''आनन्दस्स महारञ्ञो [आनन्दस्स नाम रञ्ञो (स्या॰), अरिन्दमनाम रञ्ञो (पी॰)],
ममत्थस्स [पमत्तस्स (सी॰ पी॰), समग्गस्स (स्या॰)] अदासहं।
सत्तवण्णेन रतनेन, ऊनत्थं [ऊनत्तं (सी॰ स्या॰ पी॰)] पूरयामहं॥1920॥
''ये मया कित्तिता सब्बे, नानावण्णा बहू जना।
तेसाहं चित्तमञ्ञाय, तप्पयिं रतनेनहं॥1921॥
''वग्गूसु भासमानासु, वज्जमानासु भेरिसु।
सङ्खेसु धमयन्तेसु, सकगेहे रमामहं॥1922॥

''तैलिकाः काष्ठहाराश्च, उदहाराश्च प्रेष्यकाः।
सूपिकाः सूपरक्षाश्च, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1918॥
''दौवारिका अनीकस्थाः, बन्धिकाः पुष्पछर्दकाः।
हस्त्यारोहकाः हस्तिपालाः, आगच्छन्ति मम गृहम्॥1919॥
''आनन्दाय महाराज्ञे, ममार्थाय अदामहम्।
सप्तवर्णेन रत्नेन, ऊनत्वं पूरयाम्यहम्॥1920॥
''ये मया कीर्त्तिता सर्वे, नानावर्णाः बह्वः जनाः।
तेषामहं चित्तमाज्ञाय, अतर्पयं रत्नेनाहम्॥1921॥
''वल्गूसु भासमाणासु, वद्यमानासु भेरिषु।
शङ्खेषु धमयन्तेषु, स्वकगृहे रमेऽहम्॥1922॥

तेली, लकड़हारा, पानी लाने वाला, दास-दासी, रसोइयाँ और रसोइ रक्षक सभी मेरे घर आ गये॥1918॥

द्वारपालक,सेना की टुकड़ी, बन्धक बनाने वाला, कुम्हलाये पुष्पों को फेंकने वाला, महावत और हाथी पालने वाला सभी मेरे घर आ गये॥1919॥

आनन्द नामक स्वार्थी महाराज को मेरे द्वारा सात वर्णों के रत्नों से जो मात्रा में कम थे, पूरित किया गया॥1920॥

विविध वर्णो के बहु जनों द्वारा ये जो मेरी कीर्ति की गई है उनके चित्त को जानकर मैंने रत्नों से तर्पित किया॥1921॥

मैंने अपने घर में सुन्दररूप से ध्वनित् एवं वादित भेरिवाद्यों एवं शङ्खों में रमण किया॥1922॥

''भगवा तम्हि समये, पदुमुत्तरनायको।
वसीसतसहस्सेहि, परिक्खीणासवेहि सो॥1923॥

''भिक्खूहि सहितो वीथिं, पटिपज्जित्थ चक्खुमा।
ओभासेन्तो दिसा सब्बा, दीपरुक्खोव जोतति॥1924॥

''वज्जन्ति भेरियो सब्बा, गच्छन्ते लोकनायके।
पभा निद्धावते तस्स, सतरंसीव उग्गतो॥1925॥

''कवाटन्तरिकायापि, पविट्ठेन च रस्मिना।
अन्तोघरेसु विपुलो, आलोको आसि तावदे॥1926॥

''पभं दिस्वान बुद्धस्स, पारिसज्जे अवोचहं।
निस्संसयं बुद्धसेट्ठो, इमं वीथिमुपागतो॥1927॥

''भगवान् तस्मिन् समये, पद्मोत्तरनायकः।
वसीशतसहस्रैः, परिक्षीणास्रवैः सः॥1923॥
''भिक्षुभिः सहितो वीथिम्, प्रत्यपद्ध्वं चक्षुष्मान्।
अवभासयन् दिशः सर्वाः, दीपवृक्ष इव द्योतते॥1924॥
''वद्यन्ते भेर्यः सर्वाः, गच्छन्ते लोकनायके।
प्रभा निर्द्धाव्यते तस्य, शतरश्मीव उद्गतः॥1925॥
''कवाटान्तरीकायामऽपि, प्रविष्टेन च रश्मिणा।
अन्तर्गृहेषु विपुलः, आलोक आसीत् तावदेव॥1926॥
''प्रभां दृष्ट्वा बुद्धस्य, पारिषद्ये अवोचमहम्।
निस्संशयं बुद्धश्रेष्ठः, इमां वीथिमुपागतः॥1927॥

उसी समय् नायक भगवान् पद्मोत्तर आश्रव को क्षीण किये हुए सौ हजार अनुशासित शिष्यों के साथ वहाँ आये॥1923॥

दीप-वृक्ष के समान सभी दिशाओं को प्रकाशित करते हुए भिक्षुसहित चक्षुमान् मार्गारुढ़ हुए॥1924॥

लोकनायक के जाते हुये सभी भेरियाँ बजती हैं और उनसे उगते हुए सूर्य के समान प्रभा निकलती है॥1925॥

खिड़की अथवा दरवाजे के अन्दर प्रविष्ट हुई रश्मि से घर के आन्तरिक भागों में भी विपुल आलोक फैल गया॥1926॥

बुद्ध की प्रभा को देखकर मैंने परिषद् में कहा- निःसन्देह बुद्धश्रेष्ठ इस मार्ग पर आ गये॥1927॥

''खिप्पं ओरुय्ह पासादा, अगमिं अन्तरापणं।
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा, इदं वचनमब्रविं॥1928॥
'''अनुकम्पतु मे बुद्धो, जलजुत्तमनायको।
वसीसतसहस्सेहि, अधिवासेसि सो मुनि'॥1929॥
''निमन्तेत्वान सम्बुद्धं, अभिनेसिं सकं घरं।
तत्थ अन्नेन पानेन, सन्तप्पेसिं महामुनिं॥1930॥
''भुत्ताविं कालमञ्ञाय, बुद्धसेट्ठस्स तादिनो।
सतङ्गिकेन तूरियेन, बुद्धसेट्ठं उपट्ठहिं॥1931॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
अन्तोघरे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1932॥

''क्षिप्रम् अवरुह्य प्रासादात्, अगमम् अन्तरापणम्।
सम्बुद्धम् अभिवाद्य, इदं वचनमब्रवम्॥1928॥
'''अनुकम्पतु मे बुद्ध, जलजोत्तमनायक।
वसीशतसहस्रैः, अध्यववसत् सो मुनिः'॥1929॥
''नैमन्त्र्य सम्बुद्धम्, अभ्यनैषं स्वकं गृहम्।
तत्र अन्नेन पानेन, समतर्पिषं महामुनिम्॥1930॥
''**भुत्तायिनं** कालमाज्ञाय, बुद्धश्रेष्ठस्य तायिनः।
शताङ्गिकेन तूर्येण, बुद्धश्रेष्ठम् उपास्थामहम्॥1931॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
अन्तर्गृहे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥1932॥

शीघ्र मैं प्रासाद से नीचे उतर कर बाजार की गली में आ गया और सम्बुद्ध को अभिवादन कर यह वचन कहा..... ॥1928॥

जलजोत्तर नामक नायक बुद्ध मुझ पर अनुकम्पा करें। अनुशासित किये हुए सौ हजार शिष्यों के साथ मुनि वास करें॥1929॥

सम्बुद्ध को निमन्त्रित कर मैं विनयपूर्वक उन्हें अपने घर ले गया। वहाँ पर अन्न-जल से महामुनि को सन्तुष्ट किया॥1930॥

तब बुद्धश्रेष्ठ के भोजन के काल को जानकर मैंने उनको भोजन कराया और सौ अंगों वाले तूर्यवाद्य के साथ बुद्धश्रेष्ठ की सेवा की॥1931॥

आहुतियों के ग्रहणकर्ता, पद्मोत्तर, लोकविद ने घर के अन्दर बैठकर इन गाथाओं को कहा..... ॥1932॥

‘‘‘यो मं तूरियेहुपट्ठासि, अन्नपानञ्चदासि मे।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1933॥
‘‘‘पहूतभक्खो हुत्वान, सहिरञ्ञो सभोजनो।
चतुदीपे एकरज्जं, कारयिस्सतियं नरो॥1934॥
‘‘‘पञ्चसीले समादाय, दसकम्मपथे ततो।
समादाय पवत्तेन्तो, परिसं सिक्खापयिस्सति॥1935॥
‘‘‘तूरियसतसहस्सानि, भेरियो समलङ्कता।
वज्जयिस्सन्तिमं निच्चं, उपट्ठानस्सिदं फलं॥1936॥
‘‘‘तिंसकप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
चतुसट्ठिक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जं करिस्सति॥1937॥

‘‘‘यो मम **तूर्यैः उपास्थात्**, अन्नपानञ्चादात् मे।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1933॥
‘‘‘प्रभूतभक्ष्यो भूत्वा, सहिरण्यः सभोजनः।
चतुर्दीपे एकराज्यम्, कारयिष्यती अयं नरः॥1934॥
‘‘‘पञ्चशीलानि समादाय, दशकर्मपथान् ततः।
समादाय प्रवर्त्तयन्, परिषदि शिक्षापयिष्यति॥1935॥
‘‘‘तूर्यशतसहस्राणि, भेर्यः समलङ्कृताः।
वादयिष्यन्ति मां नित्यम्, उपास्थानस्येदं फलम्॥1936॥
‘‘‘त्रिंशत्कल्पसहस्राणि, देवलोके रंस्यति।
चतुश्षष्टिकृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यं करिष्यति॥1937॥

ये जिसने मेरे लिए तूर्यवाद्य को उपस्थित किया है और मुझे अन्न-जल प्रदान किया है, मैं उसकी कीर्ति को कहूँगा। ऐसे मेरे वचनों को सुनें ॥1933॥

यह व्यक्ति प्रचुर मात्रा में खाद्य पदार्थ वाला होकर, भोजनसहित, राजाओं के साथ चारों द्वीपों में एकल राज्य करेगा ॥1934॥

पञ्चशील को ग्रहण करने के उपरान्त दश कर्म-पथ को भी पार कर उपदेश प्रारम्भ करते हुए परिषद को शिक्षित करेगा॥1935॥

सौ हजार तूर्यवाद्य और सभी अलंकारों से अलंकृत भेरीवाद्य नित्य ही उसके लिए बजेंगे, यह बुद्धसेवा का ही फल होगा ॥1936॥

30 हजार कल्पों तक देवलोक में रमण करेगा और 64 बार देवेन्द्र हो देवराज्य करेगा ॥1937॥

‘‘‘चतुसट्ठिक्खत्तुं राजा, चक्कवत्ती भविस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥1938॥
‘‘‘कप्पसतसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥1939॥
‘‘‘उपपज्जति यं योनिं, देवत्तं अथ मानुसं।
अनूनभोगो हुत्वान, मनुस्सत्तं गमिस्सति॥1940॥
‘‘‘अज्झायको भवित्वान, तिण्णं वेदान पारगू।
उत्तमत्थं गवेसन्तो, चरिस्सति महिं इमं॥1941॥
‘‘‘सो पच्छा पब्बजित्वान, सुक्कमूलेन चोदितो।
गोतमस्स भगवतो, सासनेभिरमिस्सति॥1942॥

‘‘‘चतुश्षष्टिकृत्वः राजा, चक्रवर्त्ती भविष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्॥1938॥
‘‘‘कल्पशतसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥1939॥
‘‘‘उपपद्यते यां योन्याम्, देवत्वम् अथ मानुषम्।
अनूनभोगो भूत्वा, मनुष्यत्वं गमिष्यति॥1940॥
‘‘‘अध्यायको भूत्वा, त्र्याणां वेदानां पारगः।
उत्तमार्थं गवेषयन्, चरिष्यति महिम् इमाम्॥1941॥
‘‘‘सः पश्चात् प्रव्रज्य, शुक्लमूलेन चोदितः।
गौतमस्य भगवतः, शासनेभिरंस्यते॥1942॥

64 बार वह चक्रवर्ती राजा होगा और उसका प्रदेशराज्य विपुल तथा गणना में असंख्य होगा ॥1938॥

सौ हजारवे कल्प में इक्ष्वाककुल में उत्पन्न हो वह गौतम नामक गोत्र से लोक में शास्ता होगा ॥1939॥

वह देवत्व अथवा मनुष्यत्व जिस भी योनि में उत्पन्न होगा सम्पूर्ण भोगों को भोगकर मनुष्यत्व को प्राप्त करेगा॥1940॥

अध्यापक होकर वह तीनों वेदो को पार करेगा और उत्तम अर्थ की प्राप्ति के लिए इस पृथ्वी पर विचरण करेगा॥1941॥

उसके पश्चात् कुशल कर्मों के उदित होने पर प्रव्रज्या ग्रहण करेगा और गौतम भगवान् के शासन में रमण करेगा॥1942॥

‘‘‘आराधयित्वान सम्बुद्धं, गोतमं सक्यपुङ्गवं।

किलेसे झापयित्वान, अरहायं भविस्सति’’॥1943॥

‘‘विपिने ब्यग्घराजाव, मिगराजाव केसरी।

अभीतो विहरामज्ज, सक्यपुत्तस्स सासने॥1944॥

‘‘देवलोके मनुस्से वा, दलिद्दे दुग्गतिम्हि वा।

निब्बत्तिं मे न पस्सामि, उपट्ठानस्सिदं फलं॥1945॥

‘‘विवेकमनुयुत्तोम्हि, उपसन्तो निरूपधि।

नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥1946॥

‘‘किलेसा झापिता मय्हं…पे॰… विहरामि अनासवो॥1947॥

‘‘स्वागतं वत मे आसि…पे॰… कतं बुद्धस्स सासनं॥1948॥

‘‘‘आराध्य सम्बुद्धम्, गौतमं शापुङ्गवम्।

क्लेशान् ध्मापयित्वा, अर्हदयं भविष्यति’’॥1943॥

‘‘विपिने व्याघ्रराजा इव, मृगराजा इव केशरी।

अभीतो विहराम्यद्य, शाक्यपुत्रस्य शासने॥1944॥

‘‘देवलोके मनुष्ये वा, दरिद्रे **दुर्गतौ** वा।

निर्वृत्तिं मे न पश्यामि, उपस्थानस्येदं फलम्॥1945॥

‘‘विवेकमनुयुक्तोऽस्मि, उपशान्तः **निरुपधिः**।

नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥1946॥

‘‘कलेशाः ध्मापिताः मम…पे॰… विहरामि अनास्रवः॥1947॥

‘‘स्वागतं वत मे आसीत्…पे॰… कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1948॥

सम्बुद्ध, गौतम, शाक्यपुङ्गव की आराधना कर क्लेश को समूल नष्ट कर वह अर्हत्व को प्राप्त होगा॥1943॥

जंगल में सिंह-राज के समान और मृगराज केसरी के समान बिना भयभीत हुए आज मैं शाक्य पुत्र के शासन में विहरण करता हूँ॥1944॥

देवलोक अथवा मनुष्यलोक में दरिद्रता व दुर्गति में उत्पत्ति नहीं देखता हूँ, यह सब सेवादान का ही सुपरिणाम है॥1945॥

विवेकयुक्त, एकान्तवासी, शान्तचित्त, आसक्ति-रहित, राग-रहित मैं जिस प्रकार हाथी बन्धनमुक्त हो विहरण करता हूँ वैसे ही आस्रवरहित विहरण करता हूँ॥1946॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1947॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1948॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥1949॥
इत्थं सुदं आयस्मा जतुकण्णित्थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
जतुकण्णित्थेरस्सापदानं नवमं।

10. उदेनत्थेरअपदानं

''हिमवन्तस्साविदूरे, पदुमो नाम पब्बतो।
अस्समो सुकतो मय्हं, पण्णसाला सुमापिता॥1950॥
''नदियो सन्दरे तत्थ, सुपतित्था मनोरमा।
अच्छोदका सीतजला, सन्दरे नदियो सदा॥1951॥
''पाठीना पावुसा मच्छा, बलजा मुञ्जरोहिता।
सोभेन्ता नदियो एते, वसन्ति नदिया सदा॥1952॥
''अम्बजम्बूहि सञ्छन्ना, करेरितिलका तथा।
उद्दालका पाटलियो, सोभेन्ति मम अस्समं॥1953॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥1949॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् जतुकर्णीस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''हिमवत अविदूरे, पद्मो नाम पर्वतः।
आश्रमः सुकृतो मह्यम्, पर्णशाला सुमापिता॥1950॥
''नद्यः स्यन्दते तत्र, सुप्रतिष्ठा मनोरमा।
अच्छोदकाः शीतजलाः, स्यन्दते नद्यः सदा॥1951॥
''पाठीनाः प्रावृषाः मत्स्याः, बलजाः मुञ्जरोहिताः।
शोभयन्तः नदीम् एते, वसन्ति नद्यां सदा॥1952॥
''आम्रजम्ब्वैः सञ्छन्नाः, करेरितिलकाः तथा।
उद्दालकाः पाटलीयः, शोभन्ते मम आश्रमम्॥1953॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षडभिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1949॥

इस प्रकार आयुष्मान् जतुकण्णित्थेर ने इन गाथाओं को कहा-

हिमालय पर्वत से कुछ दूरी पर पदम नाम का पर्वत था। वहाँ पर सुकृत रूप से मेरे द्वारा आश्रम सुनिर्मित किया गया॥1950॥

वहाँ पर सुप्रतिष्ठित मनोरम नदी प्रवाहित थी जो निर्मल जल, शीतल जल से युक्त हो सदैव प्रवाहित रहती थी॥1951॥

ये पाठीन, पावुस, मच्छ, बलजा तथा मुञ्जरोहित आदि नदी को शोभित करते हुए सदैव नदी में वास करते हैं॥1952॥

आम्र, जम्बू, करेरि और तिलक से आच्छादित है और उद्दालक, पाटलीय से मेरा आश्रम सदैव शोभित होता है॥1953॥

''अङ्कोलका बिम्बिजाला, मायाकारी च पुप्फिता।
गन्धेन उपवायन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1954॥
''अतिमुत्ता सत्तलिका, नागा साला च पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1955॥
''कोसम्बा सळला नीपा, अट्ठङ्गापि च पुप्फिता [अट्ठङ्गा च सुपुप्फिता (सी॰), कट्ठङ्गा च सुपुप्फिता (पी॰)]।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1956॥
''हरीतका आमलका, अम्बजम्बुविभीतका।
कोला भल्लातका बिल्ला, फलानि बहु अस्समे॥1957॥
''कलम्बा कन्दली तत्थ, पुप्फन्ति मम अस्समे।
दिब्बगन्धं [दिब्बगन्धा (सी॰ स्या॰ पी॰) एवं परत्थपि] सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1958॥

''अङ्कोलकाः बिम्बजालाः, मायाकारी च पुष्पिता।
गन्धेन उपवायन्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1954॥
''अतिमुक्ताः शत्तलिकाः, नागाः शालाश्च पुष्पिताः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभन्ति मम आश्रमम्॥1955॥
''कोसम्बाः सरलाः नीपाः, अष्टाङ्गापि च पुष्पिताः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1956॥
''हरीतकाः आमलकाः, आम्रजम्बुविभीतकाः।
कोलाः भल्लातकाः बिल्वाः, फलानि बहूनि आश्रमे॥1957॥
''कलम्बा कन्दली तत्र, पुष्पन्ति मम आश्रमे।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1958॥

मायाकारी और पुष्पित अङ्कोल, बिम्बिजाल की गन्ध से युक्त वायु प्रवाहित होती रहती है जिससे मेरा आश्रम शोभित होता है॥1954॥

अतिमुक्तक, सत्तलिक, नाग और पुष्पित शाल की दिव्य गन्ध से युक्त वायु प्रवाहित होती रहती है, जिससे मेरा आश्रम शोभित होता है॥1955॥

कोसम्ब, सरला, नीप और आठ अंगों से पुष्पित पुष्प दिव्यगन्ध को प्रवाहित कर मेरे आश्रम को शोभित करते हैं॥1956॥

हरीतक, आमलक, आम, जामुन, विभीतक (बहेड़ा) कोला, भल्लातक, बिल्व आदि बहुत से फल मेरे आश्रम में थे॥1957॥

वहाँ मेरे आश्रम में कदम्ब केला पुष्पित हैं और दिव्यगन्ध को प्रवाहित कर मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥1958॥

''असोकपिण्डिवारी च [असोकपिण्डी च वरी (सी॰ स्या॰), असोकपिण्डी च वारी (पी॰)],
निम्बरुक्खा च पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1959॥

''पुन्नागा गिरिपुन्नागा, तिमिरा तत्थ पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1960॥

''निग्गुण्डी सिरिनिग्गुण्डी, चम्परुक्खेत्थ पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1961॥

''अविदूरे पोक्खरणी, चक्कवाकूपकूजिता।
मन्दालकेहि सञ्छन्ना, पदुमुप्पलकेहि च॥1962॥

''अच्छोदका सीतजला, सुपतित्था मनोरमा।
अच्छा फलिकसमाना, सोभेन्ति मम अस्समं॥1963॥

''अशोकपिण्डिवारी च, निम्बवृक्षाश्च पुष्पिताः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1959॥

''पूर्णगाः गिरिपूर्णगाः, तिमिराः तत्र पुष्पिता।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1960॥

''निर्गुण्डी श्रीनिर्गुण्डी, चम्पवृक्ष अत्र पुष्पिता।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1961॥

''अविदूरे पुष्करणी, चक्रवाकोप्रकूजिता।
मन्दारकैः सञ्छन्नाः, पद्मोत्पलकैश्च॥1962॥

''अच्छोदकाः शीतजलाः, सुप्रतिष्ठाः मनोरमाः।
अच्छाः फलिकसमानाः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1963॥

गुच्छे में पुष्पित अशोक, नीम के वृक्ष और जल वहाँ पर दिव्यगन्ध को प्रवाहित करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1959॥

वहाँ पर पुन्नाग, गिरिपुन्नाग और तिमिर पुष्पित हैं जो दिव्यगन्ध को प्रवाहित कर मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1960॥

वहाँ पर निर्गुण्डी, श्रीनिर्गुण्डी और पुष्पित चम्पा के वृक्ष दिव्यगन्ध को प्रवाहित कर मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1961॥

वहाँ कुछ दूरी पर चकवा की आवाज से प्रकूजित और मदार तथा कमलपुष्पों से आच्छादित एक पुष्करणी (तालाब) थी॥1962॥

वहाँ पर स्वच्छजलवाली, निर्मल, शीतलजल से युक्त, स्फटिक के समान स्वच्छ, सुन्दर एवं मनोरम नदियाँ स्थित है जो मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाती हैं॥1963॥

''पदुमा पुप्फरे तत्थ, पुण्डरीका च उप्पला।
मन्दालकेहि सञ्छन्ना, सोभेन्ति मम अस्समं॥1964॥
''पाठीना पावुसा मच्छा, बलजा मुञ्जरोहिता।
विचरन्ताव ते तत्थ, सोभेन्ति मम अस्समं॥1965॥
''कुम्भीला सुसुमारा च, कच्छपा च गहा बहू।
ओगहा अजगरा च, सोभेन्ति मम अस्समं॥1966॥
''पारेवता रविहंसा, चक्कवाका नदीचरा।
दिन्दिभा साळिका चेत्थ, सोभेन्ति मम अस्समं॥1967॥
''नयिता अम्बगन्धी च, केतका तत्थ पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभेन्ति मम अस्समं॥1968॥

''पद्माः पुष्प्यन्ति तत्र, पुण्डरीकाश्च उत्पलाः।
मन्दारकैः सञ्छन्नाः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1964॥
''पाठीना प्रावृषाः मत्स्याः, बलजाः मुञ्जरोहिताः।
विचरन्निव ते तत्र, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1965॥
''कुम्भीलाः शिंशुमाराश्च, कच्छपाश्च ग्राहाः बह्वः।
अवग्राहा अजगराश्च, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1966॥
''पारापताः रविहंसाः, चक्रवाकाः नदीचराः।
टिट्टिभाः शालिकाश्च अत्र, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1967॥
''नयिता आम्रगन्धी च, केतकाः तत्र पुष्पिता।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1968॥

वहाँ पर कमलपुष्प, सफेद कमल, कँवल पुष्पित थे और मदारपुष्पों से आच्छादित वे मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाती हैं॥1964॥

वहाँ पर पाठीन, पावुस, मच्छ, बलजा, मुञ्जरोहित वे सभी विचरण करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते है॥1965॥

कुम्भील, शिंसुमार, कच्छप और बहुत से ग्राह, बड़े आकार के अजगर सभी मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1966॥

वहाँ पर पारावत (कबूतर), रविहंस, चकवा और नदीचर टिटिहिरी और शालिक सभी मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1967॥

वहाँ पर नयिता (श्वेत कमल) और केतक पुष्पित थे जो दिव्यगन्ध को प्रवाहित करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1968॥

''सीहा ब्यग्घा च दीपी च, अच्छकोकतरच्छका।
अनुसञ्चरन्ता पवने, सोभेन्ति मम अस्समं॥1969॥
''जटाभारेन भरिता, अजिनुत्तरवासना।
अनुसञ्चरन्ता पवने, सोभेन्ति मम अस्समं॥1970॥
''अजिनानिधरा एते, निपका सन्तवुत्तिनो।
अप्पाहारावे ते सब्बे, सोभेन्ति मम अस्समं॥1971॥
''खारिभारं गहेत्वान, अज्झोगय्ह वनं तदा।
मूलफलानि भुञ्जन्ता, वसन्ति अस्समे तदा॥1972॥
''न ते दारुं आहरन्ति, उदकं पादधोवनं।
सब्बेसं आनुभावेन, सयमेवाहरीयति॥1973॥

''सिंहाः व्याघ्राश्च द्वीपी च, अच्छकोकतरच्छकाः।
अनुसञ्चरन्तः प्रवणे, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1969॥
''जटाभारेण भरिता, अजिनोत्तरवासना।
अनुसञ्चरन्तः प्रवणे, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1970॥
''अजिनानिधरा एते, निपक्काः शान्तवर्त्तिनः।
अल्पाहारा इव ते सर्वे, शोभयन्ति मम आश्रमम्॥1971॥
''खारिभारं गृहीत्वा, अध्यवगाह्य वनं तदा।
मूलफलानि **भुञ्जन्तः**, वसन्ति आश्रमे तदा॥1972॥
''न ते दारुम् आहरन्ति, उदकं पादधोवनम्।
सर्वेषाम् आनुभावेन, स्वयमेवाहरीयति॥1973॥

सिंह, व्याघ्र, द्वीपि भालू और रीछ प्रवण मे अनुचरण करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1969॥

जटा के भार से भरित, अजिनचर्म से निर्मित उत्तरासङ्ग वाले, प्रवण में विचरण करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1970॥

ये अजिनचर्म के वस्त्र को धारण करने वाले, बुद्धिमान् तथा शान्ति का व्यवहार करने वाले सत्पुरुष और अल्पाहार ग्रहण करने वाले सभी मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥1971॥

तब वे खारिभार को ग्रहण कर घने वन में जाकर मूलफल को खाकर मेरे आश्रम में वास किये॥1972॥

न तो वे लकड़ी लाते हैं और न ही पाद-प्रक्षालन के लिए जल लाते हैं। वे सभी के प्रताप से अपने आप ही आ जाते हैं॥1973॥

''चुल्लासीतिसहस्सानि, इसयेत्थ समागता।
सब्बेव झायिनो एते, उत्तमत्थगवेसका॥1974॥
''तपस्सिनो ब्रह्मचारी, चोदेन्ता अप्पनाव ते।
अम्बरावचरा सब्बे, वसन्ति अस्समे तदा॥1975॥
''पञ्चाहं सन्निपतन्ति, एकग्गा सन्तवुत्तिनो।
अञ्ञोञ्ञं अभिवादेत्वा, पक्कमन्ति दिसामुखा॥1976॥
''पदुमुत्तरो नाम जिनो, सब्बधम्मान पारगू।
तमन्धकारं विधमं, उप्पज्जि तावदे जिनो॥1977॥
''मम अस्समसामन्ता, यक्खो आसि महिद्धिको।
सो मे संसित्थ सम्बुद्धं, जलजुत्तमनायकं॥1978॥

''चुल्लासीतिसहस्राणि, ऋषय अत्र समागताः।
सर्वैव ध्यायिन एते, उत्तमार्थगवेषकाः॥1974॥
''तपस्विनः ब्रह्मचारी, **चोदयन्त अर्पणा इव** ते।
अम्बरावचराः सर्वे, वसन्ति आश्रमे तदा॥1975॥
''पञ्चाहं सन्निपतन्ति, एकाग्राः शान्तवर्त्तिनः।
अन्योऽन्यम् अभिवाद्य, प्राक्रमन्ति दिशामुखाः॥1976॥
''पद्मोत्तरो नाम जिनः, सर्वधर्मान् पारगः।
तमान्धकारं व्यधमम्, उपापद्यत तावदेव जिनः॥1977॥
''मम आ**श्रमसमन्ताद्**, यक्ष आसीत् महर्द्धिकः।
सो मे **संसिक्थ** सम्बुद्धम्, जलजोत्तमनायकम्॥1978॥

उस समय वहाँ 84 हजार ऋषि एकत्रित हुए और श्रेष्ठतम परमार्थ की गवेषणा के लिए सभी ने ध्यान लगाया॥1974॥

वे सभी तपस्वी, ब्रह्मचारी तर्क-वितर्क करने हेतु एक दूसरे को प्रेरित करते हैं और सभी अम्बर में विचरण कर मेरे आश्रम में वास करते हैं॥1975॥

एकाग्र चित्त शान्ति का व्यवहार कर पाँच दिन सम्मेलन किया और परस्पर एक दूसरे को अभिवादन कर दिशाभिमुख हो चला गया॥1976॥

सभी धर्मों में पारंगत, अन्धकार को नष्ट करने वाले पद्मोत्तर नामक जिन उत्पन्न हुये॥1977॥

मेरे आश्रम के सामने एक महाऋद्धिवान् यक्ष था। उसने मुझे जलजोत्तम नायक सम्बुद्ध के आने की सूचना दी॥1978॥

''एस बुद्धो समुप्पन्नो, पदुमुत्तरो महामुनि।
खिप्पं गन्त्वान सम्बुद्धं, पयिरूपास मारिस॥1979॥
''यक्खस्स वचनं सुत्वा, विप्पसन्नेन चेतसा।
अस्समं संसामेत्वान, निक्खमिं विपिना तदा॥1980॥
''चेळेव डय्हमानम्हि, निक्खमित्वान अस्समा।
एकरत्तिं निवासेत्वा [निवसित्वा (सी॰), निवासेन (?)], उपगच्छिं विनायकं॥1981॥
''पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
चतुसच्चं पकासेन्तो, देसेसि अमतं पदं॥1982॥
''सुफुल्लं पदुमं गय्ह, उपगन्त्वा महेसिनो।
पसन्नचित्तो सुमनो, बुद्धस्स अभिरोपयिं॥1983॥

''एष बुद्धः समुत्पन्नः, पद्मोत्तरो महामुनिः।
क्षिप्रं गत्वा सम्बुद्धम्, पर्युपास मार्ष॥1979॥
''यक्षस्य वचनं श्रुत्वा, विप्रसन्नेन चेतसा।
आश्रमं **संशाम्य**, निरक्राम्यं विपिनात् तदा॥1980॥
''चैल इव डह्यमाने, निष्क्रम्य आश्रमात्।
एकरात्रिं निवास्य, उपागमं विनायकम्॥1981॥
''पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
चतुर्सत्यं प्रकाशयन्, अदिक्षत् अमृतं पदम्॥1982॥
''सुफुल्लं पद्मं गृह्य, उपगत्य महर्षिणः।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, बुद्धाय अभ्यरोपयम्॥1983॥

ऐसे पद्मोत्तर, महामुनि सम्बुद्ध उत्पन्न हुये हैं। शीघ्र ही सम्बुद्ध के समीप जाकर उन मान्यवर की सेवा करो॥1979॥

अत्यधिक प्रसन्नमन से यक्ष के वचनों को सुनकर तब मैं आश्रम को त्यागकर जंगल से निकल गया॥1980॥

जैसे (व्यक्ति) जलते हुए वस्त्र से बाहर निकल जाता है वैसे ही मैं आश्रम से निकलकर एक रात्रि निवास कर विनायक के समीप गया॥1981॥

आहुतियों के ग्रहणकर्ता पद्मोत्तर लोकविद् ने चार आर्यसत्यों का प्रकाशन करते हुए अमृत पद का उपदेश किया॥1982॥

भली प्रकार से पुष्पित कमलपुष्प को ग्रहणकर मैं महर्षि के समीप गया। और अत्यधिक प्रसन्नचित्त, सुमन से बुद्ध को अभ्यर्पित किया॥1983॥

''पूजयित्वान सम्बुद्धं, जलजुत्तमनायकं।
एकंसं अजिनं कत्वा, सन्थविं लोकनायकं॥1984॥
''येन ञाणेन सम्बुद्धो, वसतीह अनासवो।
तं ञाणं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1985॥
'''संसारसोतं छिन्दित्वा, तारेसि सब्बपाणिनं।
तव धम्मं सुणित्वान, तण्हासोतं तरन्ति ते॥1986॥
'''तुवं सत्था च केतु च, धजो यूपो च पाणिनं।
परायणो पतिट्ठा च, दीपो च द्विपदुत्तम [दिपदुत्तम (सी॰ स्या॰ पी॰)]॥1987॥
'''यावता गणिनो लोके, सत्थवाहा पवुच्चरे।
तुवं अग्गोसि सब्बञ्ञु, तव अन्तोगधाव ते॥1988॥

''पूजयित्वा सम्बुद्धम्, जलजोत्तमनायकम्।
एकांशम् अजिनं कृत्वा, समतुस्तोमं लोकनायकम्॥1984॥
''येन यानेन सम्बुद्धः, वसतीह अनास्रवः।
तद् ज्ञानं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1985॥
'''संसारस्रोतं छित्वा, अतारयत् सर्वप्राणिनाम्।
तव धर्म श्रुत्वा, तृष्णास्रोतं तरन्ति ते॥1986॥
'''त्वं शास्ता च केतु च, ध्वजः यूपश्च प्राणिनाम्।
पारायणो प्रतिष्ठा च, दीपश्च द्विपदोत्तम॥1987॥
'''यावत् गणिनो लोके, सार्थवाहः प्रोच्यते।
त्वम् अग्र आसीत् सर्वज्ञ, तव अन्त्यौगध इव ते॥1988॥

जलजोत्तर, नायक सम्बुद्ध की पूजा कर एक कन्धे पर अजिन वस्त्र को रखकर लोकनायक की स्तुति की॥1984॥

जिस ज्ञान से सम्बुद्ध अनास्रव हो यहाँ वास करते हैं, मैं उस ज्ञान का व्याख्यान करूँगा, मेरे एसे वचनों को सुनें॥1985॥

संसार के स्रोत का छेदन कर उन्होंने सभी प्राणियों को तारा, तुम्हारे धर्म को सुन कर वे तृष्णा रूपी स्रोत को पार करते हैं॥1986॥

तुम शास्ता और पताका हो एवं हे द्विपदोत्तम तुम प्राणियों के ध्वज, यज्ञस्तम्भ, परायण प्रतिष्ठा और द्वीप हो॥1987॥

जहाँ तक लोक की गणना है, वहाँ तक कारवाँ के मुखिया कहे जाते हो, तुम सर्वज्ञ, अग्र हो और वे तुम्हारे अन्तः सन्निविष्ट हैं॥1988॥

‘‘‘तव ञाणेन सब्बञ्ञु, तारेसि जनतं बहुं।
तव दस्सनमागम्म, दुक्खस्सन्तं करिस्सरे॥1989॥
‘‘‘ये केचिमे गन्धजाता, लोके वायन्ति चक्खुम।
तव गन्धसमो नत्थि, पुञ्ञक्खेत्ते महामुने’॥1990॥
‘‘‘तिरच्छानयोनिं निरयं, परिमोचेसि [परिमोचेहि (स्या॰ क॰)] चक्खुम।
असङ्खतं पदं सन्तं, देसेसि [देसेहि (स्या॰ क॰)] त्वं महामुने’॥1991॥
‘‘पदुमुत्तरो लोकविदू, आहुतीनं पटिग्गहो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥1992॥
‘‘‘यो मे ञाणं अपूजेसि, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥1993॥

‘‘‘तव ज्ञानेन सर्वज्ञ, अतारीत् जनतां बहून्।
तव दर्शनमागत्य, दुःखस्यान्तं करिष्यते॥1989॥
‘‘‘ये केचिन्मे गन्धजाता, लोके वायन्ति चक्षुष्मन्।
तव गन्धसमो नास्ति, पुण्यक्षेत्रे महामुने’॥1990॥
‘‘‘तिरश्चीनयोनिं निरयम्, पर्यमुञ्चत् चक्षुष्मान्।
असङ्स्कृतं पदं शान्तम्, **अदीक्षत** त्वं महामुने’॥1991॥
‘‘पद्मोत्तरो लोकविद्, आहुतीनां प्रतिग्रहः।
भिक्खुसङ्घे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥1992॥
‘‘‘यो मे ज्ञानम् **अपूपुजत्**, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥1993॥

हे सर्वज्ञ आपके ज्ञान से बहुत से लोगों ने अपने को तारा है और आपके दर्शन पाकर सभी दुःखो का अन्त करेंगे॥1989॥

लोक में जितने प्रकार के सुगन्ध प्रवाहित होते हैं, हे चक्षुष्मन् पुण्यक्षेत्र महामुनि उनमें से कोई भी आपके गन्ध के समान नहीं है॥1990॥

चक्षुष्मन् महामुनि! आपने पशुयोनि और नरक से मुक्त किया है और निर्वाण रूपी शान्त एवं असंङ्कृत पद को बतलाया है॥1991॥

आहुतियों के ग्रहणकर्ता पद्मोत्तर लोकविद् ने भिक्षुसंघ में बैठ कर इन गाथाओं को कहा-॥1992॥

वो जिसने प्रसन्न मन और दोनों हाथों से मेरे ज्ञान की पूजा की है, अब मैं उसकी कीर्ति का बखान करूँगा मेरे एसे वचनों को सुनो॥1993॥

‘‘‘तिंसकप्पसहस्सानि, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति’’॥1994॥

‘‘सुलद्धलाभं लद्धोम्हि, तोसयित्वान सुब्बतं।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥1995॥

‘‘किलेसा झापिता मय्हं…पे॰… विहरामि अनासवो॥1996॥

‘‘स्वागतं वत मे आसि…पे॰… कतं बुद्धस्स सासनं॥1997॥

‘‘पटिसम्भिदा चतस्सो…पे॰… कतं बुद्धस्स सासनं’’॥1998॥

इत्थं सुदं आयस्मा उदेनो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

उदेनत्थेरस्सापदानं दसमं।

मेत्तेय्यवग्गो एकचत्तालीसमो।

‘‘‘त्रिंशत्कल्पसहस्राणि, देवलोके रंस्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति’’॥1994॥

‘‘सुलब्धलाभं लब्धोऽस्मि, तोषयित्वा सुव्रतम्।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥1995॥

‘‘क्लेशाः ध्मापिताः मम…पे॰… विहरामि अनास्रवः॥1996॥

‘‘स्वागतं वत मे आसीत्…पे॰… कृतं बुद्धस्य शासनम्॥1997॥

‘‘प्रतिसंविदश्चतस्रः…पे॰… कृतं बुद्धस्य शासनम्’’॥1998॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् उदयनस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

---

30 हजार कल्पों तक वह देवलोक में रमण करेगा और हजार बार चक्रवर्ती राजा होगा॥1994॥

मैंने सभी प्रकार के सुलाभ को प्राप्त किया है जो मुझे भगवान् को सन्तुष्ट करने के परिणाम स्वरूप प्राप्त हुआ है। मैं सभी आस्रवों को प्राप्त कर अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥1995॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥1996॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1997॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥1998॥

इस प्रकार आयुष्मान् उदयनस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तस्सुद्दानं –

मेत्तेय्यो पुण्णको थेरो, मेत्तगू धोतकोपि च।
उपसिवो च नन्दो च, हेमको सत्तमो तहिं॥
तोदेय्यो जतुकण्णी च, उदेनो च महायसो।
तीणि गाथासतानेत्थ, असीति तीणि चुत्तरिं॥

तस्योदानम् –

मैत्रेयः पूर्णकस्थविरः, मित्रज्ञ धोतकोऽपि च।
उपशिवश्च नन्दश्च, हैमकः सप्तमः तत्र॥
तोदेयः जतुकर्णी च, उदयनश्च महायशः।
त्रीणि गाथाशतान्यत्र, अशीति त्रीणि चोत्तरम्॥

उनके उदान- मेत्तेय्य, पुण्णक थेर, मेत्तगू, धोतक, उपसिव, नन्द, हेमक, तोदेय्य, जातुकण्णि और उदेन के रूप में महायशवान् ने 378 गाथाओं को कहा-

42. भद्दालिवग्गो

1. भद्दालित्थेरअपदानं

पालि- ''सुमेधो नाम सम्बुद्धो, अग्गो कारुणिको मुनि।
विवेककामो लोकग्गो, हिमवन्तमुपागमि॥1999॥
''अज्झोगाहेत्वा हिमवं, सुमेधो लोकनायको।
पल्लङ्कं आभुजित्वान, निसीदि पुरिसुत्तमो॥2000॥
''समाधिं सो समापन्नो, सुमेधो लोकनायको।
सत्तरत्तिन्दिवं बुद्धो, निसीदि पुरिसुत्तमो॥2001॥
''खारिभारं [खारिकाजं (सी॰)] गहेत्वान, वनमज्झोगहिं अहं।
तत्थद्दसासिं सम्बुद्धं, ओघतिण्णमनासवं॥2002॥
''सम्मज्जनिं गहेत्वान, सम्मज्जित्वान अस्समं।
चतुदण्डे ठपेत्वान, अकासिं मण्डपं तदा॥2003॥

संस्कृत- ''सुमेधो नाम सम्बुद्धः, अग्रः कारुणिको मुनिः।
विवेककामो लोकाग्रः, हिमवन्तमुपागमत्॥1999॥
''अध्यवगाह्य **हिमावनम्**, सुमेधो लोकनायको।
पर्यङ्कम् **आभुज्य**, न्यसदत् पुरुषोत्तमः॥2000॥
''समाधिं सः समापन्नः, सुमेधो लोकनायकः।
सप्तरात्रिन्दिवं बुद्धः, न्यसदत् पुरुषोत्तमः॥2001॥
''खारिभारं गृहीत्वा, वनमध्येऽवागाहिषि अहम्।
तत्राद्राक्षं सम्बुद्धम्, ओघतीर्णमनास्रवम्॥2002॥
''सम्मार्जनिं गृहीत्वा, सम्मार्ज्य आश्रमम्।
चतुर्दण्डानि स्थापयित्वा, अकार्षं मण्डपं तदा॥2003॥

हिन्दी- सुमेध नाम के सम्बुद्ध, लोकाग्र, कारुणिक, मुनि एकान्त की कामना से हिमवन्त पर्वत के समीप आ गये॥1999॥

लोकनायक और पुरुषोत्तम सुमेध घने हिमालय में जाकर वहाँ पालथी मार कर बैठे॥2000॥

लोकनायक एवं पुरुषोत्तम सुमेध बुद्ध समाधि में वहाँ निरन्तर सात रात-दिन बैठे॥2001॥

खारिभार को ग्रहण कर मैं घने वन में गया और वहाँ पर भवरूपी ओघ (बाढ़) को पार किए अनास्रव बुद्ध को देखा॥2002॥

तब मैंने झाड़ू को ग्रहण कर आश्रम को स्वच्छ कर तत्पश्चात् चार दण्डों को स्थापित कर मण्डप का निर्माण किया॥2003॥

''सालपुप्फं आहरित्वा, मण्डपं छादयिं अहं।

पसन्नचित्तो सुमनो, अभिवन्दिं तथागतं॥2004॥

''यं वदन्ति सुमेधोति, भूरिपञ्ञं सुमेधसं।

भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥2005॥

'''बुद्धस्स गिरमञ्ञाय, सब्बे देवा समागमुं।

असंसयं बुद्धसेट्ठो, धम्मं देसेति चक्खुमा॥2006॥

'''सुमेधो नाम सम्बुद्धो, आहुतीनं पटिग्गहो।

देवसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥2007॥

'''यो मे सत्ताहं मण्डपं, धारयी सालछादितं।

तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥2008॥

''शालपुष्पम् आहृत्य, मण्डपम् अच्छादयम् अहम्।

प्रसन्नचित्तः सुमनाः, अभ्यवन्दे तथागतम्॥2004॥

''यं वदन्ति सुमेधोऽति, भूरिप्राज्ञं **सुमेधसम्**।

भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥2005॥

'''बुद्धस्य गिरमाज्ञाय, सर्वे देवाः समागमम्।

असंशयं बुद्धश्रेष्ठः, धर्मं दिशति चक्षुष्मान्॥2006॥

'''सुमेधो नाम सम्बुद्धः, आहुतीनां प्रतिग्रहः।

देवसङ्घे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषिष्ट॥2007॥

'''यो मे सप्ताहं मण्डपम्, अधार्षीत् शालच्छादितम्।

तमहं कीर्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥2008॥

शाल पुष्प को लाकर मैंने मण्डप का आच्छादन किया और प्रसन्नचित्त तथा सौमनस्य पूर्वक तथागत का अभिवादन किया॥2004॥

सुमेध भगवान् ने भिक्षुसंघ में बैठकर भूरिप्रज्ञा और बुद्धिमत्ता के विषय में इन गाथाओं को कहा॥2005॥

तब बुद्ध की वाणी को जानकर सभी देव लोग वहाँ परिषद में उपस्थित हुए। तब बुद्धश्रेष्ठ चक्षुमान् ने संशयरहित धर्म की देशना की॥2006॥

आहुतियों के ग्रहणकर्ता सुमेध नाम के सम्बुद्ध ने देवसंघ में बैठकर इन गाथाओं को कहा-॥2007॥

जिसने मुझे ये शालपुष्प से आच्छादित मण्डप सप्ताह भर धारण कराया, मैं उसकी कीर्ति कहूँगा, मेरे ऐसे वचनों को सुनो॥2008॥

‘‘‘देवभूतो मनुस्सो वा, हेमवण्णो भविस्सति।
पहूतभोगो हुत्वान, कामभोगी भविस्सति॥2009॥
‘‘‘सट्ठि नागसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।
सुवण्णकच्छा मातङ्गा, हेमकप्पनवाससा॥2010॥
‘‘‘आरूळहा गामणीयेहि, तोमरङ्कुसपाणिभि।
सायं पातो [सायपातो (पी॰)] उपट्ठानं, आगमिस्सन्तिमं नरं।
तेहि नागेहि परिवुतो, रमिस्सति अयं नरो॥2011॥
‘‘‘सट्ठि अस्ससहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।
आजानीयाव जातिया, सिन्धवा सीघवाहिनो॥2012॥
‘‘‘आरूळहा गामणीयेहि, इल्लियाचापधारिभि।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, बुद्धपूजायिदं फलं॥2013॥

‘‘‘देवभूतो मनुष्यो वा, हेमवर्णो भविष्यति।
प्रभूतभोगो भूत्वा, कामभोगी भविष्यति॥2009॥
‘‘‘षष्टिः नागसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिताः।
सुवर्णकक्षाः मातङ्गाः, हैमकल्पनवाससा॥2010॥
‘‘‘आरूढाः ग्रामणीयैः, तोमराङ्कुशपाणिभिः।
सायं प्रात उपस्थानम्, आगमिष्यान्तिमं नरम्।
तैः नागैः परिवृतः, रंस्यति अयं नरः॥2011॥
‘‘‘षष्टि अश्वसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिता।
आजानीया इव जात्याः, सैन्धवाः शीघ्रवाहिनः॥2012॥
‘‘‘आरुढाः ग्रामणीयैः, इल्लियाचापधारिभिः।
परिवारयिष्यन्ति मां नित्यम्, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2013॥

देवभूत हो या मनुष्य वह स्वर्ण-वर्ण का होगा। अत्यधिक भोगों को भोगकर इन्द्रिय-भोगों को भोगेगा॥2009॥

सभी अलंकारों से सुसज्जित साठ हजार नाग (हाथी) और सुवर्णजटित वस्त्रों से सुसज्जित मातङ्ग हाथी होंगे॥2010॥

उस पर आरुढ़ ग्रामीण जन हाथ में बर्छी और अंकुश को धारण किये हुए सांय और प्रातः आकर मेरे समीप उपस्थित रहेंगे॥2011॥

अच्छी नस्ल में उत्पन्न सभी अलंकारों से विभूषित साठ हजार घोड़े थे और सैन्धव छोड़े पर सवार शीघ्र वाहिनी सेना होगी॥2012॥

छोटे तलवारों को धारण किये हुए ग्रामीण जन उस पर आरुढ़ मुझे सदैव परिवारित किये रहेंगे, यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम हैं॥2013॥

‘‘‘सट्ठि रथसहस्सानि, सब्बालङ्कारभूसिता।
दीपा अथोपि वेयग्घा, सन्नद्धा उस्सितद्धजा॥2014॥
‘‘‘आरूळ्हा गामणीयेहि, चापहत्थेहि वम्मिभि।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, बुद्धपूजायिदं फलं॥2015॥
‘‘‘सट्ठि गामसहस्सानि, परिपुण्णानि सब्बसो।
पहूतधनधञ्ञानि, सुसमिद्धानि सब्बसो।
सदा पातुभविस्सन्ति, बुद्धपूजायिदं फलं॥2016॥
‘‘‘हत्थी अस्सा रथा पत्ती, सेना च चतुरङ्गिनी।
परिवारेस्सन्तिमं निच्चं, बुद्धपूजायिदं फलं॥2017॥
‘‘‘अट्ठारसे कप्पसते, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥2018॥

‘‘‘षष्टिः रथसहस्राणि, सर्वालङ्कारभूषिताः।
दीपा **अथोपि** व्याघ्राः, सन्नद्धा उत्सितध्वजाः॥2014॥
‘‘‘आरूढाः ग्रामणीयैः, चापहस्तैः वर्मिभिः।
परिवारयिष्यन्ति मां नित्यम्, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2015॥
‘‘‘षष्टिः ग्रामसहस्राणि, परिपूर्णानि सर्वशः।
प्रभूतधनधान्यानि, सुसमिधानि सर्वशः।
सदा प्रादुर्भविष्यन्ति, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2016॥
‘‘‘हस्ती अश्वाः रथाः पदातीः, सेना च चतुरङ्गिणी।
परिवारयिष्यन्ति मां नित्यम्, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2017॥
‘‘‘अष्टादशे कल्पसते, देवलोके रंस्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥2018॥

चीते और व्याघ्रों से चित्रित उठे हुए ध्वज और हथियारबन्द, सभी अलंकारों से अलंकृत साठ हजार रथ होगे॥2014॥

हाथ में धनुष और कवच धारण किये हुए रथ पर आरुढ ग्रामीण जन मुझे सदैव परिवारित किये रहेंगें,यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है॥2015॥

सभी प्रकार के प्रभूत धन-धान्यों से परिपूर्ण साठ हजाह समृद्ध ग्राम मेरे लिए सदैव प्रकट होगें, यह बुद्धपूजा का ही सुपरिणाम है॥2016॥

हाथी, घोड़े, रथ, तीर, धनुष धारण किये हुए सेना और चतुरङ्गिणी सेना सदैव मुझे परिवारित किये रहेंगीं। यह बुद्धपूजा का ही फल हैं॥2017॥

वह 18 सौवें कल्प में देवलोक में रमण करेगा, हजार बार चक्रवर्ती राजा ॥2018॥

‘‘‘सतानं तीणिक्खत्तुञ्च, देवरज्जं करिस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥2019॥
‘‘‘तिंसकप्पसहस्सम्हि, ओक्काककुलसम्भवो।
गोतमो नाम गोत्तेन, सत्था लोके भविस्सति॥2020॥
‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरिस्सतिनासवो’॥2021॥
‘‘तिंसकप्पसहस्सम्हि, अद्दसं लोकनायकं।
एत्थन्तरमुपादाय, गवेसिं अमतं पदं॥2022॥
‘‘लाभा मय्हं सुलद्धं मे, यमहञ्ञासि सासनं।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥2023॥

‘‘‘शतानां त्रीणिकृत्वश्च, देवराज्यं करिष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्॥2019॥
‘‘‘त्रिंशकल्पसहस्रे, इक्ष्वाकुकुलसम्भवः।
गौतमो नाम गोत्रेण, शास्ता लोके भविष्यति॥2020॥
‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरिष्यत्यनास्रवः’॥2021॥
‘‘त्रिंशत्कल्पसहस्रे, अद्राक्षं लोकनायकम्।
अत्रान्तरमुपादाय, गवेषे अमृतं पदम्॥2022॥
‘‘लाभाः मह्यं सुलब्धं मे, **यमहमज्ञासिषं** शासनम्।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ताः, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2023॥

तीन सौ बार देवों पर राज्य करेगा और उसका प्रदेशराज्य विपुल तथा गणना में असंख्य होगा॥2019॥

तीस हजार कल्पों में इक्ष्वाक कुल में उत्पन्न गौतम नामक गोत्र से लोक में शास्ता होगा॥2020॥

उसके धर्म में दीक्षित, धर्मनिमित्त औरस तथा सर्वास्रवों को जानकर वह निर्वाण को प्राप्त करेगा॥2021॥

तीस हजार कल्पों में मैंने लोकनायक को देखा तब मैं यहाँ उत्पन्न हो कर अमृत पद की गवेषणा की॥2022॥

मैंने बुद्धशासन में जो ज्ञान प्राप्त किया था उससे मुझे लाभ हुआ, सुलाभ हुआ और तीनों विद्याओं को प्राप्त कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2023॥

''नमो ते पुरिसाजञ्ञ, नमो ते पुरिसुत्तम।
तव ञाणं पकित्तेत्वा, पत्तोम्हि अचलं पदं॥2024॥
''यं यं योनुपपज्जामि, देवत्तं अथ मानुसं।
सब्बत्थ सुखितो होमि, फलं मे ञाणकित्तने॥2025॥
''इदं पच्छिमकं मय्हं, चरिमो वत्तते भवो।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥2026॥
''किलेसा झापिता मय्हं, भवा सब्बे समूहता।
नागोव बन्धनं छेत्वा, विहरामि अनासवो॥2027॥
''स्वागतं वत मे आसि, मम बुद्धस्स सन्तिके।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥2028॥

''नमस्ते पुरुषाजन्य, नमस्ते पुरुषोत्तम।
तव ज्ञानं प्रकीर्त्य, प्राप्तोऽस्मि अचलं पदम्॥2024॥
''यां यां योन्युपपद्ये, देवत्वम् अथ मानुषम्।
सर्वत्र सुखितो भवामि, फलं मे ज्ञानकीर्त्तने॥2025॥
''इदं पच्छिमकं मम, चरमो वर्त्तते भवः।
नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥2026॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम, भवाः सर्वे समूहता।
नागीव बन्धनं छित्वा, विहरामि अनास्रवः॥2027॥
''स्वागतं वत मे आसीत्, मम बुद्धस्य अन्तिके।
तिस्रो विद्या अनुप्राप्ता, कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2028॥

हे पुरुषाजन्य पुरुषोत्तम! आपको नमस्कार है। आपके ज्ञान को व्याख्यायित कर मैंन अचल पद को प्राप्त किया॥2024॥

मैं जिस-जिस योनि में उत्पन्न होता हूँ वह मनुष्यत्व हो या देवत्व सभी स्थानों पर सुखी होता हूँ, यह ज्ञान कीर्ति का ही सुपरिणाम हैं॥2025॥

अब यह मेरा अन्तिम और चरम भव है, अब मैं नाग हाथी के समान बन्धन तोड़कर अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2026॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन मुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2027॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2028॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो, विमोक्खापि च अट्ठिमे।
छळभिञ्ञा सच्छिकता, कतं बुद्धस्स सासनं''॥2029॥
इत्थं सुदं आयस्मा भद्दालित्थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
भद्दालित्थेरस्सापदानं पठमं।

2. एकछत्तियत्थेरअपदानं

''चन्दभागानदीतीरे, अस्समो सुकतो मम।
सुसुद्धपुलिनाकिण्णो, पन्नसाला सुमापिता॥2030॥
''उत्तानकूला नदिका, सुपतित्था मनोरमा।
मच्छकच्छपसम्पन्ना [... सञ्छन्ना (क॰)], सुसुमारनिसेविता॥2031॥
''अच्छा दीपी च मयूरा, करवीका च साळिका।
कूजन्ति सब्बदा एते, सोभयन्ता ममस्समं॥2032॥
''कोकिला मञ्जुभाणी च, हंसा च मधुरस्सरा।
अभिकूजन्ति ते तत्थ, सोभयन्ता ममस्समं॥2033॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः, विमोक्षा अपि चाष्टकाः।
षडभिज्ञाः साक्षात्कृता, कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2029॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् भद्रालिस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''चन्द्रभागानदीतीरे, आश्रमः सुकृतो मम।
सुशुद्धपुलिनाकीर्णः, पर्णशाला सुमापिता॥2030॥
''उत्तानकूला नदिकाः, सुप्रतिष्ठाः मनोरमाः।
मत्स्यकच्छपसम्पन्नाः, शिंशुमारनिसेविता॥2031॥
''ऋक्षाः द्वीपी च मयूराः, करवीकाश्च शालिकाः।
कूजन्ति सर्वदा एते, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2032॥
''कोकिला मञ्जुभाणी च, हंसाश्च मधुरस्वराः।
अभिकूजन्ति ते तत्र, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2033॥

चार पटिसम्भिदाओं, आठ विमोक्षों और षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2029॥

इस प्रकार आयुष्मान् भद्रालिस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

चन्द्रभागा नदी के तट पर भली प्रकार निर्मित मेरा आश्रम था और वह पर्णशाला अत्यधिक शुद्ध बालु कणों से निर्मित था॥2030॥

मेरे आश्रम के निकट स्वच्छ तटों से आकीर्ण एक आकाशवत नदी प्रतिष्ठित है जो मत्स्य, कच्छप से सम्पन्न है तथा उसमें शिंशुमार संगति करते थे॥2031॥

भालू, चीता, मयूर, मैना और कोयल ये सभी सदैव वहाँ कूजन करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2032॥

प्रिय बोलने वाली कोयल और मधुरभाषी हंस ये सभी वहाँ कूजन करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2033॥

''सीहा ब्यग्घा वराहा च, अच्छ [वक (सी॰ पी॰), बका (स्या॰), वका (क॰)]
कोकतरच्छका।
गिरिदुग्गम्हि नादेन्ति, सोभयन्ता ममस्समं॥2034॥
''एणीमिगा च सरभा, भेरण्डा सूकरा बहू।
गिरिदुग्गम्हि नादेन्ति, सोभयन्ता ममस्समं॥2035॥
''उद्दालका चम्पका च, पाटली सिन्दुवारका।
अतिमुत्ता असोका च, सोभयन्ति ममस्समं [पुप्फन्ति मम अस्समे (सी॰ पी॰)]॥2036॥
''अङ्कोला यूथिका चेव, सत्तली बिम्बिजालिका।
कणिकारा च पुप्फन्ति, सोभयन्ता ममस्समं [कणिकाकणिकारा च, पुप्फन्ति मम
अस्समे (सी॰ स्या॰ पी॰)]॥2037॥
''नागा साला च सळला, पुण्डरीकेत्थ पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभयन्ति ममस्समं॥2038॥

''सिंहाः व्याघ्राः वराहाश्च, अच्छ कोकतरच्छकाः।
गिरिदुर्गे नदन्ति, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2034॥
''एणीमृगाश्च सरभा, भेरण्डाः शूकराः बह्वः।
गिरिदुर्गे नदन्ति, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2035॥
''उद्दालकाः चम्पकाश्च, पाटली सिन्दुवारकाः।
अतिमुक्ता अशोकाश्च, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2036॥
''अङ्कोलाः यूथिकाश्चैव, शत्तली बिम्बिजालिकाः।
कणिकाराश्च पुष्पन्ति, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2037॥
''नागाः शालाश्च सरलाः, पुण्डरीक अत्र पुष्पिताः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2038॥

सिंह, व्याघ्र, वराह, भालू, भेड़िये, लकड़बग्घे छोटे-छोटे पहाड़ियो में नाद करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2034॥

बहुत से विशेष प्रकार के मृग, गीदड़, सुअर छोटी-छोटी पहाड़ियों में नाद करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2035॥

उद्दालक, चम्पा, पाटली और सिन्दुवारक, अतिमुक्तक और अशोक के पुष्प मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2036॥

समूह में लगे हुए पिश्ते के वृक्ष, सत्तली (नवमल्लिका) बिम्बजाल विशेष, पुष्पित कणिकार सदैव मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2037॥

यहाँ पर नाग (वृक्ष विशेष) शाल का वृक्ष, सरला और पुष्पित पुण्डरीक (श्वेत कमल) का पुष्प सदैव दिव्यगन्ध को प्रवाहित करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2038॥

''अज्जुना असना चेत्थ, महानामा च पुप्फिता।
साला च कङ्गुपुप्फा च, सोभयन्ति ममस्समं॥2039॥
''अम्बा जम्बू च तिलका, निम्बा च सालकल्याणी।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभयन्ति ममस्समं॥2040॥
''असोका च कपिट्ठा च, गिरिमालेत्थ [भगिनिमालेत्थ (सी॰ पी॰), भगिनिमाला च (स्या॰)] पुप्फिता।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभयन्ति ममस्समं॥2041॥
''कदम्बा कदली चेव, इसिमुग्गा च रोपिता।
धुवं फलानि धारेन्ति, सोभयन्ता ममस्समं॥2042॥
''हरीतका आमलका, अम्बजम्बुविभीतका।
कोला भल्लातका बिल्ला, फलिनो मम अस्समे॥2043॥

''अर्जुना अशनाश्चात्र, महानामाश्च पुष्पिताः।
शालाश्च कङ्गुपुष्पाश्च, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2039॥
''आम्राः जम्बूनि च तिलकाः, निम्बाश्च शालकल्याणी।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2040॥
''अशोकाश्च कपित्थाश्च, गिरिमालात्र पुष्पिताः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2041॥
''कदम्बाः कदली चैव, ऋषिमुद्गाश्च रोपिताः।
ध्रुवं फलानि धारयन्ति, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2042॥
''हरीतका आमलकाः, आम्रजम्बुविभीतकाः।
कोलाः भल्लातकाः बिल्वाः, फलिनो मम आश्रमे॥2043॥

अर्जुन का वृक्ष, असन (पीत साल का वृक्ष) और पुष्पित महानाग, साल और पुष्पित बाजरा सदैव मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥2039॥

आम, जामुन, तिल, नीम का वृक्ष और कल्याणकारी शालवृक्ष दिव्यगन्ध को प्रवाहित करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥2040॥

अशोक, कैथे का वृक्ष और पुष्पित गिरिमाल के पुष्प सदैव दिव्यगन्ध को प्रवाहित करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2041॥

कदम्ब, कदली और रोप् हुए मूंग के दाल का पौधा लगातार फल को धारण करते हैं और मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2042॥

हरीतक, आमलक, आम, जम्बू और विभीतक, बेर का पेड़ भल्लातक और बिल्व मेरे आश्रम में फलित थे॥2043॥

''अविदूरे पोक्खरणी, सुपतित्था मनोरमा।
मन्दालकेहि सञ्छन्ना, पदुमुप्पलकेहि च॥2044॥
''गब्भं गण्हन्ति पदुमा, अञ्ञे पुप्फन्ति केसरी।
ओपत्तकण्णिका चेव, पुप्फन्ति मम अस्समे॥2045॥
''पाठीना पावुसा मच्छा, बलजा मुञ्जरोहिता।
अच्छोदकम्हि विचरं, सोभयन्ति ममस्समं॥2046॥
''नयिता अम्बगन्धी च, अनुकूले च केतका।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभयन्ति ममस्समं॥2047॥
''मधु भिसम्हा सवति, खीरसप्पि मुळालिभि।
दिब्बगन्धं सम्पवन्ता, सोभयन्ति ममस्समं॥2048॥

''अविदूरे पुष्करणी, सुप्रतिष्ठाः मनोरमाः।
मन्दारकैः सञ्छन्नाः, पद्मोत्पलकैश्च॥2044॥
''गर्भं गृह्णन्ति पद्माः, अन्ये पुष्पन्ति केशरी।
अवपत्रकर्णिकाश्चैव, पुष्पन्ति मम आश्रमे॥2045॥
''पाठीनाः प्रावृषाः मत्स्याः, बलजाः मुञ्जरोहिताः।
अच्छोदके व्यचरम्, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2046॥
''नयिता आम्रगन्धी च, अनुकूले च केतकाः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2047॥
''मधु **विशस्मात्** स्रवति, क्षीरसर्पिः मुलालिभिः।
दिव्यगन्धं सम्प्रवान्तः, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2048॥

कुछ दूरी पर भली प्रकार से स्थित मनोरम तालाब स्थित है जो मन्दार और कमलपुष्पों से आच्छादित था॥2044॥

अन्दरूनी भाग को ग्रहण किये हुए कमलरेणु से युक्त पुष्पित पुष्प और झड़े हुए पत्तों वाला कमलगट्टा पुष्पित हो मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2045॥

पाठीन, पावुस, मच्छ, बलजा और मुञ्जरोहित, नदी के स्वच्छ जल में विचरण करते हुये मेरे आश्रम की शोभा को बढ़ाते थे॥2046॥

उस समय उस तालाब में नयिता, आम्रगन्धी, अनुकूल, केतक आदि पुष्पित वृक्ष दिव्य गन्ध को प्रवाहित करते थे और मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2047॥

कमलनालिका से शहद स्रवित हो रहा था तथा कमल मृणाल से दूध और घी स्रवित हो रहा था, ये दिव्य गन्ध को प्रवाहित करते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ा रहे हैं॥2048॥

''पुलिना सोभना तत्थ, आकिण्णा जलसेविता।
ओपुप्फा पुप्फिता सेन्ति, सोभयन्ता ममस्समं॥2049॥
''जटाभारेन भरिता, अजिनुत्तरवासना।
वाकचीरधरा सब्बे, सोभयन्ति ममस्समं॥2050॥
''युगमत्तमपेक्खन्ता, निपका सन्तवुत्तिनो।
कामभोगे अनपेक्खा, वसन्ति मम अस्समे॥2051॥
''परूळ्हकच्छनखलोमा, पङ्कदन्ता रजस्सिरा।
रजोजल्लधरा सब्बे, वसन्ति मम अस्समे॥2052॥
''अभिञ्ञापारमिप्पत्ता, अन्तलिक्खचरा च ते।
उग्गच्छन्ता नभं एते, सोभयन्ति ममस्समं॥2053॥

''पुलिनाः शोभनास्तत्र, आकीर्णाः जलसेविताः।
अवपुष्पाणि पुष्पिता **शयन्ति**, शोभयन्तः ममाश्रमम्॥2049॥
''जटाभारेण भरिता, अजिनोत्तरवासना।
वाकचीरधराः सर्वे, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2050॥
''युगमात्रमपेक्षन्तः, निपकाः शान्तवृत्तिनः।
कामभोगे अनपेक्षाः, वसन्ति मम आश्रमे॥2051॥
''प्ररूढकाक्षनखलोमाः, पङ्कदन्ताः रजेश्वराः।
रजोज्वल्यधरा सर्वे, वसन्ति मम आश्रमे॥2052॥
''अभिज्ञापारमिप्राप्ताः, अन्तरिक्षचराश्च ते।
उद्गच्छन्तः नभम् एते, शोभयन्ति ममाश्रमम्॥2053॥

वहाँ उपयोग में लाये जाने वाले जल से युक्त नदी से तट शोभित हो रहा था और पुष्पित कली सोते हुए मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते हैं॥2049॥

जटा के भार से भरित अजिनचर्म से निर्मित उत्तरासङ्ग धारण करने वाले और वल्कल चीवर धारण करने वाले सभी मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2050॥

युग मात्र को देखने वाले, दक्ष, सत्पुरूष का व्यवहार करने वाले, इन्द्रियसुख से अपेक्षा-रहित सभी मेरे आश्रम में वास कर रहे थे॥2051॥

वहाँ पर कुछ शिष्य किचड़ युक्त दाँत और सिर पर धूल मिट्टी लगाए हुए अपने दोनों काँखों में बालों तथा हाथ-पाँव के भी नाखून और, रोम बढ़ाए हुए थे। सभी भूमि का कीचड़ लगाये हुए मेरे आश्रम में वास करते थे॥2042॥

और वे सभी अभिज्ञापारमिता को प्राप्त किये हुए अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले थे, आकाश में उपर जाते हुए ये सभी मेरे आश्रम की शोभा बढ़ाते थे॥2053॥

''तेहि सिस्सेहि परिवुतो, वसामि विपिने तदा।
रत्तिन्दिवं न जानामि, सदा झानसमप्पितो॥2054॥
''भगवा तम्हि समये, अत्थदस्सी महामुनि।
तमन्धकारं नासेन्तो, उप्पज्जि लोकनायको॥2055॥
''अथ अञ्ञतरो सिस्सो, आगच्छि मम सन्तिकं।
मन्ते अज्झेतुकामो सो, छळङ्गं नाम लक्खणं॥2056॥
''बुद्धो लोके समुप्पन्नो, अत्थदस्सी महामुनि।
चतुसच्चं पकासेन्तो, देसेति अमतं पदं॥2057॥
''तुट्ठहट्ठो पमुदितो, धम्मन्तरगतासयो।
अस्समा अभिनिक्खम्म, इदं वचनमब्रविं॥2058॥

''तैः शिष्यैः परिवृतः, वसामि विपिने तदा।
रात्रिन्दिवं न जानामि, सदा ध्यानसमर्पितः॥2054॥
''भगवान् तस्मिन् समये, अर्थदर्शी महामुनिः।
तमान्धकारं नाशयन्, उपपद्यत लोकनायकः॥2055॥
''अथ अन्यतरः शिष्यः, आगच्छत् मम अन्तिकम्।
मन्त्रान् अध्ययितुकामः सः, षडाङ्गं नाम लक्षणम्॥2056॥
''बुद्धो लोके समुत्पन्नः, अर्थदर्शी महामुनिः।
चतुर्सत्यं प्रकाशयन्, देशयति अमृतं पदम्॥2057॥
''तुष्टहृष्टः प्रमुदितः, धर्मान्तरगताशयः।
आश्रमात् अभिनिष्क्रम्य, इदं वचनमब्रवम्॥2058॥

तब वे सभी शिष्यों से घिरे हुए वन में वास करते थे और रात-दिन को नहीं जानते हुये सदैव ध्यान के प्रति समर्पित रहते थे॥2054॥

उसी समय अर्थदर्शी, महामुनि, अन्धकार को नष्ट करन वाले लोकनायक भगवान् उत्पन्न हुए॥2055॥

तब वहाँ षडाङ्ग नाम मन्त्र के लक्षण के अध्ययन की कामना से एक अन्य शिष्य मेरे समीप आया॥2056॥

अर्थदर्शी, महामुनि बुद्ध लोक में उत्पन्न होकर चार आर्य सत्य को प्रकाशित करते हुए अमृत पद की देशना कर रहे थे॥2057॥

सन्तुष्ट, आनन्दित, अतिप्रसन्न मैंने धर्म के अर्न्तगत जाने के आशय से आश्रम से निकल कर इन वचनों को कहा-॥2058॥

‘‘‘बुद्धो लोके समुप्पन्नो, द्वत्तिंसवरलक्खणो।
एथ सब्बे गमिस्साम, सम्मासम्बुद्धसन्तिकं’॥2059॥
‘‘ओवादपटिकरा ते, सधम्मे पारमिं गता।
साधूति सम्पटिच्छिंसु, उत्तमत्थगवेसका॥2060॥
‘‘जटाभारभरिता ते [जटाभारेन भरिता (क॰)], अजिनुत्तरवासना।
उत्तमत्थं गवेसन्ता, निक्खमिंसु वना तदा॥2061॥
‘‘भगवा तम्हि समये, अत्थदस्सी महायसो।
चतुसच्चं पकासेन्तो, देसेति अमतं पदं॥2062॥
‘‘सेतच्छत्तं गहेत्वान, बुद्धसेट्ठस्स धारयिं।
एकाहं धारयित्वान, बुद्धसेट्ठं अवन्दहं॥2063॥

‘‘‘बुद्धो लोके समुत्पन्नः, द्वात्रिंशत्वरलक्षणः।
अत्र सर्वे गमिष्यामः, सम्यक्सम्बुद्धान्तिकम्’॥2059॥
‘‘अववादप्रतिकरास्ते, स्वधर्मे पारमिं गताः।
साधू इति सम्प्रत्यैच्छन् , उत्तमार्थगवेषकाः॥2060॥
‘‘जटाभारभरिताः ते, अजिनोत्तरवासना।
उत्तमार्थं गवेषयन्, निष्क्रमन् वनात् तदा॥2061॥
‘‘भगवान् तस्मिन् समये, अर्थदर्शी महायशः।
चतुर्सत्यं प्रकाशयन्, दिशति अमृतं पदम्॥2062॥
‘‘श्वेतच्छत्रं गृहीत्वा, बुद्धश्रेष्ठाय अधारयम्।
एकाऽहं धारयित्वा, बुद्धश्रेष्ठम् अवन्देऽहम्॥2063॥

बत्तीस लक्षणों से युक्त बुद्ध लोक में उत्पन्न हैं सभी आओ सम्यक् सम्बुद्ध के समीप चलते हैं॥2059॥

वे सभी अववादों का प्रतिकार कर स्वधर्म में पूर्णता को पाप्त कर साधूवाद देकर उत्तम अर्थ की गवेषणा में चले गये॥2060॥

जटा के भार से भरित, अजित चर्म से निर्मित उत्तरासङ्ग धारण करने वाले उत्तम अर्थ की गवेषणा में वन से निकल गये॥2061॥

अर्थदर्शी, महायशवान्, भगवान् ने उसी समय चार आर्यसत्यों को प्रकाशित करते हुए अमृत पद की देशना की॥2062॥

तब मैंने श्वेत छत्र को ग्रहण कर बुद्धश्रेष्ठ को धारण कराया और एक मैंने धारण कर बुद्ध श्रेष्ठ की वन्दना की॥2063॥

''अत्थदस्सी तु भगवा, लोकजेट्ठो नरासभो।
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥2064॥
'''यो मे छत्तं अधारेसि, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥2065॥
'''इमस्स जायमानस्स, देवत्ते अथ मानुसे।
धारेस्सति सदा छत्तं, छत्तदानस्सिदं फलं॥2066॥
'''सत्तसत्ततिकप्पानि, देवलोके रमिस्सति।
सहस्सक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती भविस्सति॥2067॥
'''सत्तसत्ततिक्खत्तुञ्च, देवरज्जं करिस्सति।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥2068॥

''अर्थदर्शी तु भगवान्, लोकज्येष्ठो नरर्षभः।
भिक्षुसङ्घे निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत्॥2064॥
'''यो मे छत्रम् अधारयत्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, शृणुत मम भाषमाणस्य॥2065॥
अस्य जायमानस्य, देवत्वे अथ मानुषे।
धारयिष्यति सदा छत्रम्, छत्रदानस्येदं फलम्॥2066॥
'''सप्तसप्ततिकल्पानि, देवलोके रंस्यति।
सहस्रकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥2067॥
'''सप्तसप्ततिकृत्वश्च, देवराज्यं करिष्यति।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्॥2068॥

तब लोकज्येष्ठ नरर्षभ अर्थदर्शी भगवान् ने भिक्षुसंघ में बैठकर इन गाथाओं को कहा-॥2064॥

ये, जिसने मुझे प्रसन्नतापूर्वक अपने दोनों हाथों से श्वेत-छत्र धारण कराया, मैं उसकी कीर्ति को बतलाऊँगा। मेरे ऐसे वचनों को सुनो॥2065॥

यह छत्रदान का ही सुपरिणाम है कि वह देवत्व या मनुष्यत्व, जिस-जिस योनि में उत्पन्न होगा, सदैव छत्र को धारण करेगा। ॥2066॥

77 वें कल्प में वह देवलोक में रमण करेगा और हजाह बार चक्रवर्ती राजा होगा॥2067॥

77 बार वह देवों में राज्य करेगा और उसका प्रदेशराज्य विपुल तथा गणना में असंख्य होगा॥2068॥

‘‘‘अट्ठारसे कप्पसते, गोतमो सक्यपुङ्गवो।
तमन्धकारं नासेन्तो, उप्पज्जिस्सति चक्खुमा॥2069॥
‘‘‘तस्स धम्मेसु दायादो, ओरसो धम्मनिम्मितो।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरिस्सतिनासवो’॥2070॥
‘‘यतो अहं कम्ममकं, छत्तं बुद्धस्स धारयं।
एत्थन्तरे न जानामि, सेतच्छत्तं अधारितं॥2071॥
‘‘इदं पच्छिमकं मय्हं, चरिमो वत्तते भवो।
छत्तधारणमज्जापि, वत्तते निच्चकालिकं॥2072॥
‘‘अहो मे सुकतं कम्मं, अत्थदस्सिस्स तादिनो।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥2073॥

‘‘‘अष्टादशे कल्पशते, गौतमः शाक्यपुङ्गवः।
तमान्धकारं नाशयन्, **उत्पत्स्यते** चक्षुष्मान्॥2069॥
‘‘‘तस्य धर्मेषु दायादः, औरसो धर्मनिर्मितः।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरिष्यत्यनास्रवः’॥2070॥
‘‘यतोऽहं **कर्माकरवम्**, छत्रं बुद्धस्य अधारयम्।
अत्रान्तरे न जानामि, श्वेतच्छत्रम् अधारितम्॥2071॥
‘‘इदं पच्छिमकं मह्यम्, चरिमो वर्त्तते भवः।
छत्रधारणमद्यापि, वर्त्तते नित्यकालिकम्॥2072॥
‘‘अहो मे सुकृतं कर्म, **अर्थदर्शिने** तायिने।
सर्वास्रवान् परिक्षीणाः, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥2073॥

18 सौ कल्पों में वह शाक्यपुङ्गव चक्षुष्मान् अन्धकार को नष्ट करने के लिए उत्पन्न होगा॥2069॥

उनके धर्म में दीक्षित, धर्मनिर्मित, औरस तथा सर्वास्रवों को जानकर वह निर्वाण को प्राप्त करेगा॥2070॥

ये जो मैंने बुद्धश्रेष्ठ को छत्र धारण कराने का कर्म किया है इसके अतिरिक्त मैं कुछ नहीं जानता। यह श्वेतच्छत्र धारण का फल है॥2071॥

अब यह मेरा अन्तिम और चरम भव है। आज मैं छत्र धारण करुँगा जो नित्यकालिक है॥2072॥

ये जो मेरा सुकृत कर्म उन अर्थदर्शी के लिए है, इससे मैंने सर्वास्रव को क्षीण कर लिया अब मेरा पुनर्भव नहीं होगा॥2073॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2074॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2075॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2076॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकछत्तियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकछत्तियत्थेरस्सापदानं दुतियं।

3. तिणसूलकछ्छादनियत्थेरअपदानं

''जातिं जरञ्च मरणं, पच्चवेक्खिं अहं तदा।

एकको अभिनिक्खम्म, पब्बजिं अनगारियं॥2077॥

''चरमानोनुपुब्बेन, गङ्गातीरं उपागमिं।

तत्थद्दसासिं पथविं, गङ्गातीरे समुन्नतं॥2078॥

''अस्समं तत्थ मापेत्वा, वसामि अस्समे अहं।

सुकतो चङ्कमो मय्हं, नानादिजगणायुतो॥2079॥

''कलेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2074॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2075॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2076॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकछत्रियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''जातिं जराञ्च मरणम्, प्रत्यवेक्षम् अहं तदा।

एकक अभिनिष्क्रम्य, प्राव्रजम् अनागारिकम्॥2077॥

''चरमानोऽनुपूर्वेण, गङ्गातीरम् उपागमम्।

तत्राद्राक्षं पृथ्वीम्, गङ्गातीरे समुन्नतम्॥2078॥

''आश्रमं तत्र मापयित्वा, वसामि आश्रमे अहम्।

सुकृतः चङ्क्रमो मम, नानाद्विजगणायुतः॥2079॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2074॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2075॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2076॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकछत्रिय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

तब मैंने जाति, जरा और मरण पर विचार किया और अकेले ही गृह का त्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण कर निकल गया॥2077॥

कदमों को क्रमशः रखते हुए मैं गंगा नदी तट के समीप पहुँचा। वहाँ मैंने विस्तृत रूप से गङ्गा तट और पृथ्वी को देखा॥2078॥

वहाँ पर मैंने आश्रम को निर्मित कर आश्रम में वास किया जहाँ मेरा भिन्न-भिन्न पक्षिसमूहों से समायुत सुकृत चङ्क्रमण था॥2079॥

''ममुपेन्ति च विस्सत्था, कूजन्ति च मनोहरं।
रममानो सह तेहि, वसामि अस्समे अहं॥2080॥
''मम अस्समसामन्ता, मिगराजा चतुक्कमो।
आसया अभिनिक्खम्म, गज्जि सो असनी विय॥2081॥
''नदिते मिगराजे च, हासो मे उदपज्जथ।
मिगराजं गवेसन्तो, अद्दसं लोकनायकं॥2082॥
''दिस्वानाहं देवदेवं, तिस्सं लोकग्गनायकं।
हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, पूजयिं नागकेसरं॥2083॥
''उग्गच्छन्तंव सूरियं, सालराजंव पुप्फितं।
ओसधिंव विरोचन्तं, सन्थविं लोकनायकं॥2084॥

''मामुपयान्ति च विश्वस्थाः, कूजन्ति च मनोहरम्।
रम्यमानो सह तैः, वसामि आश्रमे अहम्॥2080॥
''मम आश्रमसमन्तात्, मृगराजा चतुक्रमः।
आशयात् अभिनिष्क्रम्य, अगर्जत् सः अशनि इव॥2081॥
''नदिते मृगराजे च, हासो मे उदपज्जथ।
मृगराजं गवेषयन्, अद्राक्षं लोकनायकम्॥2082॥
''दृष्ट्वाऽहं देवदेवम्, तिष्यं लोकाग्रनायकम्।
हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, अपूजयं नागकेशरम्॥2083॥
''उद्गच्छन्निव सूर्यम्, शालराजिव पुष्पितम्।
औषधिमिव विरोचन्तम्, समतुस्तोमं लोकनायकम्॥2084॥

विश्वास के भरे, आकर्षक कूजन करने वाले पक्षी को प्राप्त कर मैं उनके साथ आनन्दित रहते हुए आश्रम में वास किया॥2080॥

मेरे आश्रम के चारों ओर चौरास्ते पर मृगराज अपने निवास-स्थान पर निकलकर बिजली के समान गर्जना करते थे॥2081॥

गर्जना करते हुए मृगराज को देखकर मुझमें प्रसन्नता उत्पन्न हुई और मैंने मृगराज की गवेषणा करते हुए लोकनायक को देखा॥2082॥

देवों के देव लोकनायक तिष्य भगवान् को देखकर मैंने अत्यधिक प्रसन्नचित्त से नागकेसर की पूजा की॥2083॥

मैंने ऊपर जाते हुए सूर्य के समान और पुष्पित शालराज वृक्ष के समान प्रकाशित औषधि के समान लोकनायक की पूजा की॥2084॥

‘‘‘तव आणेन सब्बञ्ञु, मोचेसिमं सदेवकं।
तवं आराधयित्वान, जातिया परिमुच्चरे॥2085॥
‘‘‘अदस्सनेन सब्बञ्ञु, बुद्धानं सब्बदस्सिनं।
पतन्तिवीचिनिरयं, रागदोसेहि ओफुटा [ओत्थटा (स्या॰)]॥2086॥
‘‘‘तव दस्सनमागम्म, सब्बञ्ञु लोकनायक।
पमुच्चन्ति भवा सब्बा, फुसन्ति अमतं पदं॥2087॥
‘‘‘यदा बुद्धा चक्खुमन्तो, उप्पज्जन्ति पभङ्करा।
किलेसे झापयित्वान, आलोकं दस्सयन्ति ते’॥2088॥
‘‘कित्तयित्वान सम्बुद्धं, तिस्सं लोकग्गनायकं।
हट्ठो हट्ठेन चित्तेन, तिणसूलं अपूजयिं॥2089॥

‘‘‘तव ज्ञानेन सर्वज्ञ, अमुञ्चत् मां सदेवकम्।
त्वाम् आराध्य, जात्याः **परिमुञ्चते**॥2085॥
‘‘‘अदर्शनेन सर्वज्ञः, बुद्धानां सर्वदर्शिणम्।
पतन्त्यवीचिनिरयम्, रागदोषै अवस्पृष्टाः॥2086॥
‘‘‘तव दर्शनमागत्य, सर्वज्ञो लोकनायकः।
प्रमुञ्चन्ति भवाः सर्वाः, स्पृषन्ति अमृतं पदम्॥2087॥
‘‘‘यदा बुद्धाः **चक्षुष्मन्तः**, उत्पद्यन्ति प्रभङ्कराः।
क्लेशान् ध्मापयित्वा, आलोकं दर्शयन्ति ते’॥2088॥
‘‘कीर्त्तयित्वा सम्बुद्धम्, **तिष्यं** लोकाग्रनायकम्।
हृष्टो हृष्टेन चित्तेन, तृणशूलम् अपूपुजम्॥2089॥

हे सर्वज्ञ! आप अपने ज्ञान से देवताओं सहित मुझे मुक्त करें और तुम्हारी आराधना कर मैं जन्म से मुक्त होऊँगा॥2085॥

बिना देखे ही सर्वज्ञ बुद्ध सब कुछ देख लेते हैं और राग द्वेष से युक्त जनों को नरक में गिरते हुए देख लेते हैं॥2086॥

उन सर्वज्ञ लोकनायक के दर्शन के लिए आये हुए सभी भव से मुक्त हो जाते हैं और अमृत पद को प्राप्त करते हैं॥2087॥

जब चक्षुमान् बुद्ध प्रभङ्कर उत्पन्न होगें तब क्लेशों को नष्ट कर वे आलोक प्रदर्शित करेंगे॥2088॥

सम्बुद्ध लोकनायक तिष्य का कीर्तन कर अत्यधिक प्रसन्नमन से मैंने तृणशूल की पूजा की॥2089॥

‘‘मम सङ्कप्पमञ्ञाय, तिस्सो लोकग्गनायको।
सकासने निसीदित्वा, इमा गाथा अभासथ॥2090॥
‘‘‘यो मं पुप्फेहि छादेसि, पसन्नो सेहि पाणिभि।
तमहं कित्तयिस्सामि, सुणाथ मम भासतो॥2091॥
‘‘‘पञ्चवीसतिक्खत्तुं सो, देवरज्जं करिस्सति।
पञ्चसत्ततिक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती भविस्सति॥2092॥
‘‘‘पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
तस्स कम्मनिस्सन्देन [कम्मस्स निस्सन्दो (सी॰ स्या॰ पी॰)], पुप्फानं पूजनाय च [सो (स्या॰ पी॰)]॥2093॥
‘‘‘सीसंन्हातो चयं पोसो, पुप्फमाकङ्खते यदि [सायं पातो चयं पोसो, पुप्फेहि मं अच्छादयि (स्या॰)]।
पुञ्ञकम्मेन संयुत्तं [संयुत्तो (सी॰ स्या॰ पी॰)], पुरतो पातुभविस्सति॥2094॥

‘‘मम सङ्कल्पमाज्ञाय, तिस्रो लोकाग्रानायकः।
स्वकासने निसीद्य, इमां गाथाम् अभाषत॥2090॥
‘‘‘यो मां पुष्पै अच्छदीत्, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
तमहं कीर्त्तयिष्यामि, श्रृणुत मम भाषमाणस्य॥2091॥
‘‘‘पञ्चविंशतिकृत्वः सः, देवराज्यं करिष्यति।
पञ्चसप्ततिकृत्वश्च, चक्रवर्त्ती भविष्यति॥2092॥
‘‘‘प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातो असङ्ख्येयम्।
तस्य कर्मनिष्यन्देन, पुष्पाणां पूजनाय च॥2093॥
‘‘‘शीर्षस्नातः चाऽयं पोषः, पुष्पमाकाङ्क्षते यदि।
पुण्यकर्मणा संयुक्तम्, पुरतः प्रादुर्भविष्यति॥2094॥

तिष्य लोकनायक ने मेरे सङ्कल्प को जानकर अपने आसन पर बैठकर इन गाथाओं को कहा-॥2090॥

जिसने मुझे अपने दोनों हाथो से प्रसन्नतापूर्वक पुष्पों से आच्छादित किया। मैं उसका कीर्तिगान करूँगा। मेरे वचनों को सुनो॥2091॥

वह 25 बार वह देवों में राज्य करेगा और 75 बार-चक्रवर्ती राजा होगा॥2092॥

उसका प्रदेशराज्य गणना में असंख्य और विपुल होगा तथा उसके कर्म के परिणाम से उसकी पुष्पों से पूजा होगी॥2093॥

शिर तक स्नान किया हुआ यह पुरुष यदि पुष्प की आकांक्षा करता है तब उसके संचित पुण्यकर्म के कारण वह इसके सामने उत्पन्न होगा॥2094॥

‘‘‘यं यं इच्छति कामेहि, तं तं पातुभविस्सति।
सङ्कप्पं परिपूरेत्वा, निब्बायिस्सतिनासवो’’॥2095॥
‘‘किलेसे झापयित्वान, सम्पजानो पतिस्सतो।
एकासने निसीदित्वा, अरहत्तमपापुणिं॥2096॥
‘‘चङ्कमन्तो निपज्जन्तो, निसिन्नो उद वा ठितो।
बुद्धसेट्ठं सरित्वान, विहरामि अहं सदा॥2097॥
‘‘चीवरे पिण्डपाते च, पच्चये सयनासने।
तत्थ मे ऊनता नत्थि, बुद्धपूजायिदं फलं॥2098॥
‘‘सो दानि पत्तो अमतं, सन्तं पदमनुत्तरं।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥2099॥

‘‘‘यं यं इच्छति कामैः, तं तं प्रादुर्भविष्यति।
सङ्कल्पं परिपूर्य, निर्वायिष्यत्यनास्रवः’’॥2095॥
‘‘क्लेशाः ध्मापयित्वा, सम्प्रजानः **प्रतिस्मृतः**।
एकासने निसीद्य, अर्हत्वमप्राप्नवम्॥2096॥
‘‘चङ्क्रमन्तः **निपद्यन्तः**, निषण्णो उत वा स्थितः।
बुद्धश्रेष्ठं **स्मृत्वा**, विहरामि अहं सदा॥2097॥
‘‘चीवरे पिण्डपाते च, प्रत्यये शयनासने।
तत्र मे ऊनता नास्ति, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2098॥
‘‘स इदानीं प्राप्त अमृतम्, शान्तं पदमनुत्तरम्।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥2099॥

जिस-जिस के उत्पन्न होने की कामना करेगा वहाँ-वहाँ वह प्रकट होगा और अपने संकल्प को पूर्ण कर अनास्रव रहित निर्वाण को प्राप्त करेगा॥2095॥

भली प्रकार विचारवान् हो क्लेश को समूल नष्ट कर एक आसन पर बैठकर अर्हत्पद को प्राप्त किया॥2096॥

मैं चङ्क्रमण करते हुए, लेटे हुए, बैठे हुए अथवा स्थित हुए, सदा बुद्धश्रेष्ठ का स्मरण कर विहरण करता हूँ॥2097॥

मुझे चीवर, पिण्डपात, प्रत्यय और शयनासन इन सभी में कभी भी कमी नहीं होती, यह बुद्ध-पूजा का ही फल है॥2098॥

अब वह शान्त अनुत्तर अमृत पद को प्राप्त कर मैं सभी आस्रवों को जानकर आस्रवरहित हो विहरण करता हूँ॥2099॥

''द्वेनवुते इतो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥2100॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥2101॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥2102॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2103॥
इत्थं सुदं आयस्मा तिणसूलकछ्छादनियो [तिणसूलिकछ्छादनियो (क॰)] थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

तिणसूलकछ्छादनियत्थेरस्सापदानं ततियं।

4. मधुमंसदायकत्थेरअपदानं

''नगरे बन्धुमतिया, सूकरिको अहोसहं।
उक्कोटं रन्धयित्वान, मधुमांसम्हि अकिरम्॥2104॥
''सन्निपातं अहं गन्त्वा, एकं पत्तं गहेसहं।
पूरयित्वान तं पत्तं, भिक्खुसङ्घस्सदासहं॥2105॥

''द्विनवति इतः कल्पे, यं पुष्पमभ्यपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2100॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥2101॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2102॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2103॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् तृणशूलकछ्छादनीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''नगर्यां बन्धुमत्याम्, शूकरिक अभूवमहम्।
उत्कोटकं रन्धयित्वा, मधुमांसे **अकिरम्**॥2104॥
''सन्निपातम् अहं गत्वा, एकं पत्रम् अगृह्लाम्यहम्।
पूरयित्वा तं पत्रम्, भिक्षुसङ्घायादामहम्॥2105॥

यहाँ से 92 वें कल्प में जो पुष्प अभ्यर्पित कर पूजा की थी यह उस बुद्ध-पूजा का ही सुपरिणाम हैं कि मैं दुर्गति नहीं जानता॥2100॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन-मुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2101॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2102॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2103॥

इस प्रकार आयुष्मान् तृणशूलकछ्छादनीय स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय जब मैं बन्धुमती नगर में एक सूअर पालक हुआ, तब सूअरमांस को पकाकर मधुमास में मिलाय॥2104॥

तब मैंने एक पात्र में उस मांस को ग्रहण किया और पात्र को पूरित कर भिक्षु-संघ को प्रदान किया॥2105॥

''योत्थ थेरतरो भिक्खु, निय्यादेसि ममं तदा।
इमिना पत्तपूरेन, लभस्सु विपुलं सुखं॥2106॥
''दुवे सम्पत्तियो भुत्वा, सुक्कमूलेन चोदितो।
पच्छिमे वत्तमानम्हि, किलेसे झापयिस्सति॥2107॥
''तत्थ चित्तं पसादेत्वा, तावतिंसमगच्छहं।
तत्थ भुत्वा पिवित्वा च, लभामि विपुलं सुखं॥2108॥
''मण्डपे रुक्खमूले वा, पुब्बकम्मं अनुस्सरिं।
अन्नपानाभिवस्सो मे, अभिवस्सति तावदे॥2109॥
''इदं पच्छिमकं मय्हं, चरिमो वत्तते भवो।
इधापि अन्नपानं मे, वस्सते सब्बकालिकं॥2110॥

''योऽत्र स्थविरतरः भिक्षुः, निरयीयतत् मह्यं तदा।
अनेन **पात्रपूरेण**, लभस्व विपुलं सुखम्॥2106॥
''द्वे सम्पत्ती भुक्त्वा, शुक्लमूलेन चोदितः।
पश्चिमे वर्त्तमाने, कलेशान् ध्मापयिष्यति॥2107॥
''तत्र चित्तं प्रसाद्य, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्।
तत्र भुक्त्वा पीत्वा च, लभे विपुलं सुखम्॥2108॥
''मण्डपे वृक्षमूले वा, पूर्वकर्म अन्वस्मरम्।
अन्नपानाभिवर्षो मे, अभिवर्षति तावदेव॥2109॥
''इदं पच्छिमकं मम, **चरमो** वर्त्तते भवः।
इहापि अन्नपानं मे, वर्षते सार्वकालिकम्॥2110॥

तब मैंने उनमें से जो श्रेष्ठतर भिक्षु थे, उन्होंने मुझे पात्र को वापस कर दिया और कहा- इस पूर्ण पात्रदान के फलस्वरूप तुम विपुल सुख प्राप्त करो॥2106॥

कुशलकर्म के उदित होने पर दो सम्पत्तियों को भोग कर उसे अन्तिम एवं वर्तमान भव में वह क्लेशों को नष्ट करेगा॥2107॥

वहाँ अपने चित्त को प्रसादित कर मैं त्रायस्त्रिंश लोक में आ गया। वहाँ खाकर और पीकर विपुल सुख का लाभ किया॥2108॥

वृक्षमूल व मण्डप में मैंने पूर्व-कर्म का अनुस्मरण किया। उस समय भी मेरे लिए अन्नपान की वर्षा होती रहती थी॥2109॥

अब यह मेरा अन्तिम और चरम भव है, यहाँ पर भी मेरे लिए सदैव अन्नपान की वर्षा होती है॥2110॥

''तेनेव मधुदानेन [मंसदानेन (सी॰ पी॰)], सन्धावित्वा भवे अहं।
सब्बासवे परिञ्ञाय, विहरामि अनासवो॥2111॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, मधुदानस्सिदं फलं॥2112॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे॰... विहरामि अनासवो॥2113॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं॥2114॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे॰... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2115॥
इत्थं सुदं आयस्मा मधुमंसदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
मधुमंसदायकत्थेरस्सापदानं चतुत्थं।

5. नागपल्लवत्थेरअपदानं

''नगरे बन्धुमतिया, राजुय्याने वसामहं।
मम अस्समसामन्ता, निसीदि लोकनायको॥2116॥

''तेनैव मधुदानेन, सन्धाव्य भवे अहम्।
सर्वास्रवान् परिज्ञाय, विहरामि अनास्रवः॥2111॥
''एकनवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, मधुदानस्येदं फलम्॥2112॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे॰... विहरामि अनास्रवः॥2113॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2114॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे॰... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2115॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् मधुमांसदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''नगर्यां बन्धुमत्याम्, राज्योद्याने वसाम्यहम्।
मम आश्रमसमन्तात्, न्यसदत् लोकनायकः॥2116॥

उस मधुमांसदान से मैं भव में दौड़कर सभी आस्रवों को जानकर अनास्रव हो विहरण करता हूँ॥2111॥

91 वें कल्प में जो मैंने दान किया यह उसी मधुदान का ही परिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥2112॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2113॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2114॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2115॥

इस प्रकार आयुष्मान् मधुमांसदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

बन्धुमती नगर के राज्योद्यान में मैं वास करता था। तब मेरे आश्रम के समीप ही लोकनायक बैठे थे॥2116॥

''नागपल्लवमादाय, बुद्धस्स अभिरोपयिं।
पसन्नचित्तो सुमनो, सुगतं अभिवादयिं॥2117॥
''एकनवुतितो कप्पे, यं पल्लवमपूजयिं।
दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥2118॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2119॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2120॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2121॥
इत्थं सुदं आयस्मा नागपल्लवो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
नागपल्लवत्थेरस्सापदानं पञ्चमं।

6. एकदीपियत्थेरअपदानं

''परिनिब्बुते सुगते, सिद्धत्थे लोकनायके।
सदेवमानुसा सब्बे, पूजेन्ति द्विपदुत्तमं॥2122॥

''नागपल्लवमादाय, बुद्धाय अभ्यरोपयम्।
प्रसन्नचित्तः सुमनाः, सुगतम् अभ्यवादयम्॥2117॥
''एकनवतितमे कल्पे, यं पल्लवमपूजयम्।
दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2118॥
''कलेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2119॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2120॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2121॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् नागपल्लवस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''परिनिर्वृते सुगते, सिद्धार्थे लोकनायके।
सदेवमनुष्याः सर्वे, पूजयन्ति द्विपदोत्तमम्॥2122॥

तब नागपल्लव लाकर मैंने बुद्ध को अभिरोपित किया और प्रसन्नचित्त सुमन से सुगत का अभिवादन किया॥2117॥

91 वें कल्प में मैंने जो पल्लव से पूजा की थी, यह उसी बुद्ध-पूजा का ही परिणाम है कि मैं दुर्गति को नहीं जानता॥2118॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धन-मुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2119॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2120॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2121॥

इस प्रकार आयुष्मान् नागपल्लव स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

सुगत, सिद्धार्थ, लोकनायक, द्विपदोत्तम के परिनिवृत्त हो जाने के पश्चात् देवताओं सहित सभी मनुष्य उनकी पूजा करते हैं॥2122॥

''आरोपिते च चितके, सिद्धत्थे लोकनायके।
यथासकेन थामेन, चितं पूजेन्ति सत्थुनो॥2123॥
''अविदूरे चितकस्स, दीपं उज्जालयिं अहं।
याव उदेति सूरियो, दीपं मे ताव उज्जलि॥2124॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं, तावतिंसमगच्छहं॥2125॥
''तत्थ मे सुकतं ब्यम्हं, एकदीपीति ञायति।
दीपसतसहस्सानि, ब्यम्हे पज्जलरे मम॥2126॥
''उदयन्तोव सूरियो, देहो मे जोतते सदा।
सप्पभाहि सरीरस्स, आलोको होति मे सदा॥2127॥

''आरोपिते च चितके, सिद्धार्थे लोकनायके।
यथास्वकेन स्थामेन, चितं पूजयन्ति शास्त्रे॥2123॥
''अविदूरे चितकस्य, दीपम् उदज्वालिषम् अहम्।
यावत् उदयति सूर्यः, दीपं मे तावत् उदज्वलत्/उदज्वालीत्॥2124॥
''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥2125॥
''तत्र मे सुकृतं विमानम्, एकदीपी इति ज्ञायति।
दीपशतसहस्राणि, विमाने प्रज्वलते मम॥2126॥
''उदयन्निव सूर्यः, देहो मे द्योतते सदा।
सप्रभाभिः शरीरस्य, आलोको भवति मे सदा॥2127॥

सिद्धार्थ लोकनायक शास्ता के आरोपित चिता की वे अपने यथा सामर्थ्य पूजा करते हैं॥2123॥

चिता से कुछ दूरी पर मैंने दीप प्रज्जवलित किया। वह दीप सूर्योदयपर्यन्त प्रज्ज्वल्यमान रहा॥2124॥

उस सुकृत कर्म और चेतना की प्रणिधि से मैं मनुष्य शरीर छोड़कर त्रायस्त्रिंश लोक में आ गया॥2125॥

वहाँ पर मेरे लिए एकदीपी नाम से ज्ञात एक सुकृत विमान था जिसमें सौ हजार दीपक प्रज्ज्वलित हो रहे थे॥2126॥

उदित होते हुए सूर्य के समान मेरा देह प्रकाशित होता है और मेरे शरीर का तेज सदैव प्रभा से युक्त रहता है॥2127॥

''तिरोकुट्टं [तिरोकुड्डं (सी॰ स्या॰ क॰)] तिरोसेलं, समतिग्गय्ह [सब्बत्थपि एवमेव दिस्सति] पब्बतं।
समन्ता योजनसतं, पस्सामि चक्खुना अहं॥2128॥
''सत्तसत्ततिक्खत्तुञ्च, देवलोके रमिं अहं।
एकतिंसतिक्खत्तुञ्च, देवरज्जमकारयिं॥2129॥
''अट्ठवीसतिक्खत्तुञ्च, चक्कवत्ती अहोसहं।
पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं॥2130॥
''देवलोका चवित्वान, निब्बत्तिं मातुकुच्छियं।
मातुकुच्छिगतस्सापि, अक्खि मे न निमीलति॥2131॥
''जातिया चतुवस्सोहं, पब्बजिं अनगारियं।
अड्ढमासे असम्पत्ते, अरहत्तमपापुणिं॥2132॥

''तिरोकुड्यं तिरोशैलम्, समतिग्रह्य पर्वतम्।
समन्ताद् योजनशतम्, पश्यामि चक्षुषा अहम्॥2128॥
''सप्तसप्ततिकृत्वश्च, देवलोके रमेऽहम्।
एकत्रिंशत्कृत्वश्च, देवराज्यमकारयम्॥2129॥
''अष्टविंशत्कृत्वश्च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्।
प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्॥2130॥
''देवलोकात् च्युत्वा, निरवर्तयं मातृकुक्षौ।
मातृकुक्षिगतस्यापि, अक्षिः मे न निमीलति॥2131॥
''जात्या चतुर्वर्षोऽहम्, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
अर्धमासे असम्प्राप्ते, अर्हत्वं प्राप्नवम्॥2132॥

चारदीवारी के पार, पर्वत के पार तथा सम्पूर्ण पर्वत से लेकर चारों ओर सौ योजन तक मैं अपने चक्षु से देखता हूँ॥2128॥

77 बार मैंने देवलोक में रमण किया और 31 बार देवों में राज्य किया॥2129॥

28 बार मैं चक्रवर्ती राजा हुआ और मेरा प्रदेशराज्य विपुल तथा गणना में असंख्य था॥2130॥

देवलोक से च्युत होकर मैंने माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ और माता गर्भ में पड़े होने पर भी मेरी आँख नहीं झपकती थी॥2131॥

जन्म के चार मास बाद मैं प्रव्रज्या ग्रहण कर अनागारिक हो गया और आधे मास भी नहीं हुआ था कि अहत्व को प्राप्त किया॥2132॥

''दिब्बचक्खुं विसोधेसिं, भवा सब्बे समूहता।

सब्बे किलेसा सञ्छिन्ना, एकदीपस्सिदं फलं॥2133॥

''तिरोकुट्टं तिरोसेलं, पब्बतञ्चापि केवलं।

समतिक्कम्म [सब्बत्थपी एवमेव दिस्सति] पस्सामि, एकदीपस्सिदं फलं॥2134॥

''विसमा मे समा होन्ति, अन्धकारो न विज्जति।

नाहं पस्सामि तिमिरं, एकदीपस्सिदं फलं॥2135॥

''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दीपमददिं तदा।

दुग्गतिं नाभिजानामि, एकदीपस्सिदं फलं॥2136॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2137॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2138॥

''दिव्यचक्षुं व्यशोधयम्, भवाः सर्वे समूहता।

सर्वे क्लेशाः सञ्छन्नाः, एकदीपस्येदं फलम्॥2133॥

''तिरोकुड्यं तिरोशैलम्, पर्वतञ्चापि केवलम्।

समतिक्रम्य पश्यामि, एकदीपस्येदं फलम्॥2134॥

''विषमा मे समा भवन्ति, अन्धकारो न विद्यते।

नाऽहं पश्यामि तिमिरम्, एकदीपस्येदं फलम्॥2135॥

''चतुर्णवतितमे कल्पे, यं दीपमददां तदा।

दुर्गतिं नाभिजानामि, एकदीपस्येदं फलम्॥2136॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2137॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2138॥

भव के सभी समूह को मैं दिव्य चक्षु से शुद्ध करता हूँ और सभी क्लेशों को नष्ट कर दिया। यह एक दीप-दान का ही सुपरिणाम है॥2133॥

मैं चारदीवारी के पार, पर्वत के पार तथा समस्त पर्वत के चारों और देखता हूँ यह एक दीपदान का ही फल है॥2134॥

मेरे लिए विषम सम हो जाते हैं और अन्धकार भी नहीं विद्यमान रहता, ना ही मैं अन्धकार देखता हूँ, यह एक दीपदान का ही सुपरिणाम है॥2135॥

94 वें कल्प में जो मैंने दीपदान दिया था इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता यह दीपदान का ही सुपरिणाम है॥2136॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2137॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2138॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2139॥

इत्थं सुदं आयस्मा एकदीपियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।

एकदीपियत्थेरस्सापदानं छट्ठं।

7. उच्छङ्गपुप्फियत्थेरअपदानं

''नगरे बन्धुमतिया, अहोसिं मालिको तदा।

उच्छङ्गं पूरयित्वान, अगमं अन्तरापणं॥2140॥

''भगवा तम्हि समये, भिक्खुसङ्घपुरक्खतो।

महता आनुभावेन, निय्याति लोकनायको॥2141॥

''दिस्वान लोकपज्जोतं, विपस्सिं लोकतारणं।

पुप्फं पग्गय्ह उच्छङ्गा, बुद्धसेट्ठं अपूजयिं॥2142॥

''एकनवुतितो कप्पे, यं पुप्फमभिपूजयिं।

दुग्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजायिदं फलं॥2143॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2139॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् एकदीपियस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

''नगर्यां बन्धुमत्याम्, अभूवम् मालिकस्तदा।

उत्सङ्गं पूरयित्वा, अगमम् अन्तरापणम्॥2140॥

''भगवान् तस्मिन् समये, भिक्षुसङ्घपुरस्कृतः।

महताऽनुभावेन, निर्याति लोकनायकः॥2141॥

''दृष्ट्वा लोकप्रद्योतम्, **विपश्यिनं** लोकतारणम्।

पुष्पं प्रगृह्य उत्सङ्गात्, बुद्धश्रेष्ठम् अपूपुजम्॥2142॥

''एकनवतितमे कल्पे, यं पुष्पमभ्यपूपुजम्।

दुर्गतिं नाभिजानामि, बुद्धपूजाया इदं फलम्॥2143॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2139॥

इस प्रकार आयुष्मान् एकदीपियस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उस समय मैं बन्धुमति नगर में माली हुआ और अपनी गोद को पूर्ण कर बाजार के मध्य में आ गया॥2140॥

उसी समय भगवान् लोकनायक भिक्षुसंघ से पुरस्कृत गौरव का अनुभव कराते हुए वहाँ से निकले॥2141॥

लोक को प्रकाशित करने वाले और लोक को तारने वाले विपश्यी को देखकर गोद में पुष्प को ग्रहण कर मैंने बुद्धश्रेष्ठ की पूजा की॥2142॥

91 वें कल्प में मैंने जो पुष्प अभ्यर्पित कर पूजा की थी, इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह बुद्ध-पूजा का ही फल है॥2143॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2144॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2145॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2146॥
इत्थं सुदं आयस्मा उच्छङ्गपुप्फियो थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
उच्छङ्गपुप्फियत्थेरस्सापदानं सत्तमं।

8. यागुदायकत्थेरअपदानं

''अतिथिं [अतीतं (क०)] मे गहेत्वान, अगच्छिं गामकं तदा।
सम्पुण्णनदिकं दिस्वा, सङ्घारामं उपागमिं॥2147॥
''आरञ्ञका धुतधरा, झायिनो लूखचीवरा।
विवेकाभिरता धीरा, सङ्घारामे वसन्ति ते॥2148॥
''गति तेसं उपच्छिन्ना, सुविमुत्तान तादिनं।
पिण्डाय ते न गच्छन्ति, ओरुद्धनदिताय हि [ओरुद्धनदिकायतिं (स्या०)]॥2149॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2144॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2145॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2146॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् उत्सङ्गपुष्पीयस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''अतिथिं मे गृहीत्वा, आगच्छं ग्रामकं तदा।
सम्पूर्णनदिकं दृष्ट्वा, सङ्घारामम् उपागमम्॥2147॥
''आरण्यकाः धुतधराः, ध्यायिनः लूखचीवराः।
विवेकाभिरताः धीरा, सङ्घारामे वसन्ति ते॥2148॥
''गति तेषाम् उपच्छिन्नाः, सुविमुत्तानां तायिनम्।
पिण्डाय ते न गच्छन्ति, **अवरुद्धनदितया** हि॥2149॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है, वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2144॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2145॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2146॥

इस प्रकार आयुष्मान् उत्सङ्गपुष्पीयस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

अतिथि को ग्रहण कर तब मैं ग्राम में आ गया और सम्पूर्ण रूप से भरी नदी को देखकर संङ्घाराम के समीप गया॥2147॥

जंगल में रहने वाले, धुतङ्गधारी, ध्यायी, मोटा-छोटा चीवर धारण करने वाले, एकान्त में रहने वाले धीर ये सभी सङ्घाराम में वास करते थे॥2148॥

जो सुविमुक्तचित्त वाले हो गये हैं, उनकी अवरुद्ध नदी के समान गति छिन्न-भिन्न हो गई है और उन्हें पिण्डपात के लिए जाने की आवश्यकता नहीं॥2149॥

''पसन्नचित्तो सुमनो, वेदजातो कतञ्जली।
तण्डुलं मे गहेत्वान, यागुदानं अदासहं॥2150॥
''पञ्चन्नं यागुं दत्वान, पसन्नो सेहि पाणिभि।
सककम्माभिरद्धोहं, तावतिंसमगच्छहं॥2151॥
''मणिमयञ्च मे ब्यम्हं, निब्बत्ति तिदसे गणे।
नारीगणेहि सहितो, मोदामि ब्यम्हमुत्तमे॥2152॥
''तेत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जमकारयिं।
तिंसक्खत्तुं चक्कवत्ती, महारज्जमकारयिं॥2153॥
''पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
देवलोके मनुस्से वा, अनुभोत्वा सयं [यसं (स्या॰)] अहं॥2154॥

''प्रसन्नचित्तः सुमनाः, वेदजातः कृतञ्जलिः।
तण्डुलं मे गृहीत्वा, यागुदानम् अदामहम्॥2150॥
''पञ्चन्नं यवागुं दत्वा, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
स्वककर्माभिरब्धोऽहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥2151॥
''मणिमयञ्च मे विमानम्, निर्वृत्ति त्रिदशे गणे।
नारीगणैः सहितः, मोदे विमानमुत्तमे॥2152॥
''त्रयस्त्रिंशकृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यमकारयम्।
त्रिंशत्कृत्वः चक्रवर्त्ती, महाराज्यमकारयम्॥2153॥
''प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्।
देवलोके मनुष्ये वा, अनुभूय स्वयमहम्॥2154॥

प्रसन्नचित्त सुमन और आनन्दित हो दोनों हाथो को जोड़कर चावल के दाने ग्रहण कर मैंने यवागु प्रदान किया॥2150॥

अपने दोनों हाथों से प्रसन्नतापूर्वक पाँच प्रकार के अन्न का यवागु प्रदान कर अपने कर्म के परिणामस्वरूप मैं त्रायस्त्रिंश लोक में आ गया॥2151॥

देवतागणों में जन्म लेने पर मेरे लिए मणिमय विमान विद्यमान था और उस उत्तम विमान में मैंने नारीगण सहित आनन्द किया॥2152॥

33 बार देवेन्द्र हो मैंने देवताओं में राज्य किया और 30 बार चक्रवर्ती हो महाराज्य किया॥2153॥

मेरा प्रदेशराज्य विपुल और गणना में असंख्य था देवलोक हो या मनुष्य लोक मैं स्वयं अनुभव करता हूँ॥2154॥

''पच्छिमे भवे सम्पत्ते, पब्बजिं अनगारियं।
सह ओरोपिते केसे, सब्बं सम्पटिविज्झहं॥2155॥
''खयतो वयतो चापि, सम्मसन्तो कळेवरं।
पुरे सिक्खापदादाना, अरहत्तमपापुणिं॥2156॥
''सुदिन्नं मे दानवरं, वाणिज्जं सम्पयोजितं।
तेनेव यागुदानेन, पत्तोम्हि अचलं पदं॥2157॥
''सोकं परिद्दवं ब्याधिं, दरथं चित्ततापनं।
नाभिजानामि उप्पन्नं, यागुदानस्सिदं फलं॥2158॥
''यागुं सङ्घस्स दत्वान, पुञ्ञक्खेत्ते अनुत्तरे।
पञ्चानिसंसे अनुभोमि, अहो यागुसुयिट्ठता॥2159॥

''पच्छिमे भवे सम्प्राप्ते, प्राव्रजम् अनागारिकम्।
सह अवरोपिते केशे, सर्वं **सम्प्रत्यवेधिषमहम्**॥2155॥
''क्षयतो वयतश्चापि, **सम्मृशन्** कलेवरम्।
पुरे शिक्षापदादानात्, अर्हत्वमप्राप्नवम्॥2156॥
''सुदत्तं मे दानवरम्, वाणिज्यं सम्प्रयोजितम्।
तेनैव यागुदानेन, प्राप्तोऽस्मि अचलं पदम्॥2157॥
''शोकं परिद्रवं व्याधिम्, दरथं चित्ततापनम्।
नाभिजानामि उत्पन्नम्, यागुदानस्येदं फलम्॥2158॥
''यागुं सङ्घाय दत्वा, पुण्यक्षेत्रे अनुत्तरे।
पञ्चानृशंसान् अनुभवामि, अहो **यवागूस्विष्टता**॥2159॥

अन्तिम भव को प्राप्त अनागारिक हो मैं प्रव्रजित हुआ और अपने केशों को उतार कर अपनी प्रज्ञा से सभी को बेधा॥2155॥

क्षय में भी व्यय में भी मैंने सम्यक् रूप से शान्त कलेवर से पूर्व में शिक्षापद को प्राप्त करने से अर्हत्व को प्राप्त किया॥2156॥

व्यापार से प्राप्त कर मैंने भली प्रकार से श्रेष्ठदान दिया। उस यवागुदान से मैंने अचलपद को प्राप्त किया॥2157॥

मैं शोक, रोना, व्याधि, दुःख-कष्ट और चित्तक्लेश को भी नहीं जानता, यह यवागुदान का ही फल है॥2158॥

अनुत्तर पुण्यक्षेत्र रूपी संघ को यवागु प्रदान कर मैं पाँच अनुशंसा का अनुभव करता हूँ। यह यागुदान का ही फल है॥2159॥

''अब्याधिता रूपवता, खिप्पं धम्मनिसन्तिता [निबुज्झिता (स्या॰)]।
लाभिता अन्नपानस्स, आयु पञ्चमकं मम॥2160॥
''यो कोचि वेदं जनयं, सङ्घे यागुं ददेय्य सो।
इमानि पञ्च ठानानि, पटिगण्हेय्य पण्डितो॥2161॥
''करणीयं कतं सब्बं, भवा उग्घाटिता मया।
सब्बासवा परिक्खीणा, नत्थि दानि पुनब्भवो॥2162॥
''सो अहं विचरिस्सामि, गामा गामं पुरा पुरं।
नमस्समानो सम्बुद्धं, धम्मस्स च सुधम्मतं॥2163॥
''तिंसकप्पसहस्सम्हि, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, यागुदानस्सिदं फलं॥2164॥

''अव्याधिता रूपवता, क्षिप्रं **धर्मनिःशान्तिता**।
लाभिता अन्नपानस्य, आयुः पञ्चमकं मम॥2160॥
''यः कश्चिद्वेदं जनयम्, सङ्घाय यागुं ददेय सः।
इमानि पञ्च स्थानानि, प्रगृह्णेत पण्डितः॥2161॥
''करणीयं कृतं सर्वम्, भवा उद्घाटिता मया।
सर्वास्रवाः परिक्षीणाः, नास्ति इदानीं पुनर्भवः॥2162॥
''सो अहं विचरिष्यामि, ग्रामात् ग्रामं पुरा पुरम्।
नंस्यमानः सम्बुद्धम्, धर्मस्य च सुधर्मतम्॥2163॥
''त्रिंशकल्पसहस्रे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, यागुदानस्येदं फलम्॥2164॥

बाधा से रहित, रूपवान्, शीघ्र धर्म के प्रति जागरुक, अन्न-पान और पाँच प्रकार की आयु का मैं लाभी होता हूं॥2160॥

जो कोई वेदना, संघ को यागुदान देने से उत्पन्न होती है उसे ब्राह्मण को पाँच स्थानों से ग्रहण करना चाहिए॥2161॥

मेरे द्वारा भव के सभी करणीय कार्य कर लिये गये हैं और सर्वास्रवों को क्षीण कर लिया है। अब मेरा यहाँ पुनर्जन्म नहीं होगा॥2162॥

अब मैं सम्बुद्ध को तथा धर्म की सुधर्मता को नमस्कार करते हुए गाँव-गाँव तथा नगर-नगर विचरण करुँगा और ॥2163॥

तीस हजारवें कल्प में मैंने जो दान दिया था, इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता, यह यवागु-दान का ही सुपरिणाम है॥2164॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2165॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2166॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2167॥
इत्थं सुदं आयस्मा यागुदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
यागुदायकत्थेरस्सापदानं अट्ठमं।

9. पत्थोदनदायकत्थेरअपदानं

''वनचारी पुरे आसिं, सततं वनकम्मिको।
पत्थोदनं गहेत्वान, कम्मन्तं अगमासहं॥2168॥
''तत्थद्दसासिं सम्बुद्धं, सयम्भुं अपराजितं।
वना पिण्डाय निक्खन्तं, दिस्वा चित्तं पसादयिं॥2169॥
''परकम्मायने [वयकम्मायने (क०)] युत्तो, पुञ्ञञ्च मे न विज्जति।
अयं पत्थोदनो अत्थि, भोजयिस्सामहं [भोजयिस्सामि मं (स्या०)] मुनिं॥2170॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2165॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2166॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2167॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् यागुदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।
''वनचारी पुरे आसम्, सततं वनकर्मिकः।
पथ्योदनं गृहीत्वा, कर्मान्तम् अगमामहम्॥2168॥
''तत्राद्राक्षं सम्बुद्धम्, स्वयम्भुवम् अपराजितम्।
वनात् पिण्डाय निष्क्रान्तम्, दृष्ट्वा चित्तं प्रासादयम्॥2169॥
''परकर्मायने युक्तः, पुण्यञ्च मे न विद्यति।
अयं पथ्योदन अस्ति, भोजयिष्याम्यहं मुनिम्॥2170॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2165॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2166॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2167॥

इस प्रकार आयुष्मान् यागुदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

पूर्व में मैं सदैव वन में विचरण कर वन से लकड़ी लाने वाला था तब मैं दोने में पका हुआ भात लेकर काम पर गया॥2168॥

वहाँ अपराजित, स्वयम्भू सम्बुद्ध को भिक्षाटन के लिए वन से बाहर निकला हुआ देखकर मैंने चित्त को प्रसादित किया॥2169॥

पर-कर्म-युक्त (दूसरों के घरों में काम करने वाला) मुझमें कोई पुण्य विद्यमान नहीं है। यह मेरे पास पका हुआ भात है जिसका मैं महामुनि को भोजन के कराउँगा॥2170॥

''पत्थोदनं गहेत्वान, सयम्भुस्स अदासहं।
मम निज्झायमानस्स, परिभुञ्जि तदा मुनि॥2171॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं, तावतिंसमगच्छहं॥2172॥
''छत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जमकारयिं।
तेत्तिंसक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती अहोसहं॥2173॥
''पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
सुखितो यसवा होमि, पत्थोदनस्सिदं फलं॥2174॥
''भवाभवे संसरन्तो, लभामि अमितं धनं।
भोगे मे ऊनता नत्थि, पत्थोदनस्सिदं फलं॥2175॥

''पथ्योदनं गृहीत्वा, स्वयम्भुवे अदामहम्।
मम निध्यायमानस्य, **पर्यभौक्षीत्** तदा मुनिः॥2171॥
''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥2172॥
''षट्त्रिंशकृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यमकारयम्।
त्रायस्त्रिंशकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्॥2173॥
''प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्।
सुखितो यशवान् भवामि, पथ्योदनस्येदं फलम्॥2174॥
''भवाभवे संसरन्, लभे अमितं धनम्।
भोगे मे ऊनता नास्ति, पथ्योदनस्येदं फलम्॥2175॥

पके हुए भात को ग्रहण कर मैंने स्वयस्भू महामुनि को प्रदान किया और जब मैं ध्यान लगा रहा था तब मुनि उसे ग्रहण कर रहे थे॥2171॥

उस दृढप्रतिज्ञा और सुकृत कर्म के फल-स्वरूप मैं मानव शरीर को त्यागकर (तावतिंस) देवलोक में उत्पन्न हुआ॥2172॥

36 बार मैंने देवेन्द्र हो दिव्य राज्य किया और 33 बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥2173॥

मेरा प्रदेशराज्य विपुल और गणना में असंख्य होता है और मैं सुखी और यशवान् होता हूँ, यह पथ्य-दान का ही सुपरिणाम है॥2174॥

भव से भव में संसरण करते हुए मैंने असीम धन का लाभ किया और मेरे भोगों में कोई न्यूनता नहीं है, यह पके हुए पथ्य दान का ही फल है॥2175॥

''नदीसोतपटिभागा, भोगा निब्बत्तरे मम।
परिमेतुं न सक्कोमि, पत्थोदनस्सिदं फलं॥2176॥
''इमं खाद इमं भुञ्ज, इमम्हि सयने सय।
तेनाहं सुखितो होमि, पत्थोदनस्सिदं फलं॥2177॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, पत्थोदनस्सिदं फलं॥2178॥
''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2179॥
''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2180॥
''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2181॥
इत्थं सुदं आयस्मा पत्थोदनदायको थेरो इमा गाथायो अभासित्थाति।
पत्थोदनदायकत्थेरस्सापदानं नवमं।

''नदीस्रोतप्रतिभागाः, भोगाः निर्वर्तते मम।
परिमापयितुं न शक्नोमि, पथ्योदनस्येदं फलम्॥2176॥
''इमं खाद इमं भुञ्ज, अस्मिन् शयने शय।
तेनाऽहं सुखितो भवामि, पथ्योदनस्येदं फलम्॥2177॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, पथ्योदनस्येदं फलम्॥2178॥
''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2179॥
''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2180॥
''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2181॥
इत्थं स्विद् आयुष्मान् पथ्योदनदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

नदी की धारा के समान मेरे लिए धन सम्पत्ति उत्पन्न होती है उसको मापा नहीं जा सकता है। यह पके हुए पथ्य-दान का ही फल है॥2176॥

मैं यह खाऊँ, मैं यह पीऊं, इस शयनाशन पर मैं शयन कर सुखी होऊँ, यह पके हुए पथ्य-दान का ही फल है॥2177॥

94 वें कल्प में जो मैंने यह दान दिया था इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता। यह पथ्य-दान का ही फल है॥2178॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2179॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2180॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2181॥

इस प्रकार आयुष्मान् पथ्योदनदायक स्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

10. मञ्चदायकत्थेरअपदानं

''परिनिब्बुते कारुणिके, सिद्धत्थे लोकनायके।
वित्थारिके पावचने, देवमानुससक्कते॥2182॥
''चण्डालो आसहं तत्थ, आसन्दिपीठकारको।
तेन कम्मेन जीवामि, तेन पोसेमि दारके॥2183॥
''आसन्दिं सुकतं कत्वा, पसन्नो सेहि पाणिभि।
सयमेवुपगन्त्वान, भिक्खुसङ्घस्सदासहं॥2184॥
''तेन कम्मेन सुकतेन, चेतनापणिधीहि च।
जहित्वा मानुसं देहं, तावतिंसमगच्छहं॥2185॥
''देवलोकगतो सन्तो, मोदामि तिदसे गणे।
सयनानि महग्घानि, निब्बत्तन्ति यदिच्छकं॥2186॥

''परिनिर्वृते कारुणिके, सिद्धार्थे लोकनायके।
विस्तारिके प्रावचने, देवमानुशसत्कृते॥2182॥
''चण्डाल आसमहं तत्र, **आसन्दिपीठकारकः**।
तेन कर्मणा **जीवामि**, तेन पोषयामि दारकान्॥2183॥
''आसन्दिं सुकृतं कृत्वा, प्रसन्नः स्वाभ्यां पाणिभ्याम्।
स्वयमेवुपगत्य, भिक्षुसङ्घायादामहम्॥2184॥
''तेन कर्मणा सुकृतेन, चेतनाप्रणिधिभिश्च।
हित्वा मानुषं देहम्, त्रायस्त्रिंशमागच्छमहम्॥2185॥
''देवलोकगतः शान्तः, मोदे त्रिदशे गणे।
शयनानि महार्घाणि, निर्वर्त्तन्ति यदिच्छकम्॥2186॥

कारुणिक, सिद्धार्थ, लोकनायक के परिनिर्वृत्त हो जाने पर विस्तार से देव और मनुष्यों द्वारा सत्कृत उपदेश दिया॥2182॥

तब वहाँ मैं बैठने के पीढ़ा का निर्माण करने वाला चण्डाल हुआ था। उस कर्म से ही मैं जीवनयापन करता था और उसी से बच्चों का पालन करता था॥2183॥

प्रसन्नमन से अपने दोनों हाथों से भली प्रकार से पीठिका का निर्माण कर स्वयं ही मैं उनके समीप गया और भिक्षुसंघ को प्रदान किया॥2184॥

उस दृढ़प्रतिज्ञा और सुकृतकर्म के फलस्वरूप मैं मानव शरीर को त्यागकर देवलोक में उत्पन्न हुआ॥2185॥

देव-लोक में जाकर शान्त मैंने त्रिदशगणों में आनन्द किया जहाँ अत्यन्त बहुमूल्यवान् शयनाशन मेरी इच्छानुसार प्रकट हो जाते हैं॥2186॥

''पञ्ञासक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जमकारयिं।
असीतिक्खत्तुं राजा च, चक्कवत्ती अहोसहं॥2187॥
''पदेसरज्जं विपुलं, गणनातो असङ्खियं।
सुखितो यसवा होमि, मञ्चदानस्सिदं फलं॥2188॥
''देवलोका चवित्वान, एमि चे मानुसं भवं।
महारहा सुसयना, सयमेव भवन्ति मे॥2189॥
''अयं पच्छिमको मय्हं, चरिमो वत्तते भवो।
अज्जापि सयने काले [सयनकाले (स्या॰)], सयनं उपतिट्ठति॥2190॥
''चतुन्नवुतितो कप्पे, यं दानमददिं तदा।
दुग्गतिं नाभिजानामि, मञ्चदानस्सिदं फलं॥2191॥

''पञ्चाशत्कृत्वः देवेन्द्रः, देवराज्यमकारयम्।
असीतिकृत्वः राजा च, चक्रवर्त्ती अभूवमहम्॥2187॥
''प्रदेशराज्यं विपुलम्, गणनातोऽसङ्ख्येयम्।
सुखितो यशवान् भवामि, मञ्चदानस्येदं फलम्॥2188॥
''देवलोकात् च्युत्वा, एमि चेत् मानुषं भवम्।
महार्घाः सुशयनाः, स्वयमेव भवन्ति मे॥2189॥
''अयं पश्चिमको मम, चरमो वर्त्तते भवः।
अद्यापि शयने काले, शयनं उपतिष्ठति॥2190॥
''चतुर्णवतितमे कल्पे, यद्दानमददां तदा।
दुर्गतिं नाभिजानामि, मञ्चदानस्येदं फलम्॥2191॥

50 बार वह देवेन्द्र हो मैंने दिव्य राज्य किया और 80 बार चक्रवर्ती राजा हुआ॥2187॥

मेरा प्रदेशराज्य गणना में असंख्य और विपुल था और मैं सुखी और यशवान् होता हूँ, यह मंच-दान का ही सुपरिणाम है॥2188॥

देवलोक से च्युत हो मनुष्यलोक में उत्पन्न होने पर अत्यन्त मूल्यवान् शयनाशन मेरे लिए स्वयं ही उपस्थित हो जाते थे॥2189॥

अब यह मेरा अन्तिम और चरम भव है आज भी शयनकाल में मेरे लिए शयन उपस्थित हो जाता है॥2190॥

94 वें कल्प में जो मैंने दान दिया था, इस कारण मैं दुर्गति को नहीं जानता यह मञ्च-दान का ही सुपरिणाम है॥2191॥

''किलेसा झापिता मय्हं...पे०... विहरामि अनासवो॥2192॥

''स्वागतं वत मे आसि...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं॥2193॥

''पटिसम्भिदा चतस्सो...पे०... कतं बुद्धस्स सासनं''॥2194॥

इत्थं सुदं आयस्मा मञ्चदायको थेरो इमा गाथायोह अभासित्थाति।

मञ्चदायकत्थेरस्सापदानं दसमं।

भद्दालिवग्गो बाचत्तालीसमो।

तस्सुद्दानं –

भद्दाली एकछत्तो च, तिणसूलो च मंसदो।

नागपल्लविको दीपी, उच्छङ्गि यागुदायको॥

पत्थोदनी मञ्चददो, गाथायो गणिता चिह।

द्वेसतानि च गाथानं, गाथा चेका तदुत्तरि॥

''क्लेशाः ध्मापिताः मम...पे०... विहरामि अनास्रवः॥2192॥

''स्वागतं वत मे आसीत्...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्॥2193॥

''प्रतिसंविदश्चतस्रः...पे०... कृतं बुद्धस्य शासनम्''॥2194॥

इत्थं स्विद् आयुष्मान् मञ्चदायकस्थविर इमा गाथा अभाषिष्टेति।

तस्योदानम् –

भद्दालिः एकछत्रश्च, तृणशूलश्च मांसदः।

नागपल्लविको द्वीपिः, उत्साङ्गिः यागुदायकः॥

पथ्योदनी मञ्चाददः, गाथाः गणिताश्चेह।

द्विशतानि च गाथानाम्, गाथा चैकाः **तदुत्तरि**॥

मेरे द्वारा भव के सभी क्लेश समूल नष्ट कर दिये गये हैं और जैसे हाथी बन्धनमुक्त हो विचरण करता है वैसे ही मैं भी अनास्रव हो विचरण करता हूँ॥2192॥

मेरा बुद्ध के समीप स्वागत हुआ और मैंने तीन विद्याओं को प्राप्त कर बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2193॥

चार पटिसम्भिदाओं आठ विमोक्षों तथा षड्भिज्ञाओं का साक्षात्कार कर मैंने बुद्धशासन को पूर्ण किया॥2194॥

इस प्रकार आयुष्मान् मञ्चदायकस्थविर ने इन गाथाओं को कहा-

उनके उदान- इस प्रकार यहाँ भद्दाली, एकछत्र, तिणसूल, मधुमंस, नागपल्लव, दीपिय उच्छङ्ग यागुदायक पत्थोदन, मञ्चदायक गाथाओं की गणना की है। यहाँ 196 गाथाओं के उत्तर हैं।

अ अंसबद्धे जिने दत्वा 1226
अकक्कसे अफरुसे 1207
अक्कन्तञ्च पदं दिस्वा 881, 35
अक्खदस्सेभिवादेत्वा 1151
अगारा अभिनिक्खम्म 1446, 1543, 1613
अग्गजं पुप्फमादाय 267
अग्गिं दारुं आहरित्वा 1622
अग्गिदारुञ्च छड्डेत्वा 1875
अग्गो आरद्धवीरियानं 1063
अङ्कोलं पुप्फितं दिस्वा 924
अङ्कोलका बिम्बिजाला 1954
अङ्कोला यूथिका चेव 2037
अचलो होमि मेत्ताय 1388
अचिरं गतमत्तं मं 853
अचिरं गतमत्तम्हि 474
अच्छा दीपी च मयूरा 2032
अच्छोदका सीतजला 1963
अजितो नाम नामेन 401
अजिनचम्मसद्देन 1758
अजिनानिधरा एते 1971
अजिनेन निवत्थोहं 699
अज्जुना अतिमुत्ता च 1725
अज्जुना असना चेत्थ 2039
अज्जुनो नाम सम्बुद्धो 1048
अज्झायको भवित्वान 1941
अज्झायको मन्तधरो 1643, 1889
अज्झिट्ठो कथयी बुद्धो 1798
अज्झोगाहेत्वा हिमवं 2000
अञ्जलिं पग्गहेत्वान 297, 456, 519, 562, 653, 949, 1878
अञ्ञं तेहं वरं दम्मि 1138
अञ्ञम्पि मे अच्छरियं 725, 726, 727, 728, 729, 730
अञ्ञे गच्छन्ति गोयानं 1756
अञ्ञे पीठे च पल्लङ्के 1816
अट्ठ गोपानसी दत्वा 1385
अट्ठङ्गिके मग्गवरे 1283
अट्ठतिंसतिक्खत्तुञ्च 1675, 2130
अट्ठवीसे इतो कप्पे 264
अट्ठसट्ठिम्हितो कप्पे 224
अट्ठसत्ततिकप्पम्हि 53
अट्ठानिसंसे अनुभोमि 1205
अट्ठारस सिस्ससता 1696
अट्ठारसे कप्पसते 17, 188, 487, 499, 1027, 1479, 1483, 1575, 1836, 2018, 2069,
अड्ढतेय्यविंशत्सहस्रैः 703
अतिथिं मे गहेत्वान 2147
अतिबाळ्हं निपीळेसि 1136
अतिमुत्ता सत्तलिका 1955
अतीता नवुति कप्पा 1061
अत्थदस्सिस्स भगवतो104

अत्थदस्सिस्स मुनिनो 485
अत्थदस्सी तु भगवा 15, 2064
अत्थि चेतसिकं दुक्खं 1131
अथ अञ्ञतरो सिस्सो 2056
अदस्सनेन सब्बञ्ञु 2086
अद्दसं विरजं बुद्धं 479, 87
अद्दसं सुपिनन्तेन 490
अद्धिका पथिका सब्बे 1903
अधिगच्छिं तदा पीतिं 1015
अधिट्ठहि महावीरो 793
अधिवासनमञ्ञाय 1155
अनन्तञाणो असमसमो 1351
अनन्तवण्णो अमितयसो 1346
अनव्हिता ततो आगुं 1528
अनिच्चसञ्ञमुग्गय्ह 776
अनिच्चा वत सङ्खारा 782
अनिलेनेरितं दिस्वा 508
अनुकम्पको कारुणिको 305, 640, 874, 1460, 1814,
अनुकम्पतु मे बुद्धो 1929
अनुग्गतम्हि आदिच्चे 417
अनुपद्दवो अनीति च 1201
अनुब्यञ्जनधरं बुद्धं 133
अनुमोदि महावीरो 652
अनुरुद्धो नाम सम्बुद्धो 1782
अनुस्सरामि तं सञ्ञं 781
अनूनकं दानवरं 1171, 1189
अनोतत्तसरासन्ने 1069
अनोमदस्सी भगवा 1492, 1511
अनोमो नाम सम्बुद्धो 931
अन्तलिक्खे ठितो सत्था 668
अन्धका मुण्डका सब्बे 1909
अन्नं पानञ्च दत्वान 1301
अन्नपनं पट्ठपेत्वा 1569
अपथम्पि पथं कत्वा 1793
अपदानं सुगतानं 382
अपरिमेय्ये इतो कप्पे 327, 1507, 1516
अब्भतीता च ये बुद्धा 584
अब्भन्तरं अगण्हन्तं 1363
अब्भोकासगतं सन्तं 1709
अब्याधिता रूपवता 1293, 2160
अभन्तं होति मे चित्तं 1389
अभिञ्ञापारमिप्पत्ता 2053
अभित्थवित्वा सिखिनं 527
अभिनिक्खम्म भवना 1564
अम्बजम्बूहि सञ्छन्ना 1953
अम्बा जम्बू च तिलका 2040
अम्बाटका बहू तत्थ 1731
अयं पच्छिमको मय्हं 2190
अयं मे पच्छिमा जाति 1429
अयञ्च बुद्धो उप्पन्नो 1105
अरणी फलपीठे च 1125

अरहा वसिपत्ता च 1538
अरुणवतिया नगरे 163
अलसन्दका पल्लवका 1910
अळारपम्हा हसुला 1177, 1835, 1866
अवचाहं जोतिपालो 1097
अवसेसेसु कप्पेसु 72
अविञ्ञत्तं निवासेमि 767
अविदूरे चितकस्स 2124
अविदूरे पोक्खरणी 2044, 1962
असत्थके फलमये 1239
असम्पत्तोम्हि राजानं 147
असम्भीतं अनुत्तासिं 1406
असम्भीतो भयातीतो 1343
असितो नाम नामेन 146
असीतिकोटि निचयो 1334, 1335
असीतिया सहस्सेहि 1464
असोकपिण्डिवारी च 1959
असोका च कपिट्ठा च 2041
अस्सत्थे हरितोभासे 76
अस्समं तत्थ मापेत्वा 2079
अस्समस्साविदूरे मे 1736
अस्सासको वेदकरो 1354
अस्सेव दीपदानस्स 1606
अहं केवट्टगामस्मिं 1091
अहं तेन समयेन 771
अहम्पि दानं दस्सामि 1107
अहिंसा सब्बपाणीनं 575
अहो कारं परमकारं 423
अहो नून स भगवा 1428
अहो बुद्धा अहो धम्मा 657, 1683
अहो मे सुकतं कम्मं 765, 1188, 1715, 1799, 2073
अहोसिं चन्दनो नाम 249

आ आकासे धारयिस्सति 1470
आकासेव पदं नत्थि 507
आगन्तुका पाहुनका 1531
आगन्त्वान मनुस्सत्तं 1712
आचारउपचारञ्ञू 1369
आजानिया वातजवा 422
आजीवका विलुत्तावी 1906
आदेय्यवाक्यवचनो 1885
आधारकं मया दिन्नं 40
आधारके जिने दत्वा 1231
आनन्दस्स महारञ्ञो 1920
आनन्दो नाम सम्बुद्धो 238
आमन्तयिं परिजनं 1567
आयुवा बलवा धीरो 1242, 1302
आयोगे धूमनेत्ते च 1119
आयोगे सुगते दत्वा 1257
आरञ्ञका धुतधरा 2148
आरञ्ञिकस्स इसिनो 55
आरम्मणविमुत्तीसु 1356

आराधयिंसु मं एते 1760
आराधयित्वान सम्बुद्धं 1943
आराधयेय्यं सम्बुद्धं 1056
आराधितो मे सम्बुद्धो 1062
आराधितोम्हि सुगतं 1796
आरामद्वारा निक्खम्म 155, 421, 698
आरुहिम्ह तदा नावं 901
आरूळ्हा गामणीयेहि 2011, 2013, 2015, 1828, 1830, 1832
आरूळ्हे गामणीयेहि 1860, 1862
आरोचितम्हि कालम्हि 1163
आरोपिते च चितके 2123
आलुवा च कळम्बा च 1735
आळका इसिमुग्गा च 1732
आळका बेलुवा तत्थ 1490
आळारिका च 1314
आळारिका च कप्पका 1848
आसन्दिं सुकतं कत्वा 2184
आसन्दियो पीठके च 1121
आसन्ने मे कतं कम्मं 854
आसयो बुद्धिमन्तानं 1353
आसीविसो यथा घोरो 1371
आहरित्वान पदुमं 1459
आहुतिं यिट्ठुकामोहं 1337

इ

इच्छमानो चहं अज्ज 826
इच्छामहं महाराज 1137
इच्छिस्सति यदा 1181
इतो एकादसे कप्पे 625
इतो एकादसे कप्पे 101, 175
इतो च सत्तमे कप्पे 130
इतो चतुत्थके कप्पे120
इतो चुद्दसकप्पम्हि 166, 333
इतो छट्ठम्हि कप्पम्हि 125
इतो छत्तिंसकप्पम्हि 274
इतो छब्बीसतिकप्पे 144
इतो ते सत्तमे कप्पे 515
इतो तेरसकप्पम्हि 78
इतो तेवीसतिकप्पे 179
इतो तेसट्ठिमे कप्पे 314
इतो तेसत्ततिकप्पे 255
इतो द्वेसट्ठिकप्पम्हि 107
इतो पञ्चमके कप्पे 113
इतो पन्नरसे कप्पे 157, 328, 453
इतो बात्तिंसकप्पम्हि 496
इतो भो सुगतिं गच्छ 594
इतो सत्तरसे कप्पे 98
इतो सोळसकप्पम्हि 319
इदं पच्छिमकं मय्हं 1659, 1840, 2026, 2072, 2110,
इदं मे साटकं एकं 681
इदं वत्वान सब्बञ्ञू 473, 578
इदं वत्वान सम्बुद्धो 631, 688, 809

इदं सब्बं अभिञ्ञाय 1510
इध पस्सामि सम्बुद्धं 1480
इध मानुसके रज्जं 1333
इमं खाद इमं भुञ्ज 2177
इमस्मिंयेव कप्पम्हि 1553
इमस्स जायमानस्स 2066
इमाय अनुकम्पाय 598
इमिना एकदुस्सेन 685
इमिना एकपदुमेन 808
इमिना दकदानेन 669
इमिना मंसदानेन117
इमिना मधुदानेन 1441
इमिना सप्पिदानेन 1669, 1673, 1674
इमे तीणि सता वीर 1326
इमेमं उद्दिसिस्सन्ति 391
इरियञ्चापि दिस्वान 1495
इसिसङ्घे अहं पुब्बे 447
उ उक्कामुखपहट्ठंव 865
उक्कामुखपहट्ठोव 573, 1341
उक्कासितञ्च खिपितं 1372
उग्गच्छन्तंव सूरियं 2084
उग्गा च राजपुत्ता च 1313
उग्गाहका अजगरा 1742
उच्चे कुले पजायामि 1274
उच्चे कुले पजायित्वा 1392
उट्ठाय आसना तम्हा 654
उण्णाभिसी तूलभिसी 1122
उण्णिके पदुमके च 1282
उत्तमत्थं अनुभोमि 51
उत्तरासङ्गसङ्घाटी 1127
उत्तानकूला नदिका 2031
उदकपुच्छनचोळे 1248
उदग्गचित्तो सुमनो 814, 962
उदयन्तोव सूरियो 2127
उदहारा कट्ठहारा 1319
उदुम्बरे वसन्तस्स 330
उदेन्तं सतरंसिंव 489, 70
उदेन्तंव महामेघं 1366
उद्दालकं गहेत्वान 227
उद्दालका चम्पका च 2036
उद्दालका पाटलिका 1726
उद्धरन्तं इमं लोकं 1407
उपगन्त्वान सम्बुद्धो 1762
उपट्ठितसति होमि 1230
उपट्ठित्वान सम्बुद्धं 1797
उपपज्जति यं योनिं 1642
उपपज्जति यं योनिं 1771, 1940
उपपज्जिं सतत्थेव 603
उपरिच्छदनं आसि 1571
उपविट्ठं महावीरं 94
उपसङ्कम्म सम्बुद्धं 1152, 1325, 1376
उपसन्तो च सम्बुद्धो 934

उपसालकनामोहं 431
उपागतं महावीरं 306, 1438, 1512, 1667, 1763
उपागते महावीरे 1525
उपासित्वान सम्बुद्धं 437
उपाहना पादुकायो 1117
उपाहने जिने दत्वा 1243
उपेतं तमहं बुद्धं 428
उपेतम्हि महावीरे 1493
उप्पज्जति यं योनिं 1576
उप्पलं पदुमं वापि 1160
उप्पातं तमहं दिस्वा 1652
उप्पातगमने चेव 1436
उप्पाता सुपिना मय्हं 1810
उब्बिद्धं भवनं मय्हं 836
उभो हत्थेहि पग्गय्ह 197, 754,
उमापुप्फं गहेत्वान 556
उय्यानभूमिं निय्यन्तो137
उळारभूतो मनुजो 774
उसभं पवरं वीरं 151, 551
उसुकारा भमकारा 1316, 1917

ए एकं दुस्सं ददित्वान 683
एकंसं चीवरं कत्वा 613
एकञ्च पुप्फं पादेसु 272
एकतो कम्मं कत्वान 1381
एकतो जातसंवद्धा 1130
एकत्तिंसे इतो कप्पे 7, 63, 67, 77, 109, 139, 143, 148, 152, 156, 165, 178, 220, 228, 268, 344, 392, 403, 504, 528, 830, 843, 871, 876, 883, 902, 921, 925, 932, 1002, 1038, 1044, 1050
एकत्तिंसे इतो कप्पे 112
एकनवुतितो कप्पे 2112
एकनवुतितो कप्पे 2118
एकनवुतितो कप्पे 12, 22, 37, 119, 129, 134, 160, 174, 182, 185, 194, 207, 232, 240, 244, 250, 263, 302, 307, 311, 313, 318, 336, 350, 429, 438, 441, 445, 747, 819, 847, 862, 895, 899, 910, 929, 940, 946, 951, 958, 370, 374, 387, 408, 449, 452, 457, 463, 468, 553, 565, 569, 1016, 1022, 1032, 1064, 1661, 2143
एकपञ्ञासक्खत्तुञ्च 1676
एकपञ्ञासितो कप्पे 33
एकम्हि नवुते कप्पे 676
एकवीरो असदिसो 1416
एकसट्ठिम्हितो कप्पे 28, 542
एकसत्ततिक्खत्तुञ्च 779, 1773

एकासनं अहमदं 312
एकूनतिंसकप्पम्हि, 8
एणीमिगा च सरभा 2035
एणीमिगा वराहा च 1748
एते चञ्ञे च बहवो 1734
एते धम्मे भावयित्वा 577
एतेसु कीळमानेसु 1902
एतेसु पुप्फजातेसु 1728
एत्थ सो वसते बुद्धो 1367
एथ सब्बे समागन्त्वा 1322
एवं जिनो वियाकासि 1101
एवं बुद्धो वियाकासि 1330
एवाहं चिन्तयित्वान 682, 736
एस बुद्धो समुप्पन्नो स 1979

ओ ओक्कन्तं मातुकुच्छिं मं 650
ओचिनित्वान सळलं 943
ओड्डुका दमिळा चेव 1908
ओपम्मं उपदस्सेत्वा 540
ओभासेन्तं दिसा सब्बा 813, 961
ओरोहन्तो अन्तलिक्खा 775
ओवादपटिकरा ते 2060
ओसधं अञ्जनं दत्वा 1252
ओसधञ्जननाळी च 1118

क ककुधं विलसन्तंव 561
ककुधो नाम नामेन 226
कञ्चनग्घियसङ्कासं 661
कञ्चनग्घियसङ्कासो 10
कणिकारं पुप्फितं दिस्वा 1
कणिकारंव 1405
कणिकारंव जलितं 1042
कणिकारंव जोतन्तं 30, 246, 455, 860, 1000
कत्तरदण्डे सुगते 1250
कत्वा सुकतपल्लङ्कं 1391
कदम्बा कदली चेव 2042
कदलिफलं पग्गय्ह 1043
कप्पका न्हापका सूदा 1901
कप्पसतसहस्सम्हि 643, 1183, 1607, 1713, 1774, 1939
कप्पसतसहस्सानि 1275, 1502
कम्मारा सोण्णकारा च 1317
कम्मारोहं पुरे आसिं 190
कम्मुनो तस्स सेसेन 1090
करणीयं कतं सब्बं 2162
कलम्बा कन्दली तत्थ 1958
कवाटन्तरिकायापि 1926
कस्मा इमाय जातिया 1194
कहं नु खो सो भगवा 1364
काननं वनमोगय्ह 673, 885
कानना अभिनिक्खम्म 433
कायबन्धे जिने दत्वा 1228
कायेन कुसलं कत्वा 596

कारापेत्वान तं सेतुं 1702
कालञ्च पुनरागम्म 1813
कालो मे गतिं सोधेतुं 735
काळानुसारियं गय्ह 1409
किं करोसि महापुञ्ञ 1624
किं पमादेन रज्जेन 1857
किं मे पुत्तेहि दारेहि 1858
किंसुकं पुप्फितं दिस्वा 878
किच्छप्पत्तोव हुत्वान 1147
कित्तयित्वान सम्बुद्धं 2089
किमेवातिनिसामेत्वा 1854
किलेसा झापिता मय्हं 41, 82, 106, 658, 695, 799, 972, 977, 982, 987, 992, 997, 1003, 1009, 1017, 1023, 1028, 1033, 1039, 1045, 1051, 1065, 1306, 1402, 1431, 1451, 1484, 1517, 1547, 1554, 1582, 1618, 1646, 1662, 1689, 1717, 1778, 1800, 1841, 1893, 1947, 1996, 2027, 2074, 2101, 2113, 2119, 2137, 2144, 2165, 2179, 2192
किलेसे झापयित्वान 1509, 2096
कीदिसो त्वं महावीर 1630
कीदिसो सो महावीर 1628
कुञ्चिकानं घरे दत्वा 1256
कुञ्चिके सुगते दत्वा 1255
कुटजा पुप्फिता तत्थ 1724
कुट्ठं गण्डो किलासो च 724
कुमुदा अम्बगन्धि च 1740
कुम्भमत्तं गहेत्वान 1049, 1765
कुम्भीला सुसुमारा च 1966
कुरुविन्दे मधुसित्थे 1123
कुसलो बुद्धधम्मेहि तो 1344
कुसाटकं गहेत्वान 86
कुसाटकं पत्थरितं 88
कूटागारा च पासादा 1826
कूटागारेन 1476
केन तं पूजयिस्साम 1157
केसरिं अभिजातंव 536
कोकिला मञ्जुभाणी च 2033
कोट्ठका सुकपोता च 1745
कोण्डञ्ञस्स भगवतो 325
कोरण्डं पुप्फितं दिस्वा 882, 36
कोसम्बा सळला निम्बा 1491
कोसम्बा सळला नीपा 1956
कोसेय्यकम्बलियानि 762, 1198
क्लेसब्याधिबहुदुक्ख 1361

ख खग्गहत्था च पुरिसा 1849
खत्तियम्हि कुले जातो 1631
खत्तिया नेगमा चेव 1311
खमा सीतस्स उण्हस्स 1851

खयतो वयतो चापि 2156
खाणुं वा कण्टकं वापि 723
खारिभारं गहेत्वान 1972, 2002
खारिभारञ्च पूरेत्वा 1635
खिप्पं अस्सममागञ्छि 1496
खिप्पं अस्सममागन्त्वा 1590
खिप्पं ओरुय्ह पासादा 1928
खिप्पं पब्बतमारुय्ह 1498
खीणासवसहस्सेहि 206
खीणासवा वन्तदोसा 397
खीणासवेहि सुद्धेहि 790

ग गङ्गा भागीरथी नाम 1692
गच्छन्तो पटिकुटिको 816, 964
गज्जितं खो तया देव 1135
गणनातो असङ्खेय्या 1478
गणिका कुम्भदासी च 1321
गति तेसं उपच्छिन्ना 2149
गतिमा धितिमा चेव 611
गन्धमालं मया दिन्नं 451
गब्भं गण्हन्ति पदुमा 2045, 1738
गमने पत्थिते मय्हं 1393
गम्भीरं निपुणं ठानं 1212
गामे वा यदि वारञ्ञे 1769, 1777
गोपानसियो दत्वान 1382

घ घरतो निक्खमन्तस्स 756
घोस मस्सोसहं तत्थ418

च वक्कवाळमुपादाय 691
चङ्कमन्तम्पि मनुजं 1825
चङ्कमन्तो निपज्जन्तो 2097
चङ्कमे वा पधाने वा 1286
चण्डालो आसहं तत्थ 2183
चतुदण्डे गहेत्वान 1783
चतुद्दससु कप्पेसु 834
चतुद्दसानि कप्पानि 1469
चतुन्नवुतितो कप्पे 27, 52, 57, 90, 96, 124, 170, 191, 210, 213, 217, 247, 259, 273, 277, 285, 291, 294, 298, 32, 323, 339, 347, 355, 360, 365, 379, 399, 414, 419, 424, 476, 482, 491, 509, 514, 521, 534, 541, 549, 558, 580, 585, 591, 664, 633, 858, 866, 879, 887, 891, 991, 996, 1008, 2136, 2178, 2191,
चतुरङ्गुला च मे लोमा 1060
चतुवीसतिकप्पम्हि 153
चतुवीसे इतो कप्पे 278
चतुसच्चं पकासेन्तं 869
चतुसट्ठिक्खत्तुं राजा 1938
चतुसत्तति क्खत्तुञ्च 835
चतुसत्ततिकप्पम्हि 634
चतुसत्ततितो कप्पे 135

चन्दनस्सेव मे काया 707
चन्दभागानदीतीरे 293, 296, 300, 338, 582, 812, 938, 942, 960, 2030
चम्पके नागवनिके 1880
चम्मखण्डं मया दिन्नं 110
चरमानोनुपुब्बेन 2078
चरिमं वत्तते मय्हं46
चरिमे वत्तमानम्हि 777
चितके करीयमाने 980
चित्तं जनेत्वा नेक्खम्मे 1473
चित्तबन्धनसम्बद्धा 1204
चिन्तेत्वाहं बहुविधं 1108
चीवरं पिण्डपातञ्च 1475
चीवरे पिण्डपाते च 1477, 2098
चुल्लासीतिसहस्सानि 395, 572, 1974,
चेतियं उत्तमं नाम 523
चेतोसुखं कायसुखं 1225
चेलापिका लामणिका 1899
चेलावका आरब्भा च 1912
चेळेव डय्हमानम्हि 1981

छ छत्तं अलङ्कतं गय्ह 638
छत्तसतसहस्सानि 1165
छत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो 2173
छत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो 686, 1601
छत्तिंसक्खत्तुं राजा च 760
छत्ते च सुगते 1190
छब्बीसतिकप्पसते 1886
छब्बीसम्हि इतो कप्पे 64
छळभिञ्ञा सच्छिकता 1308
छळासीतिसहस्सानि 1176

ज जटाजिनधरो आसिं 1408
जटाभारभरिता ते 2061
जटाभारेन भरिता 1970, 2050
जलजं आहरित्वान 628
जलन्तं चितकं दिस्वा 402
जहिता पुरिमा जाति 1795
जहित्वा मानुसं योनिं 646
जातमत्तस्स मे सुत्वा 1059
जातस्सरस्स वेमज्झे 201
जातिं जरञ्च मरणं 2077
जातिमा अङ्गसम्पन्नो 1262
जातिया चतुवस्सोहं 2132
जातिया सत्तवस्सोव 606, 610
जातिया सत्तवस्सोहं 784
जातिया सत्तवस्सोहं 571
जानाहि खो महाराज 1133
जिव्हं निन्नामयित्वान 1378

ठ ठपनीयो महावीरो 1140

त तं पुप्फं ओचिनित्वान 674
तं मे आगमनं सिद्धं 1616
तं मे बुद्धो अनुमोदि 503
तं मे बुद्धो वियाकासि 494

तणुधारे सुनिसिते 1269
तण्हासल्लस्स छिन्नत्ता 1209
ततो उपड्ढपुलिनं 564
ततो ओपधिकं पुञ्ञं 597
ततो कट्ठं गहेत्वान 1626
ततो कम्मावसेसेन 1058
ततो चन्दनमादाय 1876
ततो चुतोयं मनुजो 1888
ततो पतीतो सुमनो 894
ततो पासादमारुय्ह 1897
ततो पिण्डं आहरित्वा 1757
ततो माणवका सब्बे 1081
ततो मे निय्यमानस्स 1788
ततोहं अवचं सिस्से 1080
तत्थ चित्तं पसादेत्वा 2108
तत्थ त्वं विरजे खेत्ते 472
तत्थ पुप्फमयं ब्यम्हं 1471
तत्थ मन्ते अधीयामि 1679
तत्थ मे सुकतं ब्यम्हं 719, 795, 2126
तत्थद्दसासिं समणे 1697
तत्थद्दसासिं सम्बुद्धं 1037, 1457, 1587, 2169,
तत्थागतो इसि भीमो 1079
तत्रापि नामधेय्यं मे 1658
तथासमसमो चेव 1158
तथेव तित्थिया लोके 1414
तथेवीमस्स ञाणम्हि 1472
तदा सुदस्सनो नाम 1463
तदाहं विरजे खेत्ते 475
तपस्सिनो ब्रह्मचारी 1975
तमद्दसासिं सम्बुद्धं 637
तमहं उपगन्त्वान548
तम्हा काया चवित्वान 604, 649, 1657
तयो आलोके दिस्वान 538
तव गन्धं सुणित्वान 1881
तव ञाणेन सब्बञ्ञु 1989, 2085
तव दस्सनकामोहं 1680
तव दस्सनमागम्म 2087
तव दुक्खं मम दुक्खं 1132
तस्मिं चित्तं पसादेत्वा 916
तस्मिं पसन्नमानसो 1021
तस्मिं पसन्नो सुगते 957
तस्स छत्तं मया दिन्नं 656
तस्स दस्सनमागम्म 1837
तस्स देवातिदेवस्स 502
तस्स धम्मं सुणित्वान 1838
तस्स धम्मेसु दायादो 644, 1443, 1508, 1578, 1608, 1714, 1775, 2021, 2070,
तस्स पच्चुग्गमित्वान 518
तस्स मे वरदिन्नस्स 1144
तस्स मे सुकतं कम्मं 1513

तस्स रञ्ञो पमत्तस्स 1845
तस्स सङ्कप्पमञ्ञाय 1640
तस्स सिस्सो भवित्वान 1890
तस्साहं धम्मं सुत्वान 62, 462, 612,
तस्साहं नागं दिस्वान 609
तस्साहं लक्खणे दिस्वा 1379
तस्साहं वचनं सुत्वा 602
तानि गन्धानि घायन्तो 1747
ताय वाचाय मधुराय 532
तायेव तिणकुटिकाय 746
तारको त्वं यथा नावा 1419
तालवण्टं मया दिन्नं 80
तावतिंसगतो सन्तो 1551
तावतिंसा इधागन्त्वा 908
तावतिंसा चवित्वाननहं 605
ताहं धातुं गहेत्वान 216
तिंस कप्पसहस्सम्हि 1442, 1450, 1546, 1577, 1581, 1681, 2020, 2022, 2164,
तिंसकप्पसहस्सानि 758, 778, 1178, 1331, 1772, 1937, 1994,
तिंसकप्पसहस्सेतो 73
तिकिच्छको अहं आसिं 1096
तिणं कट्ठञ्च पूरेत्वा 1654
तिणकट्ठञ्च वल्लिञ्च 717, 737
तिदण्डके गहेत्वान 1591
तिदसेहि यथा इन्दो 1694
तिधापभिन्ना मातङ्गा 1850
तिन्दुकं सफलं दिस्वा 861
तिन्दुका च पियाला च 1730
तिमिरा पुप्फिता तत्थ 1723
तिम्बरूसकवण्णाभो 1340
तिरच्छानयोनिं निरयं 1991
तिरोकुट्टं तिरोसेलं 2128
तिरोकुट्टं तिरोसेलं 2134
तिवरायं पुरे रम्मे 168
तिविधग्गि निब्बुता मय्हं 1892
तिसतानि च वारानि 720
तिसतापि च जेट्ठो च 1328
तिसूलकोन्तिमन्तेहि 1853
तिस्सस्स खो भगवतो 280
तिस्सस्स तु भगवतो 44
तिस्सस्स द्विपदिन्दस्स 331
तिस्सो नाम अहु सत्था 821
तिस्सो नामासि सम्बुद्धो 904
तीणि किङ्कणिपुप्फानि 829
तीणि केसरपुप्फानि 920
तीणि पाटलिपुप्फानि 954
तुट्ठहट्ठो पमुदितो 2058
तुण्डेन केसरिं गय्ह 202
तुम्बके च करण्डे च 1263
तुवं सत्था च केतु च 1987

तुसिताहं चवित्वान 1612
तूरियसतसहस्सानि 1936
तूरिया आहता मय्हं 1898
तूलिका विकतिकायो 1278
ते मे सुत्वान वचनं 1323
तेत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो 2153, 1887
तेत्तिंसम्हि इतो कप्पे 464
तेन कम्मविपाकेन 1082, 1084, 1086, 1088, 1092, 1094, 1098
तेन कम्मविसेसेन 123, 1074, 1077
तेन कम्मेन द्विपदिन्द 56, 615, 670
तेन कम्मेन सम्बुद्धो 701
तेन कम्मेन सुकतेन 718, 739, 794, 817, 822, 965, 2125, 2172, 2185,
तेन कम्मेनयं मय्हं 128
तेन कम्मविपाकेन 1073
तेन चित्तप्पसादेन 621, 886
तेन पल्लङ्कदानेन 1394
तेन सुचरितेनाहं 624
तेन सोकेन सन्तत्तो 1521
तेनेव एकदुस्सेन 692
तेनेव मधुदानेन 2111
तेनेव सुक्कमूलेन 1057
तेनेवेकपदुमेन 798
तेपञ्ञासे इतो कप्पे 161
तेरसेतो कप्पसते 18
तेलअब्भञ्जने दत्वा 1292
तेलधारे सुगते दत्वा 1222
तेलिका कट्ठहारा च 1918
तेवीसम्हि इतो कप्पे 393
तेसं उपट्ठहित्वान 398
तेसं यथा तं वचनं 1589
तेसट्ठिम्हि इतो कप्पे 84
तेसत्ततिम्हि कप्पम्हि 199, 204
तेहं सब्बे अनुभोमि 118
तेहि सिस्सेहि परिवुतो 2054
तोसयित्वान सम्बुद्धं 1482, 1609, 1660
तयो हि आलोककरा 539

थ थामवा रूपसम्पन्नो 1295
थालके सुगते दत्वा 1237
थेरो कोटिवीसो सोणो 1068
थोमेत्वा दसगाथाहि 1420

द दक्खिणम्हि दुवारम्हि 368
दत्वान देवदेवस्स 852
दत्वानहं बुद्धसेट्ठे 1668
दधिं दत्वान सम्पन्नं 1298
दन्ता मयं सारथिना 1400
दन्तो बुद्धो दमेतावी 1615
दरितो पब्बततो वा 1706
दसवस्ससहस्सानि 1076
दानस्स वण्णे कित्तेन्तो 1399
दाने दमे संयमे च 1284

दारकोव अहं सन्तो 785
दासिदासे गवस्से च 1214
दासी दासा च भरियाऽ 1291
दिन्दिभा चक्कवाका च 1744
दिब्बगन्धं सम्पवन्तं 708
दिब्बचक्खुं विसोधेसिं 2133
दिवसभागं थवित्वान 525
दिवा वा यदि वा रत्तिं 1552, 1604
दिवाविहारा निक्खन्तो 893
दिसासु पूजितो होमि 1383
दिस्वा चित्तं पसादेत्वा 663
दिस्वा तं लोकपज्जोतं 89
दिस्वा निसिन्नं विमलं 875
दिस्वा पसन्नसुमनो 373
दिस्वा मं सुप्पसन्नत्तं 97
दिस्वान तस्सोपसमं 243
दिस्वान लोकपज्जोतं 2142
दिस्वान वन्दिं पादेसु 432
दिस्वानहं देवदेवं 791, 805, 1458, 2083
दिस्वानाहं बुद्धथूपं 715
दीपधारे जिने दत्वा 1261
दुक्खस्सन्तकरो बुद्धो 1481
दुग्गतिं समतिक्कन्तो 1791
दुमग्गे पंसुकूलकं 66, 567
दुरासदा भगवन्तो 1370
दुरासदो दुप्पसहो 1350
दुवे सम्पत्तियो भुत्वा 2107
दुस्ससतसहस्सानि 1111, 1197
दुस्सानि सुगते दत्वा 1195
दुस्सेहि भूमिं लेणस्स 1055
दूरतो पन दिस्वान 568
देवभूतस्स सन्तस्स 705
देवभूतो अहं सन्तो 284
देवभूतो मनुस्सो वा 1506, 2009
देवराजा यदा होमि 704
देवलो नाम नामेन 235, 1597
देवलोकगतो सन्तो 2186
देवलोका इधागन्त्वा 239, 1444
देवलोका चवित्वान 648, 857, 1182, 1542, 2131, 2189,
देवलोके ठितो सन्तो 230
देवलोके मनुस्से वा 687, 1203, 1611, 1710, 1770, 1945
देवलोके वसन्तस्स 759, 1180
दोवारिका अनीकट्ठा 1919
द्वत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो 1823
द्वे सम्पत्ती अनुभोत्वा 837
द्वेनवुते इतो कप्पे 2, 47, 83, 198, 203, 254, 281, 332, 383, 434, 675, 825, 906, 913, 917, 967, 2100
द्वेसत्ततिम्हितो कप्पे 48

ध धनुं अद्वेज्झं कत्वान 31, 196
धम्मकामा विनीता ते 1435

धम्मचक्कं पवत्तेन्तो 1169
धम्मचक्कं पवत्तेसि 1411
धम्मदस्सिस्स मुनिनो 498
धरणिं पटिपज्जामि 105
धारेन्तं उपरिच्छत्तं 1164
धितिवीरियवा होमि 1206
धीरो विगतसम्मोहो 1417
धूपं दत्वान सुगते 1303
धूपं सित्थं पिलोतिञ्च 1128
धूमनेत्ते जिने दत्वा 1259

न न कोचि विसहि गन्तुं 713
न चत्थि मय्हमावाहो 1338
न ते अग्गि पज्जलति 1627
न ते दकं आहरन्ति 1754
न ते दारुं आहरन्ति 1973
न पापसुपिनस्सापि 745
न मे इदं भूतपुब्बं 773
न विनस्सन्ति मे भोगा 1202
न संसयो कङ्खच्छेदो 1211
न हेवं त्वं महावीर 1398
नखच्छेदने सुगते 1213
नगरा निक्खमित्वान 1868
नगरे अरुणवतिया 177, 873
नगरे बन्धुमतिया 159, 733, 1012, 2104, 2116, 2140
नगरे हंसवतिया 678, 749, 788, 1102, 1309, 1695, 1896,
नचिरं पब्बजितस्स 1785
नच्छन्नं नप्पतिरूपं 716
नत्थुके सुगते दत्वा 1271
नदिते मिगराजे च 2082
नदियो सन्दरे तत्थ 1951
नदी च सन्दती तत्थ 1721
नदीकूले वसामहं 511
नदीसोतपटिभागा 2176
ननु ते गज्जितं देव 1139
नमो ते पुरिसाजञ्ञ 231, 526, 2024
नमो ते बुद्ध वीरत्थु 470
नम्मदानदिया तीरे 372
नयिता अम्बगन्धी च 1968, 2047
नळकारा पेसकारा 1915
नळकारे उपागम्म 1110
नळागारं करित्वान 833
नागपल्लवमादाय 2117
नागा साला च सळला 2038
नानापुप्फे समानेत्वा 1159
नाभिजानामि कायेन 623
नारद इति मे नामम् 132
नावा न विज्जते तत्थ 310
नास्स चोरा पसहन्ति 1708

नाहं अद्दक्खिं सम्बुद्धं 1586
नाहं एतेन मग्गेन 1099
निक्खम्म बन्धुमतिया 955
निग्गुण्डियो बहू तत्थ 1489
निग्गुण्डी सिरिनिग्गुण्डी 1961
निग्घोससद्दं सुत्वान 533
निट्ठापेत्वान तं सालं 1324
निट्ठिते नवकम्मे च 486
नित्तिण्णोसि महावीर 1536
निब्बत्तिस्सति सो यूपो 495
निब्बुते ककुसन्धम्हि 1550
निब्बुते लोकनाथम्हि 142, 187, 215
निब्बुद्धे वत्तमानम्हि 1095
निमन्तेत्वान सम्बुद्धं 1930
निम्मलो होमहं अज्ज 26
नियामं सति धावन्ति 1246
निवुतं होति मे पापं 45
निसज्ज तत्थ भगवा 1527
निसज्ज पासादवरे 928
निसादेत्वान सम्बुद्धं 1764
निसिन्नो पासादवरे 93
निसीदि भगवा तत्थ 1634
नीहरन्ते सरीरम्हि 970

प पक्कोसापिय तस्साहं 377
पग्गय्ह अञ्जलिं तत्थ 413
पग्गय्ह किङ्कणिं 11
पग्गय्ह दक्खिणं बाहुं 1365
पच्चन्ते कुपिते खिप्पं 1846
पच्चुग्गन्त्वान सम्बुद्धं 513
पच्चेकजिनसेट्ठेसु 448
पच्चेकबुद्धं दिस्वान 890
पच्छिमे च भवे अस्मिं 19
पच्छिमे भवे सम्पत्ते 1329, 2155
पञ्च थम्भानि दत्वान 1387
पञ्चङ्गिकेहि तूरियेहि 1570
पञ्चत्तिंसे इतो कप्पे 3
पञ्चन्नं यागुं दत्वान 2151
पञ्चपञ्ञासकप्पम्हि 1504
पञ्चपञ्ञासके कप्पे 286
पञ्चपञ्ञासितो कप्पे 351, 559
पञ्चवीसतिकप्पम्हि 269
पञ्चवीसतिक्खत्तुं सो 1639, 2092
पञ्चवीससहस्सम्हि 616
पञ्चवीसे इतो कप्पे 23, 68, 149, 282, 415, 505,
पञ्चसट्ठिम्हितो कप्पे 936
पञ्चसत्ततिकप्पम्हि 425
पञ्चसीले समादाय 1935
पञ्चानिसंसे अनुभोमि 1208
पञ्चाहं सन्निपतन्ति 1976
पञ्चासक्खत्तुं देविन्दो 2187
पटगा लटुका सब्बे 1905
पटिग्गहेत्वा सम्बुद्धो 944, 378

पटिपन्ना च सेखा च 1539
पटियत्ताहुतिं दिस्वा 1336
पटिसम्भिदा चतस्सो 4, 14, 20, 24, 29, 34, 39, 43, 54, 65, 69, 75, 79, 85, 92, 99, 103, 108, 114, 121, 126, 131, 136, 141, 145, 150, 154, 158, 162, 167, 172, 176, 180, 183, 186, 189, 192, 195, 200, 205, 208, 211, 214, 218, 221, 225, 229, 233, 237, 241, 245, 248, 251, 256, 261, 265, 283, 270, 275, 279, 287, 292, 295, 299, 303, 308, 315, 320, 324, 329, 334, 337, 341, 345, 348, 352, 356, 362, 367, 371, 375, 381, 384, 389, 394, 400, 405, 410, 416, 420, 426, 430, 435, 439, 442, 446, 450, 454, 458, 465, 469, 477, 484, 488, 49, 492, 497, 500, 506, 510, 516, 522, 530, 535, 543, 550, 554, 560, 566, 570, 581, 587, 59, 592, 617, 626, 635, 659, 665, 672, 677, 696, 711, 732. 748, 769, 787, 801, 811, 820, 827, 831, 839, 844, 848, 859, 863, 867, 872, 877, 880, 884, 888, 892, 896, 9, 900, 903, 907, 911, 914, 918, 922, 926, 930, 933, 937, 941, 947, 952, 959, 968, 974, 979, 984, 989, 994, 999, 1005, 1011, 1019, 1025, 1030, 1035, 1041, 1047, 1053, 1067, 1404, 1433, 1453, 1486, 1519, 1549, 1556, 1584, 1620, 1648, 1664, 1691, 1719, 1780, 1802, 1843, 1895, 1949, 1998, 2029, 2076, 2103, 2115, 2121, 2139, 2146, 2167, 2181, 2194,
पटिसल्लानगरुका 1373
पटिस्सुणित्वान मे वाक्यं 1497
पण्णसालं करित्वान 1869
पण्णसाले निसिन्नोम्हि 353
पतिट्ठा भयभीतानं 1352
पतिट्ठा वुय्हतं ओघे 1415
पत्तधम्मो दसबलो 1348
पत्ते सुगते दत्वान 1199
पत्थरित्वाजिनचम्मं 1633
पत्थोदनं गहेत्वान 2171
पदसद्दं सुणित्वान 1524
पदुद्धारे पदुद्धारे 690
पदुमा पुप्फरे तत्थ 1964
पदुमुत्तरबुद्धस्स 614
पदुमुत्तरभगवतो 712

पदुमुत्तरो नाम जिनो 222, 679, 751, 789, 802, 770, 1585, 1977
पदुमुत्तरो लोकविदू 636, 684, 804, 807, 1154, 1166, 1421, 1598, 1623, 1637, 1704, 1761, 1767, 1932, 1982, 1992
पदुमुप्पला बहू तत्थ 1737
पदुमेन राजपुत्तेन 1106
पदुमो नाम सम्बुद्धो 923
पदेसरज्जं विपुलं 797, 824, 1602, 2093, 2154, 2174, 2188
पधानं पदहित्वान 1544
पधानं पहितत्तोम्हि 1716
पधानपहितत्तोम्हि 838
पब्बजित्वान कायेन 1425
पब्बज्जं उपगन्त्वान 386
पब्बतग्गे यथा अच्चि 1342
पब्बतराजा हिमवा 1686
पब्बते हिमवन्तम्हि 257, 342, 427, 436,
पब्भारकूटं निस्साय 1621, 1649, 1803
पभं दिस्वान बुद्धस्स 1927
पभा निद्धावते तस्स 856
परकम्मायने युत्तो 2170
परकिच्चत्तकिच्चानि 1395
परमकारुञ्ञपत्तोम्हि 61
परमेन दमथेन 212
परमोपसमे युत्तं 343
पराजयो तुवं देव 1148
परिक्खारानि दस्सामि 1109
परित्तका सन्तिपत्ता 1907
परिनिट्ठितसालम्हि 1396
परिनिब्बुते कारुणिके 2182
परिनिब्बुते भगवति 985
परिनिब्बुते सुगते 2122
परिभुत्ते महावीरे 1499
परिभोगभाजने च 1115
परिवुतो अहं तेहि 1759
परिस्सावने सुगते 1219
परूळ्हकच्छनखलोमा 2052
पवना निक्खमन्तेन 524
पसन्नचित्तो सुमनो 6, 253, 301, 444, 757, 935, 939, 945, 1001, 1593, 2150
पस्सद्धंदरथं दिस्वा 1500, 95
पहूतभक्खो हुत्वान 1934
पहूतेनन्नपानेन 1572
पाटलिं हरितं दिस्वा 948
पाठीना पावुसा मच्छा 1722, 1952, 1965, 2046
पाणिना उदकं गय्ह 667
पातरासे अनुप्पत्ते 258

पादपीठे जिने दत्वा 1290
पादुके सुगते दत्वा 1247
पापं विवज्जनत्थाय 102
पारेवता रविहंसा 1560, 1967
पावारिके च मुदुके 1279
पिण्डचारं चरन्तस्स 755
पिण्डाय चरमानाहं 443
पितुगेहे निसीदित्वा 780
पिपासितोव उदकं 1368
पिप्फिली मरीचा तत्थ 1733
पियदस्सिनो भगवतो 493
पियदस्सिस्स भगवतो 100
पियदस्सी तु भगवा 1820
पियदस्सी नाम भगवा 1454
पियदस्सी नाम सम्बुद्धो 1807
पिलिन्दवच्छनामेन 1185
पिसाचा दानवा चेव 1750
पीठके सुगते दत्वा 1273
पुच्छित्वा निपुणे पञ्हे 1891
पुञ्ञकम्मेन संयुत्ता 1641
पुञ्ञपापपरिक्खीणो 1100
पुत्ता मय्हं बहू होन्ति 1251
पुत्तो मम पब्बजितो411
पुन्नागा गिरिपुन्नागा 1960
पुप्फं हेमवन्तं गय्ह 841
पुप्फानि अभिरोपेत्वा 815
पुप्फिका मालिका चेव 1320
पुब्बकम्मेन संयुत्तो 1786
पुब्बे चित्तं विसोधेत्वा 579
पुब्बेनिवासं जानामि 1794
पुरक्खतो ससिस्सेहि 750
पुराणं छड्डुयित्वान 1461
पुरेहं दारको हुत्वा 1085
पुलिना सोभना तत्थ 2049
पूजत्थं लोकनाथस्स169
पूजयित्वान पुप्फानि 963
पूजयित्वान सम्बुद्धं 1535, 1984
पूरेत्वा तव सङ्कप्पं 1150

फ फलं बुद्धस्स दत्वान 1766
फलपीठे जिने दत्वा 1288
फलहत्थो अहं दिस्वा 1007
फुसिता पञ्चसहस्सा 702
फुस्सस्साहं पावचने 1093
फुस्सो नामासि सम्बुद्धो 915

ब बहू मेधिगता भोगा 1104
बिब्बोहने जिने दत्वा 1281
बिम्बिजालकपुप्फानि 223
बिळालियो गहेत्वान 289
बिळाली ते मम दिन्ना 290
बुद्धसेट्ठस्स उपरि 772
बुद्धस्स आनुभावो सो 71
बुद्धस्स गिरमञ्ञाय 645, 1533, 2006

बुद्धस्स पत्तं पग्गय्ह 164
बुद्धस्स यमिदं दासिं 481
बुद्धो लोके समुप्पन्नो 1310, 1873, 2057, 2059,
बुद्धो समुस्सितो लोके 1357
बुद्धोति भो यं वदेसि 1362
बोधनेय्यं जनं दिस्वा 1808
ब्यग्घुसभंव पवरं 662, 956
ब्याधयो मे न विज्जन्ति 1384
ब्रह्मसरस्स मुनिनो 870
ब्राह्मणो सुतवा आसिं 1078

भ भगवा तम्हि समये 460, 1877, 1923, 2055, 2062, 2141
भतका चेटका चेव 1318
भयं वा छम्भितत्तं वा 742
भरिया दासदासी च 1235
भरिया मे कालङ्कता 1520
भवना निक्खमित्वान 846
भवा उग्घाटिता मय्हं 706
भवाभवे संसरन्तो 2175, 721
भवे संसरमानस्स 761
भागीरथीनदीतीरे 466
भाजने परिभोगे च 1233
भिक्खुनो एकमेकस्स 1167
भिक्खुसङ्घस्स पुरतो 1327
भिक्खुसङ्घे निसीदित्वा 1579
भिक्खूनं भिक्खुनीनञ्च 1186
भिक्खूहि सहितो वीथिं 1924
भिसियो सुगते दत्वा 1276
भुञ्जन्तं समणं दिस्वा 25
भुत्ताविं कालमञ्ञाय 1931
भेसज्जं सुगते दत्वा 1241

म मंसपेसि मया दिन्ना 116
मच्छकच्छपसञ्छन्ना 1559, 1743
मज्झे महन्ते हीने च 1449
मञ्जरिकं करित्वान 252
मणिकारा लोहकारा 1916
मणिमयञ्च मे ब्यम्हं 2152
मणिमया 1245
मण्डपं छादयित्वान 1784
मण्डपा च बहू तत्थ 1488
मण्डपे रुक्खमूले वा 766, 1870, 2109
मधु भिसम्हा सवति 1739, 2048
मनसा पत्थितं सब्बं 763
मनुस्सलोकमागन्त्वा 1503
मन्दालकेहि सञ्छन्ना 1558
मम अस्समसामन्ता 1650, 1872, 1978, 2081
मम धम्मकथं कत्वा 1566
मम निज्झायमानस्स 1636
मम संवेगमञ्ञाय 600
मम सङ्कप्पमञ्ञाय 316, 1682, 2090

मम हासं जनेत्वान 1819
ममुद्धरितुकामो सो 1809
ममुपेन्ति च विस्सत्था 2080
मयि एवं सरन्तम्हि 1812
मयि निक्खन्तमत्तम्हि 1445
मरीचिके फन्दमाने 1790
मलहरणियो दत्वा 1267
महता भिक्खुसङ्घेन 1070
महानुभावा इसयो 1751
महापथम्हि विसमे 349
महासमुद्दं ओगय्ह 1557
महासमुद्दं निस्साय 321
महासमुद्दे उदकं 1684
महासमुद्दे ऊमियो 1412
महासमुद्दोवक्खोभो 1540, 1541, 1677
महीसञ्ञं अधिट्ठाय 1792
मातग्गारा सत्तलियो 1727
माधुरका कोसलका 1911
मिगलुद्दो तदा आसिं 850
मिगलुद्दो पुरे आसिं 115, 181, 193, 868, 1456, 1781
मिगे चित्तं पसादेत्वा 583
मित्तामच्चे समानेत्वा 1156
मुखतुण्डेन पग्गय्ह 806
मुखसोधनकं दत्वा 1296
मुनाळि नामहं धुत्तो 1072
मुनि कारुणिको लोके 590
मोरहत्थे चामरियो 1218

य यं पूरितं तया किच्चं 1656
यं मे अत्थि कतं पुञ्ञं520
यं यं इच्छति कामेहि 2095
यं यं योनुपपज्जामि 622, 689, 741, 2025,
यं वदन्ति सुमेधोति 1573, 2005
यं सो देसेति 1375
यंनून बुद्धसेट्ठस्स 1700
यक्खस्स वचनं सुत्वा 1874, 1980
यतो अहं कम्ममकं 2071
यतो सरामि अत्तानं 1280, 1644
यथापि उरगो जिण्णं 1532
यथापि पथिका सत्ता 1529
यथापि मेघो थनयं 1426
यथाभूतं रसं दत्वा 1300
यदा देवो देवकाया 593
यदा निब्बायि सम्बुद्धो 969
यदा बुद्धा चक्खुमन्तो 2088
यदाहं पञ्हं पुच्छामि 1374
यदि बुद्धो तुवं वीर 792
यदि बुद्धोसि सब्बञ्ञू 1632
यस्स ञाणं अप्पमेय्यं 1358
यस्स धीति असदिसा 1359
यागुं सङ्घस्स दत्वान 2159

यामा देवा इधागन्त्वा 912
यावता गणिनो लोके 1988
यावता चक्कवाळस्स 1685
यावता नगरं आसि 1605
यावता वनसण्डम्हि 1465, 1651
यावता विजिते अत्थि 1134
यावता हिमवन्तम्हि 1596
युगमत्तञ्च पेक्खन्ता 1752
युगमत्तमपेक्खन्ता 2051
यूपो तत्थ सुभो आसि 855
ये केचि दमका लोके 1397
ये केचि पुप्फगन्धासे 1595
ये केचि मे सुता धम्मा 1232
ये केचिमे गन्धजाता 1990
ये मया कित्तिता सब्बे 1921
येन छत्तमिदं दिन्नं 641
येन ञाणेन सम्बुद्धो 1985
यो कोचि वेदं जनयं 2161
यो तं अदासि मधुं मे 1440
यो मं तूरियेहुपट्ठासि 1933
यो मं पुप्फेहि छादेसि 2091
यो मं फलेन तप्पेसि 1638
यो मं सत्ताहं पूजेसि 1467
यो मे अन्नेन पानेन 1574
यो मे गुणे पकित्तेसि 1884
यो मे चित्तं पसादेत्वा 630
यो मे छत्तं अधारेसि 2065
यो मे ञाणं अपूजेसि 1993
यो मे दीपं पदीपेसि 1599
यो मे पादासि भेसज्जं 1501
यो मे फलञ्च अगळुं 1768
यो मे रतनमयं पीठं 1821
यो मे सत्ताहं मण्डपं 2008
यो मे सीलञ्च ञाणञ्च 1422
यो मे सेतुं अकारेसि 1705
योत्थ थेरतरो भिक्खु 2106

र

रजका पेसकारा च 1315
रञ्ञो हत्थे गहेत्वान 1142
रतने च निसिन्नस्स 1818
रति च समचरियाय 576
रथियं पटिपज्जन्तं 376, 552
रहोगतो निसीदित्वा 734, 1103,
रागग्गि दोसमोहग्गि 1217
रागो दोसो च मोहो च 1360
राजा अजितञ्जयो नाम 1844
राजा तत्थेव ठत्वान 1149
राजाहं पत्थिवो आसिं 1089
रुक्खमूले वसन्तस्स 1474
रोमसो नाम नामेन 440, 346
रोमसो नाम सम्बुद्धो 864
रोहणा सिन्धवा चेव 1913

ल

लक्खणानि विलोकेत्वा 1588

लक्खणे द्वे च कङ्खामि 1377
लबुजस्स फलं गय्ह 1013
लभामि चतुरो वण्णे 1266
लभामि दिब्बनयनं 1254
लाभा अम्हं सुलद्धं नो 1568, 1671
लाभा मम सुलद्धं मे 1514
लाभा मय्हं सुलद्धं मे 2023
लोकचक्खु महातेजो 1355
लोहदोणिं गहेत्वान 1755

व वग्गूसु भासमानासु 1922
वचं उसीरं लट्ठिमधुं 1116
वज्जन्ति भेरियो सब्बा 1925
वण्णगन्धरसोपेतं 1299
वत्ते गुणे पटिपत्ति 1240, 1285
वत्थं गन्धञ्च सप्पिञ्च 1687
वनकम्मिको तदा आसिं 714
वनचारी पुरे आसिं 2168
वनन्तरे बुद्धं दिस्वा 1026
वनसण्डं समोगय्ह 1455
वन्दित्वान महानागं 1534
वरचन्दनेनानुलिम्पिं 1882
वरधम्ममनुप्पत्तो 1645
वसी गणी पतापी च 1347
वसीसतसहस्सेहि 1153
वस्सिके पुप्फमानम्हि 1879
वस्से च ते ओरमिते 1530
वाकचीरं धुनन्ता ते 1753
वाकचीरधरो आसिं 406
वासियो सत्थके चापि 1112
विचरन्तो अरञ्ञम्हि 1494
विचिनन्तो सकं पुत्तं 412
विजहित्वा देववण्णं 234
विज्जा मन्तपदे चेव 1236
विज्जाधरो तदा आसिं 919
वित्तिसञ्जननं मय्हं 1014
वित्थारिके पावचने 607
विधूपने तालवण्टे 1113
विधूपने सुगते दत्वा 1215
विनतानदिया तीरे 1020
विनिच्छयं पापुणाम 1141
विनिपातं विवज्जेत्वा 1670
विपस्सिं तत्थ अद्दक्खिं 467
विपस्सिं लोकपज्जोतं 407
विपस्सिं लोकमहितं 950
विपस्सिनो पावचने 1054
विपस्सिनो भगवतो 173, 459, 897
विपस्सिस्स नरग्गस्स 369
विपस्सिस्स भगवतो 21, 127, 385
विपस्सी नाम भगवा 953
विपस्सी नाम सम्बुद्धो 697
विपाकं एकदुस्सस्स 693
विपिनचारी सम्बुद्धो 262

विपिनातो मधुं गय्ह 1439
विपिने ब्यग्घराजाव 1944
विपुले च गुणे लाभी 1265
विप्पसन्नेन चित्तेन 851
विमतिं द्वेळ्हकं वापि 1537
विमाना निक्खमन्तस्स 647
विरूळ्हमूलसन्तानं 1707
विवेकमनुयुत्तोम्हि 1545, 1946
विसमा मे समा होन्ति 2135
विसारदो ससमये 1805
विसालनयनो होमि 1253
विसुद्धकण्ठो मधुरस्सरो 1297
विस्सत्थो होहि मा भायि 1672
वीतसोको निरारम्भो 1806
वीरियं मे धुरधोरय्हं 1839
वुट्ठम्हि देवे चतुरङ्गुले तिणे 1448
वुट्ठहित्वा समाधिम्हा 1462
वुट्ठिते नरदेवम्हि 632
वेटम्भिनीति मे नामं 390
वेताळिनो कुम्भथूनी 1900
वेपुल्लजवनपञ्ञो 1305
वेमातुभातरं पुब्बे 1083
वेस्सभुस्स भगवतो 618
वेस्सभू तम्हि समये 60
स संवेगो मे तदा आसि 599
संसारसोतं छिन्दित्वा 1986
सकं चित्तं पसादेत्वा 700
सके घरे निसीदित्वा 680
सके सिप्पे अपत्थद्धो184
सगारवो सप्पतिस्सो1390
सङ्खसद्दं भेरिसद्दं 1852
सङ्खित्तेन च देसेन्तो 461
सङ्गातिगो हतमदो 1418
सङ्घस्सत्थाय कुटिकं 738
सञ्जानित्वान सम्बुद्धं 1815
सट्ठि अस्ससहस्सानि 1829, 1861, 2012
सट्ठि इत्थिसहस्सानि 1865
सट्ठि कप्पसहस्सानि 1423, 1600, 1610
सट्ठि गामसहस्सानि 1867, 2016
सट्ठि तूरियसहस्सानि 1175, 1563
सट्ठि धेनुसहस्सानि 1833, 1864
सट्ठि नागसहस्सानि 1827, 1859, 2010
सट्ठि रथसहस्सानि 1174, 1831, 1863, 2014
सट्ठिकोटी हिरञ्ञस्स 1678
सण्डासे पिप्फले चेव 1120
सण्डासे सुगते दत्वा 1270
सतरंसि नाम भगवा 1006
सतरंसी नाम सम्बुद्धो 889
सतसहस्सं दत्वान 1701
सतसहस्सस्स वयं 1703
सतसहस्सितो कप्पे 236, 655, 694, 710, 731, 768, 786, 800, 810,

971, 976, 981, 986, 1401, 1430, 1617
सतसहस्से कतं कम्मं 1187
सतानं तीणिक्खत्तुञ्च 818, 2019
सतानं तीणिक्खत्तुञ्च 823, 966
सतासनसहस्सानि 1161, 1162
सति मे उजुका होति 1260
सतिं पटिलभित्वान 1526
सतिपट्ठानसयनो 1688
सतेहि तीहि सहितो 1380
सत्त कन्दलिपुप्फानि 546
सत्त चम्पकपुप्फानि 842
सत्त सत्तलिपुप्फानि 219
सत्तक्खत्तुञ्च देवेसु 642
सत्ततिंसे इतो कप्पे 91, 366, 483
सत्तपञ्ञासकप्पम्हि 38, 74
सत्तपञ्ञासितो कप्पे 361, 380
सत्तमे दिवसे पत्ते 1170
सत्तरतनसम्पन्नो 1505
सत्तरत्तिन्दिवं बुद्धो 1168, 1592
सत्तवीसतिकप्पम्हि 13, 260
सत्तवीसे इतो कप्पे 42, 140, 404, 529, 586
सत्तसट्ठिम्हितो कप्पे 340
सत्तसट्ठिम्हितो कप्पे 388
सत्तसत्तति कप्पानि 1822
सत्तसत्ततिकप्पम्हि 171
सत्तसत्ततिकप्पानि 2067
सत्तसत्ततिक्खत्तुञ्च 2068, 2129
सत्तसत्ततितो कप्पे 58
सत्तासीतिम्हितो कप्पे 409
सत्थारं उपसङ्कन्तं 317
सत्थारं धम्ममारब्भ 335
सत्थेन वा विसेन वा 1221
सदेवकस्स लोकस्स 1699
सद्दं मानुसकाकंसु 1855
सद्धं सीलं हिरिञ्चापि 1272
सद्धम्माचारकुसलो 1345
सद्धम्मे गाधं विन्दामि 1227
सन्निपातं अहं गन्त्वा 2105
सन्निब्बापेमि रागग्गिं 81
सप्पितेलञ्च दत्वान 1294
सब्बं देव तया दिन्नं 1146
सब्बकामसमिद्धोहं 1447
सब्बमेतं अभिञ्ञाय 1184, 1515
सब्बमेतं समानेत्वा 1129
सब्बमोहातिवत्तस्स 326
सब्बरतनमयं पीठं 1817
सब्बलक्खणसम्पन्नो 1268
सब्बलोकहितत्थाय 1339
सब्बवोसितवोसानो 1386
सब्बसोण्णमया रुक्खा 1562

सब्बाभिभुस्स बुद्धस्स 1075
सब्बालङ्कारयुत्तानि 1193
सब्बे जना समागम्म 620, 1036
सब्बे वना गन्धमया 1594
सब्बेसं समतिक्कम्म 1220
समणा ब्राह्मणा चेव 1904
समतित्ति काकपेय्या 16
समन्ततो अट्ठकोसं 1603
समसुगत्तोपचितो 1277
समागतेसु यक्खेसु 1466
समाधिं सो समापन्नो 2001
समाधिना निसिन्नस्स 909
समाधीसु न कम्पामि 1229, 1258
समाहितं समापन्नं 555
समुद्धरसिमं लोकं 1410
सम्पत्तिं अनुभोत्वान111
सम्बुद्धं अभिवादेत्वा 905, 1565
सम्मज्जनं उदपत्तं 1126
सम्मज्जनिं गहेत्वान 2003
सयनेहं तुवट्टामि 1789
सयनेहं तुवट्टेन्तो 1856
सरागा सभवा चेते 396
सरीरं झापयित्वान 1655
सरीसपा च भूता च 744
सह गाथं सुणित्वान 783
सहस्सकण्डं सतभेण्डु 740
सहस्सक्खत्तुं देविन्दो 796
सहस्सक्खत्तुं राजा च 1179, 1332
सहस्सयुत्तं हयवाहिं 1787
सहस्सराजनामेन 671
सहस्सस्सा वातजवा 1711
सा ते सद्धा निविट्ठास्स 595
साखापलासकट्ठानि 709
सामञ्ञं मे अनुप्पत्तं 1580
सायं पातं तरन्तामे 1698
सालप्फं आहरित्वा 2004
सावत्थि नाम नगरं 608
सिद्धं तस्स तपो कम्मं 1804
सिद्धत्थं लोकपज्जोतं 364
सिद्धत्थं सब्बसिद्धत्थं 589
सिद्धत्थम्हि भगवति 276
सिद्धत्थस्स भगवतो 50, 122, 209, 478, 627, 660, 990, 995
सिद्धत्थस्स महेसिनो 322
सिद्धत्थस्स महेसिस्स 359
सिद्धत्थो च लोकविदू 629
सिद्धत्थो तस्स ब्याकासि 471
सिद्धत्थो लोकपज्जोतो 354
सिद्धत्थो सब्बसिद्धत्थो 574
सिनेरुसमसन्तोसो 357
सिन्धुं अनुचरन्तोहं 545
सिन्धुया नदिया तीरे 1434

सिन्धुया नदिया तीरे 544
सिरस्मिं अञ्जलिं कत्वा 753
सिविका हत्थिखन्धेन 722
सीघं ततो समारुय्ह 138
सीतं उण्हं न जानामि 1191
सीतं उण्हं न जानामि 1216
सीलं पञ्ञञ्च धम्मञ्च 1427
सीलं समाधि पञ्ञा च 1287
सीलवीचिसमाकिण्णो 1349
सीसंन्हातो चयं पोसो 2094
सीहं यथा वनचरं 363
सीहब्यग्घा च दीपी च 743
सीहा ब्यग्घा च दीपी च 1746, 1969, 2034
सुखुमच्छविको होमि 1192
सुखुमच्छिकजालेन 1413
सुगन्धदेहो यसवा 1304
सुगुत्तो सुखसमङ्गी 1264
सुचारुरूपं दिस्वान 752
सुचारुरूपो सुभद्दो 1223
सुचित्ता विय तिट्ठन्ते 557
सुजातो सालल्ट्ठीव 501
सुणन्तु मे अक्खदस्सा 1143
सुणाथ भिक्खवो मय्हं 1071
सुदस्सनो महावीरो 531
सुदिन्नं मे दानवरं 2157
सुदुद्दसं सुनिपुणं 1468
सुधाय पिण्डं कत्वान 619
सुनन्दो नाम नामेन 651
सुप्पारका कुमारा च 1914
सुफुल्लं पदुमं गय्ह 1983
सुफुल्लं सालराजंव 1653
सुफुल्ला बन्धुजीवा च 1741
सुभद्दको त्वं मनुजे 1625
सुमनो नाम नामेन 601
सुमनो नाम सम्बुद्धो 975
सुमेधो नाम भगवा 1437, 1523, 1666, 1871, 1883, 1999, 2007
सुलद्धलाभं लद्धोम्हि 1995
सुलद्धलाभो लद्धो मे 1776
सुवण्णथाले मणिथाले 1200
सुवण्णवण्णं सम्बुद्धं 266, 512, 517, 547, 588, 666, 927, 1031
सुवण्णवण्णं सिद्धत्थं 271
सुवण्णवण्णो भगवा 5
सुवण्णवण्णो विरजो 1196, 1249
सुवण्णवण्णो सम्बुद्धो 309
सुसङ्गहितयानंव 639
सुसुद्धं पुलिनं गय्ह 563
सूचिघरे अंसबद्धे 1114
सूचिघरे सुगते दत्वा 1224
सूचियो सुगते दत्वा 1210

सूरियस्स च आलोकं 537
सेतच्छत्तं गहेत्वान 2063
सेनासने पादपुञ्छे 1124
सो अहं विचरिस्सामि 2163
सो दानि पत्तो अमतं 2099
सो पच्छा पब्बजित्वान 764, 1424, 1942
सोकं परिद्दवं ब्याधिं 2158
सोकसल्लपरेतोहं 1522
सोण्णमयं रूपिमयं 1824
सोण्णमये मणिमये 1234, 1238, 1289
सोभितो नाम आरामो 1693
सोळसित्थिसहस्सानि 1834
सोस्साम तव वचनं 1145
सोहं बुद्धस्स सुत्वान 1811
स्वागतं वत मे आसि 973, 978, 983, 988, 993, 998, 1004, 1010, 1018, 1024, 1029, 1034, 1040, 1046, 1052, 1066, 1307, 1403, 1432, 1452, 1485, 1518, 1548, 1555, 1583, 1619, 1647, 1663, 1690, 1718, 1779, 1801, 1842, 1894, 1948, 1997, 2028, 2075, 2102, 2114, 2120, 2138, 2145, 2166, 2180, 2193

ह हंसराजा तदा होमि 803
हंसा कोञ्चा मयूरा च 1749
हंसा कोञ्चापि नदिता 1561
हट्ठो हट्ठेन चित्तेन 480
हत्थारोहा अनीकट्ठा 1312, 1847
हत्थारोहो पुरे आसिं 1087
हत्थियानं अस्सयानं 898, 1173, 1244
हत्थी अस्सा रथा पत्ती 1172, 2017
हरीतकं आमलकं 358
हरीतका आमलका 1729, 1957, 2043
हिमवन्तस्स वेमज्झे 304
हिमवन्तस्साविदूरे 242, 288, 828, 832, 840, 845, 849, 1487, 1665, 1720, 1950
हिमवन्ते वसन्तोहं 1614
हेतुधम्मनिरोधाय 1629



पालि-अध्ययन-केन्द्रम्

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

Accredited by 'NAAC' with 'A' Grade

(केन्द्रीय-मानव-संसाधन-विकास-मन्त्रालयाधीनम्)

लखनऊ-परिसरः